द्रव्य सहायक—

श्रीसुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा.

श्री भगवतीजी सूत्रकि पूजा
तथा सुपनोंकि आमदनीसे.

भावनगर—धी आनंद प्रीन्टींग प्रेसमें शाह गुलाबचंद
लल्लुभाइए छाप्युं.

इन पुस्तकोंकी आमदनीसे और भी
ज्ञानप्रचार बडाया जावेगा ।

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ३ जा.

द्रव्य सहायक रू. २५०)

शाह हजारीमलजी कुंवरलालजी पारख.

मु० लोहावट—जाटावास (मारवाड).

नकल १०००

वीर स. २४५०   वि. स १९८०

धन्यवाद.

श्रीमान् रेखचंदजी साहिब,

चीफ सेक्रेटरी-

श्री जैन नवयुवक मित्रमण्डल—मु० लोहावट

आप ज्ञानके अच्छे प्रेमी और उत्साही हो। इस किताब के तीसरे भाग के लिये रु. २५०) ज्ञान दान कर पुस्तके श्रीसुखसागर ज्ञान प्रचारक सभा में सार्पण कर लाभ उठाया है इस वास्ते मैं आप को सहर्ष धन्यवाद देता हुं और सज्जनों को भी अपनी चल लक्ष्मी का ज्ञानदान कर लाभ लेना चाहिये। कारण शास्त्रकारोंने सर्व दानमें ज्ञानदान को ही सर्वोत्तम माना है—किमधिकम्।

भवदीय,

पृथ्वीराज चोपडा।

मेम्बर—श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल,

लोहावट—(मारवाड).

श्रीयक्षदेवसूरीश्वराय नमः

श्रीकल्पसूत्रजीके पानोंकी भक्ति के लिये रु. २८०)

शाह कालुरामजी अमरचंदजी बोथरा राजमवाला कि तर्फ से आया वह इस कितावमें लगाया गया है. इस ज्ञान दानसे कीतना लाभ होगा वह अन्य सज्जनोंको विचार के अपनी चल लक्ष्मीकों ज्ञानदान कर अचल बनाना चाहिये. किमधिकम्।

आपका,

जोरावरमल वैद

मेनेजर.

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ओफीस,

फलोधी.

श्रीमद् भगवतीजी सूत्र कि वाचना ।

पूज्यपाद प्रातःस्मरणिय मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजसाहिब कि अनुग्रह कृपासे हमारे लोहावट जैसे ग्राममें भी श्रीमद् भगवतीजीसूत्र कि वाचना संवत् १९७९ का चैत्र वद ६ से प्रारंभ हुइथी जिस्के दरम्यान हमे बहुत लाभ हुवा है जैसे श्री भगवतीजीसूत्रका आद्योपान्त श्रवण कर ज्ञानपूजाका करना जिस्के द्रव्यसे।

५००० श्री द्रव्यानुयोग द्वितीय प्रवेशिका।

५००० श्री शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वां हजार हजार प्रती एकही जिल्दमें बन्धाइ गइ है जिस्मे तीसरा भाग शा. हजारीमलजी कुंवरलाली पारख कि तर्फसे।

१००० श्री भावप्रकरण शा. जमनालालजी इन्द्रचन्दजी पारख कि तर्फसे।

१००० श्री स्तवन संग्रह भाग ४ था शा आइदांनजी अगरचन्दजी पारख कि तर्फसे।

इनके सिवाय ज्ञानध्यान कंठस्थ करना तथा श्री सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा और श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल कि स्थापना होनेसे अच्छा उपकार हुवा है।

अधिक हर्ष इस बातका है कि जीस उत्साहा से श्री भगवतीजी सूत्र प्रारंभ हुवाथा उनसे ही चढते उत्साहासे श्री ज्ञानपंचमिको पूजा प्रभावना वरघोडाके साथ निर्विघ्नतासे समाप्त हुवा है हम इस सुअवसर कि वारवार अनुमोदन करते है अन्य सज्जनोंको भी अनुमोदन कर अपना जन्म पवित्र करना चाहिये किमधिकम्। भवदीय।

जमनालाल बोथरा राजमवाला,
मेम्बर श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल
मु० लोहावट-मारवाड.

जन्म सं. १९३२

ढुंढक दीक्षा स. १९४२

जैन दीक्षा १९६०

स्वर्गवास १९७७

मुनि महाराज श्री रत्नविजयजी महाराज.

रत्न परिचय.

परम योगिराज प्रातःस्मरणीय अनेक सद्गुणालंकृत श्री श्री १००८ श्री श्री रत्नविजयजी महाराज साहिब !

आपश्रीका पवित्र जन्म कच्छ देश ओसवाल ज्ञाति में हुवा था. आप बालपणासे ही विद्यादेवीके परमोपासक थे. दश वर्षकि बाल्यावस्थामें ही आपने पिताश्रीके साथ संसार त्याग किया था. अठारा वर्ष स्थानकवासीमत में दीक्षा पाल सत्य मार्ग संशोधन कर— शास्त्रविशारद जैनाचार्य श्रीमद्विजयधर्मसूरीश्वरजी महाराजके पास जैन दीक्षा धारण कर संस्कृत प्राकृतका अभ्यास कर जैनागमोंका अव- लोकन कर आपश्रीने एक अच्छे गीतार्थोंकि पंक्तिको प्राप्त करी थी. आपश्रीने कच्छ, काठीयावाड, गुजरात, मालवा, मेवाड और मारवाडादि देशोंमें विहार कर अपनि अमृतमय देशनाका जनताको पान करवाते हुए अनेक भव्य जीवोंका उद्धार कीया था इतना ही नही किन्तु आबु गिरनारादि निवृत्तिके स्थानों में योगाभ्यास कर अनेक गइ हुइ चमत्कारी विद्यावों हांसल कर कइ आत्मावों पर उपकार कीया था ।

आपका निःस्पृह सरल शान्त स्वभाव होने से जगत के गच्छगच्छान्तर—मत्तमत्तान्तरके झगडे नो आपसे हजार हाथ दूरे ही रहते थे. जैसे आप ज्ञानमे उच्चकोटीके विद्वान थे वेसे ही कविता करने में भी उच्चकोटीके कवि भी थे आपने अनेक स्तवनों, सज्झायों, चैत्यवन्दनों, स्तुतियों, कल्प रत्नाकरी टीका और विनति शतकादि रचके जैन समाजपर परमोपकार कीया था.

आपको निवृत्तिस्थान अधिक प्रसन्न था जो श्रीमदुपकेश गच्छाधिपति श्री रत्नप्रभसूरीश्वरजी महाराजने उपकेशपट्टन (ओशीयों) मे ३८४००० राजपुतोकों प्रतिबोध दे जैन वनाया. प्रथम ही ओस-वंस स्थापन कीया था. उन ओशीयों तीर्थपर आपश्रीने चतुर्मास कर अलभ्य लाभ प्राप्त कीया जैसे मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजीकों ढुंढकझाल से बचाके संवेगी दीक्षा दे उपकेश गच्छका उद्धार करवाया था फीर दोनों मुनिवरोंने इस प्राचीन तीर्थके जीर्णोद्धारमें मदद कर वहापर जैन पाठ-शाला, बोर्डींग, श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान भंडार, जैन लायब्रेरी स्थापन करी थी और भी आपकों ज्ञानका वडा ही प्रेम था. आपश्रीके उपदेश द्वारा फलोधी में श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला नामकि संस्था स्थापित हुइ थी. आपश्रीने अपने पवित्र जीवनमें शासन सेवा बहुत ही करी थी. केइ जगह जीर्णोद्धार पाठशालावोंके लिये उपदेशदीया था जिनोंकि

उज्वल कीर्त्ति आज दुनियों में उच्च पदको भोगव रही है. आपश्रीका जन्म सं. १९३२ मे हुवा सं. १९४२ में स्थानकवासीयों में दीक्षा सं. १९६० में जैन दीक्षा और सं. १९७७ में आपका स्वर्गवास गुजरातके वापी ग्राममें हुवा है जहापर आज भी जनताके स्मरणार्थ स्मारक मोजुद है. एसे नि.स्पृही महात्मावोंकि समाजमें बहुत आवश्यक्ता है.

यह एक परम योगिराज महात्माका किंचित् आपको परिचय कराके हम हमारी आत्माको अहोभाग्य समजते है. समय पा के आपश्रीका जीवन लिख आपलोगोंकि सेवा मे भेजनेकि मेरी भावना है शासनदेव उसे शीघ्र पूर्ण करे.

I have the honour to be Sir,
Your most obedient slave
M. Rakhchand Parekh. S. Collieries.
Member Jain nava yuvak mitra mandal
LOHAWAT.

श्रीमदुपकेशगच्छीय-
मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी.
जन्म सं० १९३७ विजयदशमी.
स्थान० दीक्षा सं० १९६३
जैन दीक्षा सं० १९७२

ज्ञान परिचय।

पूज्यपाद प्रातःस्मरणिय शान्त्यादि अनेक गुणालंकृत श्री मान्मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब।

आपश्रीका जन्म मारवाड ओसवंस वैद मुत्ता ज्ञातीमे सं. १९३७ विजय दशमिकों हुवा था वचपने से ही आपका ज्ञानपर बहुत प्रेम था स्वल्पावस्थामें ही आप संसार व्यवहार वाणिज्य व्यैपारमे अच्छे कुशल थे सं. १९५४ मागशर वद १० कों आपका विवाह हुवा था. देशाटन भी आपका बहुत हुवा था. विशाल कुटुम्ब मातापिता भाइ काका स्त्रि आदि कों त्याग कर २६ वर्ष कि युवान वयमें सं. १९६३ चेत वद ६ कों आपने स्थानकवासीयों में दीक्षा ली थी. दशागम और ३०० थोकडा कंठस्थ कर ३० सूत्रों की वाचना करी थी तपश्चर्या एकान्तर छठ छठ, मास क्षमण आदि करनेमे भी आप सूरवीर थे आपका व्याख्यान भी वडाही मधुर रोचक और असरकारी था. शास्त्र अवलोकन करने से ज्ञात हुवा कि यह मूर्त्ति उत्थापकों का पन्थ स्वकपोल कल्पीत समुत्सम पेदा हुवा है तत्पश्चात् सर्प कंचवे कि माफीक ढुंढको का त्याग कर आप श्रीमान् रत्नविजयजी महाराज साहिब के पास ओशीयों तीर्थ पर दीक्षा ले गुरु आदेशसे उपकेश गच्छ स्वीकार कर प्राचीन गच्छका उद्धार

कीया स्वल्प समय में ही आपने दीव्य पुरुषार्थ द्वारा जैन समाजपर वडा भारी उपकार कीया आपश्रीकों ज्ञानका तो आले दर्जेका प्रेम है जहां पधारते है वहां ही ज्ञानका उद्योत करते है.

ओशीयों तीर्थ पर पाठशाला बोर्डींग कक्क क्रन्ति लायब्रेरी, श्री रत्न प्रभाकर ज्ञान भंडार आदि में आप श्रीने मदद करी है फलोधी में श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला संस्था—ईस्की दुसरी साखा ओशीयोंमे स्थापन करी जिन संस्थावों द्वारा जैन आगमों का तत्त्व-ज्ञानमय आज ७५ पुष्प नीकल चुके है जिस्की कीताबे १५३००० करीबन् हिन्दुस्तान के सब विभागमें जनता कि सेवा बजा रही है इनके सिवाय जैनपाठशाला जैन लायब्रेरी आदि भी स्थापन करवाइ गइ थी हम शासन देवतावोसे यह प्रार्थना करते है कि एसे पुरुषार्थी महात्मा चीरकाल शासन कि सेवा करते हमारे मरूस्थल देशमें विहार कर हम लोगोंपर सदैव उपकार करे। शम्

आपश्रीके चरणोपासक

इन्द्रचंद पारख

जोइन्ट सेक्रेटरी,

श्री जैन नवयुवक मित्र मण्डल

ऑफीस—**लोहावट** (मारवाड.)

———✻———

प्रस्तावना.

प्यारे सज्जन गण !

यह वात तो आपलोग वखुवी जानते है कि हरेक धर्मका महत्व धर्म साहित्य के ही अन्तर्गत रहा हुवा है जिस धर्मका धर्मसाहित्य विशाल क्षेत्रमें विकाशित होता है उसी धर्मका धर्म महत्व भी विशाल भूमिपर प्रकाश किया करता है अर्थात् ज्यों ज्यों धर्मसाहित्य प्रकाशित होता है त्यों त्यों धर्मका प्रचार बढा या करता है।

आज सुधरे हुवे जमाने के हरेक विद्वान प्रत्येक धर्म साहित्य अपक्षपात दृष्टिसे अवलोकन कर जिस जिस साहित्यके अन्दर तत्त्व वस्तु होती है उसे गुणग्राही सज्जन नेक दृष्टिसे ग्रहन कीया करते है अतेव धर्म साहित्य प्रकाश करने कि अत्यावश्यक्ता कों सब संसार एक दृष्टिसे स्वीकार करते है।

धर्म साहित्य प्रकाशित करने में प्रथम उत्साही महाशयजी और साथमें लिखे पढे सहनशील निःस्पृही पुरुषार्थी तथा तन मन धनसे मदद करनेवालों कि आवश्यक्ता है।

प्रत्येक धर्मके नेता लोग अपने अपने धर्म साहित्य प्रकाशित करने में तन धन मनसे उत्साही बन अपने अपने धर्म साहित्यकों जगतमय बनाने कि कोशीस कर रहे है।

दुसरे साहित्य प्रेमियों कि अपेक्षा हमारे जैनधर्मके उच्च कोटीका पवित्र और विशाल साहित्य भण्डारों कि ही सेवा कर रहा है पुरांणे विचारके लोग अपने साहित्य का महत्व ज्ञान भण्डारोंमें रखने में ही समझ रहे थे। इस संकुचित विचारोंसे हमारे धर्म साहित्य कि क्या दशा हुइ वह हमारे भण्डारों के

नेताओं कों अब मालुम होने लगी है कि साहित्य प्रकाश में हम लोग कितने पाच्छाडी रहे है।

हमारे धर्म साहित्य लिखनेवाले और प्रकाशित करनेवाले पूर्वाचार्य हमारे पर बडा भारी उपकार कर गये है परन्तु इस वख्त पूज्यपाद प्रातः स्मरणीय न्यायांभोनिधि जैनाचार्य श्रीमद्वि-जयानंदसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराज का हम परमोप-कार मानते है कि आपश्रीने ज्ञानभण्डारोंके नेताओं को वडे ही जोर सोरसे उपदेश देकर जेसलमेर पाटण खभात अमदाबाद आदिके ज्ञानभण्डरों में सडते हुवे धर्म साहित्यका उद्धार कर-वाया था आपश्री को साहित्य प्रकाशित करवानेका इतना तों प्रेमथा कि स्थान स्थान पर ज्ञानभण्डारों, लायब्रेरीयों, पुस्तक प्रचार मंडलों, संस्थावों आदि स्थापीत करवाके ज्ञानप्रचार बढाने में प्रेरणा करी थी। आपके उपदेशसे स्कूलों पाठशालावों गुरूकुल-वासादि स्थापित होनेसे समाज में ज्ञान कि वृद्धि हुइ है। इतना ही नही बल्के यूरोप तक भी जैनधर्म साहित्यका प्रचार करने में आपश्रीने अच्छी सफलता प्राप्त करी थी उन धर्म साहित्य प्रचार कि वदोलत आज हमारी स्वल्प संख्या होने परभी सर्व धर्मो में उच्च स्थानकों प्राप्त कीया है अच्छे अच्छे विद्वान लोगोंका मत्त है कि जैनधर्म एक उच्च कोटीका धर्म है।

साहित्य प्रचारके लिये श्रावक भीमसी माणेक वंबाइ, जैन धर्म प्रसारक सभा–जैन आत्मानंद सभा भावनगर, श्रीयशोविजय-जी ग्रन्थमाळा भावनगर, श्री जैन श्रेयस्कर मंडल मेसाणा. मेघजी हीरजी वंबाइ. अध्यात्म ज्ञान प्रकाश–बुद्धिसागर ग्रन्थमालो. श्री हेमचन्द्र ग्रन्थमाला. जैन तत्व प्रकाश मंडल. जैन ग्रन्थमाला— रायचन्द्र ग्रन्थमाला—राजेन्द्रकोश कार्यालय—श्री रत्न प्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला, फलोधी. श्री जैन आत्मानन्द पुस्तक प्रचार मंडल, आग्रा—दिल्ही, व्याख्यान साहित्य ओफीस. जैन साहित्य संशा·

धन—पुना. श्री आगमोदय समिति अन्यभी छोटी बडी सभाओंने साहित्य प्रकाशित करने में अच्छी सफलता प्राप्त करी है—मनुष्य मात्रका फर्ज है कि अपनि २ यथाशक्ति तन मन धनसे धर्म साहित्य प्रचारमें अवश्य मदद देना चाहिये।

साहित्यप्रेमी परम् योगिराज मुनि श्री रत्नविजयजी महाराज साहिब के सदुपदेशसे संवत् १९७३ का आसाड शुद ६ के रोज मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज द्वारा फलोधी नगरके उत्साही श्रावक वर्ग कि प्रेरणासे श्रीरत्नप्रभाकार ज्ञान पुष्पमाला नामकि संस्था स्थापित की गइ थी. संस्थाका खास उद्देश छोटे छोटे ट्रेक्टद्वारा जनता में जैनधर्म साहित्य प्रसिद्ध करनेका रखा गया था.

हरेक स्थानपर लम्बी चौडी बातों बनानेवाले या पर उपदेश देनेवाले बहुत मीलते है किन्तु जीस जगह रूपैये का नाम आता है तब कितनेक लोग धनाढ्य होनेपर भी मायाके मजुर उन्नतिके मेदान से पीच्छे हठ जाते है परन्तु मुनिश्रीके एक ही दिनके उपदेशसे फलोधी श्री संघने ज्ञानवृद्धिके लिये करीबन् २०००) का चन्दाकर श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला में पुस्तके छपानेके लिये जमा करवाके इस संस्थाकि नीवकों मजबुत बनादि थी. मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहबका १९७३ का चतुर्मासा फलोधी में हुवा आपश्रीने एक ही चतुर्मासा में ११ पुष्प प्रकाशित करवा दीया। चतुर्मासके बाद आपश्रीका पधारणा ओसीयातीर्थ जो कि श्री रत्नप्रभसूरीजी महाराजने उत्पलदे राजा आदि। ३८४००० राजपुतोंको प्रथमही ओशवाल बनाके श्रीवीरप्रभुके बिंबकी प्रतिष्ठा करवाइथी उन महापुरुषोंके स्मरणार्थ दुसरी शाखा रूप एक संस्था ओशीयों तीर्थपर श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाल स्थापित करी. जिस्का काम मुनिम चुन्निलालभाइके सुप्रत किया गया था. चुन्निलालभाइने ओशीयों तीर्थ तथा इन संस्थाकि अच्छी सेवा करी थी.

कीताबोंके जरिये तीर्थकी प्रसिद्धि और आवादि भी अच्छी हुइ थी, चुन्निलालभाइ स्वर्गवास होनेके बाद में पुस्तकोंकि व्यवस्था ठीक न रहेनेसे नमुनाके तौरपर पुस्तकों ओशीयों रखके शेष सब पुस्तकों फलोधी मगवा लि गइ थी अब इन संस्थाका कार्य बहुत ही उत्साह से चलता है स्वल्प ही समयमें ७५ पुष्पकि करीबन् १५३००० पुस्तके छप चुकी है जिसमें प्रतिमाछत्तीसी, गयवरविलास, दानछत्तीसी, अनुकम्पाछत्तीसी, प्रश्नमाला, चर्चाका पब्लिक नोटीस, लिगनिर्णय, सिद्धप्रतिमा, मुक्तावली, बत्तीससूत्रदर्पण, डंकेपर चोट, आगमनिर्णय और व्यवहार चूलिकाकि समालोचना यह बारहा पुस्तके तों मूर्तिउत्थापक ढुंढीये तेरेपन्थीयोंके बारे में लिखी गइ है जिस्में सप्रमाण मूर्त्ति और दया दानका प्रतिपादन किया गया है और स्तवन संग्रह भाग १-२-३-४, दादासाहिब कि पूजा, देवगुरु वन्दनमाला, जैन नियमावल, चौरासी आशातना, चैत्यबन्दनादि, जिनस्तुति, सुबोधनियमावली, प्रभु पूजा, जैन दीक्षा, तीर्थयात्रास्तवन, आनन्दघन चौवीसी, सज्झाय, गहुंलीयों, राइदेवसि प्रतिक्रमण, उपकेशगच्छ पट्टावली इन १८ पुस्तको म देवगुरुकी भक्तिसाधक स्तवन, स्तुतियों, चैत्यवंदनों आदि है। व्याख्याबिलास भाग १-२-३-४, मेझरनामों, तीन निर्नामा लेखोंका उत्तर, ओशीयों तीर्थके ज्ञान भंडारकि लीष्ट, अमे साधु शा माटे थया, विनती शतक, कक्काबत्तीसी, वर्णमाला, तीन चतुर्मासोंका दिग्दर्शन और हितशिक्षा यह १३ पुस्तकों में वस्तुस्वरूप निरूपण या उपदेशका विषय है। दशवैकालिकसूत्र, सुखविपाकसूत्र और नन्दीसूत्र एव तीन सूत्रोंका मूल पाठ है॥ शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५-६-७-८-९-१०-११-१२-१३-१४-१५-१६-१७-१८-१९-२०-२१-२२-२३-२४-२५ ॥ पैंतीस बोल, द्रव्यानुयोग प्रथम प्रवेशिका, गुणानुरागकुलक और सूचीपत्र इन २९ पुस्तको में श्री भगवती सूत्र, पन्नवणाजी सूत्र, जीवाभिगमजी

सूत्र, समवायांगजी सूत्र, अनुयोगद्वार सूत्र, नन्दीजी सूत्र स्थाना-यांगजी सूत्र, जम्बुद्विपपन्नति सूत्र, आचारांग सूत्र, सूत्र कृतांगजी सूत्र, उपासकदशांग सूत्र, अन्तगढदशांम सूत्र, अनुत्तरोववाइजी सूत्र, निरियावलकाजी सूत्र, कप्पवडंसियाजी सूत्र, पुप्फीयाजी सूत्र, पुप्फचूलीयाजी सूत्र, विन्ही दशांगजी सूत्र, बृहत्कल्प सूत्र, दशाश्रुतखध सूत्र, व्यवहार सूत्र, निशिथ सूत्र और कर्मग्रन्थादि प्रकारणों से खास द्रव्यानुयोगका सूक्ष्म ज्ञानकों सुगमतारूप हिन्दी भाषामें जो कि सामान्य बुद्धिवाला भी सुखपूर्वक समज के लाभ सके और इन भागोंमें बारहा सूत्रोंका हिन्दी भाषान्तर भी करवाया गया है शीघ्रबोधके प्रथम भाग से पचवीसवां भाग तकके लिये यहां विशेष विवेचन करनेकि आवश्यक्ता नहीं है. उन भागोंकि महत्वता आद्योपान्त पढने से ही हो सक्ती है इतना तों लोगोपयोगी हुवा है कि स्वल्प ही समय में उन भागोंकि नकलो खलासे हो गइ थी और ज्यादा मांगणी होने से द्वितीयावृत्ति छपाइ गइ थी वह भी थोडा ही दीनों में खलास हो जानेसे भी मांगणी उपर कि उपर आ रही है। अतेव उन भागोंकों और भी छपानेकि आवश्यक्ता होनेसे पुष्प २६-२७-२८-२९-३० कों इस संस्था द्वारा प्रगट कीया जाता है. उन शीघ्रबोधके भागोंकि जेसी जैन समाजमें आदर सत्कारके साथ आवश्यक्ता है उत्तनी ही स्थान-कवासी और तेरहापन्थी लोगोंमें आवश्यक्ता दिखाइ दे रही है।

इस संस्था में जीतन। ज्ञानकि सुगमता है इतनी ही उदारता है शरू से पुस्तकोंकि लागी किंमत से भी बहुत कम किंमत रखी गइ थी. जिस्मे भी साधु साध्वीयों, ज्ञानभंडार, लायब्रेरी आदि संस्थाओंकों तो भेट हा भेजी जाती थी. जब ४९ पुष्प छप चुके थे वहांतक भेट से ही भेजे जाते थे बादमें कार्यकर्त्तावोंने सोचा कि पुस्तकोंका अनादर होता है, आशातना बढती है. इस वास्ते लागी किंमत रख देना ठीक है कारण गृहस्थोंके घर से रूपैया

आठ आना सहज ही में निकल जावेंगे और यहां रूपैये जमा होंगे उनों से और भी ज्ञान वृद्धि होगी. सिर्फ बारहा सूत्रोंके भाषान्तरकि किंमत कुच्छ अधिक रखी गइ है इस्का कारण यह है कि इसमें च्यार छेदसूत्रोंका भाषान्तर भी साथ में है जो कि जिनोंको खास आवश्यक्ता होगा वह ही मंगावेगा। तथापि महेनत देखतों किंमत ज्यादा नहीं है शेष किताबेंकी किंमत हमारे उद्देश माफीक ही रखी गइ है. पाठकगण किंमत तर्फ ध्यान न दे किन्तु ज्ञान तर्फ दे कि जिन सूत्रोंका दर्शन होना भी दुर्लभ थे वह आज आपके करकमलो में मोजुद है इसका ही अनुमोदन करे। अस्तु।

वि. सवत् १९७९ का फागण वद २ के रोज श्रीमान्मुनि महाराजश्री श्रीहरिसागरजी तथा श्रीमान् ज्ञानसुन्दरजी महाराज ठाणे ४ का शुभागमन लोहावट ग्राम में हुवा. श्रोतागणकी दीर्घ काल से अभिलाषा थी कि मुनि श्रीज्ञानसुन्दरजी महाराज पधारे तों आपश्रीके मुखार्विंद से श्री भगवतीजी सूत्र सुने. तीन वर्षों से विनंती करते करते आप श्रीमानोंका पधारना होनेपर यहांके श्रावकोने आग्रे से अर्ज करनेपर परम दयालु मुनि श्रीने हमारी अर्ज स्वीकार कर मीती चैत वद ६ के रोज श्री भगवतीजी सूत्र सुबे व्याख्यानमें फरमाना प्रारंभ किया जिस्का महोत्सव वरघोडा रात्रीजागरणादि शा रत्नचंदजी छोगमलजी पारख कि तर्फसे हुवा था इस शुभ अवसर पर फलोधीसे श्रीजैन नवयुवक प्रेम मंडल तथा अन्यभी श्रावकवर्ग पधारे थे वरघोडा का दर्श-अंग्रेजीबाजा ग्यानमंडलीयों ओर सरकारी कर्मचरियों पोलीस आदिसे बडा ही प्रभावशाली दीखाइ देते थे श्री भगवतीजी सूत्रकि पूजामें अठारा सोनामोहरों मीलाके करीबन् रू १०००) की आवादानी हुइथी जिस्का श्री संघसे यह ठेराव हुवा कि इन आवादानीसे तत्त्व ज्ञानमय पुस्तकें छपा देना चाहिये।

इस सुअवसरपर श्री सुखसागर ज्ञान प्रचारक नामकि संस्थाकि भी स्थापना हुइ थी संस्थाका खास उदेश यह रखा गया था कि जैनशासनके सुख समुद्रमें ज्ञानरूपी अगम्य जल भरा हुवा है उस ज्ञानामृतका आस्वादन जनताकों एकेक बिंदु द्वारा करवा देना चाहिये. इस उदेशका प्रारंभमें श्री द्रव्यानुयोग द्वितीय प्रवेशिका प्रथम बिन्दु तथा श्री भाव प्रकरण दूसरा बिन्दु आप लोगोंकी सेवामें पहुंचा दिया था।

यह तीसरा बिन्दु जो शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ जो प्रथम ओर दुसरी आवृति श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला—फलोधीसे छप चुकीथी परन्तु वह सब नकले खलास हो जानेपरभी मागणी अधिक और अति लाभ जानके नइ आवृति जोकि पहले कि निष्पत् इस्मे बहुत सुधारा करवाया गया है शीघ्र बोध भाग पहले में धर्मके सन्मुख होनेवालेके गुण. मार्गानुसारीके ३५ बोल व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल, पैंतीस बोल लघुदंडक महादंडक विरहद्वार रूपी अरूपी उपयोग चौदाबोल वीसबोल तेवीस बोल चालीस बोल १०८ बोल और छे आरों का इतिहासका वर्णन है दूसरा भागमें विस्तार पूर्वक नौतत्त्व पचवीस क्रियाका विवरण है। तीसरा भागमें नय निक्षेपा स्याद्वाद षट्द्रव्य सप्तभंगी अष्टपक्ष द्रव्यगुणपर्याय आदि जो जैनागमकि खास कुंजीयों कहलाती है भाषा आहार संज्ञायोनि और अल्पा बहुत्व आदि है। चोथा भागमें मुनिमहाराजोंके मार्ग जेसे अष्ट प्रवचन, गौचरीके दोष, मुनिके उपकरण, साधु समाचारी आदि हे॥ पांचवें भागमें कर्मो दि दुर्गम्य विषयभी बहुत सुगमतासे लिखी गइ है इन पांचो भागकि विषयानुक्रमणिका देखनेसे आपको रोशन हो जायगा कि कितने महत्ववाले विषय इन भागोंमे प्रकाशित करवाये गये है।

अब हम हमारे पाठकोंका ध्यान इस तर्फ आकर्षित करना चाहते है कि जितने छद्मस्थ जीव है उन सबकि एकरूची नहीं

होती है याने अलग अलग रूची होती है इतनाही नही बल्के एक मनुष्यकि भी हर समय एक रूची नही होती है जिस जिस समय जो जो रूची होती है तदानुसार वह कार्य किया करता है। अगर वह कार्य परमार्थके लिये कीसी रूपमें कीसी व्यक्तिके लीये उपकारी होतों उनका अनुमोदन करना और उनसे लाभ उठाना सज्जन पुरुषोंका कर्तव्य है।

यद्यपि मुनिश्री कि रूची जैनागमोंपर अधिक है और जनताकों सुगमता पूर्वक जैनागमोंका अवलोकन करवा देनेके इरादासे आपने यह प्रवृति स्वीकार कर जनसमाज पर वडा भारी उपकार कीया है इस वास्ते आपका ज्ञानदानकि उदार वृत्तिकों हम सहर्ष बदाके स्वीकार करते है और साथमें अनुरोध करते है कि आप चीरकाल तक इस वीर शासनकी सेवा करते हुवे हमारे ४५ आगमोंकों ही इसी हिन्दी भाषाद्वारा प्रगट करे तांके हमारे जेसे लोगोंको मालुम होकि हमारे घरके अन्दर यह अमूल्य रत्न भरे हुवे है।

अन्तमें हमारे वाचक वृन्दसे हम नम्रता पूर्वक यह निवेदन करते है कि आप एक दफे शीघ्र बोध भाग १ से २५ तक मंगवाके क्रमशः पढीये कारण इन भागोंकी शैली एसी रखी गइ है कि क्रमशः पढनेसे हरेक विषय ठीक तौरपर समजमें आसकेगें। ग्रन्थकी सार्थकता तब ही हो सक्ती है कि ग्रन्थ आद्योपान्त पढे और ग्रन्थकर्ताका अभिप्रायकों ठीक तोरपर समजे। बस हम इतना ही कहके इस प्रस्तावनाको यहां ही समाप्त कर देते है। सुज्ञेषु किं वहुना।

भवदीय,

छोगमल कोचर.

प्रेसिडन्ट श्री जैन नवयुवक मित्रमडल

मु० लोहावट—मारवाड.

१९८० का मीती
कार्तिक शुद ५
ज्ञानपचमि.

खुश खबर लिजिये.

शीघ्रबोध भाग १–२–३–४–५ वां

जिस्की संक्षिप्त

विषयानुक्रमणिका.

शीघ्रबोध भाग ४ थो.

शीघ्रबोध भाग ५ वां.

श्रीशीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वां के

थोकडोंकि नामावली.

किमत मात्र रु. १॥

पत्ता— श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला.
मु० फलोधी—(मारवाड.)

श्री सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा.
मु० लोहावट—(मारवाड.)

शुद्धिपत्र.

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
२९	८	दा	दो
२९	२०	अत्तन्ती	असंज्ञी
३३	१	सागरोप	पल्योपम
३८	१७	१० भु०	१० औदारीक
३८	१९	१३ वैक्रय	१३ देवता
७८	११	नवतत्त्वका	नवतत्त्वमें
८१	१	सिद्धि	सिद्धों
८२	२	परस्पर	परम्परा
८२	६	तीयर्च	तीर्यंच
८४	१७	समथ	समर्थ
८४	२०	स्याते	स्याते जीव
८६	८	मलता	मालती
१८७	२०	,,	तेइन्द्रिय जाति
१२४	७	०	कटक ८-१२-१६ पेहर
१२६	१९	कासी	कीसका
१३५	२६	अठा	अठारा
१४१	६	यंत्रमे । ०	१
१४१	७	यंत्रमे । ०	३
१४१	९	५७२	९७२
१४२	१४	तीर्यंध	तीर्यंच
१५६	३	संग्रल	संग्रह
१७३	१	रहात	रहित
१७७	११	तुंद	मुक

१८५	२	पर्याय	गुण
२३५	१४	जास	जिस
२४०	२	रथ	रक्षा
२४४	२०	समिमि	समिति
२६५	१०	,,	स्नातकमें एक केवली समु० पावे
२८५	७	इच्छार	इच्छाकार
२८५	१०	इच्छार	इच्छाकार
२८६	१७	३-८	२-८
२८३	१७	२-८	३-८
३०६	६	लोन	लोग
३०९	४	५६	५७
३१७	१	१३२	१२२

॥ श्री रत्नप्रभसूरिसद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग पहेला.

धर्मके सन्मुख होनेवालोमें १५ गुण होना चाहिये।

१ नितीवान हो, कारण निती धर्मकी माता है।
२ हीम्मत बाहादुर हो, कारण कायरोंसे धर्म नही होता है।
३ धैर्यवान् हो, हरेक कार्योंमें आतुरता न करे।
४ बुद्धिवान् हो, हरेक कार्य स्वमति विचारके करे।
५ असत्यको धीक्कारनेवाला हो, और सत्य वचन बोले।
६ निष्कपटी हो, हृदयं साफ स्फटिकरत्न माफिक हो।
७ विनयवान, और मधुर भाषाका बोलनेवाला हो।
८ गुणग्राही हो, और स्वात्मश्लाघा न करो।
९ प्रतिज्ञा पालक हो, कीये हुवे नियमोंको बराबर पाले।
१० दयावान हो, और परोपकार कि बुद्धि हो।
११ सत्य धर्मका अर्थी हो, सत्यकाही पक्ष रखना।
१२ जितेन्द्रिय हो, कषायकी मंदता हो।
१३ आत्म कल्याण कि द्रढ इच्छा हो।

१४ तत्त्व विचारमें निपुण हो। तत्त्वमें रमणता करे।

१५ जिन्होंके पास धर्म पाया हो उन्होंका उपकार कभी भुलना नहीं परन्तु समयपाके प्रति उपकार करे।

थोकडा नम्बर १

(मार्गानुसारीके ३५ बोल)

(१) न्यायसंपन्न विभव–न्यायसे द्रव्य उपार्जन करना परन्तु विश्वासघात स्वामिद्रोही, मित्रद्रोही, चौरी, कुड तोल, कुड माप आदि न करे। किसीकी थापण न रखे खोटा लेख न बनावे महान् आरंभवाले कर्मादानादि न करे। अर्थात् लोक विरुद्ध कार्य न करे।

(२) शिष्टाचार–धार्मीक नैतिक और अपने कुलकि मर्यादा माफिक आचार व्यवहार रखना। अच्छे आचारवालोंका संग और तारीफ करना।

(३) सरिखे धर्म और आचार व्यवहारवाले अन्य गोत्रीके साथ अपने बच्चोंका विवाह (लग्न) करना, दम्पतिके आयुष्यादिका अवश्य विचार करना अर्थात् बाललग्न, वृद्धलग्न से बचना और दम्पतिका धर्म–जीवन सामान्य धर्मसे ही सुखपूर्वक होता है। वास्ते सामान्यधर्म अवश्य देखना।

(४) पापके कार्य न करना अर्थात् जिस्में मिथ्यात्वादिसे चिकने कर्मबन्ध होता है या अनर्थ दंड–पाप न करना और उपदेश भी नही देना।

(५) प्रसिद्ध देशाचार माफिक वर्तात्र रखना उद्भट

वेष या खरचा न करना ताके भविष्यमें समाधि रहै। आवादानी माफीक खरचा रखना।

(६) कीसीका भी अवगुनवाद न बोलना जो अवगुनवाला हो तो उन्हीकि संगत न करना तारीफ भी न करना परन्तु अवगुण बोलके अपनि आत्माकों मलीन न करे।

(७) जिस मकानके आसपासमें अच्छे लोगोंका मकांन हो और दरवाजे अपने कब्जेमेंहो, मन्दिर, उपासरा या साधर्मी भाइयों नजीक हो एसे मकानमें निवास करना चाहिये। ताके सुखसे धर्मसाधन करसके।

(८) धर्म, निति. आचारवन्त और अच्छी सलाहके देनेवालोंकी संगत करना चाहिये ताके चित्तमें हमेशां समाधी और वनी रहै।

(९) मातापिता तथा वृद्ध सज्जनोंकि सेवाभक्ति विनय करना, तथा कोइ आपसे छोटा भी होतो उनका भी आदर करना सबसे मधुर वचनोंसे बोलना।

(१०) उपद्रववाले देश, ग्राम या मकान हो उनका परित्याग करना चाहिये। रोग, मरकी, दुष्काल आदिसे तकलीफ हो एसे देशमें नही रहेना।

(११) लोक निंदने योग्य कार्य न करना और अपने स्त्री पुत्र और नोकरोंको पहलेसे ही अपने कब्जेमे रखना अच्छा आचार व्यवहार सीखाना।

(१२) जैसी अपनी स्थिति हो या पेदास हो इसी माफिक खरचा रखना शिरपर करजा करके संसार या धर्मकार्य में नामून हांसल करनेके इरादेसे बेभान होके खरचा न कर देना खरचा करनेके पहिले अपनी हासयत देखना।

(१३) अपने पूर्वजोंका चलाइ हुइ अच्छी मर्यादाकों या वेषकों ठीक तरहसे पालन करना कीसीके देखादेख प्रवृत्ति या वेष नही बदलना।

(१४) आठ प्रकारके गुणोंकों प्रतिदिन सेवन करते रहना यथा (१) धर्मशास्त्र श्रवण करनेकि इच्छा रखना (२) योग मीलनेपर शास्त्र श्रवणमें प्रमाद न करना (३) सुने हुवे शास्त्रके अर्थकों समझना (४) समझे हूये अर्थकों याद करना (५) उसमें भी तर्क करना (६) तर्कका समाधान करना (७) अनुपेक्षा उपयोगमें लेना या उपयोग लगाना (८) तत्त्वज्ञानमें तल्लीन होजाना शुद्ध श्रद्धा रखना दुसरेको भी तत्त्वज्ञानमें प्रवेश करा देना।

(१५) प्रतिदिन करने योग्य धर्मकार्यकों संभालते रहेना, अर्थात् टाईमसर धर्म क्रिया करते रहना। धर्महीकों सार समझना।

)१६) पहिले कियेहुवे भोजनके पचजानेसे फिर भोजन करना इसीसे शरीर आरोग्य रहता है और चित्तमें समाधी रहेती है।

(१७) अपचा अजिर्ण आदि रोग होनेपर तुरत आहारको त्याग करना, अर्थात् खरी भूख लगनेपर ही आहार करना परन्तु लोलुपता होके भोजन करलेनेके बाद मीष्टानादि न खाना और प्रकृतिसे प्रतिकुल भोजन भी नही करना, रोग आनेपर औषधीके लिये प्रमाद न करना।

(१८) संसारमें धर्म, अर्थ, कामको साधते हुवे भी मोक्षवर्गकों भूलना न चाहिये। सारवस्तु धर्म ही समझना। और समय पाकर धर्मकार्योंमे पुरुषार्थ भी करना।

(१९) अतित्थी-अभ्यागत गरीब रांक आदिकों दुःखी

देखके करूणाभाव लाना यथाशक्ति उन्होंकी समाधीका उपाय करना ।

(२०) कीसीका पराभय करनेके इरादेसे अनितिका कार्य आरंभ नही करना, विना अपराध किसीकों तकलीफ न पहूंचाना ।

(२१) गुणीजनोंका पक्षपात करना उन्होंका बहूमान करना सेवाभक्ति करना ।

(२२) अपने फायदेकारी भी क्यों न हो परन्तु लोग तथा राजा निषेद्ध कीये हूवे कार्यमें प्रवृत्ति न करना ।

(२३) अपनी शक्ति देखके कार्यका प्रारंभ करना प्रारंभ किये हूवे कार्यको पार पहूंचा देना ।

(२४) अपने आश्रितमें रहे हुवे मातापिता, स्त्रि, पुत्र, नोकरादिका पोषण ठीक तरहसे करना । कीसीकों भी तकलीफ न हो एसा वर्ताव रखना ।

(२५) जो पुरुष व्रत तथा ज्ञानमें अपनेसे बढा हो उन्होंकों पूज्य तरीके बहूमान देना, और विनय करना । तथा गुणलेनेकि कोशीस करना ।

(२६) दीर्घदर्शी–जो कार्य करना हो उन्हीमें पहिले दीर्घ-द्रष्टीसे भविष्यके लाभालाभका विचार करना चाहिये ।

(२७) विशेषज्ञ कोइ भी वस्तु पदार्थ या कार्य हो तो उन्हीके अन्दर कोनसा तत्त्व है कि जो मेरी आत्माकों हितकर्ता है या अहितकर्ता है उन्हीका विचार पहले करना चाहिये ।

(२८) कृतज्ञ–अपने उपर जिस्का उपकार है उन्हीकों कभी भूलना नही, जहांतक बने वहांतक प्रतिउपकार करना चाहिये ।

(२९) लोकप्रीय–सदाचारसे पसी प्रवृत्ति अपनी रखनी चाहिये कि वह सब लोगोंको प्रीय हों अर्थात् परोपकारके लिये अपना कार्य छोडके दुसरेके कार्यको पहले करदेना चाहिये।

(३०) लज्जावन्त–लौकीक और लोकोत्तर दोनों प्रकारकी लज्जा रखना चाहिये कारण लज्जा है सो नितिकि माता है लज्जावन्तकी लोक तारीफ करते है बहूतसी वखत अकार्यसे बच जाते है।

(३१) दयालुहो–सब जीवोंपर दयाभाव रखना अपने प्राणके माफीक सब आत्मावोंकों समझके कीसीकों भी नुकशान न पहूंचाना।

(३२) सुन्दर आकृतिवाला अर्थात् आप हमेशां हस्तवदन आनन्दमे रहना अर्थात् क्रूर प्रकृति या क्षीण क्षीण प्रत्ये क्रोधमानादिकि वृत्ति न रखना। शान्त प्रकृति रखनेमे अनेक गुणोंकि प्राप्ती होती है।

(३३) उन्मार्ग जाते हूवे जीवोंको हितबोध देके अच्छे रहस्तेका बोध करना उन्मार्गका फल कहते हूवे मधुर वचनोंसे समझाना।

(३४) अन्तरग वैरी क्रोध, मान, माया, लोभ, हर्ष, शोक इन्होंके पराजय करनेका उपाय या साधनों तैयार करतेहूवे वैरीयोंको अपने कब्जे करना।

(३५) जीवकों अधिक भ्रमण करानेवाले विषय (पंचेन्द्रिय) और कषाय है उनका दमन करना, अच्छे महात्मावोंकी सत्संग करते रहना, अर्थात् मोक्षमार्ग बतलानेवाले महात्मा ही होते है सन्मार्गका प्रथम उपाय सत्संग है।

यह पैंतीस बोल संक्षेपसे ही लिखा है कारण कंठस्थ करनेवा-

लोंको अधिक विस्तार कीतनी वखत बोजारूप हो जाता है वास्ते यह ३५ बोल कंठस्थ करके फीर विद्वानोंसे विस्तारपूर्वक समझके अपनी आत्माका कल्याण अवश्य करना चाहिये । शम् ।
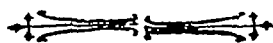
थोकडा नं० २.

(व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल)

इन सडसठ बोलोंको बारह द्वार करके कहेंगे-(१) सद्दहणा ४ (२) लिंग ३ (३) विनय १० प्रकार (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दोषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयणा ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ इति ।

(१) सद्दहणा चार प्रकारकी-(१) पर तीर्थीका अधिक परिचय न करे (२) अधर्म प्ररुपक पाखंडीयोंकी प्रशंसा न करे (३) स्वमतका पासत्था, उसन्ना और कुलिंगादिकी संगत न करे. इन तीनोंका परिचय करनेसे शुद्ध तत्त्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती (४) परमार्थको जाणनेवाले संविग्न गीतार्थकी उपासना करके शुद्ध श्रद्धाको धारण करें ।

(२) लिंगका तीन भेद-(१) जैसे तरुण पुरुष रंग राग उपर राचे वैसे ही भव्यात्मा श्री जिन शासनपर राचे (२) जैसे क्षुधातुर पुरुष खीर खांडयुक्त भोजनका प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतरागकी वाणीका आदर करे (३) जैसे व्यवहारीक ज्ञान पढने की तिव्र इच्छा हो और पढानेवाला मिलनेसे पढ कर इस लोकमें सुखी होवे वैसे ही वीतरागके आगमोंका सुक्ष्मार्थ नित नया ज्ञान सीखके इह लोक और परलोकके मनोवांच्छत सुखको प्राप्त करें ।

(३) विनयका दश भेद-(१) अरिहन्तोंका विनय करे (२) सिद्धोंका विनय० (३) आचार्यका वि० (४) उपाध्यायका वि० (५) स्थवीरका वि० (६) गण (बहुत आचार्योंके समुह)का वि० (७) कुल (बहुत आचार्योंके शिष्यसमुह)का वि० (८) स्वाधर्मीका वि० (९) संघका वि० (१०) संभोगीका विनय करे. इन दशोंका बहुमानपूर्वक विनय करे। जैन शासनमें 'विनय मूल धर्म है'। विनय करनेसे अनेक सद्गुणोंकी प्राप्ति हो सक्ती है।

(४) शुद्धताके तीन भेद-(१) मनशुद्धता-मन करके अरिहन्तदेव ३४ अतिशय, ३५ वाणी, ८ महाप्रातिहार्य सहित, १८ दूषण रहित×१२ गुण सहित हमारे देव है। इनके सिवाय हजारों कष्ट पडने पर भी सरागी देवोंका स्मरण न करे (२) वचन शुद्धता वचनसे गुण कीर्त्तन अरिहन्तोंके सिवाय दूसरे सरागी देवोंका न करे (३) काय शुद्धता-कायसे नमस्कार भी अरिहन्तोंके सिवाय अन्य सरागी देवोंको न करे।

(५) लक्षणके पांच भेद-(१) सम-शत्रु मित्र पर सम परिणाम रखना (२) संवेग-वैराग भाव रखना याने संसार असार है विषय और कषायसे अनन्ताकाल भव भ्रमण करते हुवे इस भव अच्छी सामग्री मिली है इत्यादि विचार करना। (३) निर्वेग-शरीर और संसारका अनित्यपणा चिन्तवन करना। बने जहां तक इस मोहमय जगत्‌से अलग रहना और जगतारक जिनराजकी दीक्षा ले कर्म शत्रुओंको जीतके सिद्धपदको प्राप्त करनेकी हमेशां अभिलाषा रखना (४) अनुकम्पा-स्वात्मा, परात्माकी

× दानान्तराय, लाभांतराय, भोगांनराय, उपभोगातराय, वीर्यतराय, हास्य, भय, शोक, जुगप्सा, रति, अरति, मिथ्यात्व, अज्ञान, अव्रत, राग, द्वेष, निंद्रा, मोह यह १८ दुषण न होना चाहिये।

अनुकम्पा करनी अर्थात् दुःखी जीवको सुखी करना (५) आस्ता-त्रैलोक्य पूजनीय श्री वीतरागके वचनोंपर दृढ श्रद्धा रखनी, हिताहितका विचार, अर्थात् अस्तित्व भावमें रमण करना। यह व्यवहार सम्यक्त्वका लक्षण है। जिस बातकी न्युनता हो उसे पूरी करना।

(६) भूषणके पांच भेद-(१) जिन शासनमें धैर्यवत हो। शासनका हर एक कार्य धैर्यतासे करें। (२) शासनमें भक्तिवान हो (३) शासनमें क्रियावान हो (४) शासनमें चातुर्य हो। हर एक कार्य ऐसी चतुरताके साथ करे ताके निर्विघ्नतासे हो (५) शासनमें चतुर्विध संघकी भक्ति और बहुमान करनेवाला हो। इन पांच भूषणोंसे शासनकी शोभा होती है।

(७) दूषण पांच प्रकारका-(१) जिन वचनमें शंका करनी (२) कंखा-दूसरे मतोंका आडम्बर देखके उनकी वांच्छा करनी (३) वितिगिच्छा-धर्म करणीके फलमें संदेह करना कि इसका फल कुछ होगा या नहीं। अभीतक तो कुछ नहीं हुवा इत्यादि (४) पर पाखंडीसे हमेशां परिचय रखना (५) पर पाखंडीकी प्रशंसा करना ये पांच सम्यक्त्वके दूषण है। इसे टालने चाहिये।

(८) प्रभावना आठ प्रकारनी-(१) जिस कालमें जितने सूत्रादि हो उनको गुरुगमसे जाणे वह शासनका प्रभाविक होता है (२) बडे आडम्बरके साथ धर्म कथाका व्याख्यान करके शासनकी प्रभावना करें (३) विकट तपस्या करके शासनकी प्रभावना करे (४) तीन काल और तीन मतका जाणकार हो (५) तर्क, वितर्क, हेतु, वाद, युक्ति, न्याय और विद्यादि बलसे वादियोंको शास्त्रार्थमें पराजय करके शासनकी प्रभावना करे (६) पुरुषार्थी पुरुष दिक्षा लेके शासनकी प्रभावना करे (७) कविता करनेकी

शक्ति हो तो कविता करके शासनकी प्रभावना करे (८) ब्रह्मचर्यादि कोई बडा व्रत लेना हो तो प्रगट बहुतसे आदमियोंके बीच में ले। इसीसे लोगोंको शासन पर श्रद्धा और व्रत लेनेकी रुची बढती है अथवा दुर्बळ स्वधर्मी भाइयोंकी सहायता करनी यह भी प्रभावना है परन्तु आजकल चौमासेमें अभक्ष वस्तुओंकी प्रभावना या-लड्डु आदि बांटते है दीर्घदृष्टिसे विचारीये इस बांटने से शासनकी क्या प्रभावना होती है ? और कितना लाभ है इसको बुद्धिमान स्वयं विचार कर सक्ते है अगर प्रभावनासे आपका सच्चा प्रेम हो तो छोटे छोटे तत्त्वज्ञानमय ट्रेक्टकि प्रभावना करिये तांके आपके भाइयोंको आत्मज्ञानकि प्राप्ती हो।

(९) आगार छे हैं–सम्यक्त्वके अंदर छे आगार है (१) राजाका आगार (२) देवताका० (३) न्यातका० (४) माता पिता गुरुजनोंका० (५) बलवंतका० (६) दुष्कालमें सुखसे आजीविका न चलती हो, इन छे आगारोंसे सम्यक्त्वमें अनुचित कार्य भी करना पडे तो सम्यक्त्व दुषित नहीं होता है।

(१०) जयणा छे प्रकारकी–(१) आलाप–स्वधर्मी भाईयोंसे एक वार बोलना (२) संलाप–स्वाधर्मी भाईयोंसे वार २ बोलना (३) मुनिको दान देना और स्वधर्मी वात्सल्य करना (४) प्रतिदिन वार २ करना (५) गुणीजनोंका गुण प्रगट करना (६) और वन्दन, नमस्कार, वहुमान करना।

(११) स्थान छे हैं–(१) धर्मरुपी नगर और सम्यक्त्व रुपी दरवाजा (२) धर्मरुप वृक्ष और सम्यक्त्वरुपी जड (३) धर्मरुपी प्रासाद और सम्यक्त्वरुपी नीव (४) धर्मरुपी भोजन और सम्यक्त्वरुपी थाल (५) धर्मरुपी माल और सम्यक्त्वरुपी दुकान (६) धर्मरुपी रत्न और सम्यक्त्वरुपी तिजूरी०

(१२) भावना छे हैं-(१) जीव चैतन्य लक्षणयुक्त असंख्यात प्रदेशी निष्कलंक अमूर्ती है, (२) अनादि कालसे जीव और कर्मोंका सयोग है। जैसे दूधमे घृत, तिलमें तेल, धूलमें धातु, पुष्पमें सुगन्ध, चन्द्रकान्तीमें अमृत इसी माफिक अनादि सयोग है (३) जीव सुख दुःखका कर्ता है और भोक्ता है। निश्चय नयसे कर्मका कर्ता कर्म है और व्यवहार नयसे जीव है. (४) जीव, द्रव्य, गुण पर्याय, प्राण और गुण स्थानक सहित है. (५) भव्य जीवको मोक्ष है (६) ज्ञान, दर्शन और चारित्र मोक्षका उपाय है॥ इति॥ इस थाकडेको कंठस्थ करके विचार करो कि यह ६७ बोल व्यवहार सम्यक्त्वके है इनमेसे मेरेमे कितने है और फिर आगेके लिये बढनेकी कोशीस करो और पुरुषार्थ द्वारा उनको प्राप्त करो॥ कल्याणमस्तु॥

सेव भंते सेव भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर ३

(पैंतीस बोल)

(१) पहेले बोले गति च्यार—नरकगति, तीर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति.

(२) जाति पांच-एकेन्द्रिय, बेइंद्रिय, तेइन्द्रिय, चोरिंद्रय और पंचेन्द्रिय.

(३) काया छे—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, और त्रसकाय।

(४) इन्द्रिय पांच—श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय ।

(५) पर्याप्ति छे—आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, श्वासोश्वास पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति, और मनःपर्याप्ति.

(६) प्राणदश—श्रोत्रेन्द्रिय बलप्राण, चक्षुइन्द्रिय बलप्राण, घ्राणेन्द्रिय बलप्राण, रसेन्द्रिय बलप्राण, स्पर्शेन्द्रिय बलप्राण, मनबलप्राण, वचन बलप्राण, काय बलप्राण, श्वासोश्वास बलप्राण आयुष्य बलप्राण.

(७) शरीर पांच—औदारिक शरीर, वैक्रिय शरीर, आहारीक शरीर, तेजस शरीर, कारमाण शरीर ।

(८) योग पंदरा—च्यार मनके, च्यार वचनके, सात कायके, यथा—सत्यमनयोग, असत्यमनयोग, मिश्रमनयोग, व्यवहार मनयोग, सत्यभाषा, असत्यभाषा, मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा, औदारीक काययोग, औदारीक मिश्र काययोग, वैक्रियकाययोग, वैक्रिय मिश्रकाययोग. आहारक काययोग, आहारक मिश्र काययोग, और कार्मण काययोग ।

(९) उपयोग बारहा—पांच ज्ञान, तीन अज्ञान, च्यार दर्शन, यथा—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान, मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान. विभंगज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन.

(१०) कर्म आठ—ज्ञानावर्णीय (जैसे घाणीका बेल) दर्शनावर्णिय (जैसे राजाका पोलीया) वेदनीय कर्म (जैसे मधुलिम छुरी) मोहनीय कर्म (मदिरा पान कीये हुवे मनुष्य)

आयुष्यकर्म (जैसे कारागृह) नामकर्म (जैसे चीतारो) गोत्र-कर्म (कुंभार) अंतरायकर्म (जैसे राजाका खजांची) ।

(११) गुणस्थानक– चौदा— मिथ्यात्वगुणस्थानक, सास्वादन गु० मिश्र गु० अव्रतसम्यग्दृष्टि गु० देशव्रती श्रावकका गु० प्रमत्त साधुका गु० अप्रमत्त साधु गु० निवृतिबादर गु० अनिवृतिबादर गु० सुक्ष्म संपराय गु० उपशान्त मोह गु० क्षीणमोह गु० सयोगि गु० अयोगि गु० ।

(१२) पांच इन्द्रियोंका–२३ विषय. श्रोत्रेन्द्रियकि तीन विषय–जीवशब्द. अजीवशब्द मिश्रशब्द, चक्षुरिन्द्रियकी पांच विषय. कालारंग, निलारंग, रातो (लाल), पीलोरंग, सफेदरंग, घ्राणेन्द्रियकी दोय विषय. सुगन्ध, दुर्गन्ध, रसेन्द्रियकी पांच विषय तीक्त कटुक, कषाय आम्बिल, मधुर, स्पर्शेन्द्रियकी आठ विषय. कर्कश, मृदुल, गुरु, लघु, सीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष.

(१३) मिथ्यात्वदश–जीवकों अजीव श्रद्धे वह मिथ्यात्व, अजवकों जीव श्रद्धे वह मिथ्यात्व, धर्मकों अधर्म श्रद्धे, अधर्मकों धर्म श्रद्धे० साधुकों असाधु श्रद्धे; असाधुकों साधु श्रद्धे० अष्टकर्मोंसे मुक्तकों अमुक्त श्रद्धे० अष्टकर्मोंसे अमुक्तकों मुक्त श्रद्धे० संसारके मार्गको मोक्षका मार्ग श्रद्धे० मोक्षके मार्गकों संसारका मार्ग श्रद्धे वह मिथ्यात्व है विशेष मिथ्यात्व २५ प्रकारका देखो गुणस्थानद्वार ।

(१४) छोटी नवतत्त्वके ११५ बोल–विस्तार देखों बडी नवतत्त्वसे । नवतत्त्वके नाम. जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, पुन्यतत्त्व, पापतत्त्व, आश्रवतत्त्व, संवरतत्त्व, निर्ज्जरातत्त्व बन्धतत्त्व, मोक्षतत्त्व । जिसमें ।

(क) जीवतत्त्व के चौदा भेद है। सूक्ष्म एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय; असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञीपंचेन्द्रिय एवं सातोंके पर्याप्ता. सातोंके अपर्याप्ता मीलानेसे १४ भेद जीवका है।

(ख) अजीवतत्त्वके चौदे भेद है यथा-धर्मास्तिकायके तीन भेद है धर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश, एवं अधर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश. एवं आकाशास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश. एवं नौ. और दशवा काल तथा पुद्गलास्तिकायके च्यार भेद स्कन्ध. स्कन्धदेश स्कन्धप्रदेश, परमाणु पुद्गल एवं चौदा भेद अजीवका है।

(ग) पुन्यतत्त्वके नौ भेद है। अन्न देना पुन्य, पाणी देना पुन्य, मकान देणा पुन्य, पाटपाटला शय्या देना पुन्य. वस्त्र देना पुन्य, मनपुन्य, वचनपुन्य, कायपुन्य, नमस्कारपुन्य.

(घ) पापतत्त्वके अठारा भेद। प्राणातिपात (जीवहिंसा करना) मृषावाद (झुठ बोलना) अदत्तादान (चोरी करना) मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन, परपरीवाद, रति अरति, माया-मृषावाद, मिथ्यात्वशल्य एवं १८ पाप.

(च) आश्रवतत्वके २० भेद है यथा-मिथ्यात्वाश्रव, अव्रताश्रव, प्रमादाश्रव, कषायाश्रव, अशुभयोगाश्रव, प्राणातिपाताश्रव, मृषावादाश्रव, अदत्तादानाश्रव, मैथुनाश्रव, परिग्रहाश्रव, श्रोत्रेन्द्रियकों अपने कब्जेमें न रखनाश्रव. एवं चक्षु इन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय. एवं मन० वचन० काय० अपने वसमे न रखे, भंडोपकरण अयत्नासे लेना, अय-

त्नासे रखना. सूचीकुश अर्थात् तृणमात्र अयत्नासे लेना-रखना से आश्रव होता है।

(छ) संवरतत्त्व—के २० भेद है यथा समकित संवर, व्रतप्रत्याख्यान संवर अप्रमादसंवर, अकषायसंवर, शुभयोगसंवर, जीवहिंस्या न करे, जुठ न बोले, चोरी न करे, मैथुन न सेवे, परिग्रह न रखे, श्रोत्रेन्द्रिय अपने कब्जेमें रखे, चक्षु इन्द्रिय० घ्राणेन्द्रिय० रसेन्द्रिय० स्पर्शेन्द्रिय, मन, वचन, काया अपने कब्जेमे रखे, भंडोपकरण यत्नासे ग्रहन करे, यत्नासे रखे, एवं सूचीकुश अर्थात् तृणमात्र यत्नासे उठावे यत्नासे रखे एव २० भेद सवरका है।

(ज) निर्जरातत्त्व के १२ भेद है यथा अनसन, उणोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रस (घिगइ) का त्याग, कायाकलेस, प्रतिसंलेषना, प्रायश्चित्त, विनय, वैयावच्च, स्वध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग एवं १२ भेद.

(झ) बन्धतत्व के च्यार भेद है. प्रकृतिबन्ध, स्थिति बन्ध, अनुभागबन्ध, और प्रदेशबन्ध.

(ट) मोक्षतत्व के च्यार भेद है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य.

(१५) आत्मा आठ—द्रव्यात्मा, कषायात्मा, योगात्मा उपयोगात्मा, ज्ञानात्मा, दर्शनात्मा, चारित्रात्मा, वीर्यात्मा.

(१६) दंडक २४—यथा सात नरकका एक दंड, सात नरकके नाम—घम्मा, वंशा, शीला, अञ्जना, रिठ्ठा, मघा, माघवती. इन सात नरकके गौत्र—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा, तमस्तमःप्रभा. एव पहला दंडक। दश भुवनपतियोंके दश दंडक यथा—असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्ण-

कुमार, विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, द्विपकुमार, दिशाकुमार, उदधिकुमार, वायुकुमार, स्तनीतकुमार एवं ११ दंडक हुवा. पृथ्वीकायका दंडक, अपकायका, तेउकायका, वायुकायका, वनस्पतिकायका, बेइन्द्रिकादंडक तेइन्द्रिका, चौरिंद्रिका, तिर्यचपंचेन्द्रियका, मनुष्यका, व्यंतरदेवताका, ज्योतीषीदेवोंका और चौवीसवा वैमानिकदेवतोंका दंडक है।

(१७) लेश्या छे—कृष्णलेश्या, निललेश्या, कापोतलेश्या, तेजसलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या.

(१८) दृष्टि तीन—सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि ।

(१९) ध्यान चार—आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान ।

(२०) षट् द्रव्य के जान पनेके ३० भेद. यथा षट् द्रव्यके नाम. धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय और काल.

(१) धर्मास्तिकाय- पांच बोलोंसे जानी जाती है. जेसे द्रव्यसे धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है क्षेत्रसे संपूर्ण लोक परिमाण है. कालसे अनादिअन्त है. भावसे अरुपी है जिसमें वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श कुच्छ भी नही है और गुणसे धर्मास्तिकायका चलन गुण हे जेसे जलके सहायतासे मच्छी चलती है इसी माफिक धर्मास्तिकायकि सहायतासे जीव और पुद्गल चलन क्रिया करते है.

(२) अधर्मास्तिकाय पांच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे अधर्मा० एक द्रव्य है क्षेत्रसे संम्पूर्ण लोक परिमाण है. कालसे आदि अन्त रहीत है भावसे अरूपी है वर्ण गन्ध रस

स्पर्श कुच्छभी नही है गुणसे स्थिर गुण है जैसे थाका हुवा मुसाफरकों वृक्षकी छायाका दृष्टान्त ।

(३) आकाशास्तिकाय—पांच बोलोंसे जानी जाति है द्रव्यसे आकाशास्तिकाय एक द्रव्य है क्षेत्रसे लोकालोक परिमाण है कालसे आदि अंत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुणसे आकाशमें विकाशका गुण है जेसे भींतमें खुंटी तथा पाणीमें पत्तासाका दृष्टान्त है ।

(४) जीवास्तिकाय—पांच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे जीव अनंते द्रव्य है क्षेत्रसे लोक परिमाण है. कालसे आदिअंत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुणसे जीवका उपयोग गुण है जैसे चन्द्रके कलाका दृष्टांत.

(५) पुद्गलास्तिकाय—पांच बोलोंसे जानी जाती है. द्रव्यसे पुद्गलद्रव्य अनंत है क्षेत्रसे संपूर्ण लोक परिमाण है. कालसे आदि अन्त रहीत है भावसे रूपी है वर्ण है गन्ध है रस है स्पर्श है गुणसे सडन पडन विध्वंस गुण है । जेसे बादलोंका दृष्टान्त ।

(६) कालद्रव्य—पांच बोलोंसे जाने जाते है. द्रव्यसे अनंते द्रव्य–कारण अनंते जीव पुद्गलोंकि स्थितिकों पुर्ण कर रहा है । क्षेत्रसें कालद्रव्य अढाइ द्वीप में है (कारण बाहारके चन्द्र सूर्य स्थिर है) कालसे आदि अत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुणसे नइ वस्तुकों पुराणी करे पुराणी वस्तुको क्षय करे. कपडा कतरणीका दृष्टांत ।

(२१) राशीदोय—यथा जीवराशी जिस्के ५६३ भेद । अजीवराशी जिस्के ५६० भेद है देखो दुसरे भाग नवतत्त्वके अन्दर

(२२) श्रावकजी के बारहाव्रत. (१) त्रस जीव हालता चालताकों विगर अपराधे मारे नही । स्थावरजीवोंकि मर्यादा

करे। (२) राजदडे लोक भंडे एसा वडा जूठ बोले नही (३) राज दंडे लोक भंडे एसी वडी चोरी करे नही (४) परस्त्री गमनका त्याग करे स्वस्त्रिकि मर्यादा करे (५) परिग्रहका परिमाण करे (६) दिशाका परिमाण करे (७) द्रव्यादिका संक्षेप करे पन्नरे कर्मादान व्यापारका त्याग करे (८) अनर्थदंड पापोंका त्याग करे (९) सामायिक करे. (१०) देशावगासी व्रत करे. (११) पौषध व्रत करे. (१२) अतीथीसंविभाग अर्थात् मुनि महाराजोंको फासुक एषणीक अशनादि आहार देवे।

(२३) मुनिमहाराजोंके पांच महाव्रत—(१) सर्वथा प्रकारे जीवहिंसा करे नहीं, करावे नहीं, करते हुवेको अच्छा समजे नहीं. मनसे, वचनसे, कायासे. (२) सर्वथा प्रकारे झूठ बोले नहीं, बोलावे नहीं, बोलतोंको अच्छा समजे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे. (३) सर्वथा प्रकारे चोरी करे नहीं, करावे नहीं करतेको अच्छा समजे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे. (४) सर्वथा प्रकारे मैथुन सेवे नहीं, सेवावे नहीं, सेवतेको अच्छा समजे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे. (५) सर्वथा प्रकारे परिग्रह रखे नहीं, रखावे नहीं, रखते हुवेको अच्छा समजे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे। एवं रात्रीभोजन स्वयं करे नहीं, करावे नहीं, करते हुवेको अच्छा समजे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे।

(२४) प्रत्याख्यानके ४९ भांगा—अंक ११ भाग ९,, एक करण–एक योगसे।

करुं नहीं मनसे
करुं नहीं वचनसे
करुं नहीं कायासे
करावुं नहीं मनसे
करावु नहीं वचनसे
करावुं नहीं कायासे
अनुमोदु नहीं मनसे
,, ,, वचनसे
,, ,, कायासे

अंक १२ भाग ६

एक करण दो योगसे

करुं नहीं मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
करावुं नहीं मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
अनुमोदुं नहीं मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे

अंक १३ भाग ३

एक करण तीन योगसे

करुं नहीं मनसे वचनसे कायासे
करावुं नहीं ,, ,, ,,
अनु० नहीं ,, ,, ,,

अंक २१ भाग ६

दो करण एक योगसे

करुं नहीं करावुं नहीं मनसे
,, ,, वचनसे
,, ,, कायासे
करुं नहीं अनुमोदुं नहीं मनसे
,, ,, वचनसे
,, ,, कायासे
करावुं नहीं अनु० नहीं मनसे
,, ,, वचनसे
,, ,, कायासे

अंक २२ भाग ६

दो करण दो योगसे

करुं न. करावुं न. मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
करुं न अनुमोदुं न. मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
करावुं न. अनु. न. मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे

अंक २३ भाग ३

दो करण तीनयोगसे

करुं न. करावुं न. मन. वच काया.
,, अनु० न. ,, ,, ,,
करावुं न. अ० न. ,, ,, ,,

अंक ३१ भाग ३

तीन करण तीन योगसे

करुं न. करा. न. अनु. न. मनसे
,, ,, ,, वचनसे
,, ,, ,, कायासे

अंक ३२ भाग ३

तीन करण दो योगसे

करुं न. करावुं न. अनु.न मनवचनसे
,, ,, ,, मनसे कायासे
,, ,, ,, वचन. काया.

अंक ३३ भाग १

तीन करण तीन योगसे

करुं नहीं करावुं न. अनु० नहीं
मनसे वचनसे कायासे

(२५) चारित्र पांच—सामायिक चारित्र, छेदोपस्थापनीय चारित्र, परिहारविशुद्धि चारित्र, सूक्ष्मसंपराय चारित्र यथाख्यात चारित्र ।

(२६) नय सात—नैगमनय. संग्रहनय. व्यवहार नय ऋजुसूत्रनय शब्दनय संभिरूढनय. एवंभूतनय. ।

(२७) निक्षेपाच्यार—नामनिक्षेप. स्थापनानिक्षेप. द्रव्यनिक्षेप. भावनिक्षेप.

(२८) समकित पांच—औपशमिक समकित. क्षयोपशम स० क्षायिकस० वेदक स० सास्वादन समकित ।

(२९) रस नौ—शृंगाररस. वीररस. करुणारस. हास्यरस. रौद्ररस. भयानकरस. अद्भुतरस बिभत्सरस. शान्तिरस.

(३०) अभक्ष २२ यथा—वडकेपीपु. पीपलकेपीपु. पीपलीके फल. उम्बरवृक्षकेफल. कटुम्बरकेफल. मांस. मदिरा. मधु. मक्खण. हेम. विष सोमल. कचेगडे. कचीमटी रात्रीभोजन. बहुवीजाफल. जमी कन्दवनस्पति बोरोंका अथांणा, कचे गोरसमें डाले हुवे वडे. रींगणा. अनजाना हुवाफल. तुच्छफल चलीतरस याने वीगडी हुइ वस्तु ।

(३१) अनुयोग च्यार—द्रव्यानुयोग. गीणीतानुयोग चरणकरणानुयोग धर्मकथानुयोग. ।

(३२) तत्त्वतीन—देवतत्व देव (अरिहंत) गुरु तत्व (निग्रन्थगुरु) धर्मतत्व (वीतरागकि आज्ञा)

(३३) पांच समवाय—काल. स्वभाव. नियत, पूर्वकृत कर्म, पुरुषार्थ.

(३४)पाखंडमतके ३६३ भेद यथा—क्रियावादीके १८० मत, अक्रियावादी के ८४ मत, अज्ञानबादी के ६७ मत. विनयवादीके ३२ मत.

(३५) श्रावकोंके २१ गुण—(१) क्षुद्र मतिवाला न हो याने गंभीर चितवाला हो (२) रूपवंत सर्वाग सुन्दरऽकार यांने श्रावकव्रतकों सर्वाग पालनेमें सुन्दर हो (३) सौम्य (शांत) प्रकृतिवाला हो (४) लोक प्रियहो यांने हरेककार्य प्रशंसनियकरे (५) क्रूर न हो, (६) इहलोक परलोकके अपयशसे डरे [७] शाव्यता न करे धोखाबाजीकर दुसरोंकों ठगे नही (८) दुसरोंकि प्रार्थनाका भंग न करे (९) लौकीक लोकोत्तर लज्जा गुणसंयुक्त हो (१०) दयालु हो याने सर्वजीवोंका अच्छा वांच्छे (११) सम्यग्द्रष्टि हो याने तत्वविचारमें निपुण हो राग द्वेषका संग न करता हुवा मध्यस्थ भावमें रहै (१२) गुण गृहीपनारखे (१३) सत्य बातनिःशंकपणे कहै (१४) अपनेपरिवारकों सुशील बनावे अपने अनुकुल रखे (१५) दीर्घदर्शी अच्छा कार्यभी खुब विचारके करे (१६) पक्षपात रहीत गुण अवगुणोंकों जानने वाला हो (१७) तत्वज्ञ वृद्ध सज्जनोंकि उपासना करे (१८) विनयवान हो यांने चतुर्विध संघकाविनयकरे (१९) कृतज्ञ अपने उपर कीसीने भी उपकार कीया हो उनोंका उपकार भूले नही समयपाके प्रत्युपकारकरे (२०) संसारको असार समजे ममत्व भाव कम करे निर्लोभता रखे (२१) लब्धिलक्ष धर्मानुष्ठान धर्म व्यवहार करनेमें दक्ष हो याने संसारमें एक धर्म ही सारपदार्थ है

सेवं भंते सेवं भंते तमेवसत्यम्.

थोकडा नम्बर ४

' सूत्रश्री जीवाभिगम ' से लघुदंडक बालबोध.

॥ गाथा ॥

[१]सरीरो[२]गाहणा [३]संघयण [४]संठाण [५]सन्ना [६]कसायाय
[७]लेसिं[८]दिय [९]समुग्घाओ [१०]सन्नी [११]वेदय [१२]पज्जति ॥ १ ॥
[१३]दिठि [१४]दंसण [१५]नाण [१६]अनाणे [१७]जोगु[१८]वोगञ्च तह [१९]किमाहारे
[२०]उववाय [२१]ठि [२२]समोहय [२३]चवण [२४]गइआगइ चेव ॥ २ ॥

इन दो गाथावोंका अर्थ शास्त्रकारोंने खुब विस्तारसे कीया है परन्तु कंठस्थ करनेवाले विद्यार्थी भाइयोंके लिये हम यहां पर संक्षिप्तही लिखते है ।

(१) शरीर प्रतिदिन नाश होता जाय-नयासे पुरांणा होनेका जीस्में स्वभाव है जिन शरीरके पांच भेद है (१) औदारीक शरीर, हाड मांस रौद्र चरबी कर संयुक्त सडन पडन विध्वंसन, धर्मवाला होनेपरभी एकापेक्षासे इन शरीरकों प्रधान माना गया है कारण मोक्ष होनेमें यहही शरीर मौख्य साधन कारण है (१) वैक्रय शरीर हाड मंस रहीत नाना प्रकारके नये नये रूप बनावे (३) आहारक शरीर चौदा पूर्वधारी लब्धि संपन्न, मुनियोंके होते है (४) तेजस शरीर आहारादिकी पाचनक्रिया करनेवाला (५) कार्मण शरीर अष्ट कर्मोंका खजाना तथा पचा हुआ आहारकों स्थान स्थानपर पहुचानेवाला ।

(२) अवगाहना-शरीरकी लम्बाइ जिस्के दो भेद है एक

भवधारणी अवगाहना दुसरी उत्तर वैक्रिय, जो असली शरीरसे न्युनाधिक बनाना।

(३) संहनन–हाडकि मजबुतीसे ताकत–शक्तिको संहनन कहते है जिस्के छे भेद है वज्रऋषभनाराच, ऋषभनाराच, नाराच, अर्द्धनाराच, किलका, और छेवटा संहनन।

(४) संस्थान–शरीरकि आकृति, जिस्के छे भेद–समचतुरस्र, न्यग्रोध परिमंडल, सादीया, वांवना, कुब्ज, हुंडकसंस्थान.

(५) संज्ञा–जीवोंकि इच्छा–जिस्के च्यार भेद. आहारसंज्ञा भयसंज्ञा मैथुनसंज्ञा परिग्रहसंज्ञा.

(६) कषाय–जिनसे संसारकि वृद्धि होती है जिस्के च्यार भेद है क्रोध, मान, माया, लोभ.

(७) लेश्या–जीवोंके अध्यवसायसे शुभाशुभ पुद्गलोंको ग्रहन करना जिस्के छे भेद है कृष्ण० निल० कापोत० तेजस० पद्म० शुक्लेश्या।

(८) इन्द्रिय–जिनसे प्रत्यक्षज्ञान होता है जिस्के पांच भेद. श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय।

(९) समुद्घात–समप्रदेशोंकि घातकर विषम बनाना जिस्का सात भेद है वेदनि० कषाय० मरणांतिक० वैक्रिय० तेजस० आहारक० केवली समुद्घात०

(१०) सज्ञी–जिस्के मनहो वह संज्ञी. मन न हो वह असंज्ञी

(११) वेद–वीर्यका विकार हो मैथुनकि अभिलाषा करना उसे वेद कहते है जिस्के तीन भेद है स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद।

(१२) पर्याप्ती–जीव योनिमें उत्पन्न हों पुद्गलोंको ग्रहनकर भविष्यके लिये अलग अलग स्थान बनाते है जिस्के भेद छे. आहार० शरीर० इन्द्रिय० श्वासोश्वास० भाषा० मनपर्याप्ती।

(१३) दृष्टि-तत्त्व पदार्थकी श्रद्धा, जिस्के तीन भेद. सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि,

(१४) दर्शन-वस्तुका अवलोकन करना-जिस्के च्यार भेद चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन

(१५) ज्ञान-तत्त्ववस्तु को यथार्थ जानना जिस्के पांच भेद है मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवळज्ञान।

(१६) अज्ञान-वस्तु तत्त्वको विप्रीत जानना जिस्के तीन भेद है मतिअज्ञान, श्रुतिअज्ञान, विभंग अज्ञान।

(१७) योग-शुभाशुभ योगोंका व्यापार जिस्का भेद १५ देखो बोल ८ वा। (पैंतीस बोलोंमें)

(१८) उपयोग-साकारोपयोग (विशेष) अनाकारोपयोग (सामान्य)

(१९) आहार-रोमाहार, कंवलाहार लेने है उन्होंका दो भेद है व्याघात जो लोकके चरम प्रदेशपर जीव आहार लेते है उनोंको कीसी दीशामें अलोककि व्याघात होती है तथा अचर्म प्रदेशपर जीव आहार लेता है वह निर्व्याघात लेता है।

(२०) उत्पात-एक समयमें कोनसे स्थानमें कितने जीव उत्पन्न होते है।

(२१) स्थिति-एकयोनिके अन्दर एक भवमें कितने काल रह सके।

(२२) मरण-समुद्घात कर तांणवेजाकि माफीक मरे. विगर समुद्गात गोलीके वडाकाकी माफीक मरे।

(२३) चवन-एक समयमें कोनसी योनिसे कीतने जीव चवे.

(२४) गति आगति-कोनसी गतिसे जाके कीस योनिमें जीव उत्पन्न होता है और कोनसी योनिसे चवके जीव कोनसी गतिमें जाता है। इति।

लघुदंडक पढनेवालोंको पहले पैंतीसबोल कठस्थ कर लेना चाहिये। अब यह चौवीसद्वार चौवीसदंडकपर उतारा जाते है।

(१) शरीर—नारकी देवतावों में तीन शरीर-वैक्रीय शरीर० तेजस० कारमण०। पृथ्वीकाय, अप० तेउ० बनास्पति वेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रय, असन्नी तीर्यंच पचेन्द्रिय, असंज्ञी मनुष्य और युगल मनुष्य इन बोलोंमें शरीर तीन पावे. औदारीक शरीर तेजस० कारमण०। वायुकाय और संज्ञी तीर्यंच में शरीर च्यार पावे. औदारीक वैक्रीय तेजस. कारमण । संज्ञीमनुष्यमें शरीर पांचोंपाय. सिद्धोंमें शरीर नहीं.

(२) अवगाहना—जघन्य-भवधारणी अंगुलके असख्यात में भाग है और उत्तर वैक्रिय करते है उनोंके जघन्य अंगुलके संख्यातमें भागहोती है अब भवधारणि तथा उत्तर वैक्रय कि उत्कृष्ट अवगाहाना कहते है

नाम.	उत्कृष्ट भवधारिणि		उत्कृष्टि उत्तरवैक्रिय	
	धनुष्य	आगुल	धनुष्य	आगुल
पहली नारकी	७॥	६	१५॥	१२
दुसरी ,,	१५॥	१२	३१।	०
तीसरी ,,	३१।	०	६२॥	०
चोथी ,,	६२॥	०	१२५	०
पांचमी ,,	१२५	०	२५०	०
छठी ,,	२५०	०	५००	०
सातमी ,,	५००	०	१०००	०

१० भुवनपति वाणव्यन्तर जोतीषी पहला दुसरा देवलोक	७ हाथकी	लाख जोजन
३-४ था देवलोक	६ हाथ	,,
५-६ ठा ,,	५ हाथ	,,
७-८ वा ,,	४ हाथ	,,
९-१०-११-१२-दे.	३ हाथ	,,
नौग्रैवेयक	२ हाथ	उत्तर वैक्रिय नहींकरे
चार अनुत्तर विमान	१ हाथ	,,
सर्वार्थसिद्ध वि०	१ हाथ उणो	,,
पृथ्वी, अप्, तेउ,	आंगुलके असंख्यातमो भाग	
वायुकाय...	... ,, ...	आंगु० संख्या० भाग
वनस्पतिकाय	१००० जोजन-साधिक (कमल)	उत्तर वैक्रिय नहीं
बे इंद्रिय	१२ जोजन	,,
ते इंद्रिय	३ गाउ	,,
चौ इंद्रिय	४ गाउ	,,
तिर्यंच पंचेंद्रिय ×	१००० जोजन	९०० जोजन
जलचर सज्ञी	१००० जोजन	,,

+ नोट—उत्कृष्ट अवगाहनावाला उतर वैक्रिय करे नहि

थलचर संज्ञी	६ गाउ	९०० जोजन
खेचर ,,	प्रत्येक धनुष्य	,,
उरपरिसर्प ,,	१००० जोजन	,,
भुजपरिसर्प ,,	प्रत्येक गाउ	,,
जलचर असज्ञी	१००० जोजन	वैक्रिय नहीं करे
थलचर ,,	प्रत्येक गाउ	,,
खेचर ,,	प्र० धनुष्य	,,
उरपरिसर्प ,,	प्र० जोजन	,,
भुजपरिसर्प ,,	प्र० धनुष्य	,,
मनुष्य	३ गाउ	लाख जोजन झाझेरी
असन्नी मनुष्य	आंगु० अस० भाग	उत्तर वैक्रिय करे नहि
देवकुरु, उत्तरकुरु	३ गाउ	,,
हरिवास, रम्यकवास	२ गाउ	,,
हेमवय, ऐरण्यवय	१ गाउ	,,
५६ अंतरद्वीप	८०० धनुष्य	,,
महाविदेहक्षेत्र	५०० धनुष्य	लाख जोजन साधिक
*सुसमा सुसमारो	लागते आरे ३ गाउ	उतरते २ गाउ
सुसम दुजो आरो	,, २ गाउ	,, १ गाउ
सुसमा दुसमा तीजो,	,, १ गाउ	,, ५०० धनुष्य
दुसमा सुसमा चोथो	,, ५०० धनुष्य	,, ७ हाथ
दुसम पांचमो आरो	,, ७ हाथ	,, १ हाथ
दुसमा दुसमो छट्ठो	,, १ हाथ	,, १ हाथ उणी

यह अवसर्पिणी कालकी अवगाहना है इससे उलटी उत्सर्पिणीकी समझना। सिद्धोंके शरीरकी अवगाहना नहीं है परंतु आत्म प्रदेशने आकाश प्रदेशको अवगाहया (रोकाहै) इस अपेक्षा जघन्य १ हाथ ८ आंगुल, मध्यम ४ हाथ १६ आंगुल, उत्कृष्ट ३३३ धनुष्य ३२ आंगुल, इति.

(३) संघयण—नारकी और देवतामें संघयण नहीं है किंतु नारकीमें अशुभ पुद्गल और देवतामें शुभ पुद्गल संघयणपणे प्रणमते है. पांच स्थावर, तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यंच, असन्नी मनुष्यमें संघयण एक छेवट्ठ पावे सन्नी मनुष्य ओर सन्नी तिर्यंचमें छ संघयण पावे युगलीआमें एक वज्रऋषभनाराचसंघयण और सिद्धोमें संघयण नहीं है. इति

(४) संठाण—[६] नारकी, पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यंच और असन्नी मनुष्यमें संठाण एक हुंडक पावे तथा देवता और युगलीआमें समचौरस संठाण पावे सन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्यमें छ संस्थान पावे. सिद्धोमें संस्थान नहीं है.

(५) कषाय—[४]–चोवीसों दंडकमें कषाय च्यारों पावे और सिद्ध अकषाई है।

(६) संज्ञा [४]–चोवीसों दडकमें संज्ञा च्यारों पावे सिद्धोंमें संज्ञा नहीं है

(७) लेश्या—पहली दुजी नारकीमें कापोत लेश्या। तीजीमें कापोत और नील ले० चोथीमें नील ले० पांचमीमें नील और कृष्ण ले० छट्ठीमें कृष्ण ले० सातमीमें महाकृष्ण ले० १० भुवनपति, व्यंतर पृथ्वी, पाणी, वनस्पति, युगलीआमें लेश्या चार पावे कृष्ण, नील कापोत, तेजो ले० तेउकाय, वायुकाय,

तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तीर्थंच, असन्नी मनुष्यमें लेश्या पावे तीन कृष्ण, नील कापोत ले० सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्यमें लेश्या ६ पावे. जोतीषी और १-२ देवलोकमें तेजोलेश्या ३-४-५ देवलोकमें पद्मलेश्या ६ से १२ देवलोकमें शुक्ललेश्या नौवागैवेयक पांच अनुत्तर विमानमें परम शुक्ल लेश्या सिद्ध भगवान अलेशी है।

(८) इंद्रिय—[५] पांच स्थावरमें एक इंद्रिय, बे इंद्रियमें दो इंद्रिय, तेइंद्रियमें तीन इंद्रिय, चौरेंद्रिय चार इंद्रिय बाकी १६ दंडकमें पांच इंद्रियां है सिद्ध अनिंदिआ है ।

(९) समुद्घात [७] नारकी और वायु कायमें समुद्घात पावे चार, वेदनी, कषाय, मरणति, वैक्रिय। देवतामें और सन्नीतिर्यंचमें समुद्घात पावे पांच वेदनी, कषाय, मरणति वैक्रिय, तेजस। चार स्थावर तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यंच, असन्नी मनुष्य और युगलीआमें समुद्घात पावे तीन वेदनी, कषाय, मरणंति। सन्नी मनुष्यमें समुद्घात पावे सात नवग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमानमें स० पावे तीन और वैक्रिय तेजसकी शक्ति है परन्तु करे नहीं सिद्धोमें समुद्घात नही है।

(१०) सन्नी—नारकी देवता, सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य और युगलीआ ये सन्नी है पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी मनुष्य, असन्नी तिर्यंच ये असन्नी है। सिद्ध नो सन्नी नो असन्नी है।

(११) वेद—नारकी पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नीतिर्यंच और असन्नी मनुष्यमें नपुंसक वेद है। दश भुवनपति, व्यंतर, जोतीषी १-२ देवलोक और युगलीआमें वेद पावे

२ पुरुषवेद और स्त्रीवेद। तीजा देवलोकसें सर्वार्थसिद्ध विमानतक पुरुषवेद है सन्नी मनुष्य औ सन्नीतिर्यंचमें वेद पावे तीन, सिद्ध अवेदी है।

(१२) पर्याप्ती—नारकी देवतामें पर्याप्ती पांच (मन और भाषा साथमें बांधे) पांच स्थावरमें पर्याप्ती पावे चार क्रमसे, तीन विकलेंद्रिय और असन्नी तिर्यंचमें पर्याप्ती पावे पांच क्रमसे, असन्नी मनुष्यमें चारमें कुच्छ ऊणी क्रमसे; सन्नी मनुष्य सन्नी तिर्यंच और युगलीआमें पर्याप्ती पावे छ. सिद्धोमें पर्याप्ती नहीं है।

(१३) दिट्ठी—नारकी, भुवनपति, व्यंतर ज्योतिषी, बारहा देवलोक, सन्नीतिर्यंच और सन्नी मनुष्यमें दृष्टि पावे तीनों, नवग्रैवेयकमें दो (सम्यक० मिथ्या०) अथवा तीन पावे. पांच अनुत्तर विमानमें एक सम्यकदृष्टि, पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य और ५६ अंतरद्वीपके युगलीआमें एक मिथ्यादृष्टि, तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यंच और ३० अकर्मभूमि युगलीआमें द्रष्टि पावे दो (१) सम्यक्दृष्टि (२) मिथ्यादृष्टि. सिद्धोंमें सम्यकदृष्टि है.

(१४) दर्शन—नारकी, देवता और सन्नीतिर्यंचमें दर्शन पावे तीन क्रमसे, पांच स्थावर वेइंद्रिय तेइंद्रियमें दर्शन पावे एक अचक्षु, चौरेन्द्रिय, असन्नोतिर्यंच असन्नी मनुष्य और युगलीआमें दर्शन पावे दो क्रमसे। सन्नी मनुष्यमें दर्शन पावे चार, सिद्धोंमें केवल दर्शन है

(१५) नाण—नारकी देवता और सन्नीतिर्यंचमें ज्ञान पावे तीन क्रमसे,। पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य और ५६ अतर द्वीपका युगलीआमें नाण नहीं है, तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यं-

च और ३० अकर्मभूमी युगलीयामें नाण पावेदो क्रमसे तथा सन्नी मनुष्यमें ज्ञान पावे पांच सिद्धोंमें केवल ज्ञान है.

(१६) अनाण—नारकी, देवतामें नवग्रैवयक तक, तिर्यंच पचेंद्री और सन्नी मनुष्यमे अनाण पावे तीन, पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यंच असन्नी मनुष्य और युगली-आमे अनाण पावे दो क्रमसे पांच अनुत्तर विमान और सिद्धोंमें अनाण नहीं है।

(१७) जोग—नारकी और देवतामें जोग पावे ११ (४) मनके (४) वचनके, वैक्रिय १, वैक्रियका मिश्र १, कार्मणकाय योग, पृथ्वि, अप, तेउ, वनस्पति, असन्नी मनुष्यमें याग पावे तीन (औदारिक १ औदारिकका मिश्र १ ९ कार्मण काययोग १) वायुकायमें पांच पावे (पूर्ववत् ३ और वैक्रिय, वैक्रियका मिश्र ज्यादा) तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यंचमें योग पावे चार औदारिक १, औदारिकका मिश्र १, कार्मणकाय योग १, (और व्यवहार भाषा १) सन्नी तिर्यंचमें योग पावे १३ (आहारिक और आहारिकका मिश्र वर्जके) सन्नी मनुष्यमे योग पावे पदरा । युगलीआमे योग पावे अगीआरा (४ मनका ४ वचनका, औदारिक १, औदारिक मिश्र १, कार्मण काय योग १) सिद्धोंमे योग नहीं है

(१८) उपयोग—सर्व ठेकाणे दो दो पावे और जो उपयोग बारहा गीणना हो तो उपर लिखा पांच ज्ञान, तीन अज्ञान और चार दर्शनसे समझ लेना।

(१९) आहार—आहार व्याघात (अलोक) आश्रयी पांच स्थावर स्यात् तीन दिशि, स्यात् चार दिशि, स्यात् पांच

दिशि, निर्व्याघाताश्रयी चोवीस दंडकका-जीवनियमा छ दिशिका आहार लेवे। सिद्ध अनाहारिक.

(२०) उत्पात-(१) नारकी, १० भुवनपतियोंसे ८ वां देवलोक तक, तथा चार स्थावर (वनस्पति वर्जके) तीन विकलेंद्रिय, सन्नी या असन्नी तिर्यंच, और असन्नी मनुष्य एक समयमें १-२-३ जाव संख्याता असंख्याता उपजे, वनस्पति एक समयमें १-२-३ जाव अनंता उपजे, नवमा देवलोकसे सर्वार्थसिद्ध तक तथा सन्नी मनुष्य और युगलीआ एक समयमें १-२-३ जाव संख्याता उपजे, सिद्ध एक समयमें १-२-३ जाव १०८ उपजे

(२१) ठीइ-स्थिति यंत्रसे जाणना.

नारकी	जघन्य	उत्कृष्ट
१ ली नारकी	१०००० वर्ष	१ सागरोपम
२ जी ,, ...	१ सागरोपम ...	३ सागरोपम
३ जी ,, ...	३ ,, ...	७ ,,
४ थी ,, ...	७ ,, ...	१० ,,
५ मी ,, ...	१० ,, ...	१७ ,,
६ ठी ,, ...	१७ ,, ...	२२ ,,
७ मी ,, ...	२२ ,, ...	३३ ,,

देवता.

× चमरेंद्र दक्षिण तर्फ	१०००० वर्ष	१ सागरोपम

× दश भुवनपतिमें प्रथम असुरकुमारका दो इद्र (१) चमरेंद्र (२) बलेंद्र चमरेंद्रकी राजधानी मेरुसे दक्षिण तरफ है और बलेंद्रकी राजधानी मेरुसे उत्तर तरफ है. ऐसे ही नागादि नवनिकायका इंद्र और राजधानी दक्षिण उत्तर समज लेना.

तस्सदेवी	१०००० वर्ष	३॥ सागरोपम
नागादि नौ इन्द्र दक्षिण तर्फके	,,	१॥ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥। ,,
बलेंद्र उत्तर तर्फके देव ,,	,,	१ सागरोपम झाझेरा
तस्सदेवी	,,	४॥ पल्योपम
नागादि नव उत्तर तर्फ	,,	देशउणी २ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	,, १ ,,
व्यंतर देवता	,,	१ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥ ,,
चंद्र विमानवासी देव	०। पल्योपम	१ पल्योपम+लाख वर्षाधिक
तस्सदेवी	,,	०॥ प०+५०००० वर्ष
सूर्य विमानवासी देव	,,	१ प०+ हजार वर्ष
तस्सदेवी	,,	०॥ प०+५०० ,,
ग्रह विमानवासी देव	,,	१ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥ ,,
नक्षत्र विमा० देव	,,	०॥ ,,
तस्सदेवी	०। पल्योपम	०। ,, झाझेरी
तारा विमा० देव	१/८ ,,	०। ,, ०
तस्सदेवी	,, ,,	१/८ ,, साधिक
पहला देवलोकके देव	१ पल्योपम	२ सागरोपम
तस्स परिग्रहिता देवी	,,	७ पल्योपम
तस्स अपरिग्रहिता देवी	,,	५० ,,
दुसरे देवलोकके देव	१ पल्योपम झाझेरा	२ सा० झाझेरा
तस्स परिग्रहिता देवी	,,	९ पल्योपम
तस्स अपरिग्रहता देवी	,,	५५ ,,
तीजा देवलोकके देव	२ सागरोपम	७ सागरोपम

चोथा देवलोकके देव	२ सा० झाझेरा	७ ,, झाझेरा
पांचमा ,, ,,	७ सागरोपम	१० सागरोपम
छठ्ठा ,, ,,	१० ,,	१४ ,,
सातमा ,, ,,	१४ ,,	१७ ,,
आठमा ,, ,,	१७ ,,	१८ ,,
नवमा ,, ,,	१८ ,,	१९ ,,
दशमा ,, ,,	१९ ,,	२० ,,
अगीआरमा ,, ,,	२० ,,	२१ ,,
बारहमा ,, ,,	२१ ,,	२२ ,,
नीचली त्रिक ,,	२२ ,,	२५ ,,
बिचली ,, ,,	२५ ,,	२८ ,,
उपली ,, ,,	२८ ,,	३१ ,,
चार अनुत्तर विमान	३१ ,,	३३ ,,
सर्वार्थसिद्ध ,,	३३ ,,	३३ ,,
पृथ्वीकाय	अंतर्मुहुर्त	२२००० वर्ष
अप्काय	,, ...	७००० ,,
तेउकाय	,, ...	३ अहोरात्रि
वायुकाय	,, ...	३००० वर्ष
वनस्पतिकाय ...	,, ..	१०००० ,,
वेइंद्रिय	,, ...	१२ ,,
तेइंद्रिय	,, ...	४९ दिन
चौरिंद्रिय	,, ...	६ मास
जलचर असंज्ञी ..	,, ..	क्रोड पूर्व
थलचर ,, ..	,, ..	८४००० वर्ष
खेचर ,, ...	,, ...	७२००० ,,
उरपरिसर्प ,, ...	,, .	५३००० ,,
भुजपरिसर्प ,, .	,, ...	४२००० ,,

जलचर संज्ञी	अंतर्मुहुर्त	क्रोड पूर्व
थलचर ,,	,,	३ पल्योपम
खेचर ,,	,,	पल्यो॰ असं॰ भाग
उरपरिसर्प ,,	,,	क्रोड पूर्व
भुजपरिसर्प ,,	,,	,,
असन्नि मनुष्य	,,	अंतर्मुहुर्त
सन्नि ,,	बेठते आरे	उतरते आरे
*पहलो आरो	३ पल्योपम	२ पल्योपम
दुजो ,,	२ ,,	१ ,,
तीजो ,,	१ ;	१ क्रोड पूर्व
चोथो ,,	क्रोड पूर्व	१२० वर्ष
पांचमो ,,	१२० वर्ष	२० ,,
छट्ठो ,,	२० ,,	१६ ,,

युगलीया.	जघन्य.	उत्कृष्ट.
देवकुरु-उत्तरकुरु	देशउणो ३ पल्यो॰	३ पल्योपम
हरिवास-रम्यकवास	,, २ ,,	२ ,,
हेमवय-ऐरण्यवय	,, १ ,,	१ ,,
५६ अंतरद्वीप	पल्यो॰ असं॰ भाग	पल्यो॰ असं॰ भाग
महाविदेह क्षेत्र	अंतर्मुहूर्त	क्रोड पूर्व

सिद्ध-सादि अनंत। अनादि अनंत।

२२ मरणः—चौवीसो दंडकमें समोहीय, असमोहीय, दोनों मरण मरे।

२३ चवणः—उत्पन्न होनेकी माफक समझ लेना।

२४ गति आगतिः—प्रथमसे छट्ठी नारकी तथा तीजासे

---

* अवसर्पिणीकालके मनुष्यकी स्थिति कोष्टकमें लिखी है, और उत्सर्पिणी-कालके मनुष्यकी स्थिति इससे उलटी समझना

८ मा देवलोक तक दो गतिसे आवे, दो गतिमें जाय। दंडकाश्रयी दो दंडक (मनुष्य और तिर्यंच) के आवे और दो दंडकमें जावे। सातमी नारकी दो गतिसे (मनुष्य, तिर्यंच) आवे, एक गतिमें जावे (तिर्यंचमें), दंडकाश्रयी २ दंडकको (मनुष्य, तिर्यंच) आवे, एक दंडक तिर्यंचमें जावे। दश भुवनपति, व्यंतर, जोतिषी, १-२ देवलोक दो गति (मनुष्य, तिर्यंच)से आवे, और दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) में जावे, और दंडकाश्रयी २ दंडक (मनुष्य, तिर्यंच) को आवे, और पांच दंडकमें जावे (मनुष्य, तिर्यंच, पृथ्वि, पाणी, वनस्पति) ९ वा देवलोकसे सर्वार्थसिद्ध विमानके देव, एक गति (मनुष्य) मेसे आवे एक गतिमें जावे दंडकाश्रयी एक दंडक (मनुष्य) को आवे और एक दंडकमे जावे (मनुष्यमें)।

पृथ्वि, पाणी, वनस्पति, तीन गति (मनुष्य, तिर्यंच, देवता) से आवे, और २ गतिमें जावे (मनुष्य, तिर्यंच), दंडकाश्रयो २३ दंडक (नारकी वर्जी) का आवे और १० दंडकमें जावे (५ स्थावर, ३ विकलेंद्रिय, मनुष्य, तिर्यंच) तेउ वायु दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मेंसे आवे, और एक गति (तिर्यंच) में जावे, दंडकाश्रयी दश दंडक (पूर्ववत्) को आवे और ९ दंडक (मनुष्य वर्जके) में जावे। तीन विकलेंद्रिय दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मेंसे आवे, और दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) में जावे, दंडकाश्रयी दश दंडक (पूर्ववत्) को आवे और दश दंडकमें जावे। असन्नि तिर्यंच दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मेंसे आवे और चार गतिमे जावे, दंडकाश्रयी दश (पूर्ववत्) आवे और २२ (जोतिषी वैमानिक वर्जी) दंडकमें जावे। सन्नि तिर्यंच चार गतिमेंसे आवे और चार गतिमें जावे दंडकाश्रयी २४ को आवे और २४ में जावे। असन्नि मनुष्य दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) को आवे दो गतिमें जावे। दंडकाश्रयी ८ दंडक (पृथ्वि, पाणी, वनस्पति, ३

विकलेंद्रिय, मनुष्य, तिर्यंच) को आवे और दशमें जावे (दश पूर्ववत्)

सन्नि मनुष्य— चार गतिमेसे आवे और चार गतिमें जावें अथवा सिद्ध गतिमें जावे, दंडकाश्रयी २२ (तेउ, वायु, वर्जी)में से आवे और २४ मे जावे तथा सिद्धमें जावे.। ३० अकर्मभूमि युगलिया दोगति (मनुष्य तिर्यंच)मेंसे जावे एक गति (देवता) में जावे दंडकाश्रयी दो दंडकसे आवे और १३ दंडक (देवतामें) जावे.। ५६ अंतर द्वीप दो गतिमेसे आवे एक गतिमें जावे. दंडकाश्रयी दो दंडकको आवे और ११ दंडक (१० भुवनपति, व्यंतर)में जावे.

सिद्धीमे आगत एक मनुष्यकी गति नहीं दंडकाश्रयी मनुष्य दंडकसे आवे. इति.

२५ प्राण—(अन्य स्थानसे लीखते है)प्राण दश है (१) श्रोतेंद्रिय बलप्राण (२) चक्षु इंद्रियबलप्राण (३) घ्राणेंद्रिय० (४) रसेन्द्रिय० (५) स्पर्शेन्द्रिय० (६) मन० (७) वचन० (८) काय० (९) श्वासोश्वास० (१०) आयु०

नारकी देवता सन्नि मनुष्य, सन्नि तिर्यंच और युगलीआमे प्राण पावे दस. पांच स्थावरमें प्राण पावे चार–(१) स्पर्श० (२) काय० (३) श्वासोश्वास० (४) आयु० बेइन्द्रियमें प्राण पावे ६. (५) पूर्ववत् १ रस० २ वचन० तेइंद्रियमें प्राण पावे ७. (६) पुर्ववत् १ घ्राणे० चौरेन्द्रियमें प्राण ८. (७) पूर्ववत् १ चक्षु०

असन्नि तिर्यंच पंचेन्द्रियमें प्राण पावे ९–८ पुर्ववत्, १ श्रोते० असन्नि मनुष्यमें प्राण पावे ८ में कंइकउणा–५ इन्द्रिय० १ काय० १ आयु० १ श्वास० अथवा उश्वास० सिद्धोंमें प्राण नही है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चं

थोकडा नम्बर ५

चोवीस दंडकमेंसे कितने दंडक किस स्थानपर मिलते हैं.

दंडक स्थान

(प्रश्न) { एक दंडक किस जगह पावे } नारकीमें पावे

(प्र) दो दंडक ,, (उ) श्रावकमें पावे–२०+२१ मो

(प्र) तीन दंडक ,, (उ) तिनविकलेंद्रियमें पावे–१७+१८+१९ मो

(प्र) चार दंडक ,, (उ) सत्त्वमें पावे १२+१३+१४+१५मो

(प्र) पांच दंडक ,, (उ) एकेंद्रियमें ,, १२+१३+१४+१५+१६

(प्र) छ दंडक ,, (उ) तेजोलेश्याका अलद्धिआमें यांने जीस दंडकमें तेजोलेश्या न मले–१–१४–१५––१७–१८–१९ वा

(प्र) सात दंडक ,, (उ) वैक्रियका अलद्धिआमें ४ स्थावर ३ वि०

(प्र) आठ दंडक ,, (उ) असन्नीमें ५ स्थावर ३ वि०

(प्र) नव दंडक ,, (उ) तिर्यंचमें ५ स्थावर ४ त्रस

(प्र) दश दंडक ,, (उ) भुवनपतिमें

(प्र) अगीआर दंडक ,, (उ) नपुंसकमें १० औदारीक १ नारकी

(प्र) बारहा ,, ,, (उ) तीच्छलोकमे १० भु० व्यंतर ज्योतिष

(प्र) तेरहा ,, ,, (उ) देवतामें

(प्र) चौद ,, ,, (उ) एकंत वैक्रिय शरीरमें १३ वैक्रिय १ नारकी

(प्र) पंदर ,, ,, (उ) स्त्री वेदमें

(प्र) सोलह ,, ,, (उ) सन्नि तथा मनयोगमें

(प्र) सत्तरा ,, ,, (उ) समुचय वैक्रिय शरीरमें

(प्र) अठारा ,, ,, (उ) तेजोलेश्यामें ६ वर्जके

(प्र) ओगणीस ,, ,, (उ) त्रसकायमें ५ स्थावह वर्जके

(प्र) वीस ,, ,, (उ) जघन्य उत्कृष्ट अवगाहनावाला जीवोंमें

(प्र) एकवीस ,, ,, (उ) नीचा लोकमें ३ देवता वर्जके

(प्र) बावीस ,, ,, (उ) कृष्णलेश्यामें जोतीषी वि० वर्जके

(प्र) तेवीस ,, ,, (उ) भगवानका समोसरणमें १ नारकी वर्जके
(प्र) चौवीस ,, ,, (उ) समुच्चय जीवमें

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

थोकडा नम्बर. ६

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तीजा. (महादंडक)

संख्या.	मार्गणाका ९८ बोल.	जीवका भेद १४	गुणस्थान १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६
१	सर्वस्तोक गर्भज मनुष्य.	२	१४	१५	१२	६
२	मनुष्यणी संख्यात गुणी.	२	१४	१३	१२	६
३	बादर तेउकायके पर्याप्ता असं० गुण०	१	१	१	३	३
४	पांच अणुत्तर वैमानके देव ,, ,,	२	१	११	६	१
५	ग्रैवेयक उपरकी त्रिकके देव संख्या० गु०	२	२।३	११	९	१
६	,, मध्यमकी ,, ,, ,,	२	२।३	११	९	१
७	,, नीचेकी ,, ,, ,,	२	२।३	११	९	१
८	बारहवें देवलोकके देव संख्या० गु०	२	४	११	९	१
९	ग्यारवें ,, ,, ,,	२	४	११	९	१
१०	दशवें ,, ,, ,,	२	४	११	९	१
११	नौवा ,, ,, ,,	२	४	११	९	१
१२	सातवी नरकके नैरिया असं० गु०	२	४	११	९	१
१३	छट्ठी ,, ,, ,,	२	४	११	९	१
१४	आठवें देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१

१५	सातवा देवलोकके देव असं० गु०	२	४	११	९	१
१६	पांचवी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	२
१७	छठे देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
१८	चोथी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	१
१९	पांचवें देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
२०	तीजी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	२
२१	चोथे देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
२२	दुजी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	१
२३	तीजा देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
२४	समुत्सम मनुष्य ,,	१	१	३	४	३
२५	दुजा देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	
२६	,, ,, की देवी सख्या० गु०	२	४	११	९	
२७	पहले देवलोकके देव अस० गु०	२	४	११	९	
२८	,, ,, की देवी स० गु०	२	४	११	९	
२९	भुवनपति देव अस० गु०	३	४	११	९	
३०	,, देवी संख्या० गु०	२	४	११	९	
३१	पहली नरकके नैरिया अस० गु०	३	४	११	९	
३२	खेचर पुरुष अस० गु०	२	५	१३	९	
३३	,, स्त्री संख्या० गु०	२	५	१३	९	
३४	थलचर पुरुष ,,	२	५	१३	९	
३५	,, स्त्री ,,	२	५	१३	९	
३६	जलचर पुरुष ,,	२	५	१३	९	
३७	,, स्त्री ,,	२	५	१३	९	
८ ३	व्यंतरदेव ,,	३	४	११	९	

३९	व्यंतर देवी सख्या० गु०	२	४	११	९	४
४०	जोतीषी देव ,,	२	४	११	९	१
४१	,, देवी ,	२	४	११	९	१
४२	खेचर नपुंसक ,,	२।४	५	१३	९	६
४३	थलचर ,, ,,	२।४	५	१३	९	६
४४	जलचर ,, ,,	२।४	५	१३	९	६
४५	चौरिंद्रियका पर्याप्ता सं० गु०	१	१	२	४	३
४६	पंचेंद्रियका ,, विशेषा	२	१२	१४	१०	६
४७	बेइन्द्रियका ,, ,,	१	१	२	३	३
४८	तेइन्द्रियका ,, ,,	१	१	२	३	३
४९	पंचेन्द्रियका अपर्याप्ता असं० गु०	२	३	५	८।९	६
५०	चौरिन्द्रियका ,, विशेषा	१	२	३	५	३
५१	तेइन्द्रिय ,, ,,	१	२	३	५	३
५२	बेइन्द्रिय ,, ,,	१	२	३	६	३
५३	प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकायका पर्याप्ता असं० गु०	१	१	१	३	३
५४	बादर निगोदका ,, ,,	१	१	१	३	३
५५	बादर पृथ्वी० ,, ,,	१	१	१	३	३
५६	,, अप० ,, ,,	१	१	१	३	३
५७	,, वायु० ,, ,,	१	१	४	३	३
५८	,, तेउ० अपर्याप्ता ,,	१	१	३	३	३
५९	प्र० बादर वना० ,, ,,	१	१	३	३	४
६०	बादर निगोदका ,, ,,	१	१	३	३	३
६१	,, पृथ्वीकायका अप० ,,	१	१	३	३	४
६२	,, अप्कायका ,, ,,	१	१	३	३	४

६३	वादर वाउकायका अप० असं० गु	१	१	३	३	३
६४	सुक्ष्म तेउकायका अप० ,, ,,	१	१	३	३	३
६५	सुक्ष्म पृथ्विकायका अप० विशेषाः	१	१	३	३	३
६६	सुक्ष्म अप्कायका अप० वि० ...	१	१	३	३	३
६७	सुक्ष्म वायुकायका अप० वि०	१	१	३	३	३
६८	सुक्ष्म तेउकायका पर्याप्ता स० गु०	१	१	१	३	३
६९	सुक्ष्म पृथ्विकायका पर्याप्ता वि० ..	१	१	१	३	३
७०	सुक्ष्म अप्कायका पर्याप्ता वि० .	१	१	१	३	३
७१	सुक्ष्म वायुकायका पर्याप्ता वि० ...	१	१	१	३	३
७२	सुक्ष्म निगोदका अपर्याप्ता अस० गु०	१	१	३	३	३
७३	सुक्ष्म निगोदका पर्याप्ता स० गु० ..	१	१	१	३	३
७४	अभव्य जीव अनंत गु० . ..	१४	१	१३	६	६
७५	पडवाइ सम्मदिट्ठीअनत गु० ...	१४	१४	१५	१२	६
७६	सिद्ध भगवान अनंत गु० ...	०	०	०	२	०
७७	वादर वनस्पति० पर्याप्ता अनंत गु०	१	१	१	३	३
७८	वादर पर्याप्ता वि०	६	१४	१४	१२	६
७९	वादर वनस्पति अपर्याप्ता अस० गु०	९	१	३	३	४
८०	वादर अपर्याप्ता वि०	६	३	५	८।६	६
८१	समुच्चय वादर० वि०	१२	१४	१५	१२	६
८२	सुक्ष्म वनस्पति अपर्याप्ता असं० गु०	१	१	३	३	३
८३	सुक्ष्म अपर्याप्ता वि०	१	१	३	३	३
८४	सुक्ष्म वनस्पति पर्याप्ता स० गु० ...	१	१	१	३	३
८५	सुक्ष्म पर्याप्ता० वि०	१	१	१	३	३
८६	समुच्चय सुक्ष्म० वि०	२	१	३	३	३

७	भवसिद्धि जीव वि०	१४	१४	१५	१२	६
८	निगोदका जीव वि०	४	१	३	३	३
९	वनस्पति जीव वि०	४	१	३	३	४
०	एकेंद्रिय जीव वि०	४	१	५	३	४
१	तिर्यंच जीव वि०	१४	५	१३	९	६
२	मिथ्यात्वि जीव वि०	१४	१	१३	९	६
३	अव्रती जीव वि०	१४	४	१३	९	६
४	सकषायी जीव वि०	१४	१०	१५	१०	६
५	छद्मस्थ जीव वि०	१४	१२	१५	१०	६
६	सयोगी जीव वि०	१४	१३	१५	१२	६
७	संसारी जीव वि०	१४	१४	१५	१२	६
८	समुच्चय जीव वि०	१४	१४	१५	१२	६

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—※◎※—

थोकडा नम्बर ७

सूत्रश्री पंन्नवणाजी पद ६.

(विरहद्वार)

जीस योनीमें जीव था वह वहां से चव जानेके बाद उस योनीमें दुसरा जीव कीतने काल से उत्पन्न होते है उनकों विरह कहते है। जघन्य तों सर्व स्थानपर एक समयका विरह है उत्कृष्ट अलग अलग है जैसे—

(१) समुच्चय च्यार गति सज्ञीमनुष्य और संज्ञी तीर्यचमें उत्कृष्ट विरह १२ मुहूर्तका है.

(२) पहली नरक दश भुवनपति, व्यंतर, जोतीषी, सौधर्मेशान देव और असज्ञी मनुष्यमे २४ मुहुर्त. दुजी नरकमें सात दिन, तीजी नरकमें पंदरा दिन, चोथी नरकमें एक मास, पांचवी नरकमें दो मास, छठी नरकमें च्यार मास, सातवी नरक सिद्धगति और चौसठ इन्द्रोंमें विरह छे मासका है.

(३) तीजा देवलोकमें नौदिन वीस महुर्त, चोथा देवलोकमें वारहा दिन दश मुहुर्त, पांचवा देवलोकमें साढावावीस दिन, छठा देवलोकमे पैतालीस दिन, सातवा देवलोकमें एसी दिन, आठवा देवलोकमे सौ दिन नौवा दशवा देवलोकमें सेंकडो मास, इग्यारवा वारहा देवलोकमें सेकडों वर्षोंका, नौग्रैवेयक पहले त्रीकमें सख्याते सेकडों वर्ष, दुसरी त्रीकमे संख्याते हजारों वर्ष, तीसरी त्रीकमे सख्याते लाखों वर्ष, च्यारानुत्तर वैमानमें पल्योपमके असंख्यातमे भाग, सर्वार्थसिद्ध वैमानमें पल्योपमके संख्यातमे भाग।

(४) पांच स्थावरोंमे विरह नही है. तीन विकलेन्द्रिय, असंज्ञी तीर्यचमें अंतरमुहुर्त.

(५) चन्द्र सूर्यके ग्रहणाश्रयी विरह पडे तों जघन्य छे मास उत्कृष्ट चन्द्रके वेंयालीस मास, सूर्यके अडतालीस वर्ष।

(६) भरतेरवतक्षेत्रापेक्षा, साधु. साध्वी, श्रावक, श्राविका आश्रयी जघन्यतो ६३००० वर्ष और अरिहंत, चक्रवर्ती, वलदेव, वासुदेव आश्रयी जघन्य ८४००० वर्ष उत्कृष्ट सबकों देशोन अठारा कोडाकोड सागरोपम का । इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

थोकडा नम्बर ८

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १२ वा उद्देशा ५ वां.

(रूपी अरूपीके १०६ बोल.)

रूपी पदार्थ दो प्रकारके होते है एक अष्ट स्पर्शवाले जीनसे कीतनेक पदार्थोंको चरम चक्षुवाले देख सके, दुसरे च्यार स्पर्शवाले रूपी जीनोंकों चरम चक्षुवाले देख नही सके. अतिशय ज्ञानी ही जाने। अरूपी-जीनोंकों केवलज्ञानी अपने केवलज्ञानद्वारा ही जाने-देखे.

(१) आठ स्पर्शवाले रूपीके सक्षिप्तसे १५ बोल है यथा-छे द्रव्यलेश्या (कृष्ण, निल, कापोत, तेजस, पद्म, शुक्ल) औदारीक शरीर, वैक्रियशरीर, आहारकशरीर, तेजसशरीर एवं १० तथा समुचय, घणोदधि, घणवायु, तणवायु, बादर पुद्‌गलोंका स्कन्ध और कायाका योग एवं १५ बोलमें वर्णादि २० बोल पावे। ३००

(२) च्यार स्पर्शवाले रूपीके ३० बोल है. अठारा पाप, आठ कर्म, मन योग, वचन योग, सूक्ष्मपुद्‌गलोंका स्कन्ध, और कारमणशरीर एवं ३० बोलमे वर्णादि १६ बोल पावे। ४८० बोल.

(३) अरूपीके ६१ बोल है. अठारा पापका त्याग करना, बारहा उपयोग, कृष्णादि छे भावलेश्या, च्यार संज्ञा (आहार० भय० मैथुन० परिग्रह०) च्यार मतिज्ञानके भांगा (उग्गह ईहां आपाय० धारणा) च्यार बुद्धि (उत्पातिकी, विनयकी, कर्मकी, पारिणामिकी) तीन दृष्टि (सम्यक्‌दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि) पांच द्रव्य "धर्मास्ति, अधर्मास्ति, आकाशास्ति, जीवास्ति, और कालद्रव्य" पांच प्रकारसे जीवकी शक्ति "उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषार्थ" एवं ६१ बोल अरूपीके है। इति.

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नं ९

श्री पन्नवरणा सूत्र पद ३ जो.

(दिशाणुवइ)

दिशाणुवइ–२४ दंडकके जीव किस दिशामें ज्यादा है ओर किस दिशामें कम है वो इस थोकडे द्वारे बतलावेंगे ।

जहां पाणी होता है वहां सात बोल होते हैं जिसका नाम समुच्चय जीव, अप्काय, वनस्पतिकाय, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय चौरेंद्रिय, पंचेद्रिय. इन सात बोलोंकी शास्त्रमें अलग अलग व्याख्या करी है यद्यपि एक सरिखा होनेसे यहां एकठा लीखते है. सबसे स्तोक ७ बोलोंका जीव पश्चिम दिशामें=कारण जंबुद्वीपकी जगतिसे पश्चिम दिशा लवण समुद्रमें १२००० जोजन जावे तब १२००० जोजनका लंबा चोडा गौतम द्वीप आवे, वह पृथ्वीकाय में है । इस लीये पाणीका जीव कमती है. पाणीका जीव कम होनेसे सात बोलोंका जीवभी कम है. उनसे पूर्व दिशा विशेषाः कारण गौतम द्वीपा नहीं है. उनसें दक्षिण दिशा विशेषाः कारण सूर्य चंद्रका द्वीपा नहीं है. उनसें उत्तर दिशा विशेषाः मान सरोवर तलावकी अपेक्षा (देखो जोतिषीका बोलमें).

पृथ्विकायका जीव सबसे स्तोक दक्षिण दिशामें कारण भुवनपतिओंका चार क्रोड छ लाख भुवनकी पोलार है इस लिये पृथ्विकायका जीव कम है. उनसे उत्तर दिशा विशेषाः कारण भुवनपतिओंका तीन क्रोड छासठ लाख भुवन है पोलार कम है

उनसे पूर्वमें विशेषा कारण सूर्य चन्द्रका द्वीप पृथ्वीमय है. उनसे पश्चिममें विशेषा कारण गौतम द्वीप पृथ्वीमय है.

तेउकाय, मनुष्य, और सिद्ध सबसे स्तोक दक्षिण उत्तरमें कारण भरतादि क्षेत्र छोटा है. उनसे पूर्व दिशा संख्यातगुणा कारण महाविदेह क्षेत्र बडा है. उनसे पश्चिम दिशा विशेषाः कारण सलीलावती विजया १००० जोजनकी ऊंडी है. जिसमें मनुष्य घणा, तेउकाय घणी और सिद्ध भी वहोत होते हैं.

वायुकाय, और व्यंतरदेव सबसे स्तोक पूर्व दिशामें कारण धरतीका कठणपणा है. उनसे पश्चिम दिशा विशेषाः कारण सलीलावती बिजया है. उनसे उत्तर दिशा विशेषाः कारण भुवनपतियोंका ३ क्रोड और ६६ लाख भुवन है. उनसे दक्षिण दिशा विशेषाः कारण भुवनपतिका ४ क्रोड और ६ लाख भुवन है (पोलारकी अपेक्षा)

भुवनपति सबसे स्तोक पूर्व पश्चिममें कारण भुवन नहीं है आना जानासे लाधे. उनसे उत्तरमें असंख्यात गुणा कारण ३ क्रोड और ६६ लाख भुवन है उनसे दक्षिणमें असंख्यात गुणा कारण ४ क्रोड और ६६ लाख भुवन है. भुवनोंमें देव ज्यादा है.

जोतीषीदेव सबसे थोडा पूर्व पश्चिममें कारण उत्पन्न होनेका स्थान नहीं है उनसे दक्षिणमे विशेषा उत्पन्न होनेका स्थान है. उनसे उत्तरमें विशेषाः कारण मानसरोवर तलाव=जम्बुद्वीपकी जगतिसें उत्तरकी तरफ असंख्याता द्वीप समुद्र जावे तब अरुणोवर नामका द्वीप आवे जिसके उत्तरमें ४२००० जोजन जावे तब मानसरोवर तलाव आता है, वह तलाव बडा शोभनीक और वर्णन करने योग्य है, और उसके अंदर वहोतसे मच्छ कच्छ जलचर जोतीषीकों देखके निआणा कर मरके जोतीषी होते हैं इसलिये उत्तर दिशामें जोतीषीदेव ज्यादा है।

पहला, दुजा, तीजा और चौथा देवलोकका देवता सबसे स्तोक पूर्व पश्चिममें कारण पुष्पावेकरणीय विमान ज्यादा है. और पंक्तिबंध कम है। उनसे उत्तरमें असंख्यातगुणा कारण पंक्ति बंध विशेष है उनसे दक्षिणमें विशेषा. कारण देवता विशेष उपजे.

पांचमा, छठ्ठा, सातमा, आठमा देवलोकका देवता सबसे स्तोक पूर्व, पश्चिम, उत्तरमें उनसे दक्षिणमें असं० गु.

नवमासे सर्वार्थसिद्ध विमान तक चारे दिशामें समतुल्य है पहेली नारकीका नेरइया सबसे स्तोक पूर्व, पश्चिम उत्तरमें उनसे दक्षिणमें असंख्यातगुणा कारण कृष्णपक्षी जीव घणा उपजे इसी माफक साताही नारकीमें समझ लेना.

अल्पाबहुत्व—सर्वस्तोक सातवी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिया. उनोसे दक्षिणके नैरिये असंख्यातगुणे. सातवी नरकके दक्षिणके नैरियेसे छटी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये असं० गु० उनोसे दक्षिणके नैरिये असं० गु०। छटी नरकके दक्षिणके नैरियोंसे पांचवी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये असं० गु० उनोंसे दक्षिणके नैरिये असं० गु० उनोंसे चोथी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये असं० गु० उनोंसे दक्षिणके नै० असं० गु० उनोंसे तीजी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये असं० गु० उनोंसे दक्षिणसे असं० गु० उनोसे दुजी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये असं० गु० उनोसे दक्षिणके असं० गु० दुजी नरकके दक्षिणके नेरियोंसे पहली नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये असं० गु० उनोंसे दक्षिणके नैरिये असं० गुण० इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नं० १०

—❀◎❀—

छ कायको थोकडो.

नामद्वार १	गोत्रद्वार २	वर्णद्वार ३	संठाणद्वार ४	एक महुर्तमें भव ५	अल्पाबहुत्व ६
इंद्रीस्थावरकाय	पृथ्वीकाय	पीलो	चद्र मसुरकीदाल	१२८२४	३ विशेषाः
ब्रभीस्थावरकाय	अप्काय	सपेद	पाणीका परपोटा	१२८२४	४ विशेषाः
सपीस्थावरकाय	तेउकाय	लाल	सूइकलाइ (भारो)	१२८२४	२ असंख्यातगुणा
सुमति स्थावर-काय	वायुकाय	नीलो	पताका	१२८२४	५ विशेषा.
पीयवच्छ स्थावर काय	वनस्पति काय २	नाना प्रकारको	नाना प्रकारका	३२००० प्रत्येक ६५५३६ साधारण	६ अनंतगुणा
जंगमकाय	१ प्र. २ सा. त्रसकाय	नाना प्रकारको	नाना प्रकारका	*८०×६०×४० ×२४×१	१ सबसे थोडा

* त्रसकायका कोटामें ८० भव वेइद्रिय, ६० तेइ०, ४० चौरें०, २४ असन्नी पचें० १ सन्नी पाचेन्द्रिय.

सेव भते सेवं भंते—तमेव सचम्

थोकडा नम्बर ११

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १३ उद्देशो १-२.

(उपयोगाधिकार.)

उपयोग बारह है जिस्मे कौन गतिमें जाता हुवा जीव कीतने उपयोग साथमे ले जाते है और कौस गति से आता हुवा जीव साथमें कीतने उपयोग ले आते है वह सब इन थोकडे द्वारा बतलाया जाता है।

(१) पहली, दुसरी, तीसरी नरकमें जाते समय आठ उपयोग लेके जाते है यथा-तीनज्ञान (मतिज्ञान. श्रुतिज्ञान अवधिज्ञान) तीन अज्ञान (मति, श्रुति, विभंगज्ञान) दोय दर्शन (अचक्षु, अवधिदर्शन) और सात उपयोग लेके पीच्छा निकले. एक विभंगज्ञान वर्जके। चोथी, पांचमी, छठी नरकमें पूर्ववत् आठ उपयोग लेके जावे. और पांच उपयोग लेके निकले अर्थात् इन तीनों नरकसे निकलनेवाला अवधिज्ञान अवधिदर्शन नही लाता है. सातवी नरकमें पांचज्ञान (तीन अज्ञान-दो दर्शन) लेके जावे और तीन उपयोग लेके निकले (दो अज्ञान-एक दर्शन)

(२) भुवनपति, व्यंतर, ज्योतीषी देव आठ उपयोग लेके जावे पूर्ववत् और पांच उपयोग लेके निकले (दो ज्ञान, दो अज्ञान, एक दर्शन)। बारहा देवलोक नौग्रैवेयकमें आठ उपयोग (पूर्ववत् लेके जावे और सात उपयोग लेके निकले) (तीनज्ञान, दो अज्ञान, दो दर्शन)। अनुत्तर वैमानमें पांच उपयोग लेके जावे (तीन ज्ञान, दो दर्शन एवं पांच उपयोग लेके निकले।

(३) पांच स्थावरमें तीन उपयोग लेके जावे और तीन उपयोग ही लेके निकले (दो अज्ञान, एक दर्शन)। तीन विकलेन्द्रिय पांच उपयोग लेके जावे (दो ज्ञान, दो अज्ञान, एक दर्शन । और तीन उपयोग लेके निकले (दो अज्ञान, एक दर्शन ' और तिर्यञ्च पांचेन्द्रिय पांच उपयोग लेके जावे (दो ज्ञान दो अज्ञान एक दर्शन) और आठ उपयोग लेके निकले (तीन ज्ञान, तीन अज्ञान दो दर्शन)॥ मनुष्यमें सात उपयोग (तीन ज्ञान, दो अज्ञान, दो दर्शन) लेके जावे और आठ उपयोग (तीन ज्ञान, तीन अज्ञान, दो दर्शन) लेने निकले ॥ सिद्धोंमें केवलज्ञान, केवल दर्शन लेके जीव जाता है वह सादि अंत भांगे सदैव साश्वते आनन्दघनमे विराजमान होते है । इति.

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर १२

सूत्रश्री भगवती शतक १ उ० २.

(देवोत्पातके १४ बोल.)

निम्नलिखित चौदा बोलोंके जीव अगर देवतोंमें जावे तो कहांतक जा सके.

संख्या.	मार्गणा.	जघन्य.	उत्कृष्ट.
१	असंयतिभवी द्रव्य देव	भुवनपतिमें	नौग्रैवेयक
२	अविराधि मुनि	सौधर्मकल्प	अनुत्तर वैमान
३	विराधि मुनि	भुवनपतिमें	सौधर्मकल्प

४	अविराधि श्रावक	सौधर्मकल्प	अच्युतकल्प
५	विराधि श्रावक	भुवनपति	ज्योतीषीमें
६	असज्ञी तीर्यंच	,,	व्यंतरदेवोंमें
७	कन्दमूल खानेवाले तापस	,,	जोतीषीमें
८	हांसी ठठा करनेवाले मुनि (कदर्पीया)	,,	सौधर्मकल्प
९	परिव्राजक सन्यासी तापस	,,	ब्रह्मदेवलोक
१०	आचार्यादिका अवगुण बोलनेवाले किल्बिषीया मुनि	,,	लांतकमें
११	संज्ञी तीर्यंच	,,	आठवा देवलोक
१२	आजीविया साधु गोशालाके मतका	,,	अच्युतकल्प
१३	यंत्र मंत्र करनेवाले अभोगी साधु	,,	,,
१४	स्वलींगी दर्शन ववन्नगा	,,	नौ ग्रैवेयक

चौदवां बोलमें भव्य जीव है पहले बोलमें भव्याभव्य दोनों है। इति.

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर १३

सूत्र श्री ज्ञाताजी अध्ययन ८ वां.

(तीर्थंकर नाम बन्धके २० कारण)

(१) श्री अरिहंत भगवान्के गुण स्तवनादि करनेसे।

(२) श्री सिद्ध भगवान्के गुण स्तवनादि करनेसे।

(३) श्री पांच समति तीन गुप्ति यह अष्ट प्रवचनकी माता है. इनोंको सम्यक्प्रकारसे आराधन करनेसे ।
(४) श्री गुणवन्त गुरुजी महाराजका गुण करनेसे ।
(५) श्री स्थिवरजी महाराजके गुणस्तवनादि करनेसे ।
(६) श्री बहुश्रुती-गीतार्थोंका गुणस्तवनादि करनेसे ।
(७) श्री तपस्वीजी महाराजके गुणस्तवनादि करनेसे ।
(८) लीखा पढा ज्ञानको वारवार चिंतवन करनेसे ।
(९) दर्शन (समकित) निर्मल आराधन करनेसे ।
(१०) सात तथा १३४ प्रकारके विनय करनेसे ।
(११) कालोकाल प्रतिक्रमण करनेसे ।
(१२) लिये हुवे व्रत-प्रत्याख्यान निर्मल पालनेसे ।
(१३) धर्मध्यान-शुक्लध्यान ध्याते रहनेसे ।
(१४) बारह प्रकारकी तपश्चर्या करनेसे ।
(१५) अभयदान-सुपात्रदान देनेसे ।
(१६) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे ।
(१७) चतुर्विध संघको समाधि देनेसे ।
(१८) नये नये अपूर्व ज्ञान पढनेसे ।
(१९) सूत्र सिद्धान्तकी भक्ति-सेवा करनेसे ।
(२०) मिथ्यात्वका नाश और समकितका उद्योत करनेसे ।

उपर लिखे वीस बोलोंका सेवन करनेसे जीव कर्मोंकी क्रोडाकोडी क्षय करदेते है. और उत्कृष्टी रसायण (भावना) आनेसे जीव तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन करलेते है. जीतने जीव तीर्थंकर हुवे है या होंगे वह सब इन वीस बोलोंका सेवन कीया है और करेंगे इति ।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १४

(जलदी मोक्ष जानेके २३ बोल)

(१) मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाला जलदी २ मोक्ष जावे।
(२) तीव्र-उग्र तपश्चर्या करनेसे ,, ,,
(३) गुरुगम्यतापूर्वक सूत्र-सिद्धान्त सुने तो जलदी २ ,,
(४) आगम सुनके उनोंमें प्रवृत्ति करनेसे ,, ,,
(५) पांचो इन्द्रियोंका दमन करनेसे ,, ,,
(६) छे कायाको जानके उन जीवोंकी रक्षा करे तो ज० ,,
(७) भोजन समय साधु-साध्वीयोंकी भावना भावे तो जलदी २ मोक्ष जावे।
(८) आप सद्ज्ञान पढे और दुसरोंको पढावे तो ज० मोक्ष जा॰
(९) नव निदान न करे तथा नौ कोटी प्रत्याख्यान करनेसे ,,
(१०) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे जलदी २ मोक्ष जावे।
(११) कषायको निर्मुल करे पतली पाडे तो ,, ,,
(१२) छती शक्ति क्षमा करे तो ,, ,,
(१३) लगा हुवा पापकी शीघ्र आलोचना करनेसे ज० ,,
(१४) ग्रहन किये हुवे नियम अभिग्रहको निर्मल पाले तो जलदी २ मोक्ष जावे।
(१५) अभयदान-सुपात्रदान देनेमें जलदी २ मोक्ष जावे।
(१६) सच्चे मनसे शील-ब्रह्मचर्य व्रत पालनेसे ज० ,,
(१७) निर्वद्य (पापरहित) मधुरवचन बोलनेसे ,, ,,
(१८) लिया हुवा संयमभारको स्थितोस्थित पहुंचानेसे जलदी २ मोक्ष जावे।

(१७) अपने व्रतोंसे गीरते हुवे जीवोंके स्थिर करनेसे "परम०" राजमति और रहनेमिकी माफीक (श्री उत्तराध्ययन सूत्र०)

(१८) उग्र तपश्चर्या करते हुवे जीवोंका ' परम० ' धन्ना-मुनिकि माफीक (श्री अनुत्तर उववाइ सूत्र)

(१९) अग्लानपणे गुरुवादिकिवेयावच्च करनेसे ' परम० ' पन्थकमुनिकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२०) सदैव अनित्य भावना भावनेसे जीवोंका ' परम० ' भरतचक्रवर्त्तिकि माफीक (श्री जम्बुद्विपप्रज्ञप्ति सूत्र)

(२१) प्रणामोंकि लहरोंको रोकनेसे जीवोंके ' परम० ' प्रसन्नचन्द्रमुनिकी माफीक (श्रेणिकचरित्रमें)

(२२) सत्यज्ञानपर श्रद्धा रखनेसे जीवोंके ' परम० ' अर्ह-न्नक श्रावककी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२३) चतुर्विधसघकि वैयावच्च करनेसे जीवोंके ' परम० ' सनत्कुमार चक्रवर्त्तिके पुर्वके भवकि माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(२४) चढते भावोंसे मुनियोंकि वैयावच्च करनेसे 'परम०' बाहुबलजीके पुर्वभवकी माफीक (श्री ऋषभचरित्र)

(२५) शुद्ध अभिग्रह करनेसे जीवोंके ' परम० ' पांच पांडवोंकि माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२६) धर्म दलाली करनेसे जीवोंके " परम० " श्रीकृष्ण नरेशकि माफीक (श्री अंतगडदशांग सूत्र)

(२७) सूत्रज्ञानकि भक्ति करनेसे जीवोंके " परम० " उदाइराजाकि माफिक (श्री भगवतीसूत्र)

(२८) जीवदया पाले तों जीवोंके " परम० " श्री धर्मरूची अणगारकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२९) व्रतोंसे गीरजानेपरभी चेतजानेसे " परम० " अरणिकमुनिकी माफीक। (श्री आवश्यक सूत्र)

(३०) आपत्त आनेपरभी धैर्यता रखनेसे ' परम० ' खंधक मुनिकी माफीक। (श्री आवश्यक सूत्र)

(३१) जिनराज देवोंकि भक्ति और नाटक करनेसे जीवोंके ' परम० ' प्रभावती राणीकी माफीक (श्री उत्तराध्ययन सूत्र)

(३२) परमेश्वरकी त्रिकाल पुजा करनेसे जीवोंके ' परम० ' शान्तिनाथजीके पुर्वभव मेघरथ राजाकी माफीक (शान्तिनाथ चरित्र)

(३३) छती शक्ति क्षमा करनेसे जीवोंके ' परम० ' प्रदेशी राजाकी माफीक (श्री रायपसेनी सूत्र)

(३४) परमेश्वरके आगे भक्ति सहित नाटक करनेसे ' परम० ' रावण राजाकी माफीक (त्रिषष्ठीशलाका पुरुष चरित्र)

(३५) देवादिके उपसर्ग सहन करनेसे ' परम० ' कामदेव श्रावककी माफीक (श्री उपासक दशांग सूत्र)

(३६) निर्भीकतासे भगवानको वन्दन करनेको जानेसे 'परम०' श्री सुदर्शन शेठकी माफीक (श्री अन्तगड दशांग सूत्र)

(३७) चर्चा कर वादीयोंको पराजय करनेसे ' परम० ' मंडुक श्रावककी माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(३८) शुद्ध भावोंसे चैत्यवन्दन करनेसे जीवोंके ' परम० ' जगवल्लभाचार्यकी माफीक (पुजा प्रकरण)

(३९) शुद्ध भावोंसे प्रभुपुजा करनेसे जीवोंके ' परम० ' नागकेतुकी माफीक (श्री कल्पसूत्र)

(४०) जिनप्रतिमाके दर्शन कर शुभ भावना भावनेसे ' परम० ' आर्द्रकुमारकी माफीक (श्री सूत्र कृतांग)

इन वोलोंको कंठस्थ कर सदैवके लिये स्मरण करना और यथाशक्ति गुणोंको प्राप्त कर परम कल्याण करना चाहिये।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १६.

(श्री सिद्धोंकी अल्पाबहुत्त्वके १०८ बोल)

ज्ञान दर्शन चारित्रकी आराधना करनेवाले भाइयोंको इन अल्पाबहुत्त्वको कठस्थ कर सदैव स्मरण करना चाहिये।

(१) सर्व स्तोक एक समयमें १०८ सिद्ध हुवे।
(२) उनोंसे एक समयमें १०७ ,, अनंतगुणे।
(३) उनोंसे एक समयमें १०६ ,, ,,
एवं ५८ वा बोलमें एक समयमें ५१ ,, ,,
(५९) उनोंसे एक समयमें ५० ,, असंख्यातगुणे।
(६०) उनोंसे एक समयमें ४९ ,, ,,
(६१) उनोंसे एक समयमें ४८ ,, ,,
एवं क्रमसर ८४ वा बोलमें एक समयमें २५ सिद्ध हुवे असं० गु०
(८५) उनोंसे एक समय २४ सिद्ध हुवे संख्यातगुणे०
(८६) उनोंसे एक समय २३ ,, ,, ,,
एवं क्रमसर १०८ वा बोले एक समयमें एक ,, ,,

यह १०८ वोलोंकी 'माला' सदैव गुणनेसे कर्मोंकी महा निर्जरा होती है. वास्ते सुज्ञजनोंको प्रमाद छोड प्रात:कालमें इस मालाको गुणनेसे सर्व कार्य सिद्ध होते है इति।

॥ सेवंभंते सेवंभंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १७

(सूत्र श्री जम्बुद्विप प्रज्ञप्ति--छे आरा.)

भगवान् वीरप्रभु अपने शिष्य इन्द्रभूति अनगार प्रति कहते है कि हे गौतम इन आरापार ससारके अन्दर कर्म प्रेरित अनते जीव अनते काल से परिभ्रमन कर रहे है कालकि आदि नही है और अंत भी नही है.

भरत-ऐरवतक्षैत्रकि अपेक्षा अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कही जाती है वह दश कोडाकोड सागरोपमकि अवसर्पिणी और दश कोडाकोड सागरोपमकी उत्सर्पिणी एवं दोनों मीलके वीस कोडाकोडी सागरोपमका कालचक्र होता है एवं अनंते कालचक्रका एक पुद्गल परावर्तन होता है एसे अनंते पुद्गल परावर्तन भूतकालमें हो गये है और भविष्यमें अनन्ते पुद्गल परावर्तन हो जायगा.

हे गौतम मे आज इन भरतक्षेत्रमें अवसर्पिणी कालका ही व्याख्यान करता हुं तुं एकाग्रचित्त कर श्रवण कर।

एक अवसर्पिणी काल दश कोडाकोड सागरोपमका होता है जिस्के छे विभाग रूपी छे आरा होते है यथा—(१) सुखमा सुखमा (२) सुखमा (३) सुखमा दुःखमा (४) दुःखमा सुखमा (५) दुःखमा (६) दुःखमा दुःखमा इति छे आरा।

(१) प्रथम सुखमा सुखम आरा च्यार कोडाकोड सागरोपमका है इस आराके आदिमे यह भारतभूमि बडी ही रम्य रमणिय सुन्दराकार और सौभाग्यको धारण करनेवाली थी. पाहाड पर्वत खाइ खाडा याने विषमपणाकर रहित इन भूमिका विभाग पांच प्रकारके रत्न से अच्छा मंडित था. चोतर्फसे वन

राजी पत्र पुष्प फलादिकि लक्ष्मी से अपनी छटा दीखा रही थी. दश प्रकारके कल्पवृक्ष अनेक विभागोंमें अपनि उदारता मशहूर कर रहे थे भूमिका वर्ण बडा ही सुन्दर मनोहर था स्थान स्थान वापी कुवे पुष्करणी वापी अच्छा पथ पाणी से भरी हुइ लेहरो कर रही थी. भूमिका रस मानो कालपी मीसरी माफीक मधुर और स्वादिष्ट था. भूमिकी गन्ध चोतर्फ से सुगन्ध ही सुगन्ध दे रही थी. भूमिका स्पर्श बडा ही सुकुमाल मक्खनकि माफीक था एक वारीस होनेपर दश हजार वर्ष तक उनकी सरसाइ बनी रहती थी.

हे गौतम उन समयके मनुष्य युगल कहलाते थे कारण उन समय उन मनुष्योंके जीवनमें एक ही युगल पैदा होते थे उनोंके मातापिता ४९ दिन उनोंका सरक्षण करते थे फीर वह ही युगल गृहवास कर लेते थे. वास्ते उन मनुष्योंको 'युगलीये' मनुष्य कहा जाते थे वह वडे ही भद्रीक प्रकृतिवाले सरल स्वभावी विनयमय तों उनका जीवन ही थे उन मनुष्योंके प्रेमबन्धन या ममत्त्वभाव तों बीलकुल ही नही था. उन जमानेमें उन मनुष्योंके लिये राजनीती और कानुन कायदावोंकि तो आवश्यक्ता ही नही थी कारण जहां ममत्व भाव होते है वहां राजसत्ताकि जरूरत होती है वह उन मनुष्योंके थी नही। वह मनुष्य पुन्यवान तों इतने थे कि जव कीसी पदार्थ भोग उपभोगके लिये जरूरत होती तों उनोंके पुन्योदय वह दशजातिके कल्पवृक्ष उसी वखत मनो- कामना पूरण कर देते थे। उन कल्पवृक्षोंके नाम और गुण इस माफीक था।

(१) मत्तांगा=उत्त पदार्थोंके मदिराके दातार.

(२) भूयांगा=थाल कटोर गीलासादि वरतनोंके दातार.

(३) तुडांगा=४९ जातिके वाजित्रोंके दातार

(४) जोयांगा=सूर्य चन्द्रसे भी अधिक ज्योतीके दातार.

(५) दीपांगा=दीपक चराख मणि आदिके प्रकाश ,,

(६) चित्तरांगा=पांचवर्णके सुगन्धी पुष्पोंकि मालावोंके ,,

(७) चित्तरसा=अनेक प्रकारके पाक पक्वानके भोजन सुन्दर स्वादिष्ट पौष्टीक मनगमते भोजनके दातार.

(८) मणियांगा=अनेक प्रकारके मणि रत्न मुक्ताफल सुवर्ण मंडित कमवजन अधिक मूल्य वेसे भूषणोंके दातार।

(९) गेहगारा=उंचे उंचे शीखरवाला मनोहर प्रासाद भुवन महल शय्या संयुक्त मकानके दातार।

(१०) अणिअणा=उम्मदा सुकमाल वस्त्रोंके दातार।

यह दश जातिके कल्पवृक्ष युगल मनुष्योंके मनोर्थ पुरण करते थे

हे गौतम! उन मनुष्योंके उन समय तीन पल्योपमका× आयुष्य तीन गाउका शरीर और शरीरके २५६ पांसलीयों थी. वज्रऋषभ नाराच सहनन समचतुस्र संस्थान, उन स्त्री पुरुषोंका रूप जोबन लावण्य चातुर्य सौभाग्य सुन्दरता बहुत ही अच्छी थी, क्रमशः काल बीतने लगा तब उतरते आरे उन मनुष्योंका दो पल्योपमका आयुष्य दो गाउकी अवगाहना शरीरकि पांसलीयों १२८ रही वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्शमें अनंतीहोनी होने लगी। भूमिका रस खंडा जेसा रह गया। आराके आदिमें उन युगल मनुष्योंको तीन

× दश जातिके कल्पवृक्षोंको जीवाभिगम सूत्रमें 'विसेसपरणिया' कहा है जीस्को कइ आचार्य कहते है कि उन वृक्षोंके अधिष्टत देवता है वह युगल मनुष्योंकि इच्छा पुरण करते है केइ कहते है कि युगलीयोंके स्वभावी पुन्य होनेसे स्वभावी उनी पदार्थ द्वारा प्रणम जाते है। तत्त्व केवलिगम्य।

दिनोंसे आहारकि इच्छा होती थी जब शरीर प्रमाणे आहार करते थे फीर आराके अन्तमें दो दीनोंसे आहारकि इच्छा होने लगी.

युगल मनुष्योंके शेष छेमास आयुष्य रहता है तब उनोंके परभवको आयुष्य वन्ध जाता है युगल मनुष्योंका आयुष्य नोप-कर्मी होता है। युगलनीके एक युगल (बचाबची) पेदा होते हैं उनोकी ४९ दिन "प्रतिपालना करके युगल मनुष्यको छींक आति है और युगलनीको उभासी आती है. वस इतनेमें वह दोनों सा-थहीमें कालधर्मको प्राप्त हो देवगतिमें चले जाते है।

उन समय सिंह व्याघ्र चित्ता रीच्छ सर्प वीच्छु गौ भेंस हस्ति अश्वादि जानवर भी होते है, परन्तु वह भी वडे भद्रीक प्रकृतिवाले कीसी जीवोंके साथ न वैरभाव रखते है न कीसीको तकलीफ देते है उनोंकीभी गति देवतावोंकी ही होती है। युगल मनुष्य उसे कीसी काममें नहीं लेते है।

उन समय न कसी मसी असी वीणज्य वैपार है न राजा प्रजा होती है वहांके मनुष्य तथा पशु स्वइच्छानुसार घूमा करते है। जेसा यह प्रथम आरा है जीसकि आदिमें जो वर्णन किया है वेसाही देवकुरु उत्तरकुरु युगलक्षेत्रका वर्णन समज लेना चाहिये।

पुर्वभवमें कीये हुवे सुकृत कर्मका उदय अनुभाग रसको वहां पर भोगवते है। इति प्रथम भाग।

पहले आरेके अन्तमें दुसरा आरा प्रारंभ होते है तब अनते वर्णगन्धरस स्पर्श संस्थान संहनन गुरुलघु अगुरुलघु पर्यायकी हानी होती है।। दुसरा सुखम, नामका आरा तीन कोडाकोड सागरोपमका होता है जीस्का वर्णन प्रथम आराकि माफीफ सम-जना. इतना विशेष है कि उन मनुष्योंकि आराके आदिमें दो

गाउकी अवगाहना, दो पल्योपमकी स्थिति, शरीरके पांसलीयों १२८ संहनन सस्थान स्त्रि पुरुषोंके शरीरके वर्णन प्रथमाराके माफीक समजना आराके आदिमें खांड जेसी भूमिका सरसाई है उत्तरते आरे एक गाउकी अवगाहाना एक पल्योपमकी स्थिति शरीरके ६४ पासलीयों भूमिका सरसाइ गुड जेसी रहेगी उन मनुष्योंको दो दिनोंसे आहारकि इच्छा होगी तब वहही शरीर प्रमाणे आहारकि कल्पवृक्ष पुरती करेंगे, दुसरे आराके युगलनी युगलको जन्म देंगी वह ६४ दिन सरक्षण कर वहही छींक उभासी होतेही स्वर्गगमन करेंगे । इसी माफीक हरीवास रम्यक्वासके युगलोंकाधिकार भी समजना ।

दुसरे आरेके अन्तमें तीसरा आरा प्रारंभ होते है तब दुसरे आरेकि निष्पत् अनते वर्णगन्ध रस स्पर्श संहनन संस्थानादि पर्याय हीन होगा ।

तीसरा सुखमादुखम आरा दो कोडाकोड सागरोपमका है उस्मेंभी युगल मनुष्यही होते है उनोंका आयुष्य एक पल्योपमका, अवगाहना एक गाउकी, शरीरके पासलीये ६४ होती है शेष शरीरके संहनन संस्थानरूप जोवनादि पुर्ववत् समजना. उत्तरते आरे कोडपुर्वका आयुष्य पांचसो धनुष्यकि अवगाहना ३२ पासलीयो होती है. एक दिनके अंतरसे आहारकि इच्छा होती है वह कल्पवृक्षपुर्ण करते हैं भूमिकी सरसाइ गुल जेसी होती है । छे मास पहलेपरभवका आयुष्य वन्धते है वह युगल मनुष्य ७९ दिन अपने बच्चाबच्चीकी प्रतिपालना कर स्वर्गको गमन करते हैं । इन आरामें सुख ज्यादा है और दुःख स्वल्प है इसी माफीक हेमवय, एरण्यवययुगल क्षेत्र भी समजना ।

इन तीसरे आरे के दो विभाग तो युगलपनेमें ही व्यतित हुये जीसका वर्णन उपर कर चुके है । अब जो तीसरा विभाग रहा है उनोंका वर्णन इस माफीक है । जेसे जेसे कालके प्रभाव-

से हानि होने लगी इसी माफीक कल्पवृक्ष भी निरस होने लगें. फल देनेमें भी संकूचितपना होनेसे युगल मनुष्योंके चित्तमें चंचलता व्याप्त होने लगी इस समय रागद्वेषने भी अपना पग-पसारा करना सरु कर दीया इन कारणों से युगल मनुष्यो में अधिपति की आवश्यक्ता होने लगी. तब कुलकरों कि स्थापन हुइ पहले के पांचकुलकरा के 'हकार' नामका नीति दंड हुवा अगर कोइ भी युगल अनुचित कार्य करे तो उसे वह कुलकर दंड देता है कि 'हे' बस इतनेमें वह मनुष्य लज्जीत होंके फीर जन्म भरमें कोइभी अनुचित कार्य नही करता. इस नितीसे केइ काल व्यतित हुवा. जब उन रागद्वेष का जोर बढने लगा तब दुसरे पांच कुलकरोंने 'मकार' नामका दंड नीकाला, अगर कोइ युगल मनुष्य अनुचित कार्य करें तो वह अधिपति कहते कि 'म' याने यह कार्य मत्त करो इतने में वह मनुष्य लज्जीत हो जाता था बाद रागद्वेषका भाइ क्लेशने भी अपना राज जमाना सरूकीया जब तीसरे पांच कुलकरोंने 'धीक्कार' नामका दंड देना सरू कीया. इन पंद्रह कुलकरोंद्वारा तीन प्रकार के दंड से नीति चलती रही जब तीसरे आराके ८४ चोरासी लक्ष पूर्व और तीन वर्ष साढे आठ मास शेष बाकी रहा उन समय सर्वार्थ सिद्ध महा वैमान से चवके भगवान ऋषभदेवने, नाभीराजा के मरूदेवी भार्या कि रत्नकूक्षीमें अवतार लीया माताको वृषभादि चौदा सुपना आये उनोंका अर्थ खुद नाभीराजने ही कहा क्रमशः भगवानका जन्म हुवा चौसठ इन्द्रोंने महोत्सव कीया. युवक वयमें सुनन्दा सुमगला के साथ भगवानका व्याह (लग्न कीया जीसके रीत रस्म सब इन्द्र इन्द्राणीयों ने करीथी फीर भगवान् ऋषभदेवने पुरुषोंकी ७२ कला ओर स्त्रियोंकी ६४ कला बतलाइ

कारण प्रभु अवधिज्ञान सयुक्त थे वह जानते थे कि अब कल्पवृक्ष तों फल देंगे नही और नीति न होगी तो भविष्य में बडा भारी नुकशान होगा दुराचार वढ जायगें इस वास्ते भगवान ने उन मनुष्यों कों असी मसी कसी आदि कर्म करना वतलाके नीतिके अन्दर स्थापन कीया । वस यहां से युगलधर्म का बिलकुल लोप होगया अब नितिके साथ लग्न करना अन्नादि खाद्य पदार्थ पेदा करना और भगवान् आदीश्वर के आदेश माफीक वरताव करना वह लोग अपना कर्तव्य समजने लग गये. भगवान् एसे वीस लक्ष पुर्व कुमार पद में रहै इन्द्र महाराज मीलके भगवान् का राज्याभिषेक कीया भगवान् इक्ष्वाकुवंस उग्रादिकुल स्थापन कर उनोंके साथ ६३ लक्षपूर्व राजपद कों चलाये अर्थात् ८३ लक्षपूर्व गृहवास सेवन किया जीसमें भरत वाहुवल आदि १०० पुत्र तथा ब्राह्मी, सुन्दरी आदि दो पुत्रीयें हुइ थी अयोध्या नगरी कि स्थापना पहलेसे इन्द्र महाराजने करी थी और भी ग्राम नगर पुर पाटण आदि से भूमंडल वडाही शोभने लग रहाथा. भगवानके दीक्षाके समय नौलोकान्तिक देव आके भगवान से अर्ज करी कि हे प्रभों ! जेसे आप नितीधर्म वतलाके क्लेश पाते युगलीयोंका उद्धार किया है इसी माफीक अब आप दीक्षा धारण कर भव्य जीवोंका संसार से उद्धार कर मोक्षमार्ग को प्रचलीत करों. उनसमय भगवान् संवत्सर दान दे के भरतकों अयोध्याका राज वाहुवलकों तक्षशीला का राज ओर ९८ भाइयोंकों अन्यदेशोंका राज दे ४००० राजपुत्रोंके साथ दीक्षा ग्रहन करी । भगवान् के एक वर्ष तक का अन्तराय कर्म था ओर युगल मनुष्य अज्ञात होनेसे एक वर्ष तक आहार पाणी न मीलने से वह ४००० शिष्य जंगलमें जाके फलफूल भक्षण करने लग गये. जब भगवान् ने वरसीतपका पारणा श्रेयांसकुमार के वहां

किया तबसे मनुष्य आहार पाणी देना सीखे. भगवान् १००० वर्ष छद्मस्थ रह के केवल ज्ञानकी प्राप्ति के लिये पुरीमताल नगरके उद्यानमें आये भगवान को केवल ज्ञानोत्पन्न हुवा. वह वधाइ भरत महाराज को पहुंची उस समय भरत राजाके आयुधशालामें चक्ररत्न उत्पन्न हुवा. एक तरफ पुत्र होनेकी वधाइ आइ, एवं तीनों कार्य बडा महोत्सवका था, परन्तु भरत राजाने विचार कीया कि चक्ररत्न और पुत्र होना तो संसारवृद्धिका कार्य है परन्तु मेरे पिताजीकों केवलज्ञान हुवा वास्ते प्रथम यह महोत्सव करना चाहिये क्रमशः महोत्सव कीया. माता मरूदेवी को हस्ती पर बैठा के लाये माताजी अपने पुत्र (ऋषभदेव) कों देख पहले बहुत मोहनी करी फीर आत्म भावना करते हस्तीपर बैठी हुई माताकों केवलज्ञान उत्पन्न हुवा और हस्तीके खंधेपरसे ही मोक्ष पधार गये भगवान् के ४००० शिष्य वापिस आगये औरभी ८४ गणधर ८४००० साधु हुवे और अनेक भव्य जीवोंका उद्धार करते हुवे भगवान् आदीश्वरजी एक लक्ष पुर्व दीक्षा पाल मोक्षमार्ग चालु कर अन्तमें १०००० मुनिवरोंके साथ अष्टापदजीपर मोक्ष पधार गये. इन्द्रोंका यह फर्ज है कि भगवान के जन्म, दीक्षाग्रहन केवल ज्ञानोत्पन्न और निर्वाण महोत्सवके समय भक्ति करे. इस कर्तव्यानुसार सभी महोत्सव कीये अन्तमें इन्द्र महाराजने अष्टापद पर्वत् पर रत्नमय तीनवडे ही विशाल स्तूप कराये और भरत महाराज उन अष्टापद पर २४ भगवान् के २४ मन्दिर बनवा के अपना जन्म सफल कीया था इस वखत तीजा आरा के तीन वर्ष साडा आठ मास वाकी रहा है जोकि युगलीये मरके एक देव गति मेंही जाते थे अब वह मनुष्य कर्मभूमि हो जाने से नरक तीर्यंच मनुष्य देव और केइ केइ सिद्ध गतिमें भी जाने लगगये है। तीसरे आरे के अन्तमें क्रोड पूर्वका आयुष्य, पांचसो धनुष्य का

शरीर, मान ३२ पासलीयों यावत् वर्ण गन्ध रस स्पर्श संहनन संस्थानादिके पर्यव अनंते अनंते हानि होने लगे. धरती की सरसाइ गुल जेसी रही.

तीसरा आरा उतर के चोथा आरा लगा यह ४२००० वर्ष कम, एक कोडाकोड सागरोपमका है जिस्मे कर्मभूमि मनुष्य जघन्य अन्तर महुर्त, उत्कृष्ट क्रोड पूर्वका आयुष्य जघन्य अंगुल के असंख्य भाग उत्कृष्ट पांचसो धनुष्य कि अवगाहना थी शरीर के पांसलीयों ३२थी सहनन छे, संस्थान छे था. जमीनकी सरसाइथी स्निग्ध संयुक्त मनुष्यों के प्रतिदिन आहार करने कि इच्छा उत्पन्न होती थी भगवान् ऋषभदेव और भरतचक्रवर्त्ति यह दो शीलाके पुरुष तो तीसरे आरा के अन्तमें हुवे और शेष २३ तीर्थंकर, ११ चक्रवर्त्ति ९ वलदेव, ९ वासुदेव, ९ प्रतिवासुदेव यह सब चोथा आरामें हुवे थे।

भगवान ऋषभदेव के पाटोनपाट असंख्यात जीव मोक्ष गये तत्पश्चात् अजितनाथ भगवान् का शासन प्रवृत्तमान हुवा क्रमशः नौवो सुविधिनाथ भगवान् तक अविच्छिन्न शासन चला फीर हुन्डा सर्पिणी के प्रयोगसे शाशन उच्छेद हुवा फीर शीतलनाथ भगवान् से शासन चला एवं श्री धर्मनाथजी के शासन तक अंतरे अंतरे धर्म विच्छेद हुवा वाद में श्री शान्तिनाथ प्रभु अवतार लीया वहांसे श्री पार्श्वनाथ प्रभु तक अवच्छिन्न शासन चला वाद में चोथा आराके ७५ वर्ष आढा आठ मास वाकी रहा। पाट कों। तब दशवा स्वर्ग से चवके क्षत्रीकुंड नगर के सिद्धार्थ राजा कि त्रिसलादे राणी के रत्नकुक्षमें श्री वीर भगवान् अवतार धारण कीया माता कों १४ स्वप्ना यावत् भगवान् का जन्म हुवा ६४ इन्द्र मील के भगवान् का जन्म महोत्सव कीया वाद में राजा

सिद्धार्थ जन्म महोत्सव कीया था उनसमय जिन मन्दिरोंमें सेंकडो पुजाओं कर अनुक्रमशः ३० वर्ष भगवान् गृहवास में रहके बाद दिक्षा ग्रहन कर साढे बारह वर्ष घोर तपश्चर्या कर के केवलज्ञान कि प्राप्ती कर तीस वर्ष लग भव्य जीवोंका उद्धार कर सर्व ७२ वर्षों का आयुष्य पाल आप मोक्ष में पधार गये उससमय भगवान् गौतम स्वामि कों केवलज्ञान उत्पन्न हुवा जिनका महा महोत्सव इन्द्रादिकने कीया।

चोथा आरामें दुःख ज्यादा और सुख स्वल्प है आरा के अन्तमें मनुष्यों का आयुष्य उत्कृष्ट १२० वर्षका शरीरकी उंचाइ सात हाथकी पांसलीयों १६ धरतीकी सरसाइ मटी जेसी थी एक दिनमें अनेकवार आहारकी इच्छा उत्पन्न होती थी

जब चोथा आरा समाप्त हो पांचवा आरा लगा तब वर्ण-गन्ध रस स्पर्श संहनन संस्थान के पर्य व अनंते हीन हुये धरतीकी सरसाइ मटी जेसी रही।

पांचवा आरा २१००० वर्षोंका होगा आरा के आदिमें १२० वर्षोंका मनुष्योंका आयुष्य ७ हाथका शरीर-शरीर के छे संहनन छे संस्थान १६ पांसलीयां होगें चोसट वर्ष केवलज्ञान (८ वर्ष गौतमस्वामि १२ सौधर्मस्वामि ४४ जम्बुस्वामि) पांचवे आरे के मनुष्यों कों आहारकी इच्छा अनियमित होगें।

जम्बु स्वामि मोक्ष जाने पर १० बोलोंका उच्छेद होगा यथा-परमावधिज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवलज्ञान, परिहार विशुद्धि चारित्र, सूक्ष्मसंपराय चारित्र, यथाख्यात चारित्र, पुलाक लब्धि, आहारक शरीर, क्षायकश्रेणी, जिन कल्पीपना,,

प्रसंगोपात पांचवे आरे के धर्म धूरंधर आचार्योंके नाम:

(१) श्री सयंप्रभसूरि जैनपोरवाल श्रीमालोंके कर्त्ता
(२) श्री रत्नप्रभसूरि उपलदे राजादि को जैन ओसवाल कीये
(३) श्री यक्षदेवसूरि सवालक्ष जैन बनानेवाला
(४) श्री प्रभवस्वामि सज्जभवभट्टके प्रतिबोधक
(५) श्री सज्जंभवाचार्य दशवैकालक के कर्ता
(६) श्रीभद्रबाहुस्वामि निर्युक्ति के कर्ता
(७) श्री सुहस्ती आचार्य राजा संप्रती प्रतिबोधक
(८) श्री उमास्वाति आचार्य पांचसो ग्रन्थ के कर्ता
(९) श्री श्यामाचार्य श्री प्रज्ञापना सूत्र के कर्ता
(१०) श्री सिद्धसेन दीवाकर विक्रमराजा प्रतिबोधक
(११) श्री वज्रस्वामि जिनमन्दिरोंकी आशातना मीटानेवाले
(१२) कालकाचार्य शालीवाहन राजा प्रतिबोधक
(१३) श्री गन्धहस्ती आचार्य प्रथम टीकाकार
(१४) श्री जिनभद्रगणी आचार्य भाष्यकर्ता
(१५) श्री देवऋद्धि खमासमण आगम पुस्तकारूढ कर्ता
(१६) श्री हरिभद्रसूरि १४४४ ग्रन्थ के कर्ता
(१७) श्री देवगुप्तसूरी निवृत्यादि च्यार शाखोंके कर्ता
(१८) श्री शीलगुणाचार्य श्री मल्लवादि श्री वृद्धवादी
(१९) श्री जिनेश्वरसूरी श्री जिन वल्लभसूरी संघपट्टक कर्ता
(२०) श्री जिनदत्तसूरी जैन ओसवाल कर्ता
(२१) श्री कक्कसूरी आचार्य अनेक ग्रन्थकर्ता
(२२) श्री कलीकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य, राजा कुमारपाल प्रतिबोधक

(२३) श्री हिरविजयसूरी पादशाह अक्कबर प्रतिबोधक।

इत्यादि हजारों आचार्य जो जैनधर्मके स्थंभभूत हो गये है उनोंके प्रभावशाली धर्मोपदेशसे विमलशा, वस्तुपाल, कर्माशा जावडशा भैंसाशा धन्नासा भामाशा सोमासादि अनेक वीरपुत्रोंने जैनधर्मकि प्रभावना करी थी इति

पांचवे आरा में कालके प्रभावसे कीतनेक लोग ऐसेभी होंगे और इस आर्यभूमिका वर्णन जो पुर्व महा ऋषियोंने इस माफीक कीया है।

(१) वडे वडे नगर उजडसा या गामडे जेसे हो जायेंगे

(२) ग्राम होगा वह श्मसान जेसे हो जायगें

(३) उच्च कूलके मनुष्य दास दासीपना करने लग जायगे

(४) जनता जिन्होंपर आधार रखें वह प्रधान लांचडीये होंगे मुदाइ मुदायले दोनोंका भक्षण करेगे

(५) प्रजाके पालन करनेवाले राजा यम जेसे होंगे

(६) उच्च कुलकि ओरतें निर्लज्ज हो अत्याचार करेंगी

(७) अच्छे खानदानकि ओरतों वैश्या जेसे वेश या नाच करेंगी निर्लज्ज हो अत्याचार करेंगे

(८) पुत्र कुपुत्र हों आपत्त कालमें पिताकों छोडके भाग जावेंगे मारपीट दावा फीरयादि करेंगे

(९) शिष्य अविनीत हो गुरु देवोंका अवगुनवाद बोलेंगे

(१०) लुच्चे लंपट दुर्ज्जन लोग कुच्छ समय सुखी होंगे

(११) दुर्भिक्ष दुष्काल वहुत पडेंगें

(१२) सदाचारी सज्जन लोग दुःखी होंगे

(१३) ऊंदर सर्प टीडी आदि क्षुद्र जीवोंके उपद्रव होंगे

(१४) ब्राह्मण योगी साधु अर्थ (धन) के लालची होंगे

(१५) हिंसा धर्म (यज्ञहोम) के प्ररूपक पाखंडी बहुत होगें

(१६) एकेक धर्मके अन्दर अनेक अनेक भेद होगे

(१७) जीस धर्मके अन्दरसे निकलेंगे उसी धर्मकी निंदा करेंगे उपकारके बदले अपकार करेंगे

(१८) मिथ्यात्वीदेव देवीयों बहुत पूजा पावेंगे । उनोंके उपासकभी बहुत होगें ।

(१९) सम्यग्दृष्टि देवोंके दर्शन मनुष्योंको दुर्लभ होगें ।

(२०) विद्याधरोंकि विद्यावोंका प्रभाव कम हो जायगें

(२१) गौरस दुध दही घृत) तैल गुड शकरमें रस कम होगें

(२२) वृषभ गज अश्वादि पशु पक्षीयोंका आयुष्य कम होगा

(२३) साधु साध्वीयोंके मासकल्प जेसे क्षेत्र स्वल्प मीलेंगें

(२४) साधुकि १२ श्रावककी ११ प्रतिमावोंका लोप होगें

(२५) गुरु अपने शिष्योंको पढानेमें संकूचीतता रखेंगें ।

(२६) शिष्यशिष्यणीयों कलह कदाग्रही होगी ।

(२७) संघमें क्लेश टटा फीसाद करनेवाले बहुत होगें ।

(२८) आचार्योंकि समाचारी अलग २ होगें अपनि अपनि सचाइ बतलानेके लिये उत्सूत्र बोलेंगें एक दुसरेको झूठा बतलायेंगें ममत्वभावसे वेशविटम्बिक कुलिंगी सन्मार्गसे पतित बनानेवाला बहुत होगे ।

(२९) भद्रीक सरल स्वभावी अदल इन्साफी स्वल्प होगे यहभी पाखंडीयोंसे सदैव डरते रहेंगें ।

(३०) म्लेच्छराजावोंका राज होगें सत्यकी हानि होगी ।

(३१) हिन्दु या उच्च कूलिन राजा, न्यायीराज स्वल्प होगें।

(३२) अच्छे कुलीन राजा निचलोगोंकि सेवा करेंगें निच कार्य करेंगे ।

इत्यादि अनेक बोलोंसे यह पांचवा आरा कलंकित होगें। इन आरामें रत्न सूवर्ण चान्दी आदि धातु दिन प्रतिदिन कम होती जावेगी अन्तमें जीस्के घरमें मणभर लोहा मीलेंगे वह धनाढ्य कहलावेंगे इन आरामें चमडेके कागजोंके चलन होगें इन आरामे सहनन बहुल मद होगें अगर शुद्ध भावोंसे एक उपासभी करेंगे वह पुर्वकि अपेक्षा मासखमण जेसा तपस्वी कहलावेंगे, उन समय श्रुतज्ञानकि क्रमशः हानि होगी अन्तमें भी दशवैकालीक सूत्रके च्यार अध्ययन रहेंगे उनसे ही भव्य जीव आराधि होगें पांचवे आरेके अन्तमें संघमें च्यार जीव मुख्य रहेंगे (१) दुप्पसासूरी साधु (२) फाल्गुनी साध्वी (३) नागल श्रावक (४) नागला श्राविका यह च्यार उत्तम पुरुष सद्गतिगामी होगें।

पांचवे आरेके अन्तमें आसाढ पुर्णीमाकों प्रथम देवलोकमें शक्रेन्द्रका आसन कम्पायमान होगें. जब इन्द्र उपयोग लगाके जानेंगें कि भरतक्षेत्रमें कल छठा आरा लगेगा. तब इन्द्र मृत्युलोगमें आवेंगें और कहेगेंकि हे भव्यों! आज पांचवा आरा है कल छठा आरा लगेंगें. वास्ते अगर तुमकों आत्मकल्याण करना हो तों आलोचन प्रतिक्रमण कर अनसन करों इत्यादि इनपरसे वह ही च्यारों उत्तम पुरुष आलोचना प्रतिक्रमण कर अनसनकर देवगतिमें जावेंगें शेष जीव बाल मरणसे मृत्युपाके परभव गमन करेंगें ? पाठकों वहही पांचमकाल अपने उपर वरत रहा है वास्ते सावचेत रहना उचित हैं।

पांचवे आरेके अन्तमें मनुष्योंका उत्कृष्ट वीस वर्षका आयुष्य एक हाथका शरीर चरम संहनन संस्थान रहेगा भूमिका रस दग्धभूमि जेसा रहेगा वर्ण गन्ध रस स्पर्शादि सब अनंत भाग न्युन होगें पांचवा आरा उत्तरके छठा आरा लगेगा उनका वर्णन बडा ही भयंकर हैं।

श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन संवर्तक नामका वायु चलनेसे पहलेपहर जैनधर्म, दुसरे पहर ३६३ पाखांडीयेका धर्म, तीजे पहर राजनीती, चोथे पहर बादर अग्निकाय विच्छेद होगें उन समय गंगा सिंधु नदी, वैताढ्यगिरि पर्वत (सास्वतगिरी) और लवण समुद्र कि खाडि इनके सिवाय सब पर्वत पाहाड जंगल जाडी वृक्षादि वनस्पति घर हाट नदी नालादि सर्व वस्तु नष्ट हो जायगी. उसपर सात सात दिन सात प्रकारके मेघ वर्षेगे वह अग्नि सोमल विष धूल खार आदि के पडने से सब भूमि एकदम दग्ध हो जायगी–हाहाकार मच जायंगे उन समय कुच्छ मनुष्य तीर्यंच वचेंगे उनों कों देवता उठाके गंगा सिन्धु नदीके किनारेपर ७२ बोल रहेंगे जिस्में ६३ बीलोंमें मनुष्य ६ बीलोंमें गजाश्व गोभेंसादि भूमिचर पशु आदि ३ बीलोंमे खेचर पक्षीकों रखदेंगे उनोंका शरीर बडाही भयंकर काला कावरा मांजरा लुला–लंगडा अनेक रोगग्रास्त कुरूपे मनुष्य होंगे जिनोंके मैथुनकर्मकी अधिकाधिक इच्छा रहेंगे उनोंकि लडके लडकीये बहुत होगी छे वर्षोंकी ओरतें गर्भ धारण करेंगी. वहभी कुतीयोंकि माफीक एक वखतमे ही बहुत बचा बचीयोंकों पैदा करेंगी महान् दु खमय अपना जीवन पूर्ण करेंगे।

गंगा सिन्धु नदी मूलमें ६२॥ जोजनकी है परन्तु कालके प्रभावसे क्रमशः पाणी सुकता सुकता उन समय गाडीके चीले जीतनी चोडी ओर गाडाका आक डुवे इतनी उंडी रहेगी उन पाणीमें बहुतसे मच्छ कच्छ जलचर जानवर रहेंगे।

उन समय सूर्यकि आताप बहुत होगी चन्द्रकि शीतलता बहुत होगी. जिनके मारे वह मनुष्य उन बीलोंसे नीकल नहीं सकेंगे. उन मनुष्योंके उदर पुरणाके लिये उन नदीयोंमे कच्छ मच्छ होगा उनोंको श्याम सुबह बीलोंसे निकलके जलचर जीवों

कों पकड उन नदीके कीनारेकी रेतीमे गाड देंगें वह छिनकों सूर्यकि आतापनासे रात्रीमें चन्द्रकी शीतलतासे पक जावेगे फीर सुबे गाडे हुवेका श्यामको भक्षण करेंगे श्यामकों गाडे हुवेका सुबे भक्षण करेंगे इसी माफीक वह पापीष्ट जीव छठे आरेके २१००० वर्ष व्यतिन करेंगे। उन मनुष्योंका आयुष्य लागते छठे आरे उत्कृष्ट २० वर्षका होगा शरीर एक हाथका हुन्डक संस्थान छेवटुं संहनन आठ पासलीयों ओर उत्तरते आरे १६ वर्षोंका आयुष्य, मुडत हाथका शरीर, च्यार पांसलीयां होगी. उन दुःखमा दुःखम आरामें वह मनुष्य नियम व्रत प्रत्याख्यान रहीत मृत्यु पाके विशेष नरक और तीर्यंच गतिमें जावेंगे। पाठकों! अपना जीव भी एसे छट्ठे आरेमें अनंतो अनंती वार उत्पन्न होके मरा है वास्ते इस वखत अच्छी सामग्री मीली है. जिस्मे सावचेत रहनेकी आवश्यक्ता है। फीर पश्चाताप करनेसे कुच्छ भी न होंगे।

अब उत्सर्पिणी कालका संक्षेपमें वर्णन करते हैं।

(१) पहला आरा छटा आरेके माफीक २१००० वर्षका होगा।

(२) दुसरा आरा पांचवा आरे जेसा २१००० वर्षोंका होगा; परन्तु साधु साध्वी नहीं रहेंगे. प्रथम तीर्थंकर पद्मनाभका जन्म होगा याने श्रेणिकराजाका जीव प्रथम पृथ्वीसे आके अवतार धारण करेंगे। अच्छी अच्छी वर्षात होनेसे भूमिमें रस अच्छा होगा.

(३) तीसरा आरा–चोथा आरेके माफीक बीयालीसहजार वर्ष कम एक कोडाकोड सागरोपमका होगा जिस्मे २३ तीर्थंकर आदि शलाके पुरुष होगे मोक्षमार्ग चलु होगा शेष अधिकार चोथा आरा कि माफीक समज लेना।

(४) चोथा आरा तीसरे आरेके माफीक होगा जीसे प्रथम तीजा भागमें कर्मभूमि रहेगे एक तीर्थंकर एक चक्रवर्त्ति मोक्ष जावेंगे फीर दो-तीन भागमें युगल मनुष्य हो जायेंगे वहही कल्पवृक्ष उनोंकि आशा पुरण करेंगे सम्पूरण आरा दो कोडाकोडी सागरोपमका होगा।

(५) पांचवां आरा दुसरे आरेके माफीक तीन कोडाकोडी सागरोपमका होगा उसमें युगल मनुष्यही होगा।

(७) छठा आरा पहेले आरेके माफीक च्यार कोडाकोडी सागरोपमका होगा उसमें युगल मनुष्यही होंगे।

इन उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणीकाल मीलानेसे एक कालचक्र होता है एसा अनंते कालचक्र हो गये कि यह जीव अज्ञानके मारे भवभ्रमन कर रहा है। पाठकगण ! इसपर खुब गहरी दृष्टिसे विचार करे कि इस जीवकि क्या क्या दशा हुइ है और भविष्यमें क्या दशा होगी। वास्ते श्री परमेश्वर वीतराग के वचनोंको सम्यक प्रकारसे आराधन कर इस कालके मुंहसे छुट चलीये सास्वते स्थानमें इति।

सेवं भंते सेवं भंते-तमेव सचम्

श्री ककसूरी सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग २ जा.

थोकडा नम्बर १८.

(नवतत्त्व)

गाथा—जीवाजीवा पुण्णं पावासव संवरो य निज्झरणा ॥
बंधो मुक्खो य तहा, नवतत्ता हुंति नायव्वा ॥ १ ॥
(श्री उत्तराध्ययन अ० २८ वचनात)

(१) जीवतत्त्व–जीवके चैतन्यता लक्षण है
(२) अजीवतत्त्व–अजीवके जडता लक्षण है
(३) पुन्यतत्त्व–पुन्यका शुभफल लक्षण है
(४) पापतत्त्व–पापका अशुभफल लक्षण है
(५) आश्रवतत्त्व–पुन्य पाप आनेका दरवाजा लक्षण है
(६) संवरतत्त्व–आते हुवे कर्मोंको रोक रखना
(७) निर्ज्जरातत्त्व–उदय आये कर्मोंको भोगवके दूर करना
(८) बन्धतत्त्व–रागद्वेषके परिणामोंसे कर्मका बन्धना.
(९) मोक्षतत्त्व–सर्व कर्म क्षयकर सिद्धपद प्राप्त करना.

इन नवतत्त्वमें जीव अजीवतत्त्व जानने योग्य है. पाप आश्रव और बन्धतत्त्व जानके परित्याग करने योग्य है. संवर नि-

ज्जैरा और मोक्षतत्त्व जानके अंगीकार करने योग्य है पुन्यतत्त्व नैगमनयके मतसे स्वीकार करने योग्य है कारण मनुष्यजन्म उत्तम कुल, शरीर निरोग्य, पूर्ण इन्द्रिय, दीर्घ आयुष्य, धर्म सामग्री आदि सब पुन्योदयसे ही मीलती है व्यवहार नयके मतसे पुन्य जानने योग्य है और एवंभुत नयके मतसे पुन्य जानके परित्याग करने योग्य है कारण मोक्ष जानेवालोंको पुन्य बाधाकारी है पुन्य पापका क्षय होनेसे जीवोंका मोक्ष होता है।

नवतत्त्वमें च्यार तत्त्व जीव है=जीव, संवर, निर्ज्जरा, और मोक्ष. तथा पांच तत्त्व अजीव है-अजीव-पुन्य-पाप-आश्रव और बन्धतत्त्व।

नवतत्त्वका च्यार तत्त्व रूपी है पुन्य-पाप-आश्रव और बन्ध च्यार तत्त्व अरूपी है जीव. संवर निर्ज्जरा और मोक्ष तथा अजीवतत्त्व रूपी अरूपी दोनों है.

निश्चयनयसे जीवतत्त्व है सो जीव है और अजीवतत्व है सो अजीव है शेष सात तत्व जीव अजीवकि पर्याय है यथा संवर निर्ज्जरा मोक्ष यह तीन तत्व जीवकि पर्याय है, पाप पुन्य आश्रव बन्ध यह च्यार तत्व अजीवकी पर्याय है।

अजीव पाप पुन्य आश्रव और बन्ध यह पांचतत्व जीवके शत्रु है संवर तत्व जीवका मित्र है, निर्ज्जरातत्व जीवको मोक्ष पहुंचानेवाला वोलावा है. मोक्ष तत्व जीवका घर है.

नवतत्वपर च्यार निक्षेपा-नामनिक्षेपा. जीवाजीवका नाम नवतत्व रखाहै, अक्षर लिखना तथा चित्रादिकि स्थापना करना यह नवतत्वका स्थापना निक्षेपा है. उपयोग रहीत नवतत्वाध्ययन करना यह द्रव्यनिक्षेपा है सम्यक्प्रकारे यथार्थ नवतत्वका स्वरूप समजना यह भावनिक्षेपा है

नवतत्वपर सात नय नैगमनय नवतत्व शब्दकों तत्व माने. संग्रहनय तत्वकि सत्ताको तत्व माने व्यवहार नय जीव अजीव यह दोय तत्व माने. ऋजु सूत्रनय छे तत्त्व माने. जीव अजीव पुन्य पाप आश्रव बन्ध, शब्दनय सात तत्व माने छे पुर्ववत् एक संवर. संभिरूढनय आठ तत्व माने निर्ज्जराधिक. एवंभूत नय नव तत्व माने ।

नव तत्वपर द्रव्य क्षेत्र काल भाव—द्रव्यसे नवतत्व जीव अजीव द्रव्य है क्षेत्रसे जीव अजीव पुन्य पाप आश्रव बन्ध सर्व लोकमे है संवर निर्ज्जरा और मोक्ष त्रस नालीमें है. काउसे नवतत्व अनादि अनंत है कारण नवतत्व लोकमें सास्वता है भावसे अपने अपने गुणोंमे प्रवृत रहे है।

नवतत्त्वका विशेष विवेचन इस माफीक है ।

(१) जीवतत्त्व-जीवका सम्यक् प्रकारे ज्ञान होना जेसे जीवके चैतन्य लक्षण है व्यवहारनयसे जीव पुन्य पापका कर्ता है सुख दुःखके भोक्ता है पर्याय प्राण गुणस्थानादिकर सयुक्त द्रव्येजीव सास्वता है पर्याय (गतिअपेक्षा) असास्वताभी है. भूतकालमें जीवथा वर्तमानकालमें जीव है भविष्यमें जीव रहेंगे । तीनकालमें जीवका अजीव होवे नही उसे जीव कहते है निश्चयनयसे जीव अमर है कर्मोका अकर्ता है और व्यवहार नयसे जीव मरे है कर्मोका कर्ता है अनादि कालसे जीवके साथ कर्मोका संयोग है जेसे दुधमें घृत तीलोंमें तेल धूलमे धातु इक्षुमें रस पुष्पोंमें सुगन्ध चन्द्रकान्ता मणिमे अमृत इसी माफीक जीव और कर्मोका अनादि कालसे सबन्ध है दृष्टान्त सोना निर्मल है परन्तु अग्निके संयोगसे अपना स्वरूपको छोड अग्नि के स्वरूप को धारण कर लेता है इसी माफीक अनादि काल के अज्ञान के वस क्रोधादि संयोगसे जीव अज्ञानी कर्मवाला कह-

लाते है जब मोना कों जल पवनादिकी सामग्री मीलती है तब परगुण (अग्नि) त्याग कर अपने असली स्वरूप कों धारण करते है इसी माफीक जीव भी दर्शनज्ञान चारित्रादिकि सामग्री पाके कर्ममेलको त्याग कर अपना असली (सिद्ध) स्वरूपको धारण कर लेता है।

द्रव्यसे जीव असंख्यात प्रदेशी है। क्षेत्रसे जीव स्मपुरण लोक परिमाणे है (एक जीवका आत्मप्रदेश लोकाकाश जीतना है) कालसे जीव आदि अन्त रहीत है भावसे जीव ज्ञानदर्शन गुणसंयुक्त है। नाम जीव सो नाम निक्षेपा, जीवकि मूर्ति तथा अक्षर लिखना वह स्थापना जीव है उपयोग सुन्य जीवकों द्रव्यनिक्षेपा कहते है उपयोगगुण संयुक्तकों भावजीव कहते है।

नय-जीव शब्दकों नैगमनय जीव मानते है असख्याता प्रदेश सत्तावाले जीवकों संग्रहनय जीव कहते है-त्रस स्थावरके भेदवाले जीवोंको व्यवहारनय जीव कहते है; सुखदुःखके परिणामवाले जीवोंको ऋजुसूत्र नयजीव कहने है क्षायकगुणप्रगटांणा हो उसे शब्दनय जीव कहते है केवलज्ञान संयुक्तकों संभिरुढ नयजीव कहते है सिद्धपद प्राप्त कीये हुवे कों एवंभूत नयजीव कहते है।

जीवोंके मूलभेद दोय है (१) सिद्धोंके जीव और (२) संसारी जीव. जिस्मे सिद्धोंके जीव सर्वेता प्रकारे कर्म कलंकसे मुक्त है अनंते अव्याबाध सुखोंमे लोकके अग्रभागपर सद्चिदान्द शुद्धानन्द सदानन्द स्वगुणभोक्ता अनंतज्ञानदर्शनमें रमणता करते है, द्रव्यसे सिद्धोके जीव अनंत है क्षेत्रसे सिद्धोंके जीव पैंतालीस लक्ष योजनके क्षेत्रमे विराजमान है कालसे सिद्धोंके जीव बहुत जीवोंकी अपेक्षा अनादि अनत है एक जीवकि अपेक्षा सादि अनंत है भावसे अनंतज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य गुणसयुक्त समय

समय लोकालोकके भावोंको देख रहे है. सिद्धोका नाम लेनेसे नामनिक्षेपा, सिद्धोंकी प्रतिमा स्थापन करनेसे स्थापना निक्षेपा, यहां पर रहे हुवे महात्मा सिद्ध होनेवाले है वह सिद्धोंका द्रव्य निक्षेपा है सिद्धभावमें वरत रहे हे वह सिद्धोंका भाव निक्षेपा है उन सिद्धोंके मूल भेद दोय है (१) अनंतरसिद्ध (२) परम्परसिद्ध, जिस्मे अनंतर सिद्धों जोकि सिद्ध हुवेको प्रथमही समय वरत रहे है जिनोंके पंदरा भेद है (१) तिर्थसिद्धा–तीर्थ स्थापन होनेके बाद मुनिवरादि सिद्ध हुवे (२) अतीत्थसिद्धा–तीर्थ स्थापन होनेके पहेले मरूदेव्यादि सिद्ध हुवे (३) तीत्थयर सिद्धा–खुद तीर्थकरसिद्ध हुवे (४) अतीत्थयरसिद्धा –तीर्थंकरोंके सिवाय गणधरादि सिद्ध हुवे (५) सयंबोद्धेसिद्धा–ज्ञातिस्मरणादि ज्ञानसे असोचा केवली आदि सिद्ध हुवे. (६) प्रतिवोद्धिसिद्धा–करकंडु आदि प्रत्येक वुद्ध सिद्ध हुए (७) बुद्धबोहीसिद्धे–तीर्थकर गणधरा मुनिवरोंके प्रतिवोधसे सिद्ध हुवे. (८) इत्थिलिंगसिद्धा. द्रव्यसे स्त्रिलिंग है परन्तु भावसे वेदक्षय होनेसे अवेदि है वह ब्राह्मी सुन्दरी आदि (९) पुरुषलिंगसिद्धे —पुर्ववत् अवेदि–पुंडरिकादि–(१०) नपुंसकलिंगसिद्धे–पुर्ववत् अवेदि गाङ्गेयादि मुनि–(११) स्वलिंगीसिद्धे–स्वलिंग रजोहरण मुखवस्त्रिका संयुक्त मुनियोंकि मोक्ष (१२) अन्यलिंगसिद्धे–अन्यलिंग त्रीदंडीयादिके लिंगमें भावसम्यक्त्व चारित्र आनेसे मोक्ष जाना (१३) गृहीलिंगीसिद्धे— गृहस्थके लिंगमें सिद्ध होना मरूदेवी आदि–(१४) एक समयमें एक सिद्ध (१५) एक समयमें अनेक (१०८) सिद्धोंका होना इन सबकों अनतर सिद्ध कहते है (२) दुसरे जो परम्पर सिद्ध होते है उनोंके अनेक भेद हे जैसे अप्रथम समयसिद्ध अर्थात् प्रथम समय वर्जके द्वि-

त्यादि संख्याते असंख्याते अनंते समयके सिद्धोंको परस्पर सिद्ध कहते है इति.

(२) अब संसारी जीवोंके अनेक भेद बतलाते है जेसे संसारी जीवोंके एक भेद याने संसारीजीव. दो भेद त्रस-स्थावर। तीन भेद स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद। च्यार भेद. नारकी तीर्यंच मनुष्य देवता। पांच भेद एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय पांचेन्द्रिय। छे भेद. पृथ्वीकाय अपकाय तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय। सात भेद नारकी तीर्यंच तीर्यंचणी मनुष्य मनुष्यणी देवता देवी। आठ भेद च्यार गतिके पर्याप्ता अपर्याप्ता। नौभेद पांच स्थावर च्यार त्रस। दश भेद पांच इन्द्रियोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता। इग्यारो भेद पांचेन्द्रियके पर्याप्ता अपर्याप्ता एवं १० और अनेन्द्रिय। बारहा भेद छे कायाके पर्याप्ता अपर्याप्ता। तेरहा भेद छे कायाके पर्याप्ता अपर्याप्ता ते रहवा अकाया. जीवोंके चौदा भेद सूक्ष्मएकेन्द्रिय बादरएकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेन्द्रिय चोरिन्द्रिय असंज्ञीपांचेन्द्रिय संज्ञीपांचेन्द्रिय एवं सातोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके चौदा भेद जीवोंके समजना।

विशेष ज्ञान होनेके लिये संसारी जीवोंके ५६३ भेद बतलाते है जिस्मे संसारी जीवोंके मूल भेद पांच है यथा-(१) एकेन्द्रिय (२) बेइन्द्रिय ३) तेइन्द्रिय (४) चोरिन्द्रिय (५) पांचेन्द्रिय। एकेन्द्रियके दो भेद है (१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय (२) बादर एकेन्द्रिय। सूक्ष्म एकेन्द्रिय पांच प्रकारकी है पृथ्वीकाय अपकाय तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय यह पांचों सूक्ष्म स्थावर जीव, संपूर्ण लोकमें काजलकी कुंपलीके माफीक भरे हुवे हैं उन जीवोंके शरीर इतना तो सूक्ष्म है कि छद्मस्थोंकी दृष्टिगोचर नहीं होते है उनोंको केवली भगवान् अपने केवलज्ञान केवलदर्शनसे

जानते देखते है. उनोंने ही फरमाया है कि सूक्ष्म नामकर्मके उदयसे उन जीवोंको सूक्ष्म शरीर मीला है वह जीव मारे हुवा नहीं मरते है, वाले हुवा नहीं जलते है, काटे हुवा नहीं कटते है अर्थात् अपने आयुष्यसे ही जन्म-मरण करते है. उनोंका आयुष्य मात्र अंतरमुहुर्तका ही है जिस्में सूक्ष्म, पृथ्वी, अप, तेउ, वायुके अन्दर तो असंख्याते २ जीव है और सूक्ष्म वनस्पतिमें अनंते जीव हैं. इन पांचोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलानेसे दश भेद होते है।

दुसरे वादर एकेन्द्रियके पांच भेद है यथा—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय. जिस्में पृथ्वीकायके दो भेद है. (१) मृदुल (कोमल) (२) कठन जिस्में कोमल पृथ्वीकायके सात भेद है. काली मट्टी, नीली मट्टी, लाल मट्टी, पीली मट्टी, सुपेद मट्टी, पाणीके नीचे तली जमी हुइ मट्टी उसे 'पणग' कहते है. पांडु गोपीचन्दनादि।

(२) खरपृथ्वीके अनेक भेद है यथा—मट्टी खानकी, चीकणी मट्टी, छोटे कांकरा, वालुका रेती,* पाषाण, शीला, लुण (अनेक जातीका होते है) धूलसे मीले हुवे धातु—लोहा, तांबा, तरुवा, सिसा, रुपा, सुवर्ण, वज्र, हरताल, हिंगलु, मणशील, परवाल, पारो, वमक, पन्नल, भोडल, अवरक, वज्ररत्न, मणिगोमेदरत्न,

* श्री सूत्रकृतांगमें कहा है कि अवापरी हुइ धूल च्यार अंगुल निचे सचित्त है. राजमार्गमें पाच अगुल निचे सचित्त है. सेरी (गली) में सात अंगुल निचे गृहभूमिमें दश अगुल निचे मलमूत्रभूमिकामें पदरा अगुल निचे चौपद जानवरों रहनेकी भूमिमें २१ अंगुल निचे. चूल्हाके स्थान २२ अगुल निचे कुम्भकारके निम्बाडाके २६ अंगुल निचे इट कलरेके पचानेके स्थान निचे १२० अंगुल निचे भूमिका सचित्त रहती है।

रुचकरत्न, अंकरत्न, स्फटिकरत्न, लोहीताक्ष, मरकतरत्न मशारगलरत्न, भुजमोचकरत्न, इन्द्रनिलरत्न, चन्दनारत्न, गौरीकरत्न, हंसगर्भरत्न, पुलाकरत्न, सौगन्धीरत्न, अरष्टरत्न, लीलमपीरोजीया, लसणीयारत्न, वैडूर्यरत्न, चन्द्रप्रभामणि, कृष्णमणि, सूर्यप्रभामणि जलकांतमणि इत्यादि जिसका स्वभाव कठन है जिनकी सात लक्ष योनि है. इनोंके दो भेद हैं, पर्यासा अपर्यासा जो अपर्यासा है वह असमर्थ है जो पर्यासा है वह समर्थ है वर्ण गन्ध रस स्पर्श कर संयुक्त है (जहां एक पर्यासा है वहां निश्चय असंख्या अपर्यासा होते है एक चिरमी जीतनी पृथ्वीकायमें असंख्य जीव होते है वह अगर एक महुर्त्तमें भव करे तो उत्कृष्ट १२८२४ भव करते है।

बादर अपकायके अनेक भेद है ओसका पाणी धूमसका पाणी कचेगर्डोका पाणी, आकाशकापाणी, समुद्रोंकापाणी, खारापाणी, खट्टापाणी घृतसमुद्रकापाणी खीरसमुद्रकापाणी इक्षुसमुद्रका पाणी लवणसमुद्रकापाणी कुँवे तलाव द्रह वावी आदि अनेक प्रकारका पाणी तथा सदैव तमस्काय वर्षती है इत्यादि इनोंके दो भेद है पर्यासा अपर्यासा जो अपर्यासा है वहअसमथ है जो पर्यासा है वह वर्णगन्धरस स्पर्श कर सयुक्त है एक पर्यासाकि नेश्राय निश्चय असंख्याते अपर्यासा जीव उत्पन्न होते है एक बुंदमें असख्याते है वह एक महुर्तमे उत्कृष्ट १२८२४ भव करते है सात लक्ष योनि है।

बादर तेउकायके अनेक भेद है इंगाला मुमरा ज्वाला अंगारा भोभर उल्कापात विद्युत्पात वडवानलाग्नि काष्टाग्नि पाषाणाग्नि इत्यादि अनेक भेद है जीनोंके दो भेद है पर्यासा अपर्यासा जो अपर्यासा है वह असमर्थ जो पर्यासा है वह वर्णगन्ध रस-

स्पर्श कर संयुक्त है एक पर्याप्ताकि नेश्राय असंख्याते अपर्याप्ता उत्पन्न होते है एक तुणगीयामें असंख्य जीव है सातलक्ष योनि है एक महुर्तमें उत्कृष्ट १२८२४ भव करते है।

बादर वायुकायके अनेक भेद है । पूर्ववायु पश्चिमवायु दक्षिणवायु उत्तरवायु उर्ध्ववायु अधोवायु विदिशावायु उत्कलिक वायु मंडलीयावायु मदवायु उदंडवायु द्विपवायु समुद्रवायु इत्यादि जिनोंका दो भेद है पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता है वह असमर्थ है जो पर्याप्ता है वह वर्णगन्धरस स्पर्श कर सयुक्त पर्याप्ताकि निश्राय निश्चय असख्याते अपर्याप्ता जीव उत्पन्न होते है एक झवुकडेमें असंख्य जीव होते है वह एक महुर्तमें उत्कृष्टभव करे तो १२८२४ भव करते है । सात लक्ष जाति है ।

बादर वनस्पतिकायके दो भेद है (१) प्रत्येक शरीरी (२) साधारण शरीरी जिस्मे प्रत्येक शरीरी (जिस शरीरमें एकही जीव हो) के बारहा भेद है वृक्ष, गुच्छा, गुम्मा, लता, वेल्ली, इक्षु, तृण, वलय, हरिय, औषधि, जलरूख, कुहणा–जिस्में वृक्षके दो भेद है ।

(१) जिस वृक्षके फलमें एक गुठली हों उसे एगठीये कहते है और जिस वृक्षके फलमें बहुतसे गुठलीयो (बीज) होते हो उसे बहुबीजा कहते है । जेसे एक गुटलीवालोंके नामयथा–निवंब जांबुवृक्ष कोशववृक्ष शालवृक्ष आम्रवृक्ष निंववृक्ष नलयेरवृक्ष केव-लवृक्ष पैतुवृक्ष शेतुवृक्ष इत्यादि और भी जिस वृक्षके फलमें एक बीज हो वह सब इसके अन्दर समजना जिस्के मूलमें असख्य जीव कन्दमें स्कन्धमें साखामें, परवालमें असंख्य जीव है पत्रोंमें प्रत्येक जीव है पुष्पोंमें अनेक जीव और फलमें एक जीव होते है।

बहु बीज वृक्षके नाम–तंदुकवृक्ष आस्तिकावृक्ष कपिट्टवृक्ष

अवाडग वृक्ष, दाडिम, उम्बर वडनदी वृक्ष, पीपरी जंगाली मिथावृक्ष दालीवृक्ष कादालीवृक्ष इत्यादि ओरभी जिस वृक्षके फलमें अनेक वीज हो वह सब इनके सामिल समझना चाहिये जिस्के मूल कन्द स्कन्ध साख परवालमे असख्यात जीव है पत्रोंमे प्रत्येक जीव पुष्पोंमे अनेक जीव फलमें वहुत जीव हैं।

(२) गुच्छा=अनेक प्रकारके होते है वैगण सलाइ थुडसी जिमुणीके लच्छाइके मलानीके सादाइके इत्यादि—

(३) गुम्मा–अनेक प्रकारके होते है जाइ जुइ मोगरा मालता नौमालती वसन्ती माथुली काथुली नगराइ पोदिना इत्यादि।

(४) लता–अनेक प्रकारकी होती है पद्मलता वसन्तलता नागलता अशोकलता चम्पकलता चुमनलता वैणलता आइमुक्तलता कुन्दलत्तर श्यामलता इत्यादि।

(५) वेल्लीके अनेक भेद है तुंबीकीवेल्ली तीसंडी, तिउसी, पुंसफली, कालंगी, पल, वाल्रुकी, नागरवेल्ली घोसाडाइ (तोरू) इत्यादि।

(६) इक्षुके अनेक भेद है इक्षु इक्षुवाडी वारूणी कालइक्षु पुडइक्षु वरडइक्षु पकडइक्षु इत्यादि।

(७) तृणके अनेक भेद है साडीयातृण मोतीयातृण होतीयातृण धोव कुशतृण अर्जुनतृण आसाढतृण इकडतृण इत्यादि.

(८) वलहके अनेक भेद ताल तमाल तेकली तम्र तेतली शाली परंड कुरूवन्ध जगाम लोण इत्यादि।

(९) हरियाके अनेक भेद है अज्जरूवा कृष्णहरिय तुलसी तंदुल दगपीपली सीभेटका सराली इत्यादि।

(१०) औषधिके अनेक भेद–शाली व्याली व्रही गोधम जव जवाजव ज्वारकल मशुर विल मुंग उडद नफा कुलत्थ कागथु आलिस दूस तीणपली मथा आयंसी कसुंब कोदर कंगू रालग मास कोद्दसासण सरिसव मूल बीज इत्यादि अनेक प्रकारके धान्य होते है वह सब इन औषधिके अन्दर गीने जाते है।

(११) जलरूहा–उत्पलकमल पद्मकमल कौमुदिकमल निलनिकमल शुभकमल सौगन्धीकमल पुंडरिककमल महापुंडरिककमल अरिविन्दकमल शतपत्रकमल सहस्रपत्र कमल इत्यादि।

(१२) कुहुणका अनेक प्रकारके है आत कात पात सिघोटीक कच कनड इत्यादि यह वनस्पति भी जलके अन्दर होती हैं।

इन वारह प्रकारकि प्रत्येक वनस्पतिकायपर दृष्टान्त जेसे सरसवका समुह एकत्र होनेसे एक लड्डु वनता है परन्तु उन सरसवके दाने सव अलग अलग अपने अपने स्वरूपमें है इसी माफीक प्रत्येक वनस्पतिकायभी असंख्य जीवोंका समुह एकत्र होते है परन्तु एकेका जीवके अलग अलग शरीर अपना अपना भिन्न है जेसे अनेक तीलोंके समुह एकत्र हो तीलपापडी वनती है इसी माफीक एक फल पुष्पमें असंख्यजीव रहते है वह सब अपने अपने अलग अलग शरीरमें रहते है जहांतक प्रत्येक वनास्पति हरि रहेती है वहांतक असंख्याते जीवोंके समूह एकत्र रहते हैं जव वह फल पुष्प पक जाते हैं तव उनोंके अन्दर एक जीव रह जाते हैं तथा उनोंके अन्दर वीज हो तों जीतने वीज उतनेही जीव ओर एक जीव फलका मूलगा रहता है इति।

---

१ इन धानोंके सिवाय भी केइ अडक धान्य होते है जैसे वाजरी मकाइ माढ इत्यादि।

(२) दुसरा साधारण वनास्पतिकाय है उनोंके अनेक भेद है मूला कान्दा लसण आदो अडवी रतालु पींडालु आलु सकरकन्द गाजर सुवर्णकन्द वज्रकन्द कृष्णकन्द मासफली मुगफली हल्दी कचूंक नागरमोथ उगते अङ्कुरे पांच वर्णकि निलण फूलण कचे कोमल फल पुष्प विगडे हुवे वासी अन्नमें पेदा हुइ दुर्गन्धमें अनन्तकाय है औरभी जमीनके अन्दर उत्पन्न होनेवाले वनास्पति सब अनंतकायमें मानी जाती है दृष्टान्त जेसा लोहाका गोला अग्निमें पचानेसे उन लोहाके सब प्रदेशमें अग्नि प्रदीप्त हो जाती है इसी माफीक साधारण वनास्पतिके सब अंगमें अनंते जीव होते है वह अनंते जीव साथहीमें पेदा होते है साथही मे आहार ग्रहन करने है साथही में मरते है अर्थात् उन अनंते जीवोंका एक ही शरीर होते है उने साधारण वनास्पतिकाय या बादर निगोदभी कहते है ।

वनास्पतिकायके च्यार भांगे वतलाये जाते है ।

(१) प्रत्येक वनास्पतिकायके निश्रायमें प्रत्येक वनास्पति उत्पन्न होती है जेसे वृक्षके साखायों ।

(२) प्रत्येक वनास्पतिकि निश्रायमे साधारण वनास्पतिकाय उत्पन्न होती है कचे फल पुष्पोंके अन्दर कोमलतामें अनंते जीव पेदा होना ।

(३) साधारण वनास्पतिकि निश्राय प्रत्येक वनास्पति उत्पन्न होना जेसे मूलोंके पत्ते, कान्दोंके पत्ते इत्यादि उन पत्तोंमें प्रत्येक वनस्पति रहती है

(४) साधारणकि निश्राय साधारण वनस्पति उत्पन्न होती है जेसे कान्दा मूला ।

इन साधारण ओर प्रत्येक वनस्पतिको छदमस्थ मनुष्य केसे पेच्छान सकें इस वास्ते दृष्टान्त बतलाते है.

जीस मूल कन्द स्कन्ध साखा प्रतिसाखा त्वचा प्रवाल पत्र पुष्पफल और बीजको तोडतें बखत अन्दरसे चिकणास निकले तुटतों सम तुटे उपरकि त्वचा गीरदार हो वह वनस्पति साधारण अनंतकाय समजना ओर तुटतों विषम तुटे त्वचा पातली हों अन्दरसे चिकणास न हो उन वनस्पतिकायको प्रत्येक समझना

सींघोडे कचे होते हैं उनोंमें संख्याते असंख्याते ओर अनन्ते जीव रहते है इन प्रत्येक और साधारण वनस्पति कायके दो दो भेद है (१) पर्याप्ता (२) अपर्याप्ता एवं बादर एकेन्द्रियका १२ भेद समजना । इति एकेन्द्रियके २२ भेद हैं

(२) बेइन्द्रियके अनेक भेद है । लट गीडोले कीडे कृमिये कुक्षीकृमिये पुरा । जलोख लेवों खापरीयो इली रसचलीत अन्न पाणीमें रसइये जीव. वा शंख शीप, कोडी चनणा वंसीमुखा सूचीमुखा वाला अलासीया भूनाग अक्ष लालीये जीव ठंडीरोटी विगेरेमें उत्पन्न होते है इनके सिवाय जीभ और त्वचावाले जीतने जीव होते है वह सब बेइन्द्रियकि गीनतीमें है ।

(३) तेइन्द्रियके अनेक भेद है–उपपातिका रोहणीया चांचड माकड कीडी मकोडे डंस मंस उदाइ उक्काली कष्टहारा पत्राहारा पुष्पाहारा फलाहारा तृणब्रिटीत पुष्प० फल० पत्रब्रिटित जू. लिख. कानखोजुर इली, घृतेलीका जो घृतमे पेदा होती है चर्म जु. गौकीटक जो पशुर्योके कानोंमे पेदा होते है । गर्दभ गौशालामें पेदा होते है. गौकीडे गोबरमे पेदा होते है । धान्यकीडे कुंथु इलीका इन्द्रगोप चतुर्मासामे पेदा होते है. इत्यादि जीसके तीन इन्द्रिय शरीर जीभ नाक हो । वह तेइन्द्रिय है ।

(४) चोरिन्द्रिय के अनेक भेद है अंधिका पत्तिका मक्खी मत्सर कीडे तीड पतंगीये विच्छु जलविच्छु कृष्णविच्छु श्यामपत्तिका यावत् श्वेत पत्तिका भ्रमर चित्रपक्खा विचित्रपक्खा जलचारा गोमयकीडा भमरी मधु मक्षिका-टाटीया डंस मंसगा कींसारी मेलक दंभक इत्यादि जीस जीवोंके शरीर जीभ नाक नेत्र होते है वह सब चोरिन्द्रियकी गीणतीमें समजना. इन तीन वैकलेन्द्रियके पर्याप्ता अपर्याप्ता मिलानेसे ६ भेद होते है।

(५) पांचेन्द्रिय जीवोंके च्यार भेद है नारकी, तीर्यंच, मनुष्य, देवता, जिस्मे नारकीके सात भेद है यथा=गम्मा वंसा शीला अञ्जना रिठा मघा माघवती-सात नरकके गौत्र. रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा तमस्तमःप्रभा इन सातों नरकके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलानेसे चौदे भेद होते है।

(२) तीर्यंच पांचेन्द्रियके पांच भेद है यथा-जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपुरिसर्प भुजपुरिसर्प. जिस्मे जलचरके पांच भेद है मच्छ कच्छ मगरा गाहा और सुसमारा।

(१) मच्छके अनेक भेद है यथा-सन्हमच्छा युगमच्छा विद्युन्मच्छा हलीमच्छा नागरमच्छा रोहणीयामच्छा तंदुलमच्छा कनकमच्छा शालीमच्छा पत्तंगमच्छा इत्यादि (२) कच्छके दो भेद है (१) अस्थि हाडवाले कच्छ (२) मांसवाले कच्छ (३) गोहके अनेक भेद दीलीगोह वेडीगोह मुदीगोह तुलागोह सामागोह सवलागोह कोनागोह दुमोहीगोह इत्यादि (४) मगरा-मगरा सोडमगरा दलीत मगरा पालपमगरा नायकमगरा दलीपमगरा इत्यादि (५) सुसमारा एकही प्रकारका होते है यह आढाइ छिपके वाहार होने है यह पांच प्रकारके जलचर जीव संज्ञी भी होते है ओर समुत्सम भी होते है जो संज्ञी होते

है वह गर्भजस्त्रि पुरुष नपुंसक तीनों प्रकारके होते है ओर जो समुत्सम होते है वह एक नपुंसकही होते है।

(२) स्थलचरके च्यार भेद है यथा-एकखुरा दोखुरा गंडीपदा सन्हपदा जिस्मे एक खुरोंका अनेक भेद है अश्व खर खचर इत्यादि दो खुरोंके अनेक भेद है गौ भेस ऊंट बकरी रोज इत्यादि-गंडीपदाके भेद गज हस्ति गेंडा गोलड इत्यादि सन्हपदके भेद सिंह-व्याघ्र नाहार केशरीसिंह बन्दर मञ्जार इत्यादि इनोंके दो भेद है गर्भज और समुत्सम।

(३) खेचरके च्यार भेद है यथा. रोमपक्खी चर्मपक्खी समुगपक्खी. वीततपक्खी-जिस्मे रोमपक्खी-ढंकपक्खी कंक-पक्खी, वयासपक्खी. हंसपक्खी, राजहंस० कालहंस, क्रौंच-पक्खी, सारसपक्खी, कोयल० रात्रीराजा, मयूर पारेवा तोता मैना चीडी कमेडी इत्यादि चर्मपक्खी चमचेड विगुल भारड समुद्रवयस इत्यादि समुगपक्खी जीस्की पाक्खों हमेशां जुडी हुइ रहैते है वितित पक्खी जीस्की पाखों हमेशां खुली हुइ रहती है इनोंकेभी दो भेद है गर्भज समुत्सम पूर्ववत्।

(४) उरपरीसर्प के च्यार भेद है अहिसर्प अजगरसर्प मोहरगसर्प, अलसीयो. जिस्मे अहिसर्पके दो भेद है एक फण करे दुसरा फण नही करे. फण करे जिस्के अनेक भेद है आसी-विष सर्प दृष्टिविषसर्प त्वचाविषसर्प उग्रविषसर्प भोगविषसर्प लालविषसर्प उश्वासविषसर्प निश्वासविषसर्प कृष्णासर्प सु-पेदसर्प इत्यादि जो फण न करे उनोंका अनेक भेद है-दोसीगा गोणसा चीतल पेणा लेणा हीणसर्प पेलगसर्प इत्यादि। अजगर एकही प्रकारका होते है। मोहरग नामका सर्प अढाइद्विपके बाहार होते है उनोंकी अवगाहना उत्कृष्ट १००० योजनकी होती है।

अलसीया आढाइद्विपके पंदरा क्षेत्रमे ग्राम नगर सेड कविट आदिके अन्दर तथा चक्रवर्त वासुदेवकी शैन्याके निचे जघन्य अगुलके असंख्यात भाग उत्कृष्ट बारहा योजनका शरीर होता है जिनके शरीरमें रक्त पाणी एसा तो जोरदार होते है कि उन पाणीसे वह बारहा योजनकी भूमिको थोंथी बना देते है।

(५) भुजपरकेभी अनेक भेद है जेसे नाकुल कोल मूषा आदि यह जलचर थलचर खेचर उरपुरसर्प भुजपुर सर्प पांच प्रकारके संज्ञी गर्भज मनवाले होते है और यहही पाचों प्रकारके तीर्यच असंज्ञी मन रहीत समुत्सम होते है जो गर्भज है वह स्त्रि पुरुष नपुंसक होते है ओर जो समुत्सम होते है वह मात्र नपुंसक होते है एव १० भेद हुवे इन दशोंके पर्याप्ता ओर दशोंके अपर्याप्ता मिलाकर तीर्यच पांचेन्द्रियके २० भेद होते है एकेन्द्रियके २२ विकलेन्द्रियके ६ ओर पांचेन्द्रियके २० सर्व मीलाके तीर्यचके ४८ भेद होते है।

(३) मनुष्यके दो भेद हैं (१) गर्भज मनुष्य (२) समुत्सम मनुष्य-जिस्मे समुत्सम मनुष्य जो आढाइ द्वीप पंदरा क्षेत्रके कर्मभूमि १५ अकर्मभूमि ३० अन्तरद्विपा ५६ एवं १०१ जातिके मनुष्योंके निम्नलिखित चौदा स्थानमें आंगुलके असंख्याते भागकि अवगाहाना अन्तरमहुर्तका आयुष्यवाले अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव उत्पन्न होते है चौदा स्थानोंके नाम यथा टटी, पेशाब, श्लेष्म, नाकके मेलमें, वमन (उलटी) पीत्त, रौद्र रसी (बीगडा रक्त) वीर्य, शुखे हुवे वीर्य फीरसे भीना-आला होनेसे, स्त्रि पुरुषके संयोगमें, मृत्यु मनुष्यके शरीरमें, नगरके किचमें, सर्व असूची-लाल मैल थुक विगेरे तथा असूची स्थान इन चौदे स्थानोंमें अन्तरमहुर्तके बाद जीवोत्पत्ति होती है और गर्भज मनुष्योंके तीन भेद है कर्मभूमि, अकर्मभूमि. अन्तरद्विप-जिस्में पहला

अन्तरद्विप बतलाते है यथा यह जम्बुद्विप एक लक्ष योजनके विस्तारवाला है इनोंकी परिधि ३१६२२७।३।१२८।१३॥-१-१-६।५ इतनी है इनोंके बाहार दो लक्ष योजनके विस्तारवाला लवण समुद्र है। जम्बुद्विपके अन्दर जो चूल हेमवन्त नामका पर्वत है उनोंके दोनों तर्फ लवणसमुद्रमें पूर्व पश्चिम दोनो तर्फ दाढके आकार टापुवोंकी लेन आ गइ है वह जम्बुद्विपकि जगतीसे लवणसमुद्रमे ३०० योजन जानेपर पहला द्विपा आता है वह तीनसो योजनके विस्तारवाला है उन द्विपसे लवणसमुद्रमें ४०० योजन जानेपर दुसरा द्विपा आता है वह ४०० योजनके विस्तारवाला है यहभी ध्यानमें रखना चाहिये कि यह दुसरा द्विपा जम्बुद्विपकी जगतीसेभी ४०० योजनका है। दुसरा द्विपासे लवणसमुद्रमें पांचसो योजन तथा जगतीसेभी पांचसो योजन जावे तब तीसरा द्विपा आता है वह पांचसो योजनके विस्तारवाला है उन तीसरा द्विपासे छेसो ६०० योजन लवणसमुद्रमें जावे तथा जगतीसेभी ६०० योजन जावे तब चोथा द्विपा आवे वह ६०० योजनके विस्तारवाला है उन चोथा द्विपासे ७०० योजन लवण समुद्रमे जावे तथा जगतीसे भी ७०० योजन जावे तब पांचवा द्विपा सातसों योजनके विस्तारवाला आता है उन पांचवा द्विपासे ८०० योजन तथा जगतीसे ८०० योजन लवणसमुद्रमें जावे तब छठा द्विपा आठसो योजनके विस्तारवाला आता है उन छठा द्विपासे ९०० योजन तथा जगतीसे ९०० योजन लवणसमुद्रमें जावे तब नौसो योजनके विस्तारवाला सातवा द्विपा आता है इसी माफीक सात टापुपर सात द्विपोंकी लेन दुसरी तर्फभी समजना. एवं दो लेनमें चौदा द्विपा हुवे इसी माफीक पश्चिमके लवणसमुद्रमेंभी १४ द्विपा है दोनों मिलाके २८ द्विप हुवे उन अठाविस द्विपोंके नाम इसी माफीक है। एकरूयद्विप,

आहासिय. वेसाणिय, नागल, हयकन्न, गयकन्न, गोंकान्न व्याकुल-कन्न, अयंसमुहा. मेघमुहा, असमुहा. गोमुहा, आसमुहा, हत्थिमुहा, सिंहमुहा, वाग्घमुहा, आसकन्ना, हरिकन्ना, अकन्ना, कन्नपाउरणा, उक्कामुह, मेहमुहा, विज्जुमुहा, विजुदान्ता, घणदान्ता, लट्ठ-दान्ता, गुढदान्ता, शुद्धदान्ता एवं २८ द्विपचुल हैमवन्त पर्वतकि निश्राय है इसी माफीक २८ द्विप इसी नामके सीखरी पर्वतकी निश्राय समजना एवं ५६ द्विपा है उन प्रत्येक द्विपमें युगल मनुष्य निवास करते है उनोंका शरीर आठसो धनुष्यका है पल्योपमके असंख्यातमें भागकी स्थिति है. दश प्रकारके कल्पवृक्ष उनोंकी मनोकामना पुरण करते है जहांपर असी मसी कसी राजा राणी चाकर ठाकुर कुच्छ भी नहीं है. देखो छे आरोंके थोकडेसे विस्तार इति ।

अकर्मभूमियोंके ३० भेद है पांच देवकुरु, पांच उत्तरकुरु, पांच हरिवास, पांच रम्यकूवास, पांच हेमवय, पांच एरणवय एवं ३० जिस्में एक देवकुरु, एक उत्तरकुरु. एक रम्यकूवास, एक हरीवास, एक हेमवय, एक एरणवय एवं ६ क्षेत्र जम्बुद्विपमें. छेसे दुगुणा वारहा क्षेत्र धातकीखंडमें वारहा क्षेत्र पुष्करार्द्ध द्विप में एवं ३० भेद वह अकर्मभूमिमें मनुष्ययुगल है वहां भी असी मसी कसी आदि कर्म नहीं है. उनोंके भी दश प्रकारके कल्पवृक्ष मनोकामना पुरण करते है (छे आराधिकारसे देखो)

कर्मभूमि मनुष्योंके पंदरा भेद है पांच भरतक्षेत्रके मनुष्य, पांच एरवत, पांच महाविदेह. जिस्में एक भरत, एक एरवत, एक महाविदेह एवं तीन क्षेत्र जम्बुद्विपमें तीनसे दुगुणा छे क्षेत्र धातकीखंड द्विपमें है. छे क्षेत्र पुष्करार्द्ध द्विपमें है. कर्मभूमि जहां-पर राजा राणी चाकर ठाकुर साधु साध्वी तथा असी मसी कसी आदिसे वैणज वैपार कर आजीविका करते हो, उसे कर्मभूमि

कहते है. यहांपर भरतक्षेत्रके मनुष्योंका विशेष वर्णन करते है. मनुष्य दो प्रकारके है (१) आर्य मनुष्य, (२) अनार्य मनुष्य. जिस्में अनार्य मनुष्योंके अनेक भेद है, जेसे शकदेशके मनुष्य, यवरदेशके, पवनदेशके, संबरदेशके, चिलतदेशके, पीकदेशके, पावालदेशके, गीरंददेशके, पुलाकदेशके, पारसदेशके इत्यादि जिन मनुष्योंकी भाषा अनार्य व्यवहार अनार्य, आचार अनार्य, खानपान अनार्य, कर्म अनार्य है इस वास्ते उनोंको अनार्य कहा जाते हं उनोंके ३१९७४॥ देश है।

आर्य मनुष्योंके दो भेद है (१) ऋद्धिमन्ता, (२) अनऋद्धिमन्ता. जिस्में ऋद्धिमन्ते आर्य मनुष्योंके छे भेद है. तीर्थंकर, चक्रवर्त्ति, वलदेव, वासुदेव, विद्याधर और चारणमुनि।

अनऋद्धिमन्ता मनुष्योंके नौ भेद है. क्षेत्रार्य, जातिआर्य, कुलआर्य, कर्मार्य, शिलपार्य, भाषार्य, ज्ञानार्य, दर्शनार्य, चारित्रार्य. जिस्मे क्षेत्रआर्यके साढापचवीस क्षेत्रआर्य माने जाते है. उनोंके नाम इस माफिक है. मागधदेश राजगृहनगर, अंगदेश चम्पानगरी, वंगदेश तामलीपुरी, कीलंगदेश कंचनपुर, काशीदेश वनारसी, कोशलदेश संकेतपुर, कुरुदेश गजपुर, कुशावर्त सोरीपुर, पंचालदेश कपिलपुर, जंगलदेश (मारवाड) अहिछता, सोरटदेश द्वारामति, विदेहदेश मिथिला, वच्छदेश कोसुंवी, सडिलदेश नंदिपुर. मलीयादेश भद्दलपुर, वत्सदेश वैराटपुर, वरणदेश अच्छापुर, दशार्णदेश मृतकावती, चेदीदेश शक्तावती, सिन्दुदेश वीतवयपट्टण, सूरशैनदेश मथुरा, भङ्गदेश पावापुरी, पुरिवर्तदेश सुसमापुर, कुनाला सावत्थी, लाढदेश कोटीवर्ष, कैकइ नामका अर्द्धदेशमें श्वेताम्बिकानगरी इति। इन आर्यदेशोंका लक्षण यहांपर तीर्थंकर, चक्रवर्त्ति, वासुदेव, वलदेव, प्रतिवासुदेव आदिके जन्म होते है. तीर्थंकरोंके पंचकल्याणक होते है,

जहांपर भाषा, आचार, व्यवहार, वैपारादि आर्यकर्म होते है ऋतु समफल देवे उनीकों आर्यदेश कहते है ।

आर्यजातिके छे भेद है. यथा—अम्बष्टजाति, किलंदजाति, विदेहजाति, वेदांगजाति, हरितजाति, चुचणरुपाजाति. उन जमानेमें यह जातियों उत्तम गीनी जाती थी ।

कुलार्यके छे भेद है. उग्रकुल, भोगकुल, राजनकुल, इक्षाककुल, ज्ञातकुल, कोरवकुल. इन छे कुलोंसे केइ कुल निकले है, इन कुलोंको उत्तम कुल माने गये थे ।

कर्मआर्य—वैपार करना. जैसे कपडाका वैपार, रुईका वैपार, सुतके वैपार, सोनाचान्दीके दागीनेका वैपार, कांसी पीतलके वरतनोंके वैपार, उत्तम जातिके क्रियाणाके वैपार. अर्थात् जिस्में पंदरा कर्मादान न हो, पांचेन्द्रियादि जीवोंका वध न हो उसे कर्मआर्य कहते है ।

शिल्पार्य—जैसे तुनारकी कला. तंतुवय याने कपडे बनानेकी कला, काष्ट कोरनेकी, चित्र करनेकी, सोनाचन्दी घडनेकी मुंजकला, दान्तकला, संखकला, पत्थर चित्रकला, पत्थर कोरणी कला, रांगनकला, कोष्टागार निपजानेकी कला, गुंथणकला, बन्धगलवन्धन कला, पाक पकावनेकी कला इत्यादि. यह आर्यभूमिकी आर्य कलावों है ।

भाषार्य—जो अर्ध मागधी भाषा है, वह आर्य भाषा है. इनके सिवाय भाषाके लिये अठारा जातिकी लीपी है वह भी आर्य है ।

ज्ञानार्यके पांच भेद है. मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान, अवधिज्ञान. मन:पर्यवज्ञान, केवलज्ञान. इन पांचों ज्ञानोंको आर्य ज्ञान कहते है।

दर्शनार्यके दो भेद है. (१) सराग दर्शनार्य, (२) वीतराग दर्शनार्य. जिस्में सराग दर्शनार्यके दश भेद है ।

(१) निसर्गरुची–जातिस्मरणादि ज्ञानसे दर्शनरुची।
(२) उपदेशरुची–गुरवादिके उपदेशसे ,,
(३) आज्ञारुची–वीतरागदेवकी आज्ञासे ,,
(४) सूत्ररुची–सूत्रसिद्धान्त श्रवण करनेसे ,,
(५) बीजरुची–बीजको माफिक एकसे अनेक ज्ञान, दर्शनरुची।
(६) अभिगमरुची–द्वादशांगी जाननेसे विशेष ,,
(७) विस्ताररुची–धर्मास्ति आदि पदार्थसे ,,
(८) क्रियारुची-वीतरागके बताइ हुइ क्रिया करनेसे ,,
(९) धर्मरुची–वस्तुस्वभावके ओलखनेसे ,,
(१०) संक्षेपरुची-अन्य मत ग्रहन न किये हुवे भद्रिक जीवोंको ,,

दुसरा वीतराग दर्शनार्यके दो भेद है. (१) उपशान्त कषाय, (२) क्षीण कषाय. इत्यादि संयोगी अयोगी केवली तक कहना।

(९) चारित्रार्यके पांच भेद है. सामायिक चारित्र, छेदोपस्थापनीय चारित्र, परिहारविशुद्ध चारित्र, सूक्ष्मसंपराय चारित्र, यथाख्यात चारित्र इति. आर्य मनुष्य इति मनुष्य।

(४) देव पांचेन्द्रियके च्यार भेद यथा–भुवनपति, वाणव्यंतर ज्योतिषी. वैमानिक। जिस्मे भुवनपतियोंके दश भेद है। असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युत्कुमार अग्निकुमार द्विपकुमार. दिशाकुमार, उदधिकुमार, पवनकुमार, स्तनितकुमार। पंदरा परमाधामियों (असुरकुमारकी जातिमें) के नाम. अम्बे आम्ररसे शामे सबले रूद्रे विरूद्धे काले महाकाले असीपत्ते धणु कम्भे वालु वैतरणि खरखरे महाघोषे।

शोलहा वाणव्यंतरोके नाम पिशाच भूत यक्ष राक्षस किन्नर किंपुरुष मोहरग गन्धर्व आणपुन्ये पाणपुन्ये ऋषिभाइ भूतिभाइ

कण्डे महाकण्डे कोहंड पयंगदेवा, वाणव्यंतरोमें दश जातिके जंभृकदेवोंके नाम आणजंभृक प्राणजंभृक लेणजंभृक शेनजंभृक वस्त्रंतक पुष्पजंभृक फलजंभृक पुष्पफलजंभृक विद्युत्जंभृक अग्निजंभृक।

ज्योतिषीदेव पांच प्रकारके है. चन्द्र सूर्य, ग्रह नक्षत्र, तारा पांच स्थिर अढाइ द्विपके बाहार है जिनोंकि कान्ति अन्दरके ज्योतिषीयोंसे आदि है सूर्य सूर्यके लक्ष योजन और सूर्य चन्द्रके पचासहजार योजनका अन्तर है. आढाइ द्विपके बाहार जहां दिन है वहां दिनही है और जहां रात्री है वहां रात्रीही है और पांचों प्रकारके ज्योतिषी आढाइ द्विपके अन्दर है यह सदैव गमनागमन करते रहते है। चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा।

वैमानिक देवोके दो भेद है. (१) कल्प, (२) कल्पअतित. जो कल्प वैमानवासी देव है उनोंमें इन्द्र सामानिक आदि देवों का छोटा वडापणा है जिनोंके बारहा भेद है सौधर्मकल्प, इशानकल्प सनत्कुमार, महेन्द्र ब्रह्मदेवलोक लंतकदेवलोक महाशुक्रदेवलोक सहस्रादेवलोक अणतुदेवलोक पणतदेवलोक अरणदेवलोक अच्युतदेवलोक॥ जो तीन कल्विषीदेव है वह मनुष्यभवमें आचार्योपाध्यायके अवगुण वाद बोलके कल्विषीदेव होते है वहांपर अच्छे देव उनोंसे अछुत रखते है. अपने विमानमें आने नही देते है अर्थात् वडा भारी तिरस्कार करते है जिनोंके तीन भेद है (१) तीन पल्योपमकि स्थितिवाले पहले दुसरे देवलोकके बाहार रहते है (२ तीन सागरोपमकी स्थितिवाले. तीजा चोथा देवलोकके बाहार रहते है (३) तेरह सागरोपमकी स्थितिवाले छठा देवलोकके बाहार रहते है. और पांचमा देवलोकके तीसरा रिष्ट नामके परतरमें नौ लोकांतिकदेव रहते है उनोंका नाम

सारस्वत आदित्य ।वनय वारूण गन्धोतीये तुसीये अव्यावाद अगिचा और रिष्ट ॥

कल्पातित्त–जहां छोटे बडेका कायदा नही है अर्थात् जहां सबदेव 'अहमिद्रा' है उनोंके दो भेद है ग्रीवेग और अनुत्तर वैमान जिस्मे ग्रीवैगके नौ भेद है यथा—भद्दे सुभद्दे सुजाये सुमानसे सुदर्शने प्रीयदर्शने आमोय सुपडिबुद्धे और यशोधरे। अनुत्तर वैमानके पांच भेद है. विजय विजयवन्त जयन्त अपराजित और सर्वार्थ सिद्ध वैमान इति १०–१५–१६–१०–१२–९–३–९–५ एवं ९९ प्रकारके देवतोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता करनेसे १९८ भेद देवतोंके होते है देवतोंके स्थान=भुवनपतिदेवता अधोलोकमे रहते है वाणमित्र (व्यतर) ज्योतिषीदेव तीर्छालोकमें और वेमानिकदेव उर्ध्वलोकमें निवास करते है इति ।

उपर वतलाये हुवे ५६३ भेद जीवोंका संक्षेपमें निर्णय—

१४ नरक सातोंका पर्याप्ता अपर्याप्ता ।

४८ तीर्यंचके सूक्ष्म पृथ्वीकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता वादर पृथ्वीकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता एवं ४ भेद अपकायके चार भेद तेउकायके च्यार भेद वायुकायके च्यार भेद और वनास्पति जो सूक्षम साधारण प्रत्येक इन तीनोंमें पर्याप्ता अपर्याप्ता से छे भेद मीलाके २२ भेद. वे इन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय इन तीनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके ६ भेद तीर्यच पांचेन्द्रिके जलचर स्थलचर खेचर उरपुर भुजपुर यह पांच संज्ञी और पांच असंज्ञी मील दश भेद इनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलके २० भेद होते है २२–६–२० सर्वे ४८ भेद ।

३०३ मनुष्य–कर्मभूमि १५ अकर्मभूमि ३० अन्तर द्विपा ५६

मीलाके १०१ भेद इनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता करनेसे २०२ एकसो-एक मनुष्योंके चौदा स्थानमे समुत्सम जीव उत्पन्न होते है वह अपर्याप्ता होनेसे १०१ मीलाकेसर्व ३०३ देवतोंके दशभुवन-पति १५ परमाधामी १६ वाणमित्र १० त्रजम्मृक दश जोतीषी बारहा देवलोक तीन कल्विषी नौ लोकान्तिक नौ ग्रीवेग पांच अनुतर वैमान एवं ९९ इनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके १९८ भेद हुये १४-४८-३०३-१९८ एवं जीव तत्त्वके ५६३ भेद होते है इनके सिवाय अगर अलग अलग किया जावे तों अनंते जीवोंके अनंते भेदभी हो सकते है। इति जीव तत्व।

(२) अजीवतत्त्वके जडलक्षण–चैतन्यता रहित पुन्यपापका अकर्ता सुख दुःखके अभक्ता पर्याय प्राण गुणस्थान रहित द्रव्यसे अजीव शाश्वता है भूत कालमें अजीव था वर्तमान कालमें अजीव है भविष्यमें अजीव रहेगा तीनों कालमें अजीवका जीव होवे नही. द्रव्यसे अजीवद्रव्य अनंते है क्षेत्रसे अजीवद्रव्य लोकालोक व्यापक है कालसे अजीवद्रव्य अनादि अनंत है भावसे अगुरु लघुपर्याय सयुक्त है. नाम निक्षेपासे अजीव नाम है स्थापना निक्षेपा अजीव एसे अक्षर तथा अजीवकि स्थापना करना. द्रव्य से अजीव अपना गुणोकों काममें नही ले. भावसे अजीव अपना गुणोकों अन्यके काममें आवे जेसे कीसीके पास एक लकडी है जबतक उन मनुष्यके वह लकडी काममें न आती हो तबतक उन मनुष्यकि अपेक्षा वह लकडी द्रव्य है और वह ही लकडीं उन मनुष्यके काममें आति है तब वह लकडी भाव गीनी जाती है.

अजीवतत्त्वके दो भेद है (१) रूपी (२) अरूपी जिसमें अरूपी अजीवके ३० भेद है यथा–धर्मास्तिकायके तीन भेद है. धर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश ,अधर्मास्तिकायके स्कन्ध,

देश, प्रदेश. आकाशास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश. एवं ९ भेद और एक कालका समय गीननेसे दश भेद हुवे. धर्मास्तिकाय पांच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे एक द्रव्य. क्षेत्रसे लोकव्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरूपी जिस्मे वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श नही है गुणसे चलन गुण. जेसे पाणीके आधारसे मच्छी चलती है इसी माफीक धर्मास्तिकायके आधारसे जीवाजीव गमनागमन करते है। अधर्मास्तिकाय पांच बोलोसे जानी जाती है द्रव्यसे एक द्रव्य. क्षेत्रसे लोकव्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरूपी वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श रहित, गुणसे-स्थिरगुण जैसे श्रम पाये हुए पुरुषोंको वृक्षकी छायाका दृष्टान्त। आकाशास्तिकाय पांच बोलोंसे जानी जाती है। द्रव्यसे एक द्रव्य, क्षेत्रसे लोकालोक व्यापक, कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरुपी वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहित गुणसें आकाशमें विकासका गुण भींतमें खुटी तथा पाणीमें पतासाका दृष्टान्त। कालद्रव्य पांच बोलोंसे जाने जाते है द्रव्यसे अनंत द्रव्य कारण काल अनंते जीव पुद्गलोंकि स्थितिकों पुरण करता है इस वास्ते अनंत द्रव्य माना गया है क्षेत्रसे आढाइ द्विप परिमाणे कारण चन्द्र, सूर्यका गमनागमन आढाइ द्विपमें ही है समयावलिका आदि कालका मान ही आढाइ द्विपसे ही गीना जाते है. कालसे आदि अन्त रहित है भावसे अरूपी. वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श रहित है गुणसे नवी वस्तुकों पुराणी करे और पुराणी वस्तुकों क्षय करे जैसे कपडा कतरणीका दृष्टान्त एवं ३-३-३-१-५-५-५-५ सर्व मील अरूपी अजीवके ३० भेद हुवे.

रूपी अजीवतत्त्वके ५३० भेद है निश्चयनयसे तो सर्व पुद्गल परमाणु है व्यवहारनयसे पुद्गलोंके अनेक भेद है जैसे दो प्रदेशी

स्कन्ध, तीन प्रदेशी स्कन्ध एवं च्यार पांच यावत् दश प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध. अनंत प्रदेशी स्कन्ध कहे जाते है. निश्चयनयसे परमाणु जीस वर्णका होते है वह उसी वर्णपणे रहते है कारण वस्तुधर्मका नाश कीसी प्रकारसे नही होता है व्यवहारनयसे परमाणुवोंका परावर्तन भी होते है व्यवहारनयसे एक पदार्थ एक वर्णका कहा जाता है जेसे कोयल श्याम, तोताहरा, मांमलीया लाल, हलदी पीली, हंस सुपेद परन्तु निश्चयनयसे इन सब पदार्थोंमे वर्णादि वीसों बोल पाते है कारण पदार्थकि व्याख्या करनेमें गौणता और मुख्यता अवश्य रहेती है जेसे कोयलकों श्याकवर्णी कही जाती है वह मुख्यता पेक्षासे कहा जाता है परन्तु गौणतापेक्षासे उनोंके अन्दर पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श भी मीलते है इसी अपेक्षानुसार पुद्गलोंके ५३० भेद कहते है यथा पुद्गल पांच प्रकारसे प्रणमते है (१) वर्णपणे (२) गन्धपणे (३) रसपणे (४) स्पर्शपणे (५) संस्थानपणे इनोंके उत्तर भेद २५ है जेसे वर्ण श्याम हरा, रक्त (लाल, पीला, सुपेद. गन्ध दो प्रकार सुभिगन्ध, दुर्भिगन्ध, रस-तिक्त, कटुक, कषायन, अम्बील, मधुर, स्पर्श, कर्कश, मृदुल, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष. सस्थान- परिमंडल (चुडीके आकार) वट (गोल लडुके आकार) तंस (तीखुणासीघोडेके आकार) चौरस-चोकीके आकार, आयतरन (लंबा वांसके आकार) एवं ५-२-५-८-५ मीलाये २५ भेद होते है।

कालावर्णकि पृच्छा शेष च्यार वर्ण प्रतिपक्षी रखके शेष कालावर्णमें दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान एवं २० बोल मीलते है इसी माफीक हरावर्णकि पृच्छा शेष च्यार वर्ण

प्रतिपक्षी है उन हरावर्णमें दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान एवं वीस बोल पावे इसी माफीक लालवर्णमें २० बोल पीला वर्णमें २० बोल श्वेतवर्णमें २० बोल. कुल पांचो वर्णोके १०० बोल होते है।सुभि गन्धकि पृच्छा दुर्भिगन्ध रहा प्रतिपक्षी जिस्मे बोल पांच वर्ण पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान एवं २३ बोल पावे इसीमाफीक दुर्भिगन्धमें भी २३ बोल पावे एवं गन्धके ४६ बोल रस तिक्त रसकि पृच्छा च्यार रस प्रतिपक्षी जीस्मे बोल पांच वर्ण, दो गन्ध, आठ स्पर्श पांच संस्थान एवं २० एवं कटुकमे २० कषायलेमें२० आम्बिलमें २० मधुरमें २० सब मीलानेसे रसके १०० बोल होते है।

कर्कशस्पर्श कि पृच्छा मृदुलस्पर्श प्रतिपक्षी शेष बोल पांच-वर्ण दोगन्ध पांच रस छे स्पर्श पांच संस्थान एवं बोल २३ पावे एवं मृदुल स्पर्शमें भी २३ बोल पावे एवं गुरु स्पर्श कि पृच्छा लघु प्रतिपक्ष बोल २३ पावे एवं लघुमें २३ शीतकि पृच्छा उष्ण प्रतिपक्ष बोल २३ एवं उष्णमें २३ बोल स्निग्ध कि पृच्छा रूक्ष प्रतिपक्ष बोल पावे २३ इसी माफीक रूक्ष स्पर्शमें भी २३ बोल पावे. परिमण्डल संस्थान की पृच्छ च्यार संस्थान प्रति पक्ष बोल पावे पांच वर्ण दोगन्ध पांच रस आठ स्पर्श एवं २० बोल. इसी माफीक वट संस्थानमें २० तंस संस्थानमें २० चौरंस संस्थानमें २० आयतान संस्थानमे २०। कुल बोल वर्णके १०० गन्धके ४६ रसके १०० स्पर्शके १८४ संस्थानके १०० सर्व मीलके ५३० बोल और पहले अरूपीके ३० बोल एवं अजीव तत्वके ५६० भेद होते है इनके सिवाय अजीव द्रव्य अनंते है उनोंके अनंते भेद भी होते है इति अजीवतत्त्व।

(३) पुन्य तत्वके शुभ लक्षण है पुन्य दुःख पूर्वक बन्धे जाते

है और सुखपूर्वक भोगवीये जाते है जब जीवके पुन्य उदय रस विपाक में आते है तब अनेक प्रकारसे इष्टपदार्थ सामग्री प्राप्त होती है उनके जरिये देवादिके पौद्गलिक सुखोंका अनुभव करते है परन्तु मोक्षार्थी पुरुषोंके लिये वह पुन्य भी सुवर्ण कि वेडी तुल्य है यद्यपि जीवको उच्च स्थान प्राप्त होनेमे पुन्य अवश्य सहायताभूत है जेसे कीसी पुरुषको समुद्र पार जाना है तो नौका कि आवश्यक्ता जरुर होती है इसी माफीक मोक्ष जानेवालोंको पुन्यरूपी नौकाकी आवश्यक्ता है मानों पुन्य-एक संसार अटवी उलंगनेके लिये वोलावाकी माफीक सहायक तरीके है वह पुन्य नौ कारणोंसे बन्धाता है यथा—

(१) अन्न पुन्य–कीसींकों अशानादि भोजन करानेसे।
(२) पाणी–जल प्यासोंको जल पीलानेसे पुन्य होते है।
(३) लेण पुन्य-मकान आदि स्थानका आश्रय देनासे।
(४) सेणपुन्य–शय्या पाट पाटला आदि देनेसे पुन्य।
(५) वस्त्रपुन्य–वस्त्र कम्बल आदि के देनेसे पुन्य।
(६) मनपुन्य-दुसरोंके लिये अच्छा मन रखनेसे।
(७) वचन पुन्य–दुसरोंके लिये अच्छा मधुर वचन बोलनेसे।
(८) काय पुन्य–दुसरोंकी व्यावच्च या बन्दगी बजानेसे।
(९) नमस्कार पुन्य–शुद्ध भावोंसे नमस्कार करनेसे।

इन नौ कारणोंसे पुन्य बन्धते है वह जीव भविष्यमें उन पुन्यका फल ४२ प्रकारसे भोगवते है यथा—

मातावेदनी(शरीर आरोग्यतादि), क्षत्रीयादि उच्चगोत्र, मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी, देवगति, देवानुपूर्वी, पांचेन्द्रियजाति औदारीक शरीर, वैक्रय शरीर, आहारीक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर औदारीक शरीर अंगोपांग, वैक्रयशरीर अंगोपांग, आहारीक

शरीर अंगोपांग, वज्र ऋषभनाराचसंहनन,समचतुस्रसंस्थान,शुभ वर्ण,शुभगंध शुभरस,शुभस्पर्श, अगुरु लघु नाम (ज्यादा भारीभी नही ज्यादा हलका भी नही) पराघात नाम, (बलवानको भी पराजय करसके) उश्वास नाम(श्वासोश्वास सुखपूर्वक ले सके) आताप नाम, (आप शीतल होनेपर भी दुसरोंपर अपना पुरा असर पाडे) उद्योत नाम, (सूर्य कि माफीक उद्योत करने वाला हो) शुभगति (गजकी माफीक गति हो) निर्माण नाम, (अंगोपांग स्वस्वस्थानपर हो) त्रस नाम, बादर नाम, पर्याप्ता नाम प्रत्येक नाम, स्थिर नाम (दांत हाड मजबुत हो) शुभ नाम (नाभीके उपरका अंग सुशोभीत हो तथा हरेक कार्यमें दुनिया तारीफ करे) सौभाग्य नाम (सब जीवोंको प्यारा लगे और सौभाग्यको भोगवे) सुस्वर नाम जिस्का (पंचम स्वर जैसा मधुर स्वर हो) आदेय नाम (जीनोंका वचन सब लोग माने) यशो कीर्ति नाम–यश एक देशमें कीर्ति बहुत देशमे, देवतोंका आयुष्य, मनुष्यका आयुष्य, तीर्यचका शुभ आयुष्य, और तीर्थंकर नाम, जिनके उदयसे तीनलोगमें पूजनिक होते है एवं ४२ प्रकृति उदय रस विपाक आनेसे जीवको अनेक प्रकारसे आहलाद सुख देती है जिस्के जरिये जीव धन धान्य शरीर कुटम्बानुकुल आदि सर्व सुख भोगवता हुवा धर्मकार्य साधन, कर सके इसी वास्ते पुन्यको शास्त्रकारोंने वोलाथा समान मदद- गार माना हुवा है इति पुन्यतत्त्व ।

(४) पापतत्त्वके अशुभ फल सुखपूर्वक बान्धते है. दु:ख- पूर्वक भोगवते है जब जीवोंके पाप उदय होते है तब अनेक प्रकारे अनिष्ट दशा हो नरकादि गतिमें अनेक प्रकारके दुःख रस विपाकको भोगवने पडते है कारण नरकादि गतिमें मूख्य

कारणभूत पाप ही है पाप दुनियामें लोहाकी वेडी समान है अठारा प्रकारसे जीव पाप कर्म वन्धन करते है-यथा प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य परपरीवाद, मायामृषावाद और मिथ्या दर्शन शल्य इन अठारा कारणोंसे जीव पाप कर्म वन्ध करते है उनोंको ८२ प्रकारसे भोगवते है यथा—

ज्ञानावर्णियकर्म जीवकों अज्ञानमय बना देते है जेसे घाणीका वैलके नेत्रोंपर पाटा वान्ध देनेसे कीसी प्रकारका ज्ञान नही रहता है इसी माफीक जीवोंके ज्ञानावर्णियका पडल छा जानेसे कीसी प्रकारका ज्ञान नही रहता है जिस ज्ञानावर्णिय कर्मको पांच प्रकृति है—मतिज्ञानावर्णिय श्रुतज्ञानावर्णिय, अवधिज्ञानावर्णिय, मनःपर्यवज्ञानावर्णिय, केवलज्ञानावर्णिय यह पांचो प्रकृति पांचों ज्ञानकों रोक रखती है। दर्शनावर्णियकर्म जेसे राजाके पोलीयाकि माफीक धर्मराजासे मिलने तक न देवे जिस्की नौ प्रकृति है चक्षुदर्शनावर्णिय अचक्षुदर्शनावर्णिय अवधिदर्शनावर्णिय केवलदर्शनावर्णिय निद्रा (सुखे सोना सुखे जागना) निद्रानिद्रा (सुखे सोना दुःखे जागना) प्रचला (वेठे वेठेकों निद्रा होना) प्रचलाप्रचला. (चलते फीरतेको निद्रा होना) स्त्यानर्द्धि. निद्रा (दिनको विचारा हुवा सर्व कार्य निद्रामे करे वासुदेव जितने वलवाले हो) असातावेदनीय. मिथ्यात्वमोहनिय (विप्रीतश्रद्धा अतत्त्व पर रुची) अनंतानुवन्धी क्रोध (पत्थरकि रेखा) मान (वज्रका स्थंभ) माया वांसकी जड) लोभ करमजी रेसमका रंग) घात करे तो समकितनी स्थिति जावजीवकी गतिनरककी। अप्रत्याख्यानी क्रोध (तलावकी तड) मान-दान्तका स्थंभ, माया मेंढाका श्रृंग. लोभ नगरका कीच। घात करे तो श्रावकके व्रतोंकी

स्थिति बारहमास. गति तिर्यंचकी। प्रत्याख्यानी क्रोध-गाडाकी लीक. मान-काष्टका स्थंभ. माया-चालते बैलका मात्रा. लोभ-का जलका रग (घात करेतो संयमकी स्थिति च्यार मासकी गति मनुष्यकी) सज्वलनके क्रोध (पाणीकी लीक) मान (तृणके स्थंभ) मायावांसकी छाल. लोभ (हल्द पत्तंगका रंग) घात वीतराग· ताकी स्थिति क्रोधकी दो मास, मानकी एक मास, मायाकी पद्-रादीन,लोभकी अतरमहुर्त. गति देवतोंकी करे. और हांसी (ठठा मश्करी) भय, शोक, जुगप्सा रति अरति. स्त्रिवेद, पुरुषवेद, नपुसकवेद. नरकायुष्य नरकगति नरकानुपुर्वि, तीर्यंचगति, तीर्यंचानुपुर्वि एकेन्द्रियजाति बेइन्द्रियजाति चोरिंद्रयजाति ऋषभ नाराचसंहनन नाराच० अर्द्धनाराच० किलको० छेवटों संहनन, निग्रोदपरिमडल सस्थान, सादीयो० त्रवनस० कुब्जगं० हुंडकसं० स्थावरनाम सूक्षमनाम अपर्यासानाम साधारणनाम, अशुभनाम अस्थिरनाम दुर्भाग्यनाम दुःस्वरनाम अनादेयनाम अयशनाम अशुभागतिनाम, अपघातनाम निचगोत्र अशुभवर्ण गन्ध रस स्पर्श—दानान्तराय लाभान्तराय भोगान्तराय उपभोगान्तराय वीर्यान्तराय. एवं पापकर्म ८२ प्रकारसे भोगवीया जाते है इति पापतत्त्व।

(५) आश्रवतत्त्व-जीवोंके शुभाशुभ प्रवृतिसे पुन्य पाप-रूपी कर्म आनेका रहस्ता जेसे जीवरूपी तलाव कर्मरूपी नाला पुन्य पापरूपी पाणीके आनेसे जीव गुरु हो संसारमें परिभ्रमन करते है उसे आश्रवतत्त्व कहते हैं जिस्के सामान्य प्रकारसे २० भेद है मिथ्यात्वाश्रव यावत् सूची कुशामात्र अयत्नासे लेना रखना आश्रव (देखो पैंतीस बोलसे चौदवां बोल) विशेष ४२ प्रकार प्राणातिपात (जीवहिंसा

करना) मृषावाद (झूट बोलना) अदत्तादान चोरीका करना. मैथुन, परिग्रह (ममत्व वढाना) श्रोतेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय मन वचन काय इन आठोंको खुला रखना अर्थात् अपने कब्जामें न रखना आश्रव है क्रोध मान माया लोभ एवं १७ बोल हुवे। अब क्रिया कहते है.

काइयाक्रिया-अयत्नासे हलना चलना तथा अव्रतसे
अधिगरणियाक्रिया-नये शस्त्र बनाना तथा पुराने तैयार कराः
पाषसीयाक्रिया-जीवाजीवपर द्वेषभाव रखनेसे
परतापनियाक्रिया-जीवोंको परिताप देनेसे
पाणाइवाइक्रिया-जीवोंको प्राणसे मारदेनेसे
आरंभीकाक्रिया-जीवाजीवका आरंभ करनेसे
परिग्रहकिक्रिया-परिग्रहपर ममत्व मुर्च्छा रखनेसे
मायवतीयाक्रिया-कपटाइसे दशवे गुणस्थानक तक
मिथ्यादर्शनक्रिया-तत्त्वकि अश्रद्धना रखनेसे
अप्रत्याख्यानकिक्रिया-प्रत्याख्यान न करनेसे
दिट्ठीयाक्रिया-जीवाजीवको सरागसे देखना
पुठ्ठीयाक्रिया-जीवाजीवको सरागसे स्पर्श करनेसे
पाडुचीयाक्रिया-दुसरेकि वस्तु देख इर्षा करना
सामंतवणिय-अपनि वस्तुका दुसरा तारीफ करनेपर
आप हर्ष लानेसे
सहन्थियाक्रिया-नोकरोंके करने योग्य कार्य अपने हाथोंसे
करनेसे कारण इसमें शासनकी लघुता होती है

नसिहत्थिया-अपने हाथोंसे करने योगकार्य नोकरादिसे करानेसे; कारण वह लोग बेदरकारी अयत्नासे करनेसे अधिक पापका भागी होना पडता है।

आणवणियाक्रिया–राजादिके आदेशसे कार्य करनेसे

वेदारणीयाक्रिया–जीवाजीवके टुकडे कर देनेसे ।

अणाभोगक्रिया–शुन्योपयोगसे कार्य करनेसे

अणवकंखवतीया–बीतरागके आज्ञाका अनादर करनेसे

पोग–प्रयोगक्रिया–अशुभ योगोंसे क्रिया लगती हैं

पेज्ज–रागक्रिया–माया लोभ कर दुसरोंको प्रेमसे ठगना

दोस–द्वेषक्रिया–क्रोध–मानसे लगे द्वेषकों बढाना

समुदाणीक्रिया–अधर्मके कार्यमें बहुत लोग एकत्र हो वहां सबके एकसा अध्यवसाय हानेसे सवके समुद्दाणी कर्म बन्धते हैं

इरियावाइक्रिया–वीतराग ११–१२–१३ गुणस्थानवालोंके केवलयोगोंसे लगे–एवं २५ क्रिया

इन ४२ द्वारोंसे जीवके आश्रव आते है इति आश्रवतत्व ।

(६) संवरतत्त्व–जीवरूपी तलाव कर्मरूपी नाला पुन्यपाप रूपी पाणी आते हुवेकों सवर रूपी पातीयासे नाला बन्ध कर उन आते हुवे पाणीकों रोक देना उसे संवरतत्त्व कहते है अर्थात् स्वसत्ता आत्मरमणता करनेसे आते हुवे कर्म रूकजा ते है उसे संवर कहते है जिस्के सामान्य प्रकारसे २० भेद पंतीस बोलोंके अन्दर चौदवा बोलमें कह आये है अब विशेष ५७ प्रकारसे संवर हो सकते है वह यहांपर लिखा जाता है ।

इर्यासमिति–देखके चलना, भाषासमिति विचारके बोलना, एषणासमिति शुद्धाहार पाणी लेना, आदानभंडोपकरण–मर्यादा परमाणे रखना उनोंकों यत्नासे वापरणा, उच्चार पासवण जल खेल मेल परिठापनिकासमिति. परठन परठावण यत्नाके साथ

करना। मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति अर्थात् मन, वचन काया कों अपने कब्जेमें रखना, पापारंभमें न जाने देना एवं ८ बोल. क्षुधापरिसह, पीपासापरिसह, शितपरिसह, उष्णपरिसह, दंशमंशगपरिसह, अचेल (वस्त्र) परिसह, आरतिपरिसह, इन्वि (स्त्री) परिसह, चरिय (चलनेका) परिसह, निषेध (स्मशानोमें कायोत्सर्ग करनेसे) शय्या परिसह (मकानादिके अभाव) अक्रोशपरिसह, वद्धपरिसह, याचनापरिसह, अलाभपरिसह, रोगपरिसह. तृणपरिसह, मेलपरिसह, सत्कारपरिसह, प्रज्ञापरिसह, अज्ञानपरिसह, दर्शनपरिसह एवं २२ परिसहकों सहन करना समभाव रखनासे संवर होते है.

क्षमासे क्रोधका नाश करे, मुक्त निर्लोभतासे ममत्वका नाश करे, अर्ज्जवसे मायाका नाश करे, मार्दवसे मानका नाश करे, लघवसे उपाधिका नाश करे, सच्चे सत्यसे मृषावादका नाश करे, सयम से असयमका नाश करे, तपसे पुराणे कर्मोका नाश करे, चेइये. वृद्ध मुनियोंकों अशनादिसे समाधि उत्पन्न करे, ब्रह्मचर्य व्रत पालके सर्व गुणोंको प्राप्त करे यह दश प्रकारके मुनिका मौख्य गुण है.

अनित्यभावना-भरत चक्रवर्तीने करी थी.

अशरणभावना-अनाथी मुनिराजने करी थी.

संसारभावना-शालीभद्रजीने करी थी.

एकत्वभावना-नमिराज ऋषिने करी थी.

असारभावना-मृगापुत्र कुमरने करी थी.

असूची भावना-सनत्कुमार चक्रवर्तीने करी थी.

आश्रवभावना-एलायची पुत्रने करी थी.

सवरभावना-केशी गौतमस्वामिने करी थी.

निर्ज्जराभावना-अर्जुन मुनि महाराजने करी थी.

लोकसारभावना-शिवराज ऋषिने करी थी.

बोधीबीज भावना-आदीश्वरके ९८ पुत्रोंने करी थी.

धर्मभावना-धर्मरूची अनगारने करी थी.

यह बारह भावना भावनेसे संवर होते है।

सामायिक चारित्र, छदोपस्थापनिय चारित्र, परिहारविशुद्ध चारित्र, सुक्ष्मसपराय चरित्र यथाख्यात्त चारित्र यह पांच चारित्र सवर होते है एवं ८-२२-१०-१२-५ सर्व मीलके ५७ प्रकारके सवर है इति सवरतत्त्व।

(७) निर्ज्जरातत्त्व-जीवरूपी कपडो कर्मरूपी मेल लगा हुवा है जिस्कों ज्ञानरूपी पाणी तपश्चर्यारूपी साबुसे धो के उज्वल बनावे उसे निर्ज्जरातत्त्व कहते है वह निर्ज्जरा दो प्रकारकी एक देशसे आत्मप्रदेशोकों निर्मल बनावे; दुसरी सर्वसे आत्मप्रदेशों कों निर्मल बनावे. जिसमें देश निर्ज्जरा दो प्रकार (१) सकाम निर्ज्जरा (२) अकाम निर्ज्जरा जेसे सम्यक् ज्ञान दर्शन विना अनेक प्रकारके कष्ट क्रिया करनेसे कर्मनिर्ज्जरा होती है वह सब अकाम निर्ज्जरा है और सम्यक् ज्ञान दर्शन सयुक्त कष्ट क्रिया करना वह सकाम निर्ज्जरा है सकामनिर्ज्जरा और अकामनिर्ज्जरामें इतना ही भेद है जो अकामनिर्ज्जरासे कर्म दूर होते है वह कीसी भवोमें कारण पाके वह कर्म और भी चीप जाते हैं और सम्यक् सकामनिर्ज्जरा दूर हो वह फीर कीसी भवमें वह कर्म जीवके नही लगते है यह हो सम्यक् ज्ञानकी बलीहारी है इसवास्ते पहिले सम्यक् ज्ञान दर्शन प्राप्त कर फीर यह निर्ज्जरा करना चाहिये।

अब सामान्य प्रकारसे निर्ज्जराके बारहा भेद इसी माफाक है। अनसन, उनोदरी, भिक्षाचरी, रस परित्याग, कायाक्लेश, प्रतिसंलेषना, प्रायश्चित्त, विनय, वेयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग इनोंके विशेष ३५४ भेद है।

अनसन तपके दो भेद है (१) स्वल्पमर्यादितकाल (२) यावत् जीव जिस्मे स्वल्पकालके तपका छे भेद है श्रेणितप, परतरतप, घनतप, वर्गतप, वर्गावर्गतप, आकरणीतप.

श्रेणितपके चौदा भेद है एक उपवास करे, दो उपवास करे, तीन उपवास करे, च्यार उपवास करे, पांच उपवास करे, छे उपवास करे, सात उपवास करे, अद्ध मास करे, मास करे, दो मास करे, तीन मास करे, च्यार मास करे, पांच मास करे, छे मास करे.

परतरतप जिस्के सोलह पारणा करे देखो यंत्रसे. एसी च्यार परिपाटी करे, पहले परपाटीमें विगइ सहित आहार करे दुसरी परपाटीमें विगइ रहित आहार करे, तीसरी परिपाटीमे लेप रहित आहार करे. चौथी परिपाटीमें पारणेके दिन आंबिल करे, एक उपवास कर पारणो करे, फीर दो उपवास करे, पारणो कर तीन उपवास करे, पारणो कर च्यार उपवास करे. यह पहली परिपाटी हुइ. इसी माफीक कोष्टकमें अंक माफीक तपस्या करे. अन्तरामें पारणो करे. एवं च्यार परिपाटी करे.

१	२	३	४
२	३	४	१
३	४	१	२
४	१	२	३

घनतपके चौसठ पारणा करे. च्यार परिपाटी पुर्ववत् समजना।

१	२	३	४	५	६	७	८
२	३	४	५	६	७	८	१
३	४	५	६	७	८	१	२
४	५	६	७	८	१	२	३
५	६	७	८	१	२	३	४
६	७	८	१	२	३	४	५
७	८	१	२	३	४	५	६
८	१	२	३	४	५	६	७

एक उपवास पारणो दो उपवास पारणो तीन उपवास पारणो एवं यावत् आठ उपवास कर पारणो करे यह पहली ओलीकी मर्यादा हुइ. इसी माफिक सम्पुर्ण तप करनेसे एक परिपाटी होती है. इसी माफिक च्यार परिपाटी समजना.

वर्गतप जिस्मे चोसठ कोष्टकका यंत्र करे ४०९६ पारणे होते है.

वर्गावर्गतपके १६७७७२१६ पारणेके कोष्टक ४०९६ होते है.

अकरणीतपका अनेक भेद है यथा एकावलीतप, रत्नावली तप, मुक्तावलीतप, कनकावलीतप, खुडियाकसिंहनिकलकतप, महासिंहनिकलंक तप, भद्रतप, महाभद्रतप, सर्वतोभद्रतप, यवमध्यतप, वज्रमज्झतप, कर्मचूरतप, गुणरत्नसंवत्सरतप, आंबिल वर्द्धमानतप. तपाधिकार देखो अन्तगढसूत्रके भाषान्तर भाग १७ वा से इति स्वल्पकालकातप.

यावत् जीवके तपका तीन भेद है (१) भक्त प्रत्याख्यान,

(२) इंगीतमरण, (३) पादुगमन, जिस्में भत्तप्रत्याख्यान मरण जेसे कारणसे करे अकारण से करे, ग्रामनगरके अन्दर करे, जंगल पर्वत आदिके उपर करे, परन्तु यह अनसन सप्रतिक्रमण होते है. अर्थात् यह अनसन करनेवाले व्यावच्च करते भी है और करातें भी है कारण हो तो विहार भी कर सकते है दुसरा इंगीतमरणमें इतना विशेष है कि भूमिकाकी मर्यादा करते है उन भूमिसे आगे नही जा सके शेष भत्तप्रत्याख्यानकी माफीक. तीसरा पादुगमन अनसनमें यह विशेष है कि वह छेदा हुवा वृक्षकी डालके माफीक जीस आसन से अनसन करते है फीर उन आसनको बदलाते नही है. अर्थात् काष्टकी माफीक निश्चलपणे रहते है उनोंके अप्रतिक्रमण अनसन होते है यह वज्रऋषभनाराच संहननवाला ही कर सकते है इति अनसन.

(२) औणोदरीतपके दो भेद है. (१) द्रव्य औणोदरी (२) भाव औणोदरी जिस्मे द्रव्य औणोदरीके दो भेद है (१) औपधि औणोदरी (२) भात्त पाणी औणोदरी. औपधि औणोदरीके अनेक भेद है जेसे स्वल्पवस्त्र, स्वल्प पात्र, जीर्णवस्त्र, जीर्णपात्र, एकवस्त्र, एकपात्र, दोवस्त्र, दो पात्र इत्यादि दुसरा आहार औणोदरीके अनेक भेद है अपनि आहार खुराक हो उनके ३२ विभाग करले उनों से आठ विभागका आहार करे तो तीन भागकी औणोदरी होती है और बारहा विभागका आहार करे तों आधासे अधिक० सोलहा विभागका आहार करे तों आदि० चौवीस विभागका आहार करे तों एक हीस्साकी औणोदरी होती है अगर ३१ विभागका आहार कर एक विभाग भी कम खावे तों उसे किंचित् औणोदरी और एक विभागका ही आहार करे तों उत्कृष्ट औणोदरी होती है अर्थात् अपनी खुराकसे किसी प्रकारसे कम खाना उसे औणोदरी तप कहा जाता है ।

भाव औणोदरीके अनेक भेद है. क्रोध नहीं करे, मान नहीं करे, माया नहीं करे, लोभ नहीं करे, रागद्वेष नहीं करे, द्वेष न करे क्लेश नहीं करे, हास्य भयादि नहीं करे अर्थात् जो कर्मवन्ध के कारणहै उनोंकों क्रमशः कम करना उसे औणोदरी कहते है।

(३) भिक्षाचारी-मुनि भिक्षा करनेकों जाते है उन समय अनेक प्रकारके अभिग्रह करते है यह उत्सर्ग मार्ग है जीतना जीतना ज्ञान सहित कायाको कष्ट देना उतनी उतनी कर्मनिर्जरा अधिक होती है उनी अभिग्रहोंके यहांपर तीस बोल बतलाये जाते है। यथा—

(१) द्रव्याभिग्रह-अमुक द्रव्य मीले तो लेना.

(२) क्षेत्राभिग्रह-अमुक क्षेत्रमें मीले तो लेना.

(३) कालाभिग्रह-अमुक टाइममें मीले तो लेना.

(४) भावाभिग्रह-पुरुष या स्त्री इस रूपमें दे तो लेना.

(५) उक्खीताभिग्रह-वरतन से निकालके देवे तो लेना.

(६) निक्खीताभिग्रह-वरतनमे डालताहुवा देवेतो लेना.

(७) उक्खीतनिक्खीत-व० निकालते डालते दे तो लेना.

(८) निक्खीतउक्खीत-व० डालते निकालते दे तो लेना.

(९) वट्टीज्जाभिग्रह-भेंटते हुवे आहार दे तो लेना.

(१०) साहारीज्जाभिग्रह-एक वरतन से दुसरे वरतनमें डालते हुवे देवे तो लेना.

(११) उवनित अभिग्रह-दातार गुण कीर्तन करके आहार देवे तो लेना.

(१२) अवनित अभिग्रह-दातार अवगुण बोलके आहार देवे तो लेना

(१३) उवनित अवनित-पहले गुण ओर पीच्छे अवगुण करते हुवे आहार देवे तो लेना.

(१४) अव० उव० पहले अवगुण और पीछे गुण करता देवे

(१५) संसट्ठ ,, पहलेसे हाथ खरडे हुवे हो वह देवे तो लेना।

(१६) असंसट्ठ ,, पहलेसे हाथ साफ हो वह देवे तो लेना.

(१७) तज्जत ,, जोस द्रव्यसे हाथ खरडे हो वहही द्रव्य लेवे.

(१८) अणवण ,, अज्ञात कुलकि गौचरी करे।

(१९) मोण ,, मौनव्रत धारण कर गौचरी करे।

(२०) दिट्ठाभिग्रह, अपने नैत्रोंसे देखा हुवा आहार ले.

(२१) अदिट्ठ ,, भाजनमें पडा हुवा अदेखा हुआ " लेवे.

(२२) पुट्ठाभिग्रह पुच्छके देवे क्या मुनि आहार लोगे तो लेना.

(२३) अपुट्ठाभिग्रह-विनों पुच्छे दे तों आहार लेना.

(२४) भिक्ख ,, आदर रहीत तिरस्कारसे देवे तो लेना.

(२५) अभिक्ख ,, आदार सत्कार कर देवे तो लेना

(२६) अणगीलाये ,, बहुत क्षुधा लगजाने पर आहार लेवे.

(२७) ओवणिया ,, नजीक नजीक घरोंकी गोचरी करे.

(२८) परिमत्त ,, आहारके अनुमानसे कम आहार ले.

(२९) शुद्धेसना , एकही जातका निर्धद्य आहार ले

(३०) संखीदात ,, दातादिकी संख्याका मान करे.

इनके सिवाय पेडागोचरी अदपेडागोचरी संखावृतन गोचरी चक्रवाल गोचरी गाउगोचरी पतंगीया गोचरी इत्यादि अनेक प्रकारके अभिग्रह कर सकते है यह सब भिक्षाचरीके ही भेद है।

(४) रस परित्यागतपके अनेक भेदहै सरसाहारका त्याग, निवी करे, आंबिल करे ओसामणसे एक सीतले, अरस आहार ले विरस आहार ले, लुख आहार ले, तुच्छ आहार ले, अन्ताहार ले, पांताहार ले, वचा हुवा आहार ले, कोइ रांक भिक्षु, काग कुते भी नही वांच्छे एसा फासुक आहार ले अपनि संयमयात्राका निर्वाहा करे.

(५) कायाक्लेशतप–काष्टकि माफीक खडा रहे. ओकडु आसन करे, पद्मासन करे, वीरासन निपेद्यासन दंडासन लगडासन, आम्रखुज्जासन, गोदुआसन, पीलांकासन, अधोशिरासन, सिंहासन, कोचासन, उष्णकालमें आतापना ले, शीतकालमें वस्त्रदूर रख ध्यान करे. थुक थुके नही खाज खीणे नही मैल उत्तारे नही, शरीरकी विभूषा करे नही और मस्तकका लोच करे इत्यादि.

(६) पडिसलीणतातपके च्यार भेद (१) कषाय पडिसलेणता याने नयाकषाय करे नही उदय आयेको उपशान्त करे जिस्के च्यार भेद क्रोध मान माया लोभ।४। (२) इन्द्रिय पडिसलेणता, इन्द्रियोंके विषय विकारमें जातेको रोके उदय आये विषय विकारको उपशान्त करे जिस्के पांच भेद है श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय (३) योगपडिसलिणता। अशुभ भागोके व्यापारको रोके और शुभ योगोंके व्यापारमें प्रवृति करे जिस्के तीन भेद है, मनयोग, वचन

योग, काययोग, (४) विवृतसयनासन याने स्त्रि नपुंसक ओर पशु आदि विकारीक निमत्त कारण हो एसे मकानमें न रहे इति।

इन छे प्रकारके तपको बाह्यतप कहते है।

(७) प्रायश्चिततप–मुनि ज्ञान दर्शन चारित्रके अन्दर सम्यक् प्रकारसे प्रवृत्ति करते हुवेकों कदाचित् प्रायश्चित लग जावे, तो उन प्रायश्चितकी तत्काल आलोचना कर अपनि आत्माकों विशुद्ध बनाना चाहिये यथा—

दश प्रकारसे मुनिकों प्रायश्चित लगते है यथा–कंदर्प पीडित होनेसे, प्रमादवस होनेसे, अज्ञातपणेसे, आतुरतासे, आपतियों पडनेसे, शंका होनेसे, सहसात्कारणसे, भयोत्पन्न होनेसे द्वेषभाव प्रगट होंनेसे, शिष्यकि परिक्षा करनेसे।

दश प्रकार मुनि आलोचन करते हुवे दोष लगावे कम्पता कम्पता आलोचन करे पहले उन्मान पुच्छे कि अमुक प्रायश्चित सेवन करनेका क्या दंड होगा फीर ठीक लागे तो आलोचना करे। लोकोंने देखा हो उन पापकि आलोचना करे दुसरेकी नही. अदेखा हुवे दोपकि आलोचना करे। वडे वडे दोषोंकी आलोचना करे. छोटे छोटे पापोंकी आलोचना करे. मंद स्वरमें आलोचना करे. जोर जोरके शब्दोंसे० एक पापकों बहुतसे गीतार्थोंकि पास आलोचना करे, अगीतार्थोंके पास आलोचना करे.

दशगुणोंका धणी हो वह आलोचना करे. जातिवन्त, कुलवन्त, विनयवन्त उपशान्तकषायवन्त, जितेन्द्रियवन्त, ज्ञानवन्त, दर्शनवन्त, चारित्रवन्त. अमायवन्त, और प्रायश्चित ले के पश्चाताप न करे।

दशगुणोंके धणी के पास आलोचना लि जाति है स्वयं आचारवन्त हो. परंपरासे धारणवन्त हो. पांच व्यवहारके जानकार हो. लज्जा छोडाने समर्थ हो शुद्धकरने योग हो. आग-

लोंके मर्म प्रकाश न करे. निर्वाहाकरने योग्य हो अनालोचनाके अनर्थ वतलानेमे चातुर हो. प्रीय धर्मी हो. और दृढधर्मी हो।

दश प्रकारके प्रायश्चित आलोचना, प्रतिक्रमण, दोनों साथमें करावे विभाग कराना. कायोत्सर्ग कराना. तप, छेद. मूलसे फीर दीक्षा देना, अणुठप्पा. और पारंन्चिय प्रायश्चित इन ५० वोलोंका विशेष खुलासा दे,खो शीघ्रवोध भाग २२ के अन्तमे इति।

(८) विनयतप जिस्का मूल भेद ७ है यथा. ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय, मनविनय, वचनविनय, कायविनय, लोकोपचार विनय, इन सात प्रकार विनयके उत्तर भेद १३४ है।

ज्ञानविनयके पांच भेद है मतिज्ञानका विनय करे, श्रुतिज्ञानका विनय करे. अवधि ज्ञानका विनय करे, मन: पर्यवज्ञानका विनय करे, केवलज्ञानका विनय करे, इन पांचों ज्ञानका गुण करे, भक्ति करे, पूजा करे, वहुमान करे तथा इन पांचों ज्ञानके धारण करनेवालोंका वहुमान भक्ति करे तथा ज्ञानपद कि आराधना करे।

दर्शन विनयका मूल भेद दो है. (१) शुश्रुषा विनय, (२) अनाशातना विनय, जिस्मे शुश्रुषा विनयका दश भेद है. गुरुमहाराजको देख खडा होना, आसनकि आमन्त्रण करना, आसन बिच्छादेना, वन्दन करना पांचांग नामाके नमस्कार करना वस्त्रादिदे के सत्कार करना गुण कीर्तनसे सन्मान करना. गुरु पधारे तो सामने लेनेको जाना. विराजे वहांतक सेवा करना. पधारे जब साथमें पहुंचानेको जाना, इत्यादि इनको शुश्रुषा विनय कहते है।

अनअशातनाविनयके ४५ भेद है अरिहन्तोंकि आशातना

न करे. अरिहंतोंके धर्मकि आ० आचार्य० उपाध्याय० स्थविर कुल० गण० संघ० क्रियावंत० संभोगी स्वाधर्मि, मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान अवधिज्ञान मनः पर्यवज्ञान और केवलज्ञान इन १५ महापुरुषोंकि आशातना न करे इन पंदरोंका वहुमान करे इन पंदरों कि सेवा भक्ति करे एवं ४५ प्रकारका विनय समझना।

नोट—दशवा बोलमें संभोगी कहा है जिस्का समवायांगजी सूत्रमें संभोग बारहा प्रकारका कहा है अर्थात् सरीखी समाचारी वाले साधुवोंके साथ अल्पा स्वल्पा करना जेसे एक गच्छके साधुवोंसे दुसरे गच्छके साधुवोंको औपधिका लेन देन रखना, सूत्र वाचनाका लेना देना, आहारपाणीका लेना देना, अर्थ वाचना लेना देना, आपसमे हाथ जोडना, आमंत्रण करना. उठके खडा होना, वन्दना करना, व्यावच्च करना, साथमें रहना, एक आसन पर बेठना, आलाप संलापका करना.

चारित्रविनयके पांच भेद सामायिक चारित्रका विनय करे. छदोपस्थापनिय चारित्रका विनय करे, परिहारविशुद्ध चारित्रका विनय करे, सूक्ष्म संपराय चारित्रका विनय करे. यथाख्यात चारित्रका विनय करे।

मनविनयके भेद २४ मूल भेद दोय. (१) प्रशस्त विनय, (२) अप्रशस्त विनय, जैसे प्रशस्त विनयके १२ भेद है मनको सावद्य कार्यमें जाते हुवेको रोकना, इसी माफीक पापक्रियासे रोकना, कर्कश कार्यसे रोकना. कठोर कार्यसे रोकना, फरुस- तीक्षण पापसे रोकना, निष्ठुर कार्यसे रोकना, आश्रवसे रोकना, छेद करानेसे, भेद करानेसे, परितापना करानेसे, उद्भिन्न करानेसे और जीवोंकि घात करानेसे रोकना इस्का नाम प्रशस्त मन विनय है और इन बारहा बोलोंको विप्रीत करनेसे बारहा

प्रकारका अप्रशस्त विनय होते है अर्थात् विनय तों करे परन्तु मन उक्त अशुद्ध कार्यमें लगा रखे इनोंसे अप्रशस्त विनय होते है एवं २४ भेद मन विनयका है।

वचन विनयका भी २४ भेद है, मूल भेद दो. (१) प्रशस्त विनय, (२) अप्रशस्त विनय, दोनोंके २४ भेद मन विनयकि माफीक समझना।

काय विनयके १४ भेद है मूल भेद दो (१) प्रशस्तविनय, (२) अप्रशस्त विनय, जिस्मे प्रशस्त विनय के ७ भेद है. उपयोग सहित यत्नापूर्वक चलना, वेठना उभारहना सुना एक वस्तुकों एक दफे उलंघन करना तथा वारंवार उलंघन करना इन्द्रियों तथा कायाकों सर्व कार्यमें यत्ना पूर्वक वरताना. इसी माफीक अप्रशस्त विनयके ७ भेद है परन्तु विनय करते समय कायाकों उक्त कार्योंमे अयत्नासे वरतावे एवं १४.

लोकोपचार विनयके ७ भेद है यथा (१) सदेव गुरुकुलवासाकों सेवन करे, (२) सदेव गुरु आज्ञाकों ही परिमाण करे और प्रवृति करे, (३) अन्य मुनियोंका कार्य भि यथाशक्ति करके परकों साता उपजावे, (४) दुसरोंका अपने उपर उपकार है तों उनोंके वदलेमें प्रत्युपकार करना, (५) ग्लानि मुनियों कि गवेषना कर उनोंकि व्यावच करना, (६) द्रव्य क्षेत्र काल भावको जानकर वन आचार्यादि सर्व संघका विनय करना, (७) सर्व साधुवोंके सर्व कार्यमे सवकों प्रसन्नता रखना यहही धर्मका लक्षण है इति.

(८) व्यावच्च तपके दश भेद है आचार्य महाराज उपाध्यायजी स्थिवरजी गण (वहुताचार्य) कुल (वहुताचार्यों के शिष्य समुदाय) संघ, स्वाधर्मि, तपस्वी मुनिकी क्रियायन्तकि नवदिक्षित शिष्य इन दशों जीवोंकी वहुमान पूर्वक

व्यावञ्च करे याने आहारपाणी लाके देवें और भी यथा उचित कार्यमें सहायता पहुंचाना जिनसे कर्मोकी महा निर्ज्जरा और संसारसमुद्रसे पार होनेका सिधा रहस्ता है।

(१०) स्वाध्याय तपके पांच भेद है. वाचना देना या लेना, पृच्छना–प्रश्नादिका पुच्छना. परावर्तना–पठनपाठन करना. अनुपेक्ष पठनपाठन कीये हुवे ज्ञानमें तत्त्वरमणता करना. धर्मकथा–धर्माभिलाषीयोंको धर्मकथा सुनाना ॥ तीन जनोंको वाचना नहीं देना. (१) नित्य विगइ याने सरस आहारके करनेवालेको, (२) अविनयवंतको, (३) दीर्घ कषायवालेको। तीन जनोंको वाचना देना चाहिये. विनयवंतको, निरस भोजन करनेवालेको २ जिस्के क्रोध उपशान्त हो गया है तथा अन्यतीर्थी पाखंडी हो धर्मका द्वेषी हो उनको भी वाचना न देनी और न उनोंसे वाचना लेनी, कारण वाचना देनेसे उनोंको विप्रीत होगा ता धर्मकी निंदा करेंगा और वाचना लेना पडे तो भी वह उपहास करेंगे कि जैनोंको हम पढाते है, हम जैनोंके गुरु है, इस वास्ते एसे धर्मद्वेषीयोंसे दूर ही रहना अच्छा है. अगर भद्रिक प्रणामी हो उसे उपदेश देना और मिथ्यात्वका रहस्ता छोडाना मुनियोंकी फर्ज है।

वाचनाकी विधिका छे भेद है. संहितापद, पदच्छेद, अन्वय, अर्थ, निर्युक्ति तथा सामान्यार्थ और विशेषार्थ। प्रश्नादि पूच्छनेका सात भेद है। पहले व्याख्यानादि शान्त चित्तमे श्रवण करे. गुरवादिका बहुमान करे अर्थात् वाणि झेले हुंकारा देवे तहकार करे अर्थात् भगवानका वचन सत्य है. जो पदार्थ समझमें नहीं आवे उनोंके लिये तर्क करे, उनका उत्तर सुन विचार करे. विस्तारसे ग्रहन करे, ग्रहन कीये ज्ञानको धारण कर याद रखे।

प्रश्न करनेके छे भेद है, अपनेको शंका होनेसे प्रश्न करे. दुसरे मिथ्यात्वीयोंको निरुत्तर करनेको प्रश्न करे। अनुयोग ज्ञानकी प्राप्तिके लीये प्रश्न करे दुसरोंको बोलानेके लिये प्रश्न करे. जानता हुवा दुसरोंको बोधके लीये प्रश्न करे अनजानता हुवा गुरवादिकी सेवा करनेके लिये प्रश्न करे।

परावर्तन करनेके आठ भेद हे काले, विनये, बहुमाणे, उवहाणे, अनिन्नवणे, व्यञ्जन, अर्थ. तदुभय इन आठ आचारोंसे स्वाध्याय करे तथा इनोंकी ३४ अस्वाध्याय है उनकों टालके स्वाध्याय करे, अस्वाध्याय आगे लिखी है सो देखो।

अनुपेक्षाके अनेक भेद है. पढा हुवा ज्ञानको वारंवार उपयोगमें लेना. ध्यान, श्रवण, मनन, निदिध्यासन, वर्तन, चैतन्य, जडादिके भेद करना।

धर्मकथाके च्यार भेद हे. अक्षेपणी, विक्षेपणी, संवेगणी, निर्वेगणी. इनके सिवाय विचित्र प्रकारकी धर्मकथा हे.

जैन सिद्धान्त पढनेवालोंको पहलां इस माफीक—

(१) द्रव्यानुयोगके लिये न्यायशास्त्र पढो

(२) चरणकरणानुयोगके लिये नीतिशास्त्र पढो.

(३) गणितानुयोगके लिये गणितशास्त्र पढो.

(४) धर्मकथानुयोगके लिये अलंकारशास्त्र पढो.

यह च्यार लौकीक शास्त्र च्यारों अनुयोगद्वारके लिये मददगार है. इनोंके पहला गुरुगम्यताकी खास आवश्यक्ता है, इस वास्ते जैनागम पढनेवालोंको पहले गुरुचरणोंकी उपासना करनी चाहिये।

जैनागम पढनेवालोंको निम्नलिखित अस्वाध्याय टालनी चाहिये।

(१) तारों तूटे तो एक पेहर सूत्र न वांचे. (२) पश्चिम दिशा लाल रहे वहांतक सूत्र न पढे. (३) आर्द्रा नक्षत्रसे चित्रा नक्षत्र तक तो गाजविज्ज कडेकेका काल है. इनोंके सिवाय अकाल कहा जाते है. उन अकालमें विद्युत्पात हो तो एक पहर, गाज हो तो दो पेहर, भूमिकम्प हो तो जघन्य आठ पेहर, मध्यम बारहा उत्कृष्ट सोलहा पेहर सूत्र न पढे, (४-५-६) बालचन्द्र हरेक मासके शुद १-२-३ रात्री पहले पहरमें सूत्र न पढे, (७) आकाशमें अग्निका उपद्रव हो वह न मीटे वहांतक सूत्र न पढे, (८) धूवर, (९) सुपेत धुमस, (१०) रजोघात यह तीनों जहांतक न मीटे वहांतक सूत्र न पढे, (११) मनुष्यके हाड जिस जगहपर पडा हो उनोंसे १०० हाथ तीर्यंचका हाड ६० हाथके अन्दर हो तथा उनकी दुर्गन्ध आति हो मनुष्यका १२ वर्ष तीर्यंचका ८ वर्ष तकका हाडकी अस्वाध्याय होती है वास्ते सूत्र न पढे। (१२) मनुष्यका मांस १०० हाथ तीर्यंचका ६० हाथ कालसे मनुष्यका ८ पेहर तीर्यंचके ३ पेहर इनोंकी अस्वाध्याय हो तो सूत्र न वाचे। (१३) इसी माफीक मनुष्य तीर्यंचका रूद्रकी अस्वाध्याय (१४) मनुष्यका मल मूत्र-जहांतक जिस मंडलमें हो वहांतक सूत्र न पढे तथा जहांपर दुर्गन्ध आति हो वहांभी सूत्र न पढना चाहिये। (१५) स्मशानभूमि चौतर्फ १०० हाथके अन्दर सूत्र न पढे (१६) राजमृत्यु होनेके बाद नया राजापाट न बेठे वहांतक उनोंके राजमें सूत्र न पढे (१७) राजयुद्ध जहांतक शान्त न हो वहांतक उनोंके राजमें सूत्र न पढे (१८) चन्द्रग्रहन (१९) सूर्यग्रहन जघन्य ८ पेहर मध्यम १२ पेहर उत्कृष्ट १६ पेहर सूत्र न पढे (२०) पांचेन्द्रियका मृत्यु

कलेवर जीस मकानमें पडा हो वहांतक सूत्र न पढे। यह वीस अस्वाध्याय ठाणांयांगसूत्रके दशवे ठाणामे कही है। प्रभात, श्याम मध्यान्ह आदि रात्री एवं च्यार अकाल अकेक मुहुर्त तक सूत्र न पढे।२१। २२। २३।२४। आषाढ शुद १५ श्रावण वद १ भाद्रवा शुद १५ आश्वन वद १ आश्वन शुद १५ कार्तिक वद १ कार्तिक शुद १५ मागशर वद १ चैत शुद १५ वैशाख वद १ एवं दश दिन सूत्र न पढ वह १२ अस्वाध्याय निशियसूत्रके उन्नीसवे उदेशामें कही है और दो अस्वाध्याय ठाणांयांगसूत्रमें कही है एवं सर्व मिल ३४ अस्वाध्याय अवश्य टालनी चाहिये।

सवैया—तारोतुटे, रातीदिश, अकालमें गाजविज्ज, कडक आकाश तथा भूमि कम्प भारी है. वालचन्द्र यक्षचेन्ह आकाश अग्निकाय काली धोली धूमर और रज्जघात न्यारी है. हाड मांस लोहीराद ठरडे मसान जले, चन्द्र सूर्य ग्रहन और राजमृत्यु टालीये, पांचेन्द्रिका कलेवर राजयुद्ध सर्व मील वीस वोल टाल कर ज्ञानी आज्ञा पाली है. आसाढ, भाद्रवो, आसोज, काती, चैती पुनम जाण: इनहीज पांचो मासकी पडिवा पांच व्याख्यान पडिवा पांच व्याख्यान श्याम शुभे नही भणीये। आदी रात दे फार सर्व मीली चोतीस थुणिये. चोतीस अस्वाध्याय टालके सूत्र भणसे सोय, लालचन्द इणपर कहे जहां विघ्न न व्यापे कोय ॥ १ ॥ इति स्वाध्याय।

(११) ध्यान—ध्यानके च्यार भेद है. (१) आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान जिस्मे आर्त्तध्यानके च्यार पाया है अच्छी मनोज्ञ वस्तुकि अभिलाषा करे. खराब अमनोज्ञ वस्तु का वियोग चितवे, रोगादि अनिष्ट पदार्थोका वियोग चितवे, परभवमें सुखोंका निदान करे। अब आर्त्तध्यानके च्यार लक्षण.

फीकर चिंता शोकका करना, आशुपातका करना, आक्रन्द शब्द करना रोना, छाती मस्तक पीटना विलापातका करना.

रौद्रध्यानके च्यार पाये. जीवहिंस्या कर खुशीमनाना, झूठ बोल खुशीमनाना, चौरी कर कुशीमनाना, दुसरोंको कारागृह डलाके हर्ष मानना. एवं रौद्रध्यानके च्यार लक्षण है. स्वल्प अपराधका बहुत गुस्सा द्वेष रखना, ज्यादा अपराधका अत्यन्त द्वेष रखना, अज्ञानतासे द्वेष रखना, जाव जीवतक द्वेष रखना इन परिणामवालोंको रौद्रध्यान कहते है।

धर्मध्यानके च्यार पाये. वीतरागकि आज्ञाका चितवन करना, कर्म आनेके स्थानोंको विचारना, कर्मोंके शुभाशुभ विपाकका विचार करना, लोकका संस्थान चितवन करना, धर्मध्यान के च्यार लक्षण इस मुजब है आज्ञारूची याने वीतरागके आज्ञा का पालन करनेकी रूची, नि:सर्गरूची याने जातिस्मरणादिज्ञान से धर्मध्यानकि रूची होना, उपदेशरूची याने गुरवादिके उपदेश श्रवण करनेकि रूची हो. सूत्ररुची-सूत्रसिद्धान्त श्रवण कर मनन करनेकी रूची यह धर्मध्यानके च्यार लक्षण है। धर्मध्यानके च्यार अवलम्बन है. सूत्रोंकि वाचना, पृच्छना, परावर्तना और धर्मकथा कहेना. धर्मध्यानके च्यार अनुपेक्षा है. संसारको अनित्य समझना, संसारमे कोसी सरणा नहीं है सुखदु:ख अपने आप ही को भोगवना पडेगा, यह जीव एकेला आया है ओर अकेला ही जावेंगा. एकत्वपणा चितवे. हे चैतन्य! तुं इस संसारमें एकेक जीवोंसे कीतनी कीतनीवार संबन्ध कीया है इस संबन्धीयोंमें तेरा कोन हैं, तुं कीसका है, कीसके लिये तुं ममत्वभाव करता है आखीर सब संबन्धीयोंओ छोडके एकलेको ही जाना पडेगा।

शुक्लध्यानके च्यार पाया है. एक ही द्रव्यमें भिन्न भिन्न गुणपर्याय अथवा उपनेवा विग्नेवा ध्रुवेवा आदि भावका विचार करना, वहुत द्रव्योंमें एक भावका चिंतवना जेसे षट्द्रव्यमें अगुरुलघुपर्याय स्वाधर्मिताका. चिंतवना अचलावस्थामें तीनों योगोंका निरूद्धपणा चिंतवना, चौदवां गुणस्थानमे सूक्ष्मक्रियासे निवृतन होनेका चिंतवन करना.

शुक्लध्यानके च्यार लक्षण देवादिके उपसर्गसे चलायमान न होवे, सूक्ष्मभाव श्रवण कर ग्लानी न लावे, शरीरसे आत्मा अलग और आत्मासे शरीर अलग चिंतवे. शरीरको अनित्य समझ पुद्गल जो पर वस्तु जान उनका त्याग करे।

शुक्लध्यानका च्यार अवलम्बन. क्षमा करे, निर्लोभता रखे. निष्कपटी हो, मदरहित हो.

शुक्लध्यानके च्यार अनुपेक्षा. यह मेरा जीव अनंतवार संसारमें परिभ्रमन कीया है. इन आरापार संसारमे यह पौद-गलीक वस्तु सर्व अनित्य है, शुभ पुद्गल अशुभपणे और अशुभ-पुद्गल शुभपणे प्रणमते है इसी वास्ते पुद्गलोंसे प्रेम नही रखना एसा विचार करे। संसारमें परिभ्रमन करनेका मूल कारण शुभाशुभ कर्म है कर्मोका मूल कारण च्यार हेतु है उनोंका त्याग कर स्वसत्तामे रमणता करना एसा विचार करे उसे शुक्ल ध्यान कहते है इति ध्यान।

(१२) विउस्सगतप-त्याग करना जिस्का दो भेद है (१) द्रव्य त्याग (२) भावत्याग-जिस्मे द्रव्यत्यागके च्यार भेद है शरीरका त्याग करना. उपाधिका त्याग करना गच्छादि संघका त्याग करना. (याने एकान्तमें ध्यान करे) भातपाणीका त्याग करना. और भावत्यागके तीन भेद है कषाय-क्रोधादिका त्याग

करना कर्म ज्ञानावर्णियादिका त्याग करना, संसारा-नरकादि गतिका त्याग करना इति त्याग ॥ इति निर्ज्जरातत्त्व ।

(८) वन्धतत्त्व-जीवरूपी जमीन, कर्मरूपी पत्थर राग-द्वेषरूपी चुनासे मकान वनाना इसी माफीक जीवोंके शुभाशुभ अध्यवसायसे कर्म पुद्गल एकत्र कर आत्माके प्रदेशोंपर वन्ध होना उसे वन्धतत्त्व कहते है

(१) प्रकृतिवन्ध-१४८ प्रकृतियोंका वन्धना.

(२) स्थितिवन्ध-१४८ प्रकृतियोंकी स्थितिका वन्धना.

(३) अनुभागवन्व-कर्मप्रकृति वन्धते समये रस पडना.

(४) प्रदेशवन्ध-प्रदेशोंका एकत्र हो आत्मप्रदेशपर वन्ध होना

इसपर लड्डका दृष्टान्त जेसे लड्डु तुक्की दांनेका वनता है वह प्रकृति है वह लड्डु कीतने काल रहेगा वह स्थिति है यह लड्डु क्या दुगुणी सकर तीगुणी सकर चोगुणी सकरका है वह रस विपाक है वह लड्डु कीतने प्रदेशोंसे वना है इत्यादि.

केवल प्रकृति और प्रदेश वन्ध योगोंसे होते है और स्थिति तथा अनुभागवन्ध कपायसे होते है कर्मवन्ध होनेमे मौख्य हेतु च्यार है मिथ्यात्व, अव्रत, कपाय, योग जिसमें मिथ्यात्व पांच प्रकारके है अभिग्रह मिथ्यात्व अनाभिग्रह मिथ्यात्व, संसयमिथ्यात्व, विप्रीत मिथ्यात्व, अभिनिवेस मिथ्यात्व ।

अव्रत-पांच इन्द्रियकि पांच अव्रत, छे कायाकि अव्रत छे, वारहवीमनकि अव्रत एवं १२ अव्रत ।

कपाय पांचवीस=सोलह कपाय नौ नो कपाय एवं २५

योग पंदरा. च्यार मनका, च्यार वचनका, सात कायाका

एवं ५७ हेतु है इनोंसे कर्मबन्ध होते हैं यह सामान्य है अब विशेष प्रकारसे कर्मबन्धका हेतु अलग अलग कहते है।

ज्ञानावर्णिय कर्मबन्धके छे कारण है ज्ञानका प्रातनिक (वैरी) पणा करना, अथवा ज्ञानी पुरुषोंसे प्रतनिकपणा करना, ज्ञान तथा जिनोंके पास ज्ञान सुना हो पढा हो उनोंका नामको बदला के दुसराका नाम बतलाना। ज्ञान पढते हुवेको अंतराय करना। ज्ञान या ज्ञानी पुरुषोंकि आशातना करना, पुस्तक पाना पाटी आदिकी आशातना करना। ज्ञान तथा ज्ञानी पुरुषोंके साथ द्वेष भाव रखना, ज्ञान पढते समय या ज्ञानी पुरुषोंपर विषमवाद तथा पढनेका अभाव करना इन छे कारणों से ज्ञानावर्णिय कर्म-बन्धता है।

दर्शनावर्णीय कर्मबन्ध के छे कारण है जो कि उपर ज्ञानावर्णिय कर्मबन्ध के छे कारण बतलाया है उसी माफीक समझना.

वेदनिय कर्मबन्ध के कारण इस मुजब है साता वेदनिय. असाता वेदनिय कर्म जिस्में साता वेदनिय कर्मबन्ध के छे कारण है सर्व प्राणभूत जीव सत्वकी अनुकम्पा करे दुःख न दे. शोक न करावे झुरापो न करावे, परताप न करावे. उद्विग्न न करावे. अर्थात् सर्व जीवों को साता देवे. इन कारणों से साता वेदनियकर्म बन्धता है और सर्व प्राण भूतजीवसत्वको दुःख देवें तकलीफ दे शोक करावे झूरापो करावे परतापन करावे उद्विग्न करावे अर्थात पर जीवोंको दुःख उत्पन्न कराने से असाता वेदनियकर्म बन्धता है।

मोहनिय कर्मबन्ध के छे कारण है तीव्र क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष दर्शन मोहनिय चारित्र मोहनिय तथा दर्शन मोहनिका बन्ध कारण जिन पूजा में विघ्न करना देव द्रव्य भक्षण करना. अरिहंतो के धर्मका अवगुण वाद बोलना इत्यादि कारणोंसे मोहनिय कर्मका बन्ध होता है।

आयुष्य कर्मबन्ध होनेका कारण–नरकायुष्य बन्धनेका च्यार कारण है महा आरंभ, महा परिग्रह पांचेन्द्रियका घाती. मांस भक्षण करना इन च्यार कारणोंसे नरकायुष्य बन्धता है। माया करे गुढ माया करे. कुडा तोल माप करे. असत्य लेख लिखना इन च्यार कारणोंसे जीव तीर्यचका आयुष्य बन्धता है। प्रकृतिका भद्रीक हो विनयवान हो. दयाका परिणाम है दुसरेको संपत्ती देख इर्षा न करे इन च्यार कारणोंसे मनुष्यका आयुष्य बन्धता है। सराग संयम संयमासंयम, अकाम निर्ज्जरा, बालतप इन च्यार कारणोंसे देवतावोंका आयुष्य बन्धता है।

नाम कर्मबन्ध के कारण–भावका सरल; भाषाका सरल. कायाका सरल, और अविषमवाद योग इन च्यार कारणोंसे शुभ नाम कर्मका बन्ध होता है तथा भावका असरल वांका. भाषाका असरल, कायाका असरल, विषमवाद योग इन च्यारों कारणोसे अशुभ नाम कर्मबन्ध होता है इति

गौत्र कर्मबन्ध के कारण जातिका मद करे. कुलका मद करे. बलका मद करे रूपका मद करे तपका मद करे लाभका मद करे. सूत्रका मद करे ऐश्वर्यका मद करे इन आठ मदके त्याग करनेसे उच्च गौत्र कर्मका बन्ध होते हैं इनोंसे विप्रीत आठ मद करनेसे निच गौत्र कर्मका बन्ध होते है।

अन्तराय कर्मबन्धके पांच कारण हैं दांन करते हुवेको अतराय करना कीसी के लाभ होते हो उनों में अंतराय करना भोग में अन्तराय करना. उपभोग में अंतराय करना. वीर्य यानं कोइ पुरुषार्थ करता हो उनोंके अन्दर अंतराय करना. इन पांचो कारणोसे अंतराय कर्मबन्ध होते है।

(९) मोक्षतत्त्व–जीव रूपी सुवर्ण कर्म रूपी मेल ज्ञान दर्शन चारित्र रूपी अग्निसे सोधके निर्मल करे उसे मोक्ष तत्त्व कहते हैं जीव के आत्म प्रदेशोंपर कर्मदल अनादि कालसे लगे हुवे है

उनोंकों अनेक प्रकारकी तपश्चर्या कर सर्वथा कर्मोंका नाश कर जीवकों निर्मल बना अक्षयपद कों प्राप्त करना उसे मोक्ष तत्त्व कहते है जिसके सामान्य चार भेद ज्ञान, दर्शन, चारित्र. वीर्य. विशेष नौ भेद है

(१) सत्पद परूपना, सिद्ध पद सदाकाल शास्वता है

(२) द्रव्य प्रमाण–सिद्धोंके जीव अनंता है।

(३) क्षेत्र प्रमाण–सिद्धोंके जीव सिद्ध शीलाके उपर पैंतालीस लक्ष योजन के विस्तारवाला एक योजनके चौवीसवां भाग मे सिद्ध भगवान विराजते है।

(४) स्पर्शना–एक सिद्ध अनेक सिद्धोंको स्पर्श कर रहे है अनेक सिद्ध अनेक सिद्धोंको स्पर्श कर रहे है।

(५) काल प्रमाण–एक सिद्धोंकि अपेक्षा आदि है परन्तु अन्त नही है ओर बहुत सिद्धोंकि अपेक्षा आदि भी नही ओर अन्त भी नही है।

(६) अन्तर सिद्धोंके परस्पर आंतरा नही है

(७) संख्या–सिद्धोंके जीव अनता है वह अभव्य जीवोंसे अनंत गुणा ओर सर्व जीवोंके अनंतमें भाग है।

(८) भाव–सिद्धोंके जीव क्षायक ओर परिणामीक भावमें है।

(९) अल्पाबहुत्व—

(१) सर्व स्तोक चोथी नरकसे निकला सिद्ध हुवे है

(२) तीजी नरकसे निकले सिद्ध हुवे संख्यात गुणे

(३) दुजी नरकसे निकले सिद्ध हुवे सख्यात गुणा

(४) वनास्पतिसे " " "

(५) पृथ्वी कायसे " " "

(६) अपकायसे	निकले सिद्ध	हुवे संख्यात	गुणे.
(७) भुवनपति देवीसे	"	"	"
(८) भुवनपति देवसे	"	"	"
(९) व्यंतर देवीसे	"	"	"
(१०) व्यंतर देवसे	"	"	"
(११) ज्योतीषी देवीसे	"	"	"
(१२) ज्योतीषी देवसे	"	"	"
(१३) मनुष्यणीसे	"	"	"
(१४) मनुष्यसे	"	"	"
(१५) पहले नरकसे	"	"	"
(१६) तीर्यचणीसे	"	"	"
(१७) तीर्यचसे	"	"	"
(१८) अनुत्तर वैमान दे०	"	"	"
(१९) नवग्रैवेयक देवसे	"	"	"
(२०) बारहवा देवलोक दे०	"	"	"
(२१) इग्यारवा देवलोकसे		"	"
(२२) दशवा देवलोकसे	"	"	"
(२३) नौवा देवलोकसे	"	"	"
(२४) आठवा देवलोकसे	"	"	"
(२५) सातवा देवलोकसे	"	"	"
(२६) छट्टा देवलोकसे	"	"	"
(२७) पांचवा देवलोकसे	"	"	"
(२८) चौथा देवलोकसे	"	"	"
(२९) तीजा देवलोकसे	"	"	"
(३०) दुजा देवलोककी देवी		"	"
(३१) दुजा देवलोकके देव		"	"

(३२) पहला देवलोककी देवी " "
(३३) पहला देवलोकके देवसे " "

नोट—नरकादिसे निकल मनुष्यका भव कर मोक्ष जाने कि अपेक्षा है।

इति मोक्ष तत्व ॥ इति नव तत्व सपूर्ण.

सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम्.

थोकडा नम्बर २.

(श्री पन्नवणादि सूत्रोंसे क्रियाधिकार)

(१) नामद्वार
(२) अर्थद्वार
(३) सक्रियाद्वार
(४) क्रिया कौनसे करे
(५) क्रियाकरतां कीतने कर्म बन्धे.
(६) कर्म बान्धतो क्रिया
(७) एक जीवकों कीतनी०
(८) काइयादि क्रिया
(९) अज्जोजीया क्रिया
(१०) कीती क्रिया करे
(११) आरंभीयादि क्रिया
(१२) क्रियाका भांगा
(१३) प्राणातिपादि
(१४) क्रियाका लगना
(१५) अल्पाबहुत्व
(१६) शरीरोत्पन्न
(१७) पांचक्रिया लागे
(१८) नौ जीवोंको क्रिया
(१९) मृगादि क्रिया
(२०) अग्नि
(२१) जाल
(२२) किरियाणे
(२३) भंड वेचे
(२४) ऋषीश्वर
(२५) अन्त क्रिया
(२६) समुद्‌घात
(२७) नौ क्रिया
(२८) तेरहा क्रिया
(२९) पच्चीस क्रिया

इन थोकडेके सर्व १८४७२ भांगा है।

(१) नामद्वार क्रिया पांच प्रकारकि है यथा—काइया क्रिया, अधिकरणीया क्रिया, पावसिया क्रिया. परितापनिया क्रिया, पाणाइवाइया क्रिया।

(२) अर्थद्वार—काइया क्रिया-अव्रतसे लागे तथा अशुभ योगोंसे लागे। अधिगरणीया क्रिया, नयाशस्त्र बनानेसे तथा पुराणा शस्त्र तैयार करानेसे। पावसिया क्रिया-स्वात्मापर द्वेष करना, परमात्मापर द्वेष करना. उभयात्मापर द्वेष करनाने, परितापनिया क्रिया, स्वात्माको प्रताप उत्पन्न करना, परआत्माको प्रताप करना, उभयात्माको प्रताप करना, पाणाइवाइया क्रिया-स्वात्माकी घात करना परात्माकी घात करना, उभयात्माकी घात करना। इसे प्राणातिपात कहते है.

(३) सक्रियद्वार—जीव सक्रिय है या अक्रिय १ जीव सक्रिय अक्रिय दोनों प्रकारका है कारण जीव दो प्रकारके है सिद्धोंके जीव, संसारी जीव जिस्में सिद्धोंकि जीवतों अक्रिय है और संसारी जीवोंके दो भेद है-सयोगि जीव, अयोगिजीव जिस्में अयोगि चौदवे गुणस्थानवाले वह अक्रिय है शेष जीव संयोगि वह सक्रिय है एवं नरकादि २३ दंडक संयोगि होनेसे सक्रिय है मनुष्य समुच्चय जीवकी माफीक अयोगि है वह अक्रिय है और सयोगि है वह सक्रिय है इति।

(४) क्रिया कौनसे करते है। प्राणातिपातकी क्रिया छे कायके जीवोंसे करते है. मृषावाद की क्रिया सर्व द्रव्यसे करते है। अदत्तादानकि क्रिया लेने लायक ग्रहन करने योग्य द्रव्योंसे करते है। मैथुनकि क्रिया-भोग उपभोगमें आने योग्य द्रव्यसे

अथवा रूप और रूपके अनुकुल द्रव्योंसे करते है। परिग्रहकि क्रिया सर्व द्रव्यसे करते है एवं क्रोध, मान, माय, लोभ, राग, द्वेष, कलह अभ्याख्यान, पैशुन्य परपरीवाद रति अरति माया मृषावाद और मिथ्यादर्शन इन सबकी क्रिया सर्व द्रव्यसे होती है अर्थात् प्राणातीपात, अदत्तादान, मैथुन इन तीन पापकि क्रिया देश द्रव्यी है शेष पंद्रा पापकी क्रिया सर्व द्रव्यी है। समुच्चय जीवापेक्षा अठारा पापकि क्रिया बतलाइ है इसी माफीक नरकादि चौवीस दंडक भी समझ लेना. इसी माफीक समुच्चय जीवों और नरकादि चौवीस दंडकके जीवों (बहुवचन) का सूत्र भी समझना एवं ५० बोलोंको अठारा गुने करनेसे ९०० तथा १२५ पहले पांच क्रियाके मीलाके सर्व यहांतक १०२५ भांगे हुवे

जीव प्राणातिपातकि क्रिया करता हुवा. स्यात् सात कर्म बान्धे स्यात् आठ कर्म बन्धे एवं नरकादि २४ दंडक। बहुत जीवोंकि अपेक्षा सात कर्म बान्धनेवाला भी घणा, आठ कर्म बन्धनेवाले भी घणा। बहुतसे नारकीके जीवों प्राणातिपातकि क्रिया करते हुवे. सात कर्म तो सदैव बाधते है सात कर्म बान्धने वाले बहुत आठ कर्म बांधनेवाले एक. सात कर्म बांधनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले भी बहुत है. इसी माफीक एकेन्द्रिय वर्जके १९ दंडकमें तीन तीन भांगे होनसे ५७ भांगे हुवें, एकेन्द्रिके पांच दंडकमें सात कर्म बन्धनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले भी बहुत है। इसी माफीक मृषावादादि यावत् मिथ्याशल्य अठारे पापकि क्रिया करते हुवे समुच्चय जीव और चौवीस दंडकके पूर्ववत् सात कर्म (आयुष्य वर्जके) तथा आठ कर्मोंका बन्ध होते है जिस्के भांगे प्रत्येक पापके ५७ सतावन होते है सतावनको आठ गुणे करनेसे १०२६ भांगे हुवे।

जीव ज्ञानावर्णिय कर्म बान्धे तों कितनी क्रिया लागे? स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया लागे. कारण दुसरोंके लिये अशुभयोग होनेसे तीन क्रिया लगती है दुसरोंकों तकलीफ होनेसे च्यार क्रिया लगती है अगर जीवोंकि घात होतों पांचों क्रिया लगती है. जब जीव ज्ञानावर्णिय कर्म बान्ध समय पुद्गलोंकों ग्रहन करते है उनी पुद्गल ग्रहन समय जीवोंकों तकलीफ होती है जीनसे क्रिया लगती है। इसी माफीक नरकादि चोवीस दंडक एक वचनापेक्षा स्यात् ३-४ ५ क्रिया लागे एवं बहुवचनापेक्षा. परन्तु यहां स्यात् नही कहना कारण जीव बहुत है इसी वास्ते बहुतसी तीन क्रिया, बहुतसी चार क्रिया बहुतसी पांच क्रिया समुच्चय जीव और चोवीस दंडक एक वचन। और समुच्चय जीव और चोवीस दंडक बहुवचन ५० सूत्र हुवे जेसे ज्ञानावर्णिय कर्मके पचास सूत्र कहा इसी माफीक दर्शनावर्णिय, वेदनिय, मोहनिय, आयुष्य नाम, गौत्र और अंतराय एवं आठों कर्मो के पचास पचास सूत्र होनेसे ४०० भांगा होते है।

एक जीवने एक जीवकि कीतनी क्रिया लागे? समुचय एक जीवने एक जीवकी स्यात् तीन क्रिया, स्यात् च्यार क्रिया. स्यात् पांच क्रिया लागे स्यात् अक्रिय. कारण, समुचय जीवमें सिद्ध भगवान्भी सामेल है। एवं घणा जीवोंकि स्यात् ३-४-५-० एवं घणा जीवोंकों एक जीवकी स्यात् ३-४-५-० एव घणा जीवोंने घणा जीवोंको परन्तु घणी तीन क्रिया घणी च्यार क्रिया घणी पांच क्रिया घणी अक्रिया. एवं एक जीवकों नारकी के जीवकी कीतनी क्रिया लागे? स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया. स्यात् अक्रिया. कारण नारकी नोंपक्रमि होनेसे मारा हुवा नही मरतं इस वास्ते पांचवी क्रिया नही लागे. एवं एक जीवने घणे

नारकोकी स्यात् ३-४-० । एवं घणा जीवोंने एक नारकिकी स्यात् ३-४-० एवं घणा जीवोंको घणी नारकी की तीन क्रियाभी घणी च्यार क्रियाभी घणी अक्रियाभी है. इसी माफीक १३ दंडक देवतोंकाभी समझना. तथा पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रि, तीर्यचपांचेन्द्रिय और मनुष्य यह दश दंडक औदारीकके समुच्चय जीवकी माफीक ३-४-५-० समझना। समुच्चय जीवसे समुच्चयजीव ओर चौवीस दंडकसे १०० भांगा हुवे। एक नारकीने एक जीवकी कीतनी क्रिया लागे ? स्यात् ३-४-५. क्रिया लागे एक नारकीने घणा जीवोंकि कीतनी क्रिया ? स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे, घणी नारकीने एक जीवकी कीतनी क्रिया ? स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे, घणी नारकीने घणा जीवोकी कीतनी क्रिया ? घणी ३-४-५ क्रिया लागे. एक नारकीने वैक्रिया शरीवाले १४ दंडकके एकेक जीवोंकी स्यात् ३-४ क्रिया लागे एवं एक नारकीने १४ दंडकके घणा जीवोंकी स्यात ३-४ क्रिया एवं घणा नारकीने १४ दंडकोंके एकेक जीवोंकी स्यात ३-४ क्रिया एवं घणा नारकीने १४ दडकोंके घणा जीवोंकी घणी ३-४ क्रिया लागे. इसी माफीक दश दडक औदारीकके परन्तु वह स्यात् ३-४-५ क्रिया कहना कारण वैक्रिय शरीर मारा हुवा नही मरते है और औदारीक शरीर मारा हुवा मरभी जाते है। इति नरकके १०० भांगा हुवा इसी माफीक शेष २३ दंडकके २३०० भांगा समझना परन्तु यह ध्यानमें रखना चाहिये कि मनुष्यका दंडक समुच्चय जीवकी माफीक कहना कारण मनुष्यमें चौदवे गुणस्थान वालोंको बिलकुल क्रिया है ही नही इस वास्ते समुच्चय जीवकी माफीक अक्रिय भी कहना एवं समुच्चयजीवके १०० ओर चौवीस दंडकके २४०० सर्व मील २५०० भांगे हुवे।

क्रिया पांच प्रकारकी है काइया. अधिगरणीया पावसीया

परतापनिया. पाणाइवाइया जीव काइया क्रिया करेसो क्या अ-धिगरणी या भी करे ? यंत्रसे देखे समुच्चय जीव और चौवीस

क्रियाकेनाम	काइया	अधिगरणी	पावसीया	परताप निका	पाणाई वाइया
काइयाक्रिया	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
अधिगरणिया	निगमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
पावसीया	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
परतापनिका	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	भजना
पाणाइवाइया	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा

दंडकमें पांच पांच क्रिया होनेसे १२५ भांगा हुवा एकेक भांगे यंत्र मुजब नियमा भजना लगानेसे ६२५ भांगा होते है । यहतों समुच्चय सूत्र हुवा इसी माफीक जीस समय काइयाक्रिया करे उन समय अधिगरणीया क्रिया करे इसकाभी यंत्रकी माफीक ६२५ भांगा कहना अधिकता एक समय ? कि है इसी माफिक जीस देशमें काइया क्रिया करे उन देशमें अधिगरणीया क्रिया करे ? यत्र माफीक ६२५ भांगा कहना एवं प्रदेशकाभी ६२५ भांगा जीस प्रदेशमे काइया क्रिया करे उन प्रदेशमें अधिगरणीया क्रिया करे समुच्चयके ६२५ समयके ६२५ देश (विभाग) के ६२५ प्रदेशके ६२५ सर्व मीली २५०० भांगा होते है इसी मा-फीक अझोजीया क्रियाकाभी उपरवत २५०० भांगा करना. विशेषता इतनी है कि समुच्चयमें उपयोग संयुक्त २५०० भांगा और अझोजीया उपयोग शुन्यके २५०० भांगे है एवं ५००० ।

क्रिया पांच प्रकारकि है काइयाक्रिया अधिगरणीया पावसिया परतापनिया पाणाइवाइक्रिया समुच्चयजीव और चौवीस दंडकमें पांच पांच क्रिया पावे. एवं १२५ भांगा हुवा (१) जीवकाइया अधिकरणीया पावसिया यह तीन क्रिया करे वह परतापनीया पाणाइवाइयाभी करे (२) तीन क्रिया करे वह चोथी क्रिया करे पांचमी नही करे. (३) तीन क्रिया करे वह चोथी पांचवी नभी करे. (४) तीन क्रिया न करे वह चोथी पांचवी क्रियाभी न करे. इसी माफीक च्यार भांगा स्पर्श करनेकाभी समझ लेना. यह समुच्चय जीवोंमें आठ भांगा कहा इसी माफीक मनुष्यमेभी समजना शेष २३ दंडकमें चोथो आठवों भांगो छोडके छे छे भांगा समझना कुल भांगा १५४ हुवे।

क्रिया पांच प्रकारकी है आरंभिया, परिग्रहिया, मायावत्तिया, मिथ्यादर्शन वत्तिया, अपचखानिया, समुचजीव और चोवीसदंडकमे पांच पांच क्रिया पानेसे १२५ भांगा होते है।

समुच्चयजीव आरंभियाक्रिया करे वह परिग्रहीयाक्रिया करते है या नही करते है देखो यंत्रमे

क्रियार नाम	आरंभी०	परिग्र०	मायावत्ति	मिथ्यादर्शन.	अपचखाणि
आरंभिया	नियमा	भजना	नियमा	भजना	भजना
परिग्रहीया	नियमा	नियमा	भजना	भजना	भजना
मायावत्तिया	भजना	भजना	नियमा	भजना	भजना
मिथ्यादर्शन	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा
अपचखानि	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	नियमा

एवं २५ भांगे हुवे। समुच्चय जीव ओर चौवीस दंडकपर पचवीस गुण करनेसे ६२५ भांगे हुवे. जीस समयके ६२५ जीस देशमें के ६२५ जीस प्रदेशके ६२५ एवं सर्व २५०० एवं वहुवच नापेक्षा २५०० मीलाके सर्व ५००० भांगे हुवे।

जीव प्राणातीपातका विरमण (त्याग) करे वह छे जीवनी कायासे करे. मृषावाद का त्याग सर्व द्रव्यसे करे. अदत्तादानका त्याग ग्रहनधरण द्रव्योंसे करे मैथुनका त्याग रूप और रूप के अनुकुल द्रव्योंसे करे परिग्रह के त्याग सर्व द्रव्यसे करे. क्रोध. मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह अभ्याख्यान पैशुन्य परपरीवाद रति अरति मायामृषावाद और मिथ्यादर्शन शल्यका त्याग सर्व द्रव्य से करे. एवं मनुष्य तथा २३ दंडक के जीव सतरा पापों का त्याग नही कर सके मात्र पांचेन्द्रिय के १६ दंडक के जीव मिथ्यादर्शन शल्यका त्याग कर सके है शेष आठ दंडक नही करे एवं समुच्चय जीव और चौवीस दंडक को अठारा गुणे करनेसे ४५० भांगे होते है।

समुच्चय जीव प्राणातिपात का त्याग कीया हुवा कीतने कर्म वान्धे? सात कर्म वान्धे आठ कर्म वान्धे छे कर्म वान्धे एक कर्म वान्धे तथा अवन्धकभी होता है। वहुत जीवोंकि अपेक्षा सात, आठ, छे एक कर्म वान्धनेवाले तथा अवन्धकभी होते है। इसी माफीक मनुष्यमें भी समजना शेष तेवीस दंडकमें प्राणा तिपातका सर्वथा त्याग नही होते है॥

समुच्चय जीवोंमें सात कर्म वान्धनेवाले तथा एक कर्म वान्धनेवाले सदैव सास्वता मीलते है और आठ, छे और अवान्धक असास्वता होते है जिनके भांगे २७ होते है।

संख्या।	सात एक के सास्वता	आठ कर्म	छे कर्म	अबन्धक
१	३	०	०	०
२	३	१	०	०
३	३	३	०	०
४	३	०	१	०
५	३	०	३	०
६	३	०	०	१
७	३	०	०	३
८	३	१	१	०
९	३	१	३	०
१०	३	३	१	०
११	३	३	३	०
१२	३	१	०	१
१३	३	१	०	३
१४	३	३	०	१
१५	३	३	०	३
१६	३	०	१	१
१७	३	०	१	३
१८	३	०	३	१

जहांपर तीनका अंक है वह बहुवचन और एक का अक है उसे एकवचन समझे जहां (०) हे वह कुच्छभी नही।

समुच्चय जीवकी माफीक मनुष्यमेभी २७ भांगे समझना. एवं ५४ एक प्राणातीपातके त्याग के ५४ भांगे हुवे इसी माफीक अठारा पापों के भी ५४-५४ भांगे गीननेसे ५७२ भांगे हुवे शेष तेवीस दंडकमे अठारा पापका विरमाण नही होते है परन्तु इतना विशेष है की मिथ्यादर्शन शल्यका विरमण नारकी देवता और तीर्यच पांचेन्द्रिय एवं १५ दंडक कर सकते है वह जीव सात आठ कर्म वान्धते है बहुत जीवों कि अपेक्षा सात कर्म वान्धनेवाले सदैव सास्वत है आठ कर्म वान्धनेवाले असास्वते है जिस्के भांग तीन होते है (१) सात कर्म वान्धनेवाले सास्वते (२) सात कर्म वान्धनेवाले बहुत और आठ कर्म वान्धनेवाले एक (३) सात कर्म वान्धनेवाले घणे और आठ कर्म वान्धनेवालेभी बहुत है. एवं पदरा दंडक के ४५ भांग होते है सर्व मीलके १०१७ भांगे होते है।

समुचय जीव प्राणातीपातके त्याग करनेवालों के क्या आरंभकि क्रिया

१९	३	०	३	३
२०	३	१	१	१
२१	३	१	१	३
२२	३	१	३	१
२३	३	१	३	३
२४	३	३	१	१
२५	३	३	१	३
२६	३	३	३	१
२७	३	३	३	३

लागे ? स्यात् लागे (छठे गुणस्थान) स्यात् न भी लागे (अप्रमातादि गुणस्थान) परिग्रह, मिथ्यादर्शन, और अप्रत्याख्यानकि क्रिया नही लागे-तथा मायावत्तिया क्रिया स्यात् लागे (दशवे गुणस्थान तक) स्यात् न भी लागे (वीतरागी गुणस्थान) एवं मृषावादादि यावत् मिथ्यादर्शन शल्यतक अठारा पाप के त्याग किये हुवे कों समझना समुच्चय जीवकी माफीक मनुष्य कों भी समजना शेष २३ दंडक के जीव १८ पापों के त्याग नही कर सकते है इतना विशेष है कि मिथ्यादर्शन के त्याग नारकी देवता तीर्यंच पांचेन्द्रिय एवं १५ दंडक के जीव कर सकते है उनों कों मिथ्यात्वकी क्रिया नही लगती है। समुच्चय जीव चौवीस दंडक कों अठारा पापसे गुणा करनेसे ४५० भांगे हुवे।

अल्पा बहुत्व—सर्वस्तोक मिथ्यात्वकि क्रियावाले जीव है अप्रत्याख्यानकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है. परिग्रहकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है आरंभकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है मायावत्तिया क्रियावाले जीवविशेषाधिक है।

समुच्चय जीव पांच शरीर, पांच इन्द्रिय, तीनयोग उत्पन्न करते हुवे को कितनी क्रिया लगती है ? स्यात् तीन स्यात् च्यार स्यात् पांच क्रिया लगती है इसीमाफीक दशदंडकके जीव औदारीक शरीर, सतरादंडकके जीव वैक्रिय शरीर, एक मनुष्य आहारीक शरीर, चौवीस दंडकके जीव तेजस, कारमण स्पर्शेन्द्रिय और कायाका योग, शोलह दंडकके जीव श्रोत्रेन्द्रिय और मन-

योग, सत्तरा दंडकके जीव चक्षु इन्द्रिय, अठारा दंडकके जीव घ्राणेन्द्रिय उन्नीस दंडकके जीव रसेन्द्रिय, और वचनके योग उत्पन्न करते हुवेको स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया लगती है ।

समुच्चय एक जीवकों एक औदारीक शरीर कि कीतनी क्रिया लागे ? स्यात तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया स्यात् अक्रिया, एवं एक जीवने घणा औदारीक शरीरकी घणा जीवोंकों एक औदारीक शरीर की घणा जीवोंकों घणा औदारीक शरीरकी, घणी तीन क्रिया घणी च्यार क्रिया घणी पांच क्रिया घणी अक्रिया। एक नारकीके जीवकों औदारीक शरीरकि स्यात् ३-४-५ क्रिया. एवं एक नारकीने घणा औदारीक शरीरकी घणा नारकीकों एक औदारीक शरीरकी और घणा नारकीकों घणा औदारीक शरीरकी घणी ३-४-५ क्रिया लागे. एवं चौवीस दंडक मीलाके १०० भांगे हुवे इसी माफीक जीव और वैक्रिय शरीर परन्तु क्रिया ३-४ एवं आहारीक शरीर क्रिया ३-४ लागे कारण वैक्रिय आहारीक शरीरके उपक्रम लागे नही. तेजस-कार्मण शरीरके ३-४-५ क्रिया, एकेक शरीरसे समुच्चय जीव और चौवीस दंडक पचवीसका च्यार गुणा करनेसे १०० भांगे हुवे एवं पाच शरीरके ५०० भांगे समझना ।

एक मनुष्य मृगकों मारते है उनांकि निष्पत नो जीवोंकों पांच पांच क्रिया लगती है जैसे मृग मारनेवाले मनुष्यकों, धनुष्य जो वांस से बना है उन वांसके जीव अन्य गतिमें उत्पन्न हुवे है वह व्रत प्रत्याख्यान नही कीया हो तो उनोंके शरीरसे धनुष्य बना है वास्ते मृग मारनेमें वह धनुष्य भी सहायक होनेसे उन जीवोंको भी पांच क्रिया लगती है ।

जीवा जो धनुष्यके अग्र भागमें सुतकी डोरी, भेंसाका शृंग जो धनुष्यके अधोभागमें रखा जाता है. पाणच, चर्म, वाण भालोडी फूदा इन उपकरणोंके जीव जीस गतिमें है उनों सबकों पांच पांच किया लगती है। कोइ जीव मृग मारनेकों वाण तैयार कीया कांन तक खीचके वाण फेंकनेकि तैयारीमें था इतनेमें दुसरा मनुष्य आके उनका शिरच्छेद किया जीस्के जरिये वह वाण हाथसे छुटा जीनसे मृग मर गया तो कोनसा जीवके पापसे कोन स्पर्श हुवा ? मृग मारनेके परिणामवालोकों मृगका पाप लगा और मनुष्य मारनेवालेके परिणामवालाकों मनुष्यका पाप लगा।

एक मनुष्य वांणसे पाक्षी मारनेका विचारमे था. उन वाणसे पाक्षीकों मारा पाक्षी निचे गिरता हुवा उनके शरीरसे दुसरा जीव मर गया तो पाक्षी मारनेवाला मनुष्यकों पाक्षीकी पांच क्रिया और दुसरे जीवकि च्यार क्रिया लागे पाक्षीकों दुसरा जीवकी पांचो क्रिया लागे।

अग्नि—कीसी दुष्टने अग्नि लगाइ और कीस सुज्ञने अग्नि बुजाइ जिस्मे अग्नि लगानेवालेकों महाश्रव महाकर्म महाक्रिया महावेदना है और अग्नि बुजानेवालेकों स्वल्पाश्रव स्वल्पकर्म स्वल्पक्रिया, स्वल्प वेदना हैं कारण अग्नि लगानेवालेका परिणाम दुष्ट और बुजानेवालेका परिणाम विशुद्ध था। अग्नि जलानेके इरादेसे काष्ट कचरा एकत्र किया तथा मृगमारनेकों वाण तैयार कीया मच्छी पकडनेको जाल तैयार करी वर्षाद्द जाननेकों हाथ बाहार निकाला उन सबकों पांच पांच क्रिया लगति है कारण अपना परिणाम खराब होनेसे ३ क्रिया देखके दुसरे जीवोंकों तकलीफ होना ४ क्रिया इनोंमें जीव मरनेकी भावना होनेसे पांचो क्रिया लगति है।

कीसी याचकके अन्न पाणी वस्त्रादिकी आवश्यक्ता होनेसे उने तीव्र क्रिया लगति है और कीसी दातारने अपनि वस्तुकि ममत्व उतार उसे देदी तों उन याचक कों पतली क्रिया लगती है और दातारकी ममत्व उतारनेसे उन पदार्थकि क्रिया वन्ध हो गइ है।

क्रियाणा–कीसी मनुष्यने क्रियाणा वेचा. कीसी मनुष्यने क्रियाणा खरीद किया, वेचनेवालेकों क्रिया हलकी हुइ, और लेनेवालोको भारी हुइ कारण वेचनेवालोंकों तो संतोष हो गया अब लेनेवालोंको उनका संरक्षण तथा–तेजो मंदीका विचार करना पडता है, माल वेचीयों तीकों तोल दीनों रूपैया लीना नहीनां वेचनेवालोंकों दोनों क्रिया हलकी. लेनेवालोंकों दोनो क्रिया भारी लगती है। मालतों तोलीयों नही और रूपैया ले लीना इनसे वेचनेवालोंकों क्रिया भारी, खरीदनेवालोंकों रूपैया कि क्रिया हलकी हुइ। माल तोलके रूपैया ले लीना तो रूपैया लेनेवालोंकों रूपयाकी क्रिया भारी. माल उठानेवालोंकों मालकी क्रिया भारी लगती है।

कीसी मनुष्यकी दुकानपरसे एक आदमि एक वस्तु ले गया उनकी शोधके लिये घरधणी तलास कर रहा, उनोंको कीतनी क्रिया? जो सम्यग्दृष्टि हो तो च्यार क्रिया. मिथ्यादृष्टि हो तो पाचों क्रिया. परन्तु क्रिया भारी लागे और तलास करनेपर वह वस्तु मील जावे तो फीर वह क्रिया हलकी हो जाति है।

ऋषि–कोइ मनुष्य अश्वगजादि कोइ जीवकों मारेतों उन अश्वगजादिके पापसे स्पर्श करे अगर दुसरा कोइ जीव विचमें मरजावे तो उनके पापसे भी मारनेवाला जरुर स्पर्श करे। एक

ऋषिकों कोइ पापीष्ट मारे तो उन ऋषिके पापके साथ निश्चय अनंत जीवोंके पापसे स्पर्श करे कारण ऋषि अनंत जीवोंके प्रतिपालक है. इसी माफीक एक ऋषिकों समाधि देना अनंत जीवोंको समाधि दीनी कहीजे.

हे भगवान् जीव अन्त क्रिया करे? जो जीव हलन चलनादि क्रिया करता है वह जीव अन्त क्रिया नही करे कारण तेरहवे गुणस्थान तक हलन चलनादि क्रिया है वहां तक अन्त क्रिया नही है चौदवे गुणस्थान योगनिरूद्ध होते है हलन चलन क्रिया वन्ध होती है तव अंत समय कि अन्त क्रिया होती है (पन्नवणा)

जीव वेदनि समुद्‌घात करते हुवेको स्यात् ३-४-५ क्रिया लगती हे इसी माफीक कषाय समु० मरणान्तिक समु० वैक्रिय समु० आहारीक समु० तेजस समुद्‌घात करते हुवेकों स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे. दंडक अपने अपने कहना। (पन्नवणा)

मुनिक्रिया—मुनि जहां मासकल्प तथा चतुर्मास रहे हो फीर दुणो तिगुणोकाल व्यतीत करीयों विगर उसी नगरमें आवे तो कालान्तिकांत क्रिया लागे। वार वार उनी मकांनमें उतरे तो क्रिया लागे। परंतु कीसी शरीरादि कारण हो तो ज्यादा रहना या जलदी आना भी कल्पते है।

कीसी श्रद्धालु गृहस्थने अन्य योगि सन्यासी श्रीदंडीयोंके लिये मकांन वनाया है। जहांतक वह उन मकांनमें न उतरे हो वहांतक साधुवोंकों उन मकांनमें ठेरणा नही कल्पे. अगर उन मकांनमें ठेरे तों अणाभि कान्त क्रिया लागे। अगर वह लोक भोगव भी लिया हो तो भी जैन मुनियोंकों उन मकानमें नही ठेरना. कारण वह लोग दुर्गच्छा करे पीच्छा मकांन धोवावे निपावे आदि पश्चात्कर्म लागे. अगर वस्तीके अभाव दातार सुलभ हो तो वस्तीवासी मुनि उनोंकी इजाजतसे ठेर भी सकते है।

वज्रक्रिया—अगर कोइ गृहस्थ मुनियोंके वास्ते ही मकांन कराया है कदाच मुनि उनमें न ठेरे तो गृहस्थ विचार करे कि अपने रहनेका मकांन मुनिकों देदो अपने दुसरा वन्धा लेंगे अगर एसा मकानमें मुनि ठेरे तो उने वज्र क्रिया लागे।

महावज्र क्रिया—कोइ श्रद्धालु गृहस्थ अन्य तीर्थीयोंके लिये मकांन वन्धाया है जिस्में भी उनोंका नाम खोलके अलग अलग मकांन वन्धाया हो उनमे तों साधुवोंकों उत्तरना कल्पता ही नहीं है अगर उत्तरे तो महावज्र यिा लागे।

सावद्य क्रिया—वहुतसे साधुवोंके नामसे एक धर्मसालादिक मकांन कराया है उनमें मुनि ठेरे तो सावद्य क्रिया लागे. तथा एक साधुका नामसे मकांन वनावे उनमें उतरे तो महा सावद्य क्रिया लागे। गृहस्थ अपने भोगवने के लिये मकांन वनाया है परन्तु साधुवोंके ठेरनेके लिये उन मकानकों लीपणसे लिपावे. छान छयावे, छपरा करावे एसा मकानमें साधुवोंको ठेरना नही कल्पे।

अगर गृहस्थ अपने उपभोग के लिये मकांन वनाया है वह निर्वद्य होनेमे मुनि उन मकानमें ठेरे तो उनोंको कीसी प्रकारकी किया नही लगती है उने अल्प सावद्य क्रिया कहते है अल्प निषेध अर्थमे माना गया है वास्ते क्रिया नही लगती है (आचारांग सूत्र).

किया तेरहा प्रकारकी है अर्थादंड क्रिया अपने तथा अपने संबन्धीयों के लिये कार्य करनेमे क्रिया लगति है उसे अर्थादंड कहते है अनर्थादंड याने विगर कारण कर्मबन्ध स्थान सेवन करना। हिंस्यादंड किया हिंस्या करनेसे. अकस्मात दुसरा कार्य करते चित्तमे विगर परिणामोंसे पाप हो जाये. दृष्टि विपर्यास

हानेसे पाप लागे। मृषावाद बोलनेसे क्रिया लागे। चोरी कर्म करनेसे क्रिया लागे। खराब अध्यवसायसे० मित्रद्रोहीपणा करनेसे। मानसे, मायासे, लोभसे, इर्यापथिकी क्रिया. (सूत्रकृतांग सूत्र).

हे भगवान् कोइ श्रावक सामायिक कर बेटा है उनको क्रिया क्या संपराय कि लगती है या इर्यावहि कि १ उन श्रावककों संपराय की क्रिया लगती है किन्तु इर्यापथिकी क्रिया नहा लागे ! कारण सामायिकमें बेठे हुवे श्रावककी आत्मा अधिकरण है यहां अधिकरण दो प्रकारके होते है द्रव्याधिकरण हलशकटादि सोतों सामायिकके समय श्रावक के पास है नही ओर दुसरा भावाधिकरण जो क्रोध, मान, माया, लोभ. यह आत्म प्रदेशोंमें रहा हुवा है इस वास्ते श्रावकके इर्यावहि क्रिया नही लागे किन्तु संपराय क्रिया लगती है।

वृहत्कल्पसूत्र उदेश १ अधिकरण नाम क्रोधका है.

वृहत्कल्पसूत्र उदेश ३ अधिकरण नाम क्रोधका है.

व्यवहारसूत्र उदेश ४ अधिकरण नाम क्रोधका है.

निशियसूत्र उदेश १३ वा अधिकरण नाम क्रोधका है.

भगवतिसूत्र शतक १८उ०१ आहारीक शरीरवाले मुनियोंकी कायाकों भी अधीकरण कहा है.

कीतनेक अज्ञलोग कहते है कि श्रावककों खानपान आदिमें साता उपजानेसे शस्त्रकों तीक्षण करने जेसा पाप लगता है लेकीन यह उन लोगोंकी मूर्खता है कारण श्रावकों कों शास्त्रमें पात्र कहा है अम्बड श्रावक छठ छठ पारणा करता था वह एक दिन के पारणामें सो सो घर पारणा करता था (उत्पातिकसूत्र) पडिमाधारी श्रावक गौचरी कर भिक्षा लाते है .दशाश्रुत स्कन्ध,

अगर श्रावककों खान, पान देने में पाप होतों भगवान ने पडि-माधारी श्रावकोंको भिक्षा लाना क्यों बतलाय। संख श्रावक पोखली श्रावक स्वामिवात्सल्य कर पौषद क्रिया भगवतीसूत्र १२। १ इस शास्त्र प्रमाणसे श्रावककों रत्नोंकी मालामे सामी-लगीणा गया है इत्यादि।

पचवीस क्रिया—काइया, अधिकरणीया, पावसिया, पर-तावणिया पाणाइवाइया, आरंभिया. परिगहीया, मायावत्तिया, मिच्छादरसणवत्तिया, अपच्चखाणवत्तिया, दिठ्ठिया, पुठ्ठिया पाडुचिया, सामंतवणिया, महत्थिया, परहत्थिया, अणवणिया, वेदारणीया, अणकवखवत्तिया, अणभोगवत्तिया, पोग्ग क्रिया, पेज्ज क्रिया, दोम क्रिया, समदांणी क्रिया, इरियावही क्रिया.

अलापक–सूत्र-गमा–भांगा–बोल–यह सब एकार्थी है यहांपर बोलोंकों भांगाके नामसे ही लीखा गया है सर्व भांगा १८४७२ हुवे है।

सूत्रोंमें जगह जगह लिखा है कि श्रावकों को " अभिगय जीवाजीव यावत् किरिया अहीगरणीयादि " अर्थात् श्रावकोंका प्रथम लक्षण यह है कि वह जीवाजीव पुन्य पापाश्रव संवर निर्ज्जरा बन्ध मोक्ष क्रिया काइयादि का जानपणा करे जब श्रावकों के लिये ही भगवान् का यह हुकम है तों साधुवों के लिये तो कहना ही क्या इस भागमें नव तत्व और पचवीस क्रिया इतनी तो सुगम रीती से लिखी गइ है की सामान्य बुद्धिवाला भी इनसे लाभ उठा सकता है इस वास्ते हरेक भाइयों कों इन सब भागों कों आद्योपान्त पढके लाभ लेना चाहिये। इत्यलम्॥ शान्ति शान्ति शान्ति॥

सेवंभंते सेवंभंते तमेव सच्चम्

इति शीघ्रबोध भाग २ जो समाप्तम्।

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ३ जो।

थोकडा नम्बर. २०

सूत्र श्री अनुयोग द्वारादि अनेक प्रकरणोंसे.

(बालावबोध द्वार पचवीस)

(१) नयसात (२) निक्षेपा च्यार (३) द्रव्यगुण पर्याय (४) द्रव्य क्षेत्र काल भाव (५) द्रव्य भाव (६) कार्य कारण (७) निश्चय व्यवहार (८) उपादान निमत्त (९) प्रमाण च्यार (१०) सामान्य विशेष (११) गुणगुणी (१२) ज्ञय ज्ञान ज्ञानी (१३) उपनेवा, विग्नेवा, ध्रूवेवा (१४) अध्येय आधार (१५) आविर्भाव तिरोभाव (१६) गौणता मौख्यत्ता (१७) उत्सर्गापवाद (१८) आत्मातीन (१९) ध्यान च्यार (२०) अनुयोग च्यार (२१) जागृनातीन (२२) व्याख्या नौ (२३) पक्ष आठ (२४) सप्तभंगी (२५) निगोद स्वरूप । इतिद्वार ॥

नय-निक्षेपों के विवेचनमें बढे बडे ग्रन्थ बनचुके है परन्तु उनी ग्रन्थों में विस्तारसे विवेचन होनेसे सामान्य बुद्धिवाले सुगमता पूर्वक लाभ उठा नही सक्ते है तथा विवरणाधिक होनेसे वह कण्ठस्थ करनेमें आलस्य प्रमाद हुमला कर चैतन्यक्ति शक्ति रोक देते है इस वास्ते खास कंटस्थ करने के इरादेसेही हमने यह

संक्षिप्तसे सार लिख आपसे निवेदन करते है कि इस नयादिको कण्ठस्थ कर फीर विवेचनवाले ग्रंथ पढो ।

(१) नयाधिकार

(१) नय-वस्तु के एक अंश को गृहन कर वक्तव्यता करना उनको नय कहते है जब वस्तुमें अनंत (पर्याय) अंश है उनोंकि वक्तव्यता करने के लिये नयभी अनंत होना चाहिये ? जीतना वस्तुमें धर्म (स्वभाव) है उनोंकि व्याख्या करनेको उतनाही नय है परन्तु स्वल्प बुद्धिवालों के लिये अनंत नयका ज्ञानको संक्षिप्त कर सात नय बतलाया है । अगर नैगमादि एकेक नयसे ही एकांत पक्ष ग्रहन कर वस्तुतत्त्वका निर्देश करे तो उनोंको नयाभास (मिथ्यात्वी) कहा जाता है कारण वस्तुमें अनंतधर्म है उनोंकि व्याख्या एकही नयसे संपुरण नही होसक्ती है अगर एक नयमे एक अंशकि व्याख्या करेगे तो शेष जो धर्म रहे हुवे है उनोंका अभाव होगा। इसी वास्ते शास्त्रकारोंका फरमान है कि एक वस्तुमें एकेक नयकि अपेक्षा से अलग अलग धर्मकि अलग अलग व्याख्या करनासेही सम्यक् ज्ञानकि प्राप्ती हो सके उनोंकाही सम्यग्दृष्टि कहाजाते है.

इसपर हस्ती और सात अंधे मनुष्यका दृष्टान्त-एक ग्राम के बाहार पहले पहलही एक महा कायावाला हस्ति आयाथा उस समय ग्रामके सब लोग हस्ति देखनेको गये उन मनुष्योंमे सात अन्धे मनुष्य भीथे। उनोंसे एक अन्धे मनुष्यने हस्तिके दान्ताशूलपे हाथ लगाके देखाकि हस्ति मूशल जेसा होता है, दूसरेने शुंडपर हाथ लगाके देखा कि हस्ति एड्मान जेसा होता है तीसराने कांनोपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति सुपडे जेसा होता है चोथाने उदरपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति कोठी जेसा

होता है पांचवाने पैरोंपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति स्तंभ जेसा होता है छट्ठाने पुच्छपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति चम्र जेसा होता है सातवाने कुम्भस्थलपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति कुम्भ जेसा है हस्तिकों देख ग्राम के लोग ग्राममें गये और वह सातों अन्धे मनुष्य एक वृक्ष निचे वेठे आपसमें विवाद करने लगे अपने अपने देखे हुवे एकेक अंगपर मिथ्याग्रह करने लगें एक दूसरोंको झूठे वनने लगे इतनेमें एक सुज्ञ मनुष्य आया और उन सातों अन्धे मनुष्योंकि वातों सुन वोला के भाइ तुम एकेक वातकों आग्रहसे तांनते हो तवतों सवके सव झूटे हों अगर मेरे कहने माफीक तुमने एकेक अंगहस्तिके देखे हैं अगर सातों जनों सामीलहो विचार करोंगे तो एकेकापेक्षा सातों सत्य हो। अन्धोने कहा की केसे? तव उन सुज्ञ विद्वानने कहाकी तुमने देखा वह हस्तिका दान्ताशूल है दूसराने देखा वह हस्तिकि शूंड हैं यावत् सातवाने देखा वह हस्ति के पुच्छ है इतना सुनके उन अन्ध मनुष्योंको ज्ञान होगया कि हस्ति महा कायावाला है अपने जो देखा था वह हस्तिका एकक अंग है इसका उपनय-वस्तु एक हस्ति माफीक अनेक अंश (विभाग) संयुक्त है उनकों माननेवाले एक अंगकों मानके शेष अंगका उच्छेद करनेसे अन्धे मनुष्योंके कदाग्रह तुल्य होते है अगर संपुरण अंगोंकों अलग अलगअपेक्षासे माना जावे तो सुज्ञ मनुष्यकि माफीक हस्ती ठीकतोरपर समज सकते है इति.

नय के मूल दो भेद हैं (१) द्रव्यास्तिक नय जो द्रव्यकों ग्रहन करते है (२ पर्यायास्तिक नय वस्तुके पर्यायकों ग्रहन करे। जिस्में द्रव्यास्तिक नयके दश भेद है यथा नित्य द्रव्यास्तिक, एक द्रव्यास्तिक, सत् द्रव्यास्तिक, वक्तव्य द्रव्यास्तिक, अशुद्ध द्रव्यास्तिक, अन्वय द्रव्यास्तिक. परमद्रव्यास्तिक, शुद्धद्रव्या-

स्तिक, सत्ताद्रव्यास्तिक, परम भाव द्रव्यास्तिक। पर्यायास्तिकनयके छे भेद है द्रव्यपर्यायास्तिक, द्रव्यवञ्जनपर्यायास्तिक गुणपर्यायास्तिक, गुणवञ्जनपर्यायास्तिक, स्वभाव पर्यायास्तिक, विभावपर्यायास्तिकनय। इन द्रव्यास्तिक पर्यायास्तिक दोनों नयों के ७०० भांगे होते है।

तर्कवादि श्रीमान् सिद्धसेनदिवाकरजी महाराज द्रव्यास्तिकनय तीन मानते है नैगमनय, संग्रहनय, व्यवहारनय, और सिद्धान्तवादी श्रीमान जिनभद्रगणी खमासमणा द्रव्यास्तिनय च्यार मानते है नैगमनय संग्रहनय व्यवहारनय रूजुसूत्र नय। अपेक्षासे दोनों महा ऋषियोंका मानना सत्य है कारण ऋजुसूत्र नय प्रणाम ग्रही होनेसे भावनिक्षेपा के अन्दर मानके उसे पर्यायास्तिक नय मानी गइ है और ऋजुसूत्रनय शुद्ध उपयोग रहित होनेसे। श्री जिनभद्रगणी समाश्रमणजीने द्रव्यास्तिक नय मानी है दोनों मत्तका मतलब एक ही है.

नैगम, संग्रह, व्यवहार, और रूजुसूत्र, इन च्यार नयको द्रव्यास्तिक नय कहते है अथवा अर्थ नय कहते है तथा क्रियानय भी कहते है और शब्द संभिरूढ और एवंभूत इन तीनों नय को पर्यायास्तिक नय कहते है इन तीनों नयको शब्द नयभी कहते है इन तीनों नयको ज्ञान नयभी कहते है एवं द्रव्यास्तिक नय और पर्यायास्तिक नय दोनोंको मीलानेसे सातनय-यथा नैगमनय. संग्रहनय व्यवहारनय ऋजुसूत्रनय. शब्दनय संभिरुढनय. एवंभूतनय. अब इन सातों नयके सामान्य लक्षण कहाजाते है।

(१) नैगमनय-जिस्का एक गम (स्वभाव) नहीं है अनेक मान उन्मान प्रमाणकर वस्तुको वस्तुमाने जेसे सामान्यमाने विशेषमाने. तीनकालकि वातमाने. निक्षेपाचार माने. तीनों

कालमें वस्तुका अस्तित्व भाव माने जिन नैगमनय के तीन भेद है (१) अंश. (२) आरोप (३) विकल्प।

(क) अंश-वस्तुका एक अंशको ग्रहन कर वस्तुको वस्तु माने शेष निगोदीये जीवोंको सिद्ध समान माने कारण निगोदीये जीवों के आठ रूचक प्रदेश+ सदैव निर्मल सिद्धों के माफीक है इस वास्ते एक अंशको ग्रहन कर नैगमनयवाला निगोदीये जीवोंकोभी सिद्ध ही मानते है। तथा चौदवे अयोगी गुणस्थानवाले जीवों को संसारी जीव माने; कारण उन जीवोंके अभीतक चार अघाति कर्म बाकी है अन्तर महुर्त संसार बाकी है उतने अंशको ग्रहन कर चौदवे गुणस्थानक वृति जीवोंको संसारी माने यह नैगम नयका मत है।

(ख) आरोप-आरोपके तीन भेद है (१) भूत कालका आरोप (२) भविष्य कालका आरोप (३) वर्तमान कालका आरोप जिस्मेभूत कालका आरोप जेसे भूतकालमें वस्तु हो गइ है उन-को वर्तमान कालमें आरोप करना. यथा-भगवान वीरप्रभुका जन्म चैत्र शुक्ल १३ के दिन हुवा था उनका आरोप, वर्तमान का-लमें कर पर्युषण में जन्म महोत्सव करना उनोंकी मूर्ति स्थापन-कर सेवा पूजा भक्ति करना तथा अनंते सिद्ध हो गये है उनोंके नामका स्मरण करना तथा उनोंकि मूर्ति स्थापन कर पूजन करना यह सब भूतकालका वर्तमानमें आरोप है (२) भविष्यकाल में होने वालोका वर्तमान कालमें आरोप करना जैसे श्री पद्मनाभ

+ श्री नन्दीजी सूत्रमें कहा है कि जीवोंके अक्षर के अनन्त में भाग में कर्म दल नहीं लगे यह ही जीवका चैतन्यता गुण है अगर इसमें भी कर्म लग जावें तो जीवका अजीव हो जाते है परन्तु यह कभी हुवा नहीं और होगा भी नहीं इस वास्ते ८ रुचक प्रदेश सदैव सिद्ध समान गीने जाते है

तीर्थंकर उत्सर्पिणी कालमें होंगे उनोंको (ठाणायांगजी सूत्र के नौवे ठाणेमें) तीर्थंकर समझ उनोंकी मूर्ति स्थापनकर सेवाभक्ति करना तथा मरीचीयाके भवमें भावि तीर्थंकर समझ भरतमहाराज उनकों वन्दन नमस्कार कीयाथा. यह भविष्यकालमें होनेवालोंका वर्तमानमें आरोप करना (३) वर्तमानमें वर्तती वस्तुका आरोप जेसे आचार्योपाध्याय तथा मुनि मत्तगोंके गुण कीर्तन करना यह वर्तमानका वर्तमानमे आरोप है तथा एक वस्तुमें तीन कालका आरोप जेसे नारकी देवता जम्बुद्विप मेरुगिरी देवलोकोंमें सास्वते चैत्य-प्रतिमा आदि जोजो पदार्थ तीनो कालमें सास्वते है उनोंका भूतकालमें थे भविष्यमें रहेगे वर्तमान मे वर्त रहे है एसा व्याख्यान करना यह एकही पदार्थ मे तीनों कालका आरोप हो सकते है.

(ग) विकल्प -विकल्पके अनेक भेद है जेसे जेसे अध्यवसाय उत्पन्न होते है उनको विकल्प कहेते है द्रव्यास्तिक और पर्यायास्तिक नयके विकल्प ७०० होते है वह नय चक्र सारादि ग्रंथ से देखना चाहिये. इन नैगमनयका मूल दो भेद है (१) शुद्ध नैगमनय (२) अशुद्ध नैगमनय जिसपर वसति-पायत्थी-और प्रदेशका दृष्टांत आगे लिखाजावेगा उसे देखना चाहिये।

(२) संग्रहनय-वस्तुकि मूल सत्ता कों ग्रहन करे जेसे जीवों के असंख्यात आत्म प्रदेश मे सिद्धो कि सत्ता मोजुद है इस वास्ते सर्व जीवो कों सिद्ध सामान्य माने और संग्रह-संग्रह वस्तुको ग्रहन करनेवाले नयकोंसंग्रहनय कहते है यथा 'एगे आया-एगे अणाया' भावार्थ-जीवात्मा अनत है परन्तु सवजीव सातकर असंख्यात प्रदेशी निर्मल है इसी वास्ते अनन्त जीवोंका संग्रह कर 'एगे आया' कहते है एवं अनंत पुद्गलोंमें सडन पडण विध्वंसन स्वभाव होनेसे 'एगे अणाया' संग्रह नय वाला सामान्य माने विशेष नही

माने तीन कालकीवात माने निक्षेपाचारोंमाने एक शब्द में अनेक पदार्थ माने जेसे कीसीने कहाकी 'वन' तो उसके अन्दर जीतने वृक्ष लता फळ पुष्प जलादि पदार्थ है उन सबको संग्रह नयवाले ने माना तथा कीसी सेठने अपने अनुचरको कहाकी जावों तुम दान्तण लावों तो उन संग्रह नयके मतवाला अनुचरने दान्तण काच जल झारी वस्त्रादि पोसाक सब लेके आया-इसी माफीक सेठने कहाकी पत्रलिखना है कागद लावो तो उन दासने कागद कलम दवात दस्तरी आदि सब ले आया. इस वास्ते संग्रहनय-वाला एक शब्दमें अनेक वस्तु ग्रहन करते है जिस्के दोय भेद है (१) सामान्य संग्रहनय (२) विशेष संग्रहनय।

(३) व्यवहारनय-बाह्य दीसती वस्तुका विवेचन करे कारण की जीसका जेसा बाह्य व्यवहार देखे वेसाही उनोंका व्यवहार करे अर्थात् अन्तः करणको नही माने जेसे यह जीव जन्मा है यह जीव मृत्युकोप्राप्त हुवा है जीव कर्म बन्ध करते है जीव सुख दुःख भोगवते है पुद्गलोंका संयोग वियोग होते है इस निमित कारणसे हमारा भला बुरा हो गया यह सब व्यवहार नयका मत है व्यवहार नयवाला सामान्यके साथ विशेषमाने निक्षेपा च्यार माने तीनो कालकी वात माने जेसे व्यवहारमें कोयल श्याम, शुकहरा, मामलीयालाल, हल्दी पीली. हंस सुफेद परन्तु निश्चय नयसे इन पदार्थोंमें पांचो वर्ण दोगन्ध पांच रस आठ स्पर्श पावे व्यवहारमें गुलाब सुगन्ध-मृत्यश्वान दुर्गन्ध सुंठ तिक्त निंब कटुक आम्लाकषायत. आम्र आंबिल, साकर मधुर, करवोत कर्कश, ना-लुया मृदुल, लोहागुरु, अकतूल लघु, पाणी शीतल, अग्निउष्ण, घृत स्निगध, राख रूक्ष, यह सब व्यवहारमें मोख्यता गुण बतलाये परन्तु निश्चयमें गौणतामें सब बोलोंमें वर्णादि बीस बीस बोल

मीलते है। जिस व्यवहारनयके दो भेद है (१) शुद्ध व्यवहारनय (२) अशुद्ध व्यवहारनय।

(४) ऋजुसूत्रनय—सरलतासे बोध होना उसे ऋजुसूत्रनय कहते है ऋजुसूत्रनय भूत भविष्यकाल कों नही माने मात्र एक वर्तमानकालको ही मानते है ऋजुसूत्रनयवाला सामान्य नही माने विशेष माने. एक वर्तमानकालकि बात माने निक्षेपा एक भाव माने. परवस्तु कों अपने लिये निरर्थक माने 'आकाशकुसुमवत्' जेसे कीसीने कहा की सो वर्षा पहले सूवर्णकि वर्षाद हुइथी तथा सो वर्षा के बाद सूवर्ण कि वर्षाद होगा? निरर्थक अर्थात् भूत भविष्यमें जो कार्य होगा वह हमारे लिये निरर्थक है यह नय वर्तमानकाल को मोरव्य मानते है जेसे एक साहुकार अपने घरमें सामायिक कर बेठा था इतनेमें एक मुसाफर आके उन सेठके लडकेकी ओरतसे पुछा की बेहन! तुमारा सुसराजी कहां गये है? उन ओरतने उत्तर दीया कि मेरे सुसराजी पसारीकी दुकान सुंठ हरडे खरीदने कों गये है वह मुसाफर वहां जाके तलास की परन्तु सेठजी वहांपर न मीलनेसे वह पीछा सेठजीके घरपर आके पुच्छा तो उन ओरतने कहाकि मेरे सुसराजी मोचीके वहां जुते खरीदनेको गयेहै इसपर वह मुसाफर मोचीके वहां जाके तलास करी वहांपर सेठजी न मीले. तब फीरके पुनः सेठजीके घरपे आये इतनेमें सेठजीके सामायिकका काल होजानेसे अपनि सामायिक पार उन मुसाफरसे बात कर लिया पीछा फीर अपने लडकेकी ओरतसे पुच्छा कि क्यों वहूजी मे सामायिक कर घरके अन्दर बेठाथा यह तुम जानती थी फीर उन मुसाफर को खाली तकलीफ क्यों दीयी वहूजीने कहा क्यों सुसराजी आपका चित दोनो स्थानपर गयाथा

या नही ? सेठजीने कहा बात सत्य है मेरा दील दोनों स्थानपर गयाथा इससे यह पाया जाता है कि सेठजी के लडकेकी औरत ज्ञानवन्त थी इसी माफीक ऋजुसूत्रनय गृहवासमें बेठ हुए के त्याग प्रणाम होनेसे साधु माने और साधुवेश धारण करनेवाले मुनियोंका प्रणाम गृहस्थावासका होनेसे उने गृहस्थ माने। इति इन च्यार नयको द्रव्यास्तिकनय कहते है इन च्यार नयकि समकित तथा देशव्रत सर्वव्रत भव्याभव्य दोनोंको होते है परन्तु शुद्ध उपयोग रहीत होनेसे जीवोका कल्याण नही हो सके !

(५) शब्दनय-शब्दनयवाला शब्दपर आरूढ हो सरीखे शब्दोंका एकही अर्थ करे शब्दनयवाला सामान्य नही माने. विशेष माने वर्तमानकालकी बात माने निक्षेपा एक भाव माने वस्तुमे लिंगभेद नही माने जेसे शक्रेन्द्र देवेन्द्र पुरेन्द्र सूचिपति इन सबको एकही माने। यह शब्दनय शुद्ध उपयोग को माननेवाला है।

(६) संभिरूढनय—सामान्य नही माने विशेष माने वर्तमानकालकी बात माने निक्षेपा भाव माने लिंगमें भेद माने. शब्द का अर्थ भिन्न भिन्न माने जेसे शक्रनाम का सिंहासनपर देवतोंकि परिषदामें बेठे हुवे को शक्रेन्द्र माने. देवतोंमें वेठा हुवा इन्साफ कर अपनि आज्ञा मान्य करावे उसे देवेन्द्र मानें. हाथमें वज्र ले देवतों के पुरको विदारे उसे पुरेन्द्र माने. अप्सरावोंके महलोंमें नाटकादि पांचो इन्द्रियों के सुख भोगवताको सचीपती माने. समभिरूढवाला एक अंश उनी वस्तुको वस्तु माने अर्थात जो अंश ऊणा है वह भी प्रगट होनेवाले है उसे समभिरूढ कहा जाते है।

(७) एवंभूत नयवाला-सामान्य नही माने विशेष माने

वर्तमान कालकी वात माने निक्षेपा एकभाव माने संपुरण वस्तु को वस्तु माने एक अंशभी कम हो तो एवंभूत नयवाला वस्तु को अवस्तु माने। शब्दादि अपने अपने कार्यमें उपयोगसे युक्त कार्यको कार्य माने।

इन सातों नयपर अनुयोग द्वारमें तीन दृष्टान्त इसी माफीक है। (१) वस्तिका (२) पायलीका (३) प्रदेशका।

सामान्य नैगमनयवाले को विशेष नैगमनयवाला पुच्छता है कि आप कहांपर निवास करते है? सामान्य नयवाला वोला कि में लोकमें रहता हूं.

विशेष—लोक तीन प्रकारका है अधोलोक उर्ध्वलोक तीर्यग् लोग है आप कीस लोकमे रहते है?

सामान्य–मे तीर्यगलोगमें रहता हुं।

विशेष—तीर्च्छालोगमे द्विप वहुत है तुम कोनसे द्विपमें रहते हो?

सामान्य—में जम्बुद्विपमें नामका द्विपमें रहता हु.

वि—जम्बुद्विमें क्षेत्र वहुत है तुम कोनसे क्षेत्रमें रहते हो?

सा—मे भरतक्षेत्र नामक क्षेत्रमे रहता हुं.

वि०—भरतक्षेत्र दक्षिण उत्तर दो है आप कोनसे भरतमे रहते हो?

सा—में दक्षिण भरतक्षेत्रमें रहता हु.

वि—दक्षिण भरतमें तीन खंड है तुम कोनसे खंडमें रहते हो?

सा—मैं मध्यखंडमें रहता हुं.

वि—मध्यखंडमे देश वहुत है तुम कोनसा देशमें रहते हो?

सा—में मागध देशमें रहता हूं.

वि—मागध देशमे नगर बहुत है तुम कोनसा नगरमे रहते है ?

सा—में पाडलीपुर नगरमें निवास करता हुं

वि०—पाडलीपुरमें तो पाडा (मोहला) बहुत है तुम०

सा०—में देवदत्त ब्राह्मणके पाडामें रहता हु।

वि०—वहां तो घर बहुत है तुम कहां रहते हो।

सा०—में मेरे घरमें रहता हुं—यहांतक नैगम नय है।

संग्रहनयवाला बोलाके घरतों बहुत बडा है एसे कहो कि मे मेरे संस्താराके अन्दर रहता हुं। व्यवहारनय वाला बोलाकि संस्तारा बहुत बडा है एसे कहो कि में मेरे शरीरमें रहता हु रूजुसूत्रवाला बोलाकी शरीरमें हाड, मांस, रोद्र, चरबी बहुत है एसा कहो कि मे मेरे परिणाम वृतिमें रहता हु। शब्दनयवाला बोलाकी परिणाम प्रणमन है उनोमें सूक्ष्मबादर जीवोंके शरीर आदि अवग्गहा है वास्ते एसा कहो कि मैं मेरे गुणोमे रहता हु। संभिरूढनयवाला बोला कि में मेरा ज्ञानदर्शनके अन्दर रहताहु। एवंभूतनयवाला बोला की मे मेरे अध्यात्म सत्तामें रमणता करता हु।

इसी माफीक पायलीका दृष्टान्त जेसे कोइ सुत्रधार हाथमें कुलहाडा ले पायलीके लिये जंगलमें काष्ट लेनेकों जा रहाथा इतनेमें विशेष नैगमनय वाला बोलाकि भाइ साहिब आप कहां जाते हो जब सामान्य नैगमनयवाला बोला कि में पायली लेनेकों जाताहु. काष्ट काटते समय पुच्छने पर भी कहा कि में पायली काटता हु। घरपर काष्ट लेके आया उस समय पुच्छनेपर भी कहा कि में पायली लाया हुं यह नेगमनयका वचन है संग्रहनय सामग्री तैयार करनेसे सत्तारुप पायली मानी। व्यवहारनय

पायली तैयार करनेपर पायली मानी। ऋजुसूत्रनय परिणाम ग्राही होनेसे धान्य भरने पर पायली माने। शब्दनय पायली के उपयोग अर्थात् धान्य भर के उनकि गणीती लगानेसे पायली मानी। संभिरूढनय पायली के उपयोगकों पायली मानी। एवं भूतनय-सर्व दुनिया उने मजूर करने पर पायली मानी इति।

प्रदेशका दृष्टान्त—नैगमनयवाला कहता है कि प्रदेश छे प्रकारके है यथा—धर्मास्तिकायका प्रदेश, अधर्मास्तिकायका प्रदेश, आकाशास्तिकायका प्रदेश, जीवास्तिकायका प्रदेश, पुद्गलास्तिकायके स्कन्धका प्रदेश, तस्स देशका प्रदेश, इस नैगमनय वालासे संग्रहनयवाला बोलाकि एसा मत कहो क्यों कि जो देशका प्रदेश कहा है वहां तों देश स्कन्धका ही है वास्ते प्रदेश भी स्कन्धका हुवा तुमारा कहेने पर दृष्टान्त जेसे कीसी साहुकारका दासने अपने मालक के लिये एक खर मूल्य खरीद कीया तब साहुकारने कहा कि यह दाश भी मेरा और खर भी मेरा है इस न्यायसे दाश और खर दोनों साहुकारका ही हुवा इसी माफीक स्कन्धका प्रदेश और देशका प्रदेश दोनों पुद्गल द्रव्यका ही हुवा इस वास्ते कहो कि पांच प्रकारके प्रदेश है यथा-धर्मास्तिकायका प्रदेश० अधर्म० प्रदेश-आकाश० प्रदेश, जीवप्रदेश, स्कन्ध प्रदेश. इन संग्रहनयवाले ने पांच प्रदेशमाना इस पर व्यवहारनयवाला बोला कि पांच प्रदेश मत कहो? क्यों कि पांच गोटीले पुरुषोंके पास द्रव्य है वह चान्दी सुवर्ण धन धान्य तों एसा एक गोटीले के अन्दर पांचों धनका समावेश हो शकेगं इसी वास्ते कहो के पांच प्रकारके प्रदेश है यथा धर्मास्तिकायका प्रदेश यावत् स्कन्ध प्रदेश इस माफीक व्यवहारनयवाला बोलने पर ऋजुसूत्रनयवाला बोला कि एसा मत कहो कि पांच प्रकार

के प्रदेश है कारण एसा कहनेसे यह शंका होगी कि यह पांचों प्रदेश धर्मास्तिकायका होगा। यावत् पांचों प्रदेश स्कन्धके होंगे एसे २५ प्रदेशोंकी संभावना होगी. इस वास्ते एसा कहो कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश यावत् स्यात् स्कन्धका प्रदेश है। इस पर शब्दनयवाला बोला कि एसा मत कहो कारण एसा कहनेसे यह शंका होगी कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश है यह स्यात् अधर्मास्तिकायका प्रदेश भी हो सकेगें इसी माफोक पांचों प्रदेशोंके आपसमें अनवस्थित भावना हो जायगी इस वास्ते एसा कहो कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश सो धर्मास्तिकायका प्रदेश है एवं यावत् स्यात् स्कन्ध प्रदेश सो स्कन्धका ही प्रदेश है। इसी माफीक शब्दनयवाला के कहनेपर संभिरूढनयवाला बोला कि एसा मत कहो यहांपर दो समास है तत्पुरुष और कर्मधारय जोतत्पुरुषसे कहो तो अलग अलग कहो और कर्मधारसे कहो तो विशेष कहो कारण जहां धर्मास्तिकायका एक प्रदेश है वहां जीव पुद्गलके अनंत प्रदेश है वह सब अपनि अपनि क्रिया करते है एक दुसरे के साथ मीलते नही है इस पर एवं भूतवाला बोला कि तुम एसे मत कहो कारण तुम जो जो धर्मास्तिकायादि पदार्थ कहते हो वह देश प्रदेश स्वरूप है हो नही. देश है वह भी कीसीका प्रदेश है वह भी कीसीके एक समय में स्कन्ध देश प्रदेशकी व्याख्या हो ही नही सकती है परन्तु भाव अभेद है अगर एक समय धर्मद्रव्य कि व्याख्या करोगे तो और देश प्रदेशादि शब्द निरर्थक हो जायगें तो एसा करते ही क्यों हो एक ही अभेद भाव रखो इति।

जीवपर सात नय—नैगमनय, जीव शब्दकों ही जीव माने. संग्रहनय सत्तामें असंख्यात प्रदेशी आत्माकों जीव मानें इसनें अजीवात्माकों जीव नही माना, व्यवहारनय तस थावर के भेद

कर जीव माने, ऋजुसूत्रनय परिणामग्राही होनेसे सुख दुःख वेदते हुवे जीवोंकों जीव माने इसने असंज्ञीकों नही माने. शब्द-नय क्षायक गुणवालेको जीव माना, संभिरूढनयवाला केवलज्ञानकों जीव माना, एवंभूतनय सिद्धोंकों जीव माना।

सामायिक पर सात नय. नैगमनयवाला, सामायिक के परिणाम करनेवालोंकों सामायिक माने. संग्रहनयवाला सामायिकके उपकरण चरवलो, मुखवस्त्रीकादि ग्रहन करनेसे सामायिक माने. व्यवहारनयवाला सामायिक दंडक उचारण करनेसे सामायिक माने. ऋजुसूत्रनयवाला ४८ मिनीट समता परिणाम रहनेसे सामायिक माने. शब्दनय अन्तानुबन्धी चोक और मिथ्यात्वादि मोहनिका क्षय होनेसे सामायिक माने. संभिरूढ नयवाला रागद्वेषका मूलसे नाश होनेपर वीतरागकों सामायिक माने. एवंभूतनय संसारसे पार होना (सिद्धावस्था) कों सामायिक माने.

धर्म उपर सात नय. नैगमनय धर्मशब्दकों धर्म माने. इसने सर्व धर्मवालोंको धर्म माना. संग्रहनय कुलाचारकों धर्म माना. इसने अधर्मकों धर्म नही मानते हुवे नीतिकों धर्म माना. व्यवहारनयवाला पुन्यकि करणीकों धर्म माना. ऋजुसूत्रनयवाला अनित्यभावनाको धर्म माना इसमें सम्यग्दष्टि मिथ्यादष्टि दोनोंको ग्रहन कीया. शब्दनयवाला क्षायिकभावकों धर्म माने. संभिरूढ केवलीयोंको धर्म माने. एवंभूतनय संपुरण धर्म प्रगट होने पर सिद्धोंको ही धर्म माने।

बाण पर सात नय. कीसी मनुष्यके बाण लगा सब नैगमनयवाला बाणका दोष समझा. संग्रहनयवाला सत्ताकों ग्रहन कर बाण फेंकनेवालाका दोष समझा. व्यवहारनयवाला गृहगोचरका

दोष समझा. ऋजुसूत्रनयवाला अपने कर्मोंका दोष समझा. शब्द नयवाला कर्मोंके कर्ता अपने जीवका दोष समझा. संभिरूढनय-वालाने भवितव्यता याने ज्ञानीयोंने अनंतकाल पहले यह ही भाव देख रखाथा. एवंभूत कहता है कि जीवकों तों सुख दुःख है ही नही. जीवतों आनन्दघन है।

राजा उपर सात नय. नैगमनयवाला कोसीके हाथो पगोमें राजचिन्ह रेखा तील मसादि चिह्न देखके राजा माने. संग्रहनय वाला राजकुलमें उत्पन्न हुवा बुद्धि, विवेक, शौर्यतादि देख राजा माने. व्यवहारनयवाला युवराज पदवालेकों राजा माने. ऋजुसूत्रनयवाले राजकार्यमें प्रवृत्तनेसें राजा माने. शब्दनयवाला सिंहासनपर आरूढ होनेपर राजा माने. संभिरूढनयवाला राज अवस्थाकी पर्याय प्रवृत्तनरूप कार्य करते हुवेको राजा माने. एवंभूतनय उपयोग सहित राज भोगवतों दुनियों सर्व मंजुर करे, राजाकी आज्ञा पालन करे, उन समय राजा माने. इसी माफीक सर्व पदार्थोंपर सात सात नय लगा लेना इति नयद्वार।

(२) नक्षेपाधिकार.

एक वस्तुमें जेसे नय अनंत है इसी माफीक निक्षेपा भी अनंत है कहा है कि–" ज जत्थ जाणेजा, निक्खेवा निक्खेवण टवे: ज जत्थ न जाणेज, चत्तारी निक्खेवण टवे." भावार्थ—जहां पदार्थके व्याख्यानमें जीतने निक्षेप लगा सके उतने हो निक्षेपमें उन पदार्थका व्याख्यान करना चाहिये कारण वस्तुमें अनंत धर्म है वह निक्षेपों द्वारा ही प्रगट हो सके। परन्तु स्वल्प बुद्धिवाले वक्ता अगर ज्यादा निक्षेप नहीं कर सके: तथापि च्यार निक्षेपों के साथ उन वस्तुका विवरण अवश्य करना चाहिये। (प्रश्न) जब नयसे ही वस्तुका ज्ञान हो सक्ते है तो फीर निक्षेपकि क्या

जरूरत है ? निक्षपाद्वारे वस्तुका स्वरूपको जानना यह सामान्य पक्ष है और नयद्वारा जानना यह विशेष पक्ष है। कारण नय है सो भी निक्षेपाकि अपेक्षा रखते है, नयकि अपेक्षा निक्षेपा स्थुल है और निक्षेपाकि अपेक्षा नय सूक्षम है अन्यापेक्षा निक्षेपे हे सो प्रत्यक्ष ज्ञान है और नय हे सो परोक्ष ज्ञान है इस वास्ते वस्तु-तत्त्व ग्रहन करनेके अन्दर निक्षेप ज्ञानकि परमावश्यक्ता है. नि-क्षेपोंके मूल भेद च्यार है यथा—नाम निक्षेप, स्थापनानिक्षेप, द्रव्यनिक्षेप और भावनिक्षेप।

(१) नामनिक्षेपा—जेसे जीव अजीव वस्तुका अमुक नाम रख दीया फीर उसी नामसे बोलानेपर उन वस्तुका ज्ञान हो उन नाम निक्षेपाका तीन भेद है. (१) यथार्थ नाम, (२) अयथार्थ नाम, (३) और अर्थशुन्य नाम जिस्मे।

यथार्थनाम—जेसे जीवका नाम जीव, आत्मा, हंस, परमा-त्मा, सचिदानंद, आनन्दघन, सदानन्द, पुर्णानन्द, निजानन्द, ज्ञानानन्द, ब्रह्म, शाश्वत, सिद्ध, अक्षय, अमूर्त्ति इत्यादि.

अयथार्थनाम—जीवका नाम हेमो, पेमो, मूलो, मोती, मा-णक, लाल, चन्द्र, सूर्य, शार्दुलसिंह, पृथ्वीपति, नागचन्द्र इत्यादि.

अर्थशुन्यनाम—जेसे हांसी, खांसी, छींक, उभासी, मृदंग, ताल, मलार आदि ४९ जातिके वाजित्र यह सर्व अर्थशुन्य नाम है इनमे अर्थ कुच्छ भी नहीं निकलते है। इति नामनिक्षेप.

(२) स्थापना निक्षेपका—जीव अजीव कीसी प्रकारके पदार्थकि स्थापना करना उसे स्थापना निक्षेपा कहते है. जिस्के दो भेद है (१) सद्भाव स्थापना (२) असद्भाव स्थापना जिस्मे सद्भाव स्थापनाके अनेक भेद है जेसे अरिहन्तोंका नाम

और अरिहन्तोंकि स्थापना (मूर्त्ति) सिद्धोंका नाम और सिद्धोंकि स्थापना एवं आचार्योपाध्याय साधु, ज्ञान, दर्शन, चारित्र इत्यादि जेसा गुण पदार्थमें है वैसे गुणयुक्त स्थापना करना उसे सत्यभाव स्थापना कहते है और असत्यभाव स्थापना जेसे गोल पत्थर रखके भेरूकि स्थापना तथा पांच सात पत्थर रख शीतलामाताकि स्थापना करनी इसमें भेरू और शीतलाका आकार तो नही है परन्तु नामके साथ कल्पना देवकी कर स्थापना करी है.

इस वास्ते ही सुज्ञ जन स्थापना देवकी आशातना टालते है जिस रीतीसे आशातना का पाप लगता है इसी माफीक भक्ति करनेका फल भी होते है उस स्थापनाका दश भेद है (सूत्र अनुयोगद्वार ।

(१) कट्ठकम्मेवा -काष्टकि स्थापनाजेसेआचार्यादिकि प्रतिमा.

(२) पोत्थ कम्मेवा-पुस्तक आदि रखके स्थापना करना.

(३) चित्त कम्मेवा-चित्रादिकरके स्थापना करना.

(४) लेप्प कम्मेवा-लेप याने मट्टी आदिके लेपसे ॥

(५) वेढीम्मेवा-पुष्पोंके वींटसे वींटको मीलाके स्था० ॥

(६) गुंथीम्मेवा-चीढो प्रमुक को ग्रथीय करना ॥

(७) पुरिम्मेवा-सुवर्ण चान्दी पीतलादि बरतनका काम.

(८) संघाइम्मेवा-बहुत वस्तु एकत्र कर स्थापना.

(९) अखेइवा-चन्द्राकार समुद्रके अक्षकि स्थापना.

(१०) वराडइवा-संख कोडी आदि की स्थापना.

एवं दश प्रकार की सद्भाव स्थापना और दशप्रकारकी असद्भाव स्थापना एवं २० एकेक प्रकार की स्थापना एवं वीस

अनेक प्रकार कि स्थापना सर्व मील स्थापना के ४० भेद होते है. इनके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे भी स्थापना होती है.

प्रश्न—नाम और स्थापना में क्या भेद विशेष है ?

उत्तर—नाम यावत्काल याने चीरकाल तक रहता है और स्थापना स्वल्पकाल रहती है अथवा नाम निक्षेपाकि निष्पत् स्थापना निक्षेपा—विशेष ज्ञानका कारण है जेसे—

लोक का नाम लेना और लोक कि स्थापना (नकशा) देखना अरिहंतोंका नाम लेना और अरिहन्तोंकि मूर्त्ति कों देखना. जम्बुद्विपका नाम लेना और नकशा देखना. संस्थान दिशा भांगा इत्यादि अनेक पथार्थ है कि जिनोंका नाम लेने कि निष्पत स्थापना (नकशा) देखनेसे विशेष ज्ञान हो सक्ते है इति स्थापना निक्षेप ।

(३) द्रव्य निक्षेपा–भाव शुन्य वस्तु को द्रव्य कहते है जीस वस्तुमें भूतकाल मे भावगुण था तथा भविष्य में भावगुण प्रगट होनेवाला है उसे द्रव्य कहा जाता है जैसे भुतकालमें तीर्थंकर नाम कर्म उपार्जन किया है वहांसे लगाके जहांतक केवल ज्ञान उत्पन्न न हुवे ३४ अतिशय पैंतीस वाणि गुण अष्ट महा प्रतिहार प्राप्त न हुवे वहां तक द्रव्य तीर्थंकर कहा जाता है तथा तीर्थंकर मोक्ष पधारगये के बाद उनोंका नाम लेना वह सिद्धों का भाव निक्षेपा है परन्तु अरिहन्तोंका द्रव्य निक्षेपा है यह भूत भविष्य कालके अरिहन्त वन्दनीय पूजनीय है उन द्रव्य निक्षेपाके दो भेद है (१) आगमसे (२) नोआगमसे जिस्मे आगमसे द्रव्य निक्षेपा जो आगमों का अर्थ उपयोग शुन्यतासे करे जिसपर आवश्यक का दृष्टान्त. यथा कोइ मनुष्य आवश्यक सूत्र का अध्ययन किया है. जैसे—

पदं सिक्खितं—पद पदार्थ अच्छी तरफसे पढा हो.

ठितं—वाचनादि स्वाध्यायमें स्थिर कीया हुवा हो.

जितं—पढा हुवा ज्ञानको भूलना नही. सारणा वारणा धारणासे अस्खलित.

मितं—पद अक्षर वरावर याद रखना

परिजितं—क्रमोत्क्रम याद रखना.

नामसमं—पढा हुवा ज्ञान कों स्व नामवत् याद रखना.

घोस सम—उदात्त अनुदात्त स्वर व्यञ्जन संयुक्त.

अहीण अक्खरं—अक्षर पद हीनता रहीत हो.

अणाचअक्खरं—अक्षर पद अधिक भी न बोले.

अव्वाद्ध अक्खर—उलट पुलट अक्षर रहित.

अक्खलियं—अखिलत पणसे बोलना.

अमिलिय अक्खरं—विरामादि संयुक्त बोलना.

अवचामेलियं—पुनरूक्ती आदि दोषरहित बोलना.

पडि पुन्नं—अष्टस्थानोच्चारणसंयुक्त.

कंठोट्ठविपमुक्क—बालक की माफीक अस्पष्टता न बोले।

गुरुवायणोवगयं—गुरु मुखसे वाचना ली हो उस माफीक

सेणं तत्थ वायणाए—सूत्रार्थ की वाचना करना.

पुच्छणाए—शंका होनेपर प्रश्न का पुच्छना

परिअट्ठणाए—पढा हुवा ज्ञानकि आवृत्ति करना.

धम्मकहाए—उच्चस्वर से धर्मकथाका कहना.

इतनि शुद्धताके साथ आवश्यक करनेवाला होनेपर भी "नोअणुपेहाए" जीस लिखने पढने वाचने के अन्दर जीवोंका अनुप्रेक्षा (उपयोग) नही है उन सबको द्रव्य निक्षेपा में माना

गया है अर्थात् जो काम कर रहा है उन काम कों नही जानता है तथा उनके मतलब कों नही जानता है वह सब द्रव्यकार्य है इति आगमसे द्रव्य निक्षेपा.

नोआगमसे द्रव्य निक्षेपा के तीन भेद है (१) जाणगशरीर (२) भविय शरीर (३) जाणग शरीर, भविय शरीर वितिरक्त॥ जिस्में जाणगशरीर जेसे कोइ श्रावक कालधर्म प्राप्त हुवा उनका शरीर का चन्ह चक्र देख कीसीने कहा कि यह श्रावक आवश्यक जानता था-करता था-जेसे कीसी घृत के घडा को देख कहाकि यह घृतका घडा था तथा मधुका घडा था। दूसरा भाविय शरीर जेसे कीसी श्रावक के वहां पुत्र जन्मा उनका शरीरादि चिन्ह देख कीसी सुज्ञने कहा कि यह बच्चा आवश्यक पढेगें-करेगे जेसे घट देख कहाकी यह घट घृतका होगा यह घट मधुका होगा। तीसरा जाणग शरीर भविय शरीरसे वितिरक्तके तीन भेद है लौकीक द्रव्यावश्यक, लोकोत्तर द्रव्यावश्यक, कुप्रवचन द्रव्य आवश्यक। लौकीक द्रव्यावश्यक जो लोक प्रतिदिन आवश्य करने योग्य क्रिया करते है जेसे राज राजेश्वर युगराजा तलवर मांडवी कोटुम्बी सेठ सेनापति सार्थवाह इत्यादि प्रातः उठ स्नान मज्जन कर केशर चन्दन के तीलक लगा के राजसभामें जावे इत्यादि अवश्य करने योग्य कार्य करे उसे लौकीक द्रव्यावश्यक कहते है और लोकोत्तर द्रव्यावश्यक जेसे.

जे इमे समणगुणमुक्क जोगी-लोकमें गुणरहीत साधु.
छकाय निरणुकम्पा-छेकाया के जीवोंकी अनुकम्प रहित.
हयाइयउदंमा—भिगर त्यागमये अश्वकी माफीक.
गयाइय निरंकुसा— निरंकुश हस्तिकि माफीक.
घट्टा— शरीर वस्त्रादिकों वारवार धोये धोवावें।

मठा—शरीरको तेलादिकसे मालिसपीटी करे.

तुपुठा—नागरवेली के पानोंसे होठें कों लाल बना रखे.

पंट्टर पट्ट पाउरणा—उज्वल सुपेद वस्त्री चोलपट्टा पहने।

जिणाणमणाणाए—जिनाज्ञाके भंगकों करनेवाले।

सच्छंद विहारीउणं—अपने छंदे माफीक चलनेवाला।

उभओकालं आवस्सयस्स उचंदंति " अण उवओगदव्वं " दोनोंवख्त आवश्यक करने पर भी " उपयोग " न होनेसे द्रव्य आवश्यक कहते है इति.

कुप्रवचन द्रव्यावश्यक जेसे चक्कचीरीया चर्मखंडा दंडधारी फलाहारी तापसादि प्रातः समय स्नान भज्जन कर देव सभामें इन्द्रभुवनमें अर्थात् अपने अपने माने हुवे देवस्थानमें जाके उपयोग शून्य क्रिया करे उसे कुप्रवचन द्रव्यावश्यक कहते है। इति द्रव्यनिक्षेपा।

(४) भावनिक्षेपा—जीस वस्तुका प्रतिपादन कर रहे हो उनी वस्तुमें अपना संपुरण गुण प्रगट हो गया हो उसे भाव निक्षेप कहते है जेसे अरिहन्तोका भाव निक्षेपा केवलज्ञान दर्शन संयुक्त समवसरणमे विराजमानकों भाव निक्षेप कहते है उन भावनिक्षेप के दो भेद है (१) आगमसे (२) नो आगमसे। जिस्मे आगमसे आगमोंका अर्थ उपयोग संयुक्त " उवओगो भावो " दूसरा नो आगम भावावश्यक के तीन भेद है (१) लौकीक भावावश्यक (२) लोकोत्तर भावावश्यक (३) कुप्रवचन भावावश्यक।

लौकीक भावावश्यक जेसे राज राजेश्वर युगराजा तलवर माडम्बी कौटुम्बी सेट सेनापति आदि प्रातः समय स्नान मज्जन तीलक छापा कर अपने अपने माने हुये देवोंको भाव सहित

नमस्कार कर शुभे महाभारत, दोपहरको रामायण सुने उसे लौकीक भावाश्यक कहते है

लोकोत्तर भावावश्यक जेसे साधु साध्वि श्रावक श्राविकाओ तद्दमन्ने तद्दचित्ते तद्दलेश्या तद्दअध्यवसाय उपयोग सयुक्त आवश्यक दोनोंवक्त प्रतिक्रमणादि नित्य कर्म करे उसे लोकोत्तर भावावश्यक कहते है।

कुप्रवचन भावावश्यक जेसे चकचीरीयां चर्मखडा दंडधारा फलाहारा तपसादि प्रातः समय स्नान मज्जन कर गोपीचन्दन के तीलक कर अपने माने हुवे नाग यक्ष भूतादि के देवालय में भावसहित ॐकार शब्दादिसे देव स्तुति कर भोजन करे उसे कुप्रवचन भावावश्यक कहते है इति भावनिक्षेप।

कीसी प्रकारके पदार्थ का स्वरूप जानना हो उनोंको पहले च्यारों निक्षेपाओका ज्ञान हांसल करना चाहिये। जेसे अरिहन्तोंके च्यार निक्षेप–नाम अरिहन्त सो नाम निक्षेपा–स्थापन अरिहन्त–अरिहन्तोंकि मूर्त्ति–द्रव्यारिहंत तीर्थंकर नाम गोत्र बन्धा उन समयसे केवलज्ञान न हो वहां तक—भाव अरिहन्त समवसरणमें विराजमान हो। इसी माफीक जीवपर च्यार निक्षेपा–नाम जीव सो नाम निक्षेपा, स्थापना जीव–जीवकि मूर्त्ति याने नरककी स्थापना एव तीर्यच–मनुष्य–देव तथा सिद्धोंके जीव हो तो सिद्धोंकि मूर्त्ति–तथा सिद्ध एसा अक्षर लिखना, द्रव्य जीव–जीवपणाका उपयोग शुन्य तथा सिद्धोंका जीव हो तो जहां-तक चौदवां गुण स्थान वृत्ति जीव हो वह द्रव्य सिद्ध है। भाव जीव जीवपणाका ज्ञान हो उसे भाव जीव कहते है

इसी माफीक अजीव पदार्थोंपर भी च्यार च्यार निक्षेप लगालेना जेसे नाम धर्मास्तिकाय सो नाम निक्षेपा है धर्मास्ति-

कायका संस्थानकि स्थापना करना तथा धर्मास्तिकाय एसा अक्षर लिखना सो स्थापना निक्षेपा है जहां धर्मास्तिकाय हमारे काममें नहीं आति हो वह द्रव्य धर्मास्तिकाय द्रव्य निक्षेपहै जहां हमारे चलन में सहायता करती हो उसे भावनिक्षेप भाव धर्मास्तिकाय है इसी माफीक जीतने जीवाजीव पदार्थ है उन सब पर च्यार च्यार निक्षेपा उत्तरादेना इति निक्षेप द्वार।

(३) द्रव्य-गुण-पर्यायद्वारद्रव्य-धर्मास्तिकाय द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य, जीवद्रव्य पौद्गल द्रव्य-कालद्रव्य इन छे द्रव्यकागुण अलग अलग है जेसे चलत गुण स्थिर गुण अवगाहन गुणउपयोग गुणमीलन पूरणगुण, वर्तनगुण, यह षट् द्रव्यके गुण है इन षट्द्रव्यके अन्दर जो अगुरु लघु पर्याय है वह समय समयमें उत्पात व्यय हुवा करती है दृष्टान्त जेसे द्रव्य एक लड्डु है उनका गुण मधुरता और पर्याय मधुरता मे न्युनाधिक होना. जेसे द्रव्य जीव गुण ज्ञानादि-पर्याय अगुरु लघु तथा पर्यायके दो भेद है (१) कर्म भावी, (२) आत्म भावी-जिस्मे कर्म भावी जो नरकादि च्यार गति केजीव अष्टकर्म पाश में भ्रमन करते सुख दुःखकी पर्यायका अनुभव करे और आत्मभावी जो ज्ञानदर्शन चारित्रकों जेसा जेसा साधन कारन मीलता रहे वेसी वेसी पर्याय कि वृद्धि होती रहै।

(४) द्रव्य क्षेत्र काल भाव द्वार-द्रव्य जीवा जीव द्रव्य-क्षेत्र आकाश प्रदेश, काल समयावलिका यावत काल-चक्र-भाव वर्ण गन्ध रस स्पर्श-जेसे मेरु पर्वत द्रव्यसे मेरु है क्षेत्रसे लक्ष योजनका क्षेत्र अवगाहा रखा है. कालसे आदि अंत रहित है भावसे अनंतवर्ण पर्यव एवं गन्ध रस स्पर्श पर्यव अनंत है दुसरा दृष्टान्त द्रव्यसे एक जीव क्षेत्रसे असंख्यात प्रदेशी कालसे आदि

अन्त रहात भावसे ज्ञानदर्शन चारित्र संयुक्त इत्यादि सब पदार्थोंपर द्रव्यक्षेत्र काल भाव लगा लेना. इन च्यारोंमे सर्व स्तोक काल है उनसे क्षेत्र असंख्यात गुणा है कारण एक सूचीके निचे जितने आकाश आये है उनको एकेक समय में एकेक आकाशप्रदेश निकाले तो असंख्यात सर्पिणी उत्सर्पिणी व्यतित हो जावे. उनसे द्रव्य अनंत गुणे है कारण एकेक आकाश प्रदेशपर अनंते अनन्ते द्रव्य है उनोंसे भाव अनंत गुणे है कारण एकेक द्रव्यमें पर्याय अनंत गुणी है। जेसे कोइ मनुष्य अपने घरमे मन्दिरजी आया जिस्मे सर्व स्तोक काल स्पर्श कीया है उनोंसे क्षेत्र स्पर्श असंख्यात गुणे कीया उनोंसे द्रव्यस्पर्श अनंत गुणे कीया उनोंसे भाव स्पर्श अनंतगुण कीया। भावना उपर लिखी माफीक समझना।

(५) द्रव्य-भाव—द्रव्य है सो भावको प्रगट करने में सहायता भूत है. द्रव्य जीव अमर सास्वता है भावसे जीव असास्वता है. द्रव्यसे लोक सास्वता है भावसे लोक असास्वता है द्रव्यसे नारकी सास्वती. भावसे असास्वती. अर्थात् द्रव्य है सो मूल वस्तु है वह सदैव सास्वती है भाव वस्तुकि पर्याय है वह असास्वती है जेसे कोसी भ्रमर ने एक काष्टको कोरा उसमें स्वभावसे (क) का आकार बन गया वह (क) भ्रमरके लिये द्रव्य (क) है और उनी (क) को कोसी पंडित देख उन (क) कि पर्याय को पेन्छान के कहा कि यह (क) है भ्रमर के लिये वह द्रव्य (क) है और उन पंडित के लिये भाव (क) है।

(६) कारण कार्य—कारण है सो कार्य को प्रगट करनेवाला है बिगर कारण कार्य बन नहीं सकता है। जेसे कुंभकार घट बनाना चाहे तो दंड चक्रादि की सहायता अवश्य होना चाहिये जेसे किसी साहुकार को रत्नद्विप जाना है रहस्तामे समुद्र आ गया

जब नौका कि आवश्यक्ता रहती है रत्नद्विप जाना यह कार्य है। और रत्नद्विपमें पहुंचने के लिये नौका में बेठना वह नौका कारण है। कीसी जीव कों मोक्ष जाना है उनोंके लिये दान शील तप भाव पूजा प्रभावना स्वामि वात्सल्य संयम ध्यान ज्ञान मौन इत्यादि सब कारण है इन कारणोसे कार्यकी सिद्धि हो मोक्षमें जा सक्ते है। कारण कार्य के च्यार भांगा होते है।

(क) कार्य शुद्ध कारण अशुद्ध-जेसे सुबुद्धि प्रधान-दुर्गन्ध पाणी खाइसे लाके उनोंको विशुद्ध बना जयशत्रु राजाकों प्रतिबन्ध किया उन कारणमे यद्यपि अनते जीवोंकि हिंसा हुइ परन्तु कार्य विशुद्ध था कि प्रधानका इरादा राजाकोंप्रतिबोध देनेका था.

(ख) कार्य अशुद्ध है और कारण शुद्ध जेसे जमाली अनगार ने कष्ट क्रिया तपादि बहुत ही उच्च कोटी का किया था परन्तु अपना कदाग्रह कों सत्य बनाने का कार्य अशुद्ध था आखिर निन्हवों की पंक्ति में दाखल हुवा।

(ग) कारण शुद्ध ओर कार्यभी शुद्ध जेसे गुरु गौतम स्वामि आदि मुनिवर्ग तथा आनन्दादि श्रावकवर्ग इन महानुभावों के कारण तप संयम पूजा प्रभावना आदि कारण भी शुद्ध और वीतराग देवोंकी आज्ञा आराधन रूपकार्य भी शुद्ध था.

(घ) कारण अशुद्ध ओर कार्य भी अशुद्ध जेसे जीनों क्रियादि प्रवृति भी अशुद्ध है कारण यज्ञ होम ऋतु दाना भव वृद्धक क्रिया भी अशुद्ध और इस लोक पर लोक के सु कि अभिलाषा रूप कार्य भी अशुद्ध है

इस वास्ते शास्त्र कारोंने कारण कों मौख्यमाना है।

(७) निश्चय व्यवहार—व्यवहार है सो निश्चय कों करनेवाला है जिनशासनमें व्यवहारकों बलवान माना है

पहला व्यवहार होगा तों फीर निश्चय भी कभी आ जावें गे। जेसे निश्चयमें जीव अमर है व्यवहार में जीव मरे जन्मे, निश्चयमें कर्मोंका कर्ता कर्म है व्यवहारमें कर्मोंका कर्ता जीव है, निश्चयमें जीव अव्याबाध गुणोंका भोक्ता है व्यवहार में जीव सुखदुःख का भोक्ता है निश्चयमे पाणी चवे. व्यवहार में घर चवे. निश्चयमें आप जावे. व्य० ग्राम आवे. नि० बेल चाले. व्य० गाडी चाले. नि० पाणी पडे. व्य० पनालपडे इत्यादि अनेक दृष्टान्तोंसे निश्चय व्यवहारकों समजना चाहिये. निश्चयकि श्रद्धना ओर व्यवहार कि प्रवृति रखना शास्त्रकारों कि आज्ञा है।

(८) उपादान निमत्त-निमत्त है सो उपादान का साधक बाधक है जेसे शुद्ध निमत्त मीलनेसे उपादानका साधक है अशुद्ध निमत्त मीलना उपादानका बाधक है। जेसे उपादांन माताके निमत्त पिताको पुत्रकि प्राप्ती हुइ-उपादांन गौकों निमत्त गोपालको दुध की प्राप्ती हुइ। उपादांन दुध निमत्त खटाइ दहीकी प्राप्ती हुइ। उपादांन दहीका निमत्त भीलोने का घृतकि प्राप्ती हुइ. उपादान गुरुका निमत्त सुशील शिष्य को ज्ञानकि प्राप्ती हुइ. उपादांन भव्य जीवकों निमत्त ज्ञानदर्शन चारित्र तप ध्यान मौन पुजा प्रभावनादिका जीनसे मोक्षकी प्राप्ती हुइ

(९) प्रमाण च्यार—प्रत्यक्ष प्रमाण, आगम प्रमाण, अनुमान प्रमाण ओपमा प्रमाण जिस्मे प्रत्यक्ष प्रमाण के दो भेद ह (१) इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण (२) नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण के पांच भेद है श्रोत्रेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, चक्षु इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, घ्राणेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, रसेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण. स्पर्शेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, । नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण के दो भेद (१) देशसे २ सर्वसे। जिस्मे देशसेका दो भेद अवधिज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण, मनःपर्यव ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण. सर्वसेका एक भेद

केवलज्ञान नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण। अर्थात् जिस्के जरिये वस्तुको प्रत्यक्ष जानी जावे उसे प्रत्यक्ष प्रमाण कहा जाते है।

(क) आगम प्रमाण—जो पदार्थका ज्ञान आगमोंद्वारा होते है उसे आगम प्रमाण कहते हैं उन आगम प्रमाण के बारहा भेद है आचारांगसूत्र, सूयगडायांगसूत्र, स्थानायांगसूत्र समवायांगसूत्र भगवतीसूत्र ज्ञातासूत्र उपासकदशांगसूत्र, अंतगढदशांगसूत्र अनुत्तरोववाइदशांगसूत्र प्रश्नव्याकरणसूत्र विपाकसूत्र दृष्टिवादसूत्र- अर्थ तीर्थकरोंने फरमाया है सूत्र गणधरोंने गुंथा है इस वास्ते अर्थ तीर्थकरों के फरमाये हुवे है वह सूत्र गणधरों के अत्तागम हैं और सूत्रोंका अर्थ गणधरोंके अनंतरागम है और उनोंके शिष्योंके अर्थ परम्परागम है इति आगम प्रमाण

(ख) अनुमान प्रमाण—जों वस्तु अनुमानसे जानी जावे उसे अनुमान प्रमाण कहते है उन अनुमान प्रमाणके तीन भेद है (१) पुव्वं (२) सासव (३) दिट्ठि सामन्नं। जिस्मे पुव्वं के च्यार भेद है जेसे कीसी माताका पुत्र वच्चपनसे प्रदेश गया वह युवक अवस्थामें पीच्छा घरपर आया, उन लडके को वह माता, पूर्व के चिन्होंसे पेच्छाने जेसे शरीर के तीलसे, मम्से, शिरसे नाकसे आंखसे तथा कीसी प्रकारके चन्हसे माता जानेकि यह मेरा पुत्र है इसी प्रकार वेहनका भाइ, स्त्रिका भरतार, मित्रका मित्र इनोंको अनुमान चन्हसे पेच्छाना जाय, यह पूर्व प्रमाण है दुसारा सासव अनुमान प्रमाण के पांच भेद है कज्जेणं, कारणेणं, गुणेण, आसवेणं, अवयवेणं। जिस्मे कज्जेणंका च्यार भेद है. गुलगुलाट कर हस्ति जाने. हणहणाट कर अश्व जाने, झणझणाट कर रथ जाने, वलवलाट कर मनुष्य समुह जाने अर्थात् इन अनुमानसे उक्त वातों जाण सके।

(क) कारणेण के पांच भेद है यथा घटका कारण मट्टि है

किन्तु मट्टिका कारण घट नही है। पट्टका कारण तंतु है किन्तु तंतुका कारण पट्ट नही है। रोटीका कारण आटा है किन्तु आटाका कारण रोटी नही है। सूवर्णका कारण कसोटी है किन्तु कसोटीका कारण सुवर्ण नही है। मोक्षका कारण ज्ञान दर्शन चारित्र है किन्तु ज्ञान दर्शन चारित्रका कारण मोक्ष नही है।

(ग) गुणेणके छे भेद है जेसे पुष्पोमें सुगन्धका गुण, सुवर्णमें कोमलताका गुण, दुधमें पौष्टिक गुण, मधुमें स्वादका गुण, कपडामे स्पर्शका गुण, चैतन्यमें ज्ञान गुण. परमेश्वरमें पर उपकारका गुण। इत्यादि।

(ग) आसरणका छे भेद है. धुवेकों देख जाने कि यहां अग्नि होगा. विद्युत् बादलोंकों देख जाने कि वर्षात होगें, बुंद देखके जाने कि यहां पाणी होगे। अच्छी प्रवृत्ति देख जाने कि यह कोइ उत्तम कुलका मनुष्य है। साधुकों देख जाने यह अच्छा शील सत्यवान होगें। प्रतिमा देख जाने यह परमेश्वरका स्वरूप है।

(घ) आवयवेणंके अढारा भेद है। यथा—दान्ताशूल से हस्ति जाने, श्रृंगकर भेंसा जाने, शिखासे कुर्कट जाने, तिक्षण दाढोंसे सुवर जाने. चित्रित वर्णवाली पांखो से मयूर जाने, स्कन्धकर अश्व जाने, नखकर व्याघ्र जाने, केशकर चमरी गौ जाने. लम्बी पुच्छ कर बंदर जाने. दो पांवसे मनुष्य जाने, च्यार पांवोंसे पशु जाने, बहु पावोंसे कानखीजरा जाने, केशरों करके शार्दूलसिंह जाने. चुडीयों से औरत जाने, हथियार से सुभट जाने. एक काव्यसे कवि जाने, एक शीतकर सांधा हुवा अनाजकों जाने। एक व्याख्यान से पंडित जाने. दृष्टका परिणाम करभव्य जीव जाने. शासनरुचि स्वीसे सम्यग्दृष्टि जाने प्रतिबिंब देख परमेश्वर जाने इत्यादि–इतिसामयं अनुमान प्रमाणके पांच भेद हुवे।

(३) दिठ्ठिसामन्नके अनेक भेद—जेसे सामान्य से विशेष जाने, विशेष से सामान्य जाने, एक शिकाका रूपैयाको देख बहुत से रूपैयोंको जाने, एक देशके मनुष्यकों देख बहुत से मनुष्योंकों जाने इत्यादि। यह भी अनुमान प्रमाण है।

और भी अनुमान प्रमाण से तीन कालकि वातोंको जाने. जेसे कोइ प्रज्ञावन्त मुनि विहार करते किसी देशमें जाते समय बागबगीचे शुके हुवे देखे, धरती कादे कीचड रहीत देखी, लाटों खलोमें धानके समूह कम देखा, इसपर मुनिने अनुमान कीयाकि यहांपर भूतकालमें दुर्भिक्ष था एसा संभव होते है। नगरमें जाने पर वहां बहुत से लोगोंके उंचे उंचे मकान देख मुनि गौचरी गये परन्तु पर्याप्ता आहार न मीलनेसे मुनिने जाना कि यहां वर्तमान में दुर्भिक्ष वर्त रहा संभव होते है. मुनि विहारके दरम्यान पर्वत, पहाड भयंकर देखा, दिशा भयोत्पन्न करनेवाली देखी, आकाश में बादले विजली अमोघे उदगमच्छे धनुष्य वान न देखने से अनुमान कीया कि यहां भविष्यमें दुष्काल पडनेके चिन्ह दीखाइ देते है। इसी माफीक अच्छे चिन्ह देखनेसे अनुमान करते है कि यहांपर भूत, भविष्य और वर्तमान कालमें सुभिक्षका अनुमान होते है यह सब अनुमान प्रमाण है।

(४) ओपमा प्रमाणके च्यार भेद है यथा—

(क) यथार्थ वस्तुकि यथार्थ ओपमा—जेसे पद्मनाभ तीर्थंकर केसा होगा कि भगवान वीर प्रभु जेसा।

(ख) यथार्थ वस्तु और अनयथार्थ ओपमा जेसे नारकी, देवतोंका पल्योपम सागरोपमका आयुष्य यथार्थ है किन्तु उनोंके लिये एक योजन प्रमाण कुवाके अन्दर बाल भरना इत्यादि ओ-

पमा अनयथार्थ है कारण एसा कीसीने कीया नही है यह तो केवलीयोंने अपने ज्ञानसे देखा है. जिसका प्रमाण बतलाया है।

(ग) अनयथार्थ वस्तु और यथार्थ ओपमा—जेसे

दोहा—पत्र पडां तो इम कहै । सुन तरवर वनराय
अबके विछडियों कब मीले, दूर पडेंगे जाय ॥ १ ॥
तब तरूवर इम बोल्यों, सुन पत्र मुझ वात
हम घर यह ही रीत है, एक आवत एक जात ॥२॥
नही तरू पत्र बोलीया, नही भाषा नही विचार
वीर व्याख्यानी ओपमा, अनुयोग द्वार मझार ॥३॥

याने तरूवर और पत्रके कहनेका तात्पर्य यथार्थ है यह ओपमा यथार्थ परन्तु वस्तुगते वस्तु यथार्थ नही है.

(घ) अनयथार्थ वस्तु अनयथार्थ ओपमा अश्वके शृंग गर्दभ जेसे है और गर्दभके शृंग अश्व जेसे है न तों अश्वके शृंग है न गर्दभके शृंग है केवल ओपमा ही है इति प्रमाणद्वार।

(१०) सामान्य विशेषद्वार—सामान्य से विशेष बलवान है। जेसे सामान्य द्रव्य एक विशेष द्रव्य दो प्रकारके है (१) जीवद्रव्य (२) अजीवद्रव्य. सामान्य जीवद्रव्य एक, विशेष जीवद्रव्य दो प्रकारके (१) सिद्धोंके जीव (२) संसारी जीव. सामान्य सिद्धोंके जीव विशेष सिद्धोंके जीव दो प्रकारके (१) अणंतर सिद्ध (२) परम्पर सिद्ध इत्यादि. सामान्य ससारी जीव एक प्रकार विशेष संयोगी अयोगी एवं क्षीण मोह, उपशान्त मोह. सकषाय-अकषाय-प्रमत्त-अप्रमत्त--संयति--असंयति--असंयति नारकी तीर्यच मनुष्य देवता इत्यादि। जो अजीवद्रव्य है सो सामान्य एक है विशेष दो प्रकारके है रूपी अजीव द्रव्य, अरूपी अजीव द्रव्य, सामान्य रूपी अजीव विशेष स्कन्ध देश प्रदेश

परमाणु पुद्गल, सामान्य अरूपी अजीवद्रव्य. विशेष धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, कालद्रव्य इत्यादि सामान्य तीर्थंकर विशेष च्यार निक्षेपे नाम तीर्थंकर. स्थापना तीर्थंकर, द्रव्य तीर्थंकर, भाव तीर्थंकर सामान्य नाम तीर्थंकर विशेष बीस प्रकार से तीर्थंकर नाम कर्म बन्धता है, अरिहन्तोंकि भक्ति करनेसे शावत् समकितका उद्योत करनेसे (देखो भाग १ लेमें बीस बोल) सामान्य अरिहन्तोंकि भक्ति. विशेष स्तुति गुणकीर्तन पूजा नाटक इत्यादि सामान्यसे विशेष विस्तारवाला है.

(११) गुण और गुणी–पदार्थमें खास वस्तु है उसे गुण कहा जाते है और जो गुणको धारण करनेवाले है उसे गुणी कहा जाता है. यथा—गुणी जीव और गुणज्ञानादि, गुणी अजीव गुणवर्णादि । गुणी अज्ञान संयुक्त जीव गुणमिथ्यात्व, गुणीपुष्प, गुणसुगन्ध, गुणीसुवर्ण, गुणपीलास–कोमलता, गुणी और गुण भिन्न नहीं है अर्थात् अभेद है ।

(१२) ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी—ज्ञेय जो जगतके घटपटादि पदार्थ है उसे ज्ञेय कहते है, उनोंका जानपणा वह ज्ञान और जाननेवाला वह ज्ञानी है. ज्ञानी पुरुषोंके लिये जगतके सर्व पदार्थ वैराग्यका ही कारण है कारण इष्ट अनिष्ट पदार्थ सब ज्ञेय–जाननेलायक है सम्यक्ज्ञान उनोका नाम है कि इष्ट अनिष्ट पदार्थोंको सम्यक्प्रकारसे यथार्थ जानना. इसी माफीक ध्येय, ध्यान ध्यानी–जो जगतके सर्व पदार्थ है वह ध्येय है, जिस्का ध्यान करना वह ध्यान है और ध्यानके करनेवाला वह ध्यानी है ।

(१३) उपन्नेवा, विगन्नेवा, धूवेवा—उत्पन्न होना, विनाश होना, ध्रुवपणे रहना. यह जगतके सर्व जीवाजीव पदार्थमें एक समयके अन्दर उत्पात व्यय ध्रुव होते है जेसे सिद्ध भगवानने

जो पहले समय भाव देखा था वह उत्पात है. उनी समय जिस पर्यायका नाश हो दुसरी पर्यायपणे उत्पन्न हुवा वह व्यय ही उनी समय है और सिद्धोंका ज्ञान है वह ध्रूव है. जेसे किसीको वाजुवन्ध तोडाके चुडी करानी है तो चुडीका उत्पात वाजुका नाश और सुवर्णका ध्रूवपणा है। जेसे धर्मास्तिकायमें जो पहले समय पर्याय थी वह नाश हुइ, उनी समय नये पर्याय उत्पन्न हुवा और चलनादि गुण प्रदेशमें है वह ध्रूवपणे रहे इसी माफीक सर्व द्रव्यके अन्दर समझ लेना।

(१४) अध्येय और आधार—अध्येय जगतके घटपटादि पदार्थ आधार पृथ्वी अध्येय जीव और पुद्गल आधार आकाश, अध्येय ज्ञानदर्शन आधार जीव इत्यादि सर्व पदार्थमें समझना।

(१५) आविर्भाव-तिरोभाव—तिरोभाव जो पदार्थ दूर है. आविर्भाव आकर्षित कर नजीक लाना जेसे घृतकी सत्ता घासके तृणोंमें होती है यह तिरोभाव है और गायके स्तनोंमें दुध है वह आविर्भाव है। गायके स्तनोंमे घृत दूर है और दुधमें नजदीक है, दुधमें घृत दूर है और दहींमें नजदीक है. दहींमें घृत दूर है और मक्खनमें नजदीक है. इसी माफीक सयोगीको मोक्ष दूर है अयोगीको मोक्ष नजदीक है, वीतरागको मोक्ष नजदीक है, छद्मस्थको दूर है, क्षपकश्रेणिको मोक्ष नजदीक है, उपशमश्रेणिको मोक्ष दूर है. इसी माफीक सकषाइ. अकषाइ, प्रमत्त, अप्रमत्त, सयति-असंयति, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि यावत् भव्य-अभव्य।

(१६) गोणता-मौख्यता—जो पदार्थके अन्दर गुप्तपणे रहा हुवा रहस्यको गोणता कहते हैं. जिस समय जिस वस्तुके व्याख्यानकी आवश्यक्ता है, शेष विषयको छोड उन्ही आवश्यक्तावाली वस्तुका व्याख्यान करना उसे मौख्यता कहते हैं. जेसे

ज्ञानसे मोक्ष होता है तो ज्ञानकी मौख्यता है और दर्शन चारित्र तप वीर्य क्रियादिकी गौणता है. पुरुषार्थसे कार्यकी सिद्धि होती है. इस्में काल स्वभाव नियत पूर्वकर्मकी गौणता है और पुरुषार्थकी मौख्यता है आचारांगादि सूत्रमें मुनिआचारकी मौख्यता बतलाइ है, शेष साधन कारणोंको गौणता रखा है. भगवति सूत्रादिमें ज्ञानकी मौख्यता बतलाइ गइ है, शेष आचारादि गौणतामें रखा है। जीस समय जीस पदार्थको मौख्यपणे बतलानेकी आवश्यक्ता हो उसे मौख्यपणे ही बतलाना जेसे कोयलका रंग मौख्यतामें श्यामवर्ण है. शेष च्यार वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श गौणतामें है. इसी माफीक बाह्य दीसती वस्तुका व्याख्यान करे वह मौख्य है और उनोंके अन्दर अन्य धर्म रहा हुवा है वह गौण है।

(१७) उत्सर्गोपवाद—उत्सर्ग है सो उत्कृष्ट मार्ग है और अपवाद है सो उत्सर्गमार्गका रक्षक है. उत्सर्गमार्गसे पतित होता है, उन समय अपवादका अवलम्बन कर उत्सर्गमार्गको अपने स्थानमे स्थिरीभूत कर सकते है. इसी वास्ते महान् रथको चलानेमें उत्सर्गोपवाद दोनों धोरी माने गये है। जेसे उत्सर्गमें तीन गुप्ति है उनोंके रक्षणमें पांच समिति अपवादमें है, सर्वथा अहिंसा मार्गमें भी नदी उतरना, नौकामें बेठना, नौकल्पी विहार करना यह उत्सर्गमें भी अपवाद है, स्थिवरकल्प अपवाद है. जिनकल्प उत्सर्ग है. आचारांग दशवैकालिक प्रश्नव्याकरणादि सूत्रोंमें मुनिमार्ग है सो उत्सर्ग है और छेद सूत्रोंमें मुनि मार्ग है वह अपवाद है "करेमिभंते सामायिक सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि" यह उत्सर्ग पाठ है "जयंचरे जयंचिट्ठे" यह अपवाद पाट है "समय गोयमा मं पमाए" यह उत्सर्ग है सन्तारा पौरसीके पाठ अपवाद

है. परिसह अध्ययनमें रोग आनेपर औषधि न करना उत्सर्ग है. भगवतीसूत्रमें तथा छेदसूत्रोंमें निर्वद्य औषधि करना अपवाद है. इत्यादि इसी माफीक षट्द्रव्यमें भी उत्सर्गोपवाद समझना।

(१८) आत्मा तीन प्रकारकी है. बाह्यात्मा, अभितरात्मा, परमात्मा जिस्में जो आत्मा धन, धान्य, सुवर्ण, रुपा, रत्नादि द्रव्यकों अपना मान रखा है पुत्रकलत्र, मातापिता, बन्धव-मित्रकों अपना मान रखा है इष्ट संयोगमें हर्ष अनिष्ट संयोगमें शोक पुद्गल जो परवस्तु है उसे अपनि मान रखी है जो कुच्छ तत्त्व समजते है तो उनी बाह्यसंयोगको ही समजते है वह बाह्यात्मा उसे ज्ञानीयों भवाभिनन्दी मिथ्यादृष्टि भी कहते है। दुसरी अभितरात्मा जीस जवोने स्वसत्ता परसत्ताका ज्ञानकर परसत्ताका त्याग और स्वसत्तामे रमणता कर बाह्य संयोगकों पर वस्तु समज त्यागबुद्धि रखे अर्थात् चोथा सम्यग्दृष्टी गुणस्थानसे लगाके तेरवे गुणस्थान तक के जीव अभितरात्माके जानना. परमात्म—जीनोंके सर्व कार्य सिद्ध हो चुके सर्व कर्मोसे मुक्त हो लोकके उग्रभागमें अनंत अव्याबाध सुखोंमे विराजमान है उसे परमात्मा कहते है तथा आत्मा तीन प्रकारके है स्वात्मा परात्मा परमात्मा जिस्मे स्वात्माको दमन कर निज सत्ताकों प्रगट करना चाहिये, परात्माका रक्षण करना. और परमात्माका भजन करना. यह ही जैनधर्मका सार है।

(१७) ध्यान च्यार-पदस्थध्यान अरिहन्तादि पांच पदोंके गुणोंका ध्यान करना पिंडस्थध्यान—शरीररूपी पिंडके अन्दर स्थित रहा हुवा अनंत गुण संयुक्त चैतन्यका ध्यान करना अर्थात् अध्यात्मसत्ता जो चैतन्य के अन्दर रही हुइ है उन सत्ताके अन्दर रमणता करना। रुपस्थ ध्यान यद्यपि चैतन्य अरुपी है तद्यपि कर्म

संग रहनेसे अनेक प्रकारके नये नये रूप धारण करने पर भी चैतन्य तो अरूपी है परन्तु छदमस्थोंके ध्यानके लिये कीसीने कीसी आकारकि आवश्यक्ता है जेसे अरिहंत अरूपी है तदपि उनोंकि मूर्ति स्थापन कर उन शान्त मुद्राका ध्यान करना। रूपातित ध्यान जों निरंजन निराकार निष्कलंक अमूर्त्ति अरूपी अमल अकल अगम्य अवेदी अखेदी अयोगि अलेशी इत्यादि सच्चिदानन्द बुद्धानन्द सदानन्द अनन्त ज्ञानमय अनंत दर्शनमय जो सिद्ध भगवान है उनोंके स्वरूपका ध्यान करना उसे-रूपातित ध्यान कहते है।

(२०) अनुयोग च्यार-द्रव्यानुयोग-जिस्मे जीवाजीव चेतन्य जड कर्म लेश्या परिणाम अध्यवसाय कर्मवन्धके हेतु कारण सिद्धि सिद्धअवस्था इत्यादि स्वरूपकों समजाये गये हो उसे द्रव्यानुयोग कहा जाता है जिस्में क्षेत्र पर्वत् पाहड नदी द्रह देवलोक नारकी चन्द्र सूर्य ग्रह इत्यादि गीणत विषय हो उसे गीनतानुयोग कहते है। जिस्मे साधु श्रावकके क्रिया कल्प कायदा आचार व्यवहार विनय भाषा व्यावचादिक व्याख्यान हो उसे चरण करणानुयोग कहते है जिस्के अन्दर राजा महाराजा शेठ सेनापतियोंके शुभ चारित्र हो जिस्मे धर्म देशना वैराग्यमय उपदेश हो संसारकी असारता बतलाइ हो उसे धर्मकथानुयोग कहते है इति।

(२१) जागरणा तीन प्रकारकी है। बुद्ध जागरणा तीर्थकरोंकी केवलीयोंकी अबुद्ध जागरण-छदमस्थमुनियोंकी सुदुःख जागरण श्रावकोंकी।

(२२) व्याख्या—उपचारनयसे एक वस्तुमें एक गुणकों मौख्यकर व्याख्यान करना जिस्का नौ भेद है।

(१) द्रव्यमें द्रव्यका उपचार जेसे काष्टमें वंशलोचन

(२) द्रव्यमें पर्यायका उपचार यह जीव ज्ञानवन्त है.

(३) द्रव्यमे पर्यायका उपचार यह जीव सरूपवान है.

(४) गुणमे द्रव्यका उपचार–अज्ञानी जीव हैं.

(५) गुणमें गुणका उपचार–ज्ञानी होनेपरभी क्षमाबहुतहै.

(६) गुणमें पर्यायका उपचार–यह तपस्वी बडे रूपवन्त है

(७) पर्यायमें द्रव्यका उपचार–यह प्राणी देवतोका जीव है

(८) पर्यायमे गुणका उपचार–यह मनुष्य बहुत ज्ञानी है.

(९) पर्यायमें पर्यायका उपचार–मनुष्य-श्यामवर्णका है.

(२३) अष्टपक्ष–एक वस्तुमे अपेक्षा ग्रहनकर अनेक प्रकारकि व्याख्या हो सक्ती है, जैसे नित्य, अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्, वक्तव्य, अवक्तव्य. यह अष्टपक्ष एक जीवपर निश्चय और व्यवहारकि अपेक्षा उतारे जाते है यथा—

व्यवहारनयकि अपेक्षा जीस गतिमे उदासि भावमें वर्तता हुवा नित्य है और समय समय आयुष्य क्षीण होनेकि अपेक्षा अनित्य भी है। निश्चयनयकि अपेक्षा ज्ञान दर्शन चारित्रापेक्षा नित्य है और अगुरु लघु पर्याय समय समय उत्पात व्यय होनेकि अपेक्षा अनित्य भी है।

व्यवहार नयमें जीस गतिमे जीव उदासिभावमें वर्तता हुवा एक है और दुसरे माता पिता पुत्र स्त्रि बन्धवादिकि अपेक्षा आप अनेक भी है। निश्चयनयापेक्षा सर्व जीवोका चैतन्यता गुण एक होनेसे आप एक है और आत्माके असंख्यात प्रदेश तथा एकेक प्रदेशमें गुण पर्याय अनंता अनंत होनेसे अनेक भी है।

व्यवहार नयकि अपेक्षा जीव जीस गतिमें वर्त रहा है उन गतिमें स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावापेक्षा सत् है और पर-द्रव्य परक्षेत्र परकाल परभावापेक्षा असत् है। निश्चयनयापेक्षा जीव अपने ज्ञानादि गुण अपेक्षा सत् है और पर गुण अपेक्षा असत् है।

व्यवहारनयापेक्षा मिथ्यात्व गुणस्थानसे चौदवां अयोगी केवली गुणस्थान तक कि व्याख्या केवली भगवान् करे वह वक्तव्य है और जो व्याख्या केवली कह नहीं सके वह अवक्तव्य है। निश्चयनयापेक्षा सिद्धोंके अनंतगुणोंसे जितने गुणोकि व्या-ख्या केवली करे वह वक्तव्य हैं और जितने गुणोंकि व्याख्या केवलीभी न कर सके वह सब अवक्तव्य है। जीवकि आदि और सिद्धोंका अन्त सबके लिये अवक्तव्य है।

(२४) सप्तभंगी–स्यात् अस्ति, स्यात् नास्ति, स्यात् आस्ति नास्ति, स्यात् अवक्तव्य, स्यात् अस्ति अवक्तव्य स्यात् नास्ति अवक्तव्य, स्यात् अस्तिनास्ति युगपात अवक्तव्य यह सप्तभंगी हर कीसी पदार्थ पर उतारी जाती है स्याद्वाद रहस्य अपेक्षामें ही रहा हुवा है एक वस्तुमें अनेक अपेक्षा है। यहांपर सिद्ध भगवान पर वह सप्तभंगो उतारी जात्ती है यथा–सिद्धोंमे स्यात् आस्ति. स्यात् याने अपेक्षासे सिद्धोंमें स्वगुणोंको आस्ति है- स्यात्ना-स्ति अपेक्षासे सिद्धोंमे परगुणोंकि नास्ति है स्यात् अस्ति नास्ति याने सिद्धोंमें स्वगुणोंकि आस्ति है और परगुणोंकि नास्ति भी है स्यात् अवक्तव्य–आस्तिनास्ति एक समय है किन्तु समयका काल स्वल्प होनेसे व्यक्तव्यता हो नही सके इस वास्ते अवक्तव्य है स्यात् अस्ति अवक्तव्र. जीन समय आस्ति है किन्तु वह अवक्तव्य है। स्यात् नास्ति अवक्तव्य. परगुणकी नास्ति है वह भी एक समय के लिये अवक्तव्य है स्यात आस्ति नास्ति युगपत

समय है अर्थात् आस्ति नास्ति एक समयमें है परन्तु है अवक्तव्य। कारण वचनके योगसे वक्तव्यता करनेमें असंख्यात समय लगते है वास्ते एक समय अस्तिनास्ति का व्याख्यान हो नही सक्ते है। इसी माफीक जीवादि सर्व पदार्थों पर सप्तभंगी लग सक्ती है। यह बात खास ध्यानमें रखना चाहिये कि जहां स्वगुणकी अस्ति होगें वहां परगुणकि नास्ति अवश्य है। इति

(२९) निगोदस्वरूपद्वार–निगोद दो प्रकार की है (१) सूक्ष्म निगोद (२) बादर निगोद. जिस्में बादर निगोद जेसे कन्दमूल कान्दा मूला आलु रतालु पींडालु आदो अडवी सूवर्ण कन्द वज्रकन्द सकरकन्द निलण फूलण लसणादि इनोमे अनन्त जीवोंका पंड है और जो सूक्षम निगोद है सो दो प्रकारकि है (१) व्यवहाररासी (२) अव्यवहाररासी जिस्मे अव्यवहाररासी है यह तो अभीतक बादर पाणेका घर देखाही नहीं है उन जीवों की शास्त्रकारोंने कीसी प्रकारकी गणतीमें व्याख्या करीभी नहीं है जो अठाणु बोलादि अल्पाबहुत्व है उनमें जो जीवोंकि अल्प बहुत्व बतलाइ है वह सब व्यवहाररासी की अपेक्षा है उन व्य- वहार रासीसे जीतने जीव मोक्ष जाते है व उतने ही जीव अ- व्यवहाररासीसे निकल व्यवहाररासी में आजाते है वास्ते व्य- वहाररासीमें जीव कम नही होते है। व्यवहाररासी कि जो सू- क्षम निगोद है उनोंका स्वरूप इस माफीक है।

सूक्षम निगोद के गोले संपूर्ण लोकाकाशमें भरा हुवा है एकभी आकाश प्रदेश एसा नही है कि जीसपर सूक्षम निगोदके गोले न हो. संपूर्ण लोकका एक घन बनानेमे सात राज का घन होता है उनोंसे एकसूची अंगुलक्षेत्र के अन्दर असंख्यात श्रेणि है एकेक श्रेणिमे असंख्या २ परतर है। एकेक परतर में अ-

संख्यात २ गोले है। एकेक गोले में असख्यात २ शरीर है। एकेक शरीर में अनंतेअनंते जीव है एकेक जीवों के असंख्यात २ आत्म प्रदेश है. एकेक आत्म प्रदेशपर अनत अनंत कर्म वर्गणावों है एकेक कर्म वर्गणा में अनन्ते अनंते परमाणु है एकेक परमाणु में अनंती अनंती पर्याय है एकेक परमाणु में अनंतगुण हानि वृद्धि होती है यथा-अनंतभाग हानि असख्यातभाग हानि संख्यातभाग हानि. संख्यात गुण हानि असंख्यातगुण हानि अनंतगुण हानि। वृद्धि-अनंतभाग वृद्धि असख्यातभाग वृद्धि संख्यातभाग वृद्धि संख्यातगुण वृद्धि असख्यातगुण वृद्धि अनतगुण वृद्धि । इसी माफीक षट्द्रव्य में भी समय समय षट्गुण हानि वृद्धि हुवा करती है। एक शरीर में निगोद के जीव अनते है वह एक साथमें साधारण शरीर बांन्धते है साथ ही में आहार लेते है साथ ही में श्वासोश्वास लेते है साथ ही में उत्पन्न होते है साथही में चवते है उन जीवोंको जन्ममरणकी कीतनी वेदना होती है जेसे कोइ अधा पगु वेहरा मुका जीव हो उनों के शरीर में महा भयकर सोलहा प्रकार के राजरोग हुवा है वह दुसरे मनुष्य से देखा नही जावे एसा दुःखसे अनंतगुण दुःखों तो प्रथम रत्नप्रभा नरक में है उनोंसे अनंतगुणा दुःख दुसरी नरक में एवं तीजी चोथी पांचमी छटी नरक में अनंतगुण दुःख है छटी नरक करतो भी सातवी नरकमें अनतगुणा दुःख है उन सातवी नरक के उत्कृष्ट ३३ सागरोपम का आयुष्य के जीतने समय (असंख्यात) हो उन एकेक समय सातवी नरकका उत्कृष्ट आयुष्य वाला भव करे उन असंख्यात भवोंका दुःख को एकत्र कर उनों का वर्ग करे उन दुःखसे सूक्ष्म निगोद में अनंतगुणा दुःख है कारण वह जीव एक महुर्त में उत्कृष्ट भव करे तो ६५५३६ भव करते है संसार में जन्म मरणसे अधिक दुसरा कोइ दुःख नही है.

हे भव्यजीवों यह अपना जीव अनंतीवार उन सूक्ष्म बादर निगोदमें तथा नरकमें दुःखों का अनुभव कर आया है इस समय मनुष्यादि अच्छी सामग्री मीली है वास्ते यह परम पवित्र पुरुषोंका फरमाया हुवा स्याद्वादनय निक्षेप द्रव्यगुण पर्यायादि अध्यातम ज्ञान का अभ्यास कर अपनि आत्मामें रमणता करों तांके फीर उन दुःखमय स्थानों कों देखने का अवसर ही न मीले। सज्जनों! आधूनिक लोगों को आलस्य प्रमाद बहुत बढजानेसे वडे वडे ग्रन्थों कों अलमारी में रख छोडते है इस वास्ते यह संक्षिप्त मे सार लिख सूचना करते है कि इस संबन्ध को आप कंठस्थ कर फीर रमणता करे तांके आपकि आत्मा को वढी भारी शान्ति मिलेगी। इति।

सेवंभंते सेवंभंते—तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर. २२

(षट् द्रव्यके द्वार ३१)

नामद्वार, आदिद्वार, संस्थानद्वार, द्रव्यद्वार, क्षेत्रद्वार, कालद्वार, भावद्वार, सामान्यविशेषद्वार, निश्चयद्वार, नयद्वार. निक्षेपद्वार, गुणद्वार, पर्यायद्वार, साधारणद्वार, स्वामिद्वार. परिणामिकद्वार, जीवद्वार, मूर्तिद्वार, प्रदेशद्वार, एकद्वार, क्षेत्र द्वार, क्रियाद्वार, कर्त्ताद्वार, नित्यद्वार, कारणद्वार, गतिद्वार, प्रवेशद्वार, पृच्छाद्वार. स्पर्शनाद्वार, प्रदेशस्पर्शनाद्वार, अल्पाबहुत्वद्वार।

(१) नामद्वार—धर्मास्तिकायद्रव्य, अधर्मास्तिकायद्रव्य, आकाशास्तिकायद्रव्य, जीवास्तिकायद्रव्य, पुद्गलास्तिकायद्रव्य और कालद्रव्य.

(२) आदिद्वार—द्रव्यकी अपेक्षा षट्द्रव्य अनादि है. क्षेत्रकी अपेक्षा जो लोकव्यापक षट्द्रव्य है. वह सादि है, एक आकाश-नादि है कालकी अपेक्षा षट्द्रव्य अनादि है और भावापेक्षा षट्द्र-व्यमें अगुरु लघु पर्यायका समय समय उत्पात व्ययापेक्षा सादि सान्त है। यद्यपि यहां क्षेत्रापेक्षा कहते है कि इस जम्बुद्विपके म-ध्यभागमें मेरुपर्वत है उनोंके आठ रूचक प्रदेश है उनोंके संस्थान

आठ रूचक-प्रदेशकी स्थापना.

निचे च्यार प्रदेश उनोंके उपर विषम याने दो दो प्रदेशपर एकेक प्रदेश रहा हुवा है, उन रूचक प्रदेशोंसे धर्मास्तिकायकि दो प्रदेशोंसे आदि है और फीर दो दो प्रदेश वृद्धि होती हुइ लो-कान्त तक असंख्यात प्रदेशी चौतर्फ गइ है. एवं अधर्मास्ति-काय. एवं आकाशास्तिकाय परन्तु अलोकमें अनंतप्रदेशी भी र अधो उर्ध्व च्यार च्यार प्रदेशी है जीवका आदि अन्त नहीं है सर्व लोकव्यापक है. पुद्गलास्तिकाय सर्व लोकव्यापक है. कालद्रव्य प्रवर्तन रुप तो आढाइ द्विपमें ही है, कारण आढाइ द्विपके चन्द्र सूर्य चर है और जीवपुद्गलकी स्थिति पूर्णरूप संपुर्ण लोकमें है।
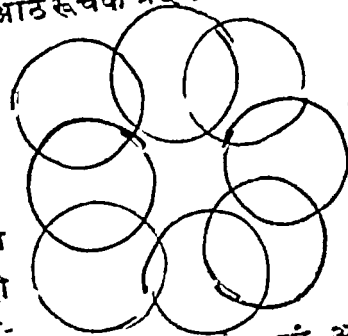
(३) संस्थानद्वार—धर्मास्तिकायका संस्थान गाडाका ओ-घणकी माफीक है कारण दो प्रदेश आगे च्यार, च्यार आगे छे,

छे आगे आठ, एवं दो दो प्रदेश वृद्धि होनेसे लोकान्त तक असंख्यात प्रदेशी हं. एवं अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकायका संस्थान लोकमें ग्रीवाके आभरण जेसा और अलोकमें गाडाके ओधनाकार है. जीव पुद्गलके अनेक प्रकारके संस्थान है कालका कोइ आकार नहीं है।

(४) द्रव्यद्वार—गुणपर्यायके भाजनकों द्रव्य कहते है जिस्मे समय समय उत्पाद व्यय होते रहे—कारण कार्य एकही समयमें हो जो एक समय कार्य में उत्पाद व्यय है उनी समय कारणका उत्पाद व्यय है मूलजों एक द्रव्य है उनोंका निश्चय दो खंड नही होता है कारण जीवद्रव्य तथा परमाणुद्रव्य इनोंका विभाग नही होते है। अगर द्रव्यके स्कन्ध देश प्रदेश कहा जाते है यह सब उपचरित नयसे कहा जाते है। द्रव्यके मूल सामान्य छे स्वभाव है।

(१) अस्तित्वं—नित्यानित्य परिणामिक स्वभाव।

(२) वस्तुत्वं—गुणपर्यायका आधारभूत स्वभाव।

(३) द्रव्यत्वं—षट्द्रव्य एकस्थानमें रहने परभी एकेक द्रव्य अपना अपना स्वभाव मुक्त नही होते है अर्थात् एक दुसरे स्वभावमें नही मीलते हुवे अपनि अपनि क्रिया करे।

(४) प्रमेयत्वं—स्वात्मा परात्माका ज्ञान होना यह स्वभाव जीवद्रव्यमें है। शेषद्रव्यमें स्वपर्याय स्वभावकों प्रमेयत्वं स्वभाव कहते है।

(५) सत्त्वं उत्पाद व्यय ध्रुव एकही समय होनेपर भी वस्तु अपने स्वभावका त्याग नही करती है।

(६) अगुरुलघुत्वं-समय समय षट्गुण हानिवृद्धि होने पर भी अपने अपने गुणोंमें प्रणमते हैं।

द्रव्यके उत्तर सामान्य स्वभाव।

(१) अस्तित्वस्वभाव-द्रव्य-द्रव्यका गुणपर्याय. क्षेत्र जिस क्षेत्रमे द्रव्य रहा हुवा है-काल द्रव्यमें उत्पात व्यय ध्रूव-भाव एक समय कारणकार्य स्वभाव। जेसे घटमें घटका अस्तित्व और पटमे पटका अस्तित्वं।

(२) नास्तिस्वभाव-एक द्रव्यकि अपेक्षा दुसरे द्रव्यमें वह द्रव्य क्षेत्र काल भाव नहिं है जेसे घटमें पटकि नास्ति पटमें घटकि नास्ति।

(३) नित्यस्वभाव-द्रव्यमें स्वगुणो प्रणमनेका स्वभाव नित्य है.

(४) अनित्यस्वभाव--द्रव्यमें परगुण प्रणमनेका स्वभाव अनित्य है।

(५) एक स्वभाव—द्रव्यमें द्रव्यत्व गुण एक है.

(६) अनेकस्वभाव—द्रव्यमें गुण पर्याय स्वभाव अनेक है

(७) भेदस्वभाव—आत्म परगुणापेक्षा भेद स्वभाववाला है जेसे चतन्य कर्मसंग परवस्तुकों अभेद मान रखी है तथपि चतन्य जडत्वमें भेद स्वभाववाले ह मोक्षगमन समय निजगुणोंसे जड भेद स्वभाववाले ह.

(७) अभेदस्वभाव—आत्माके ज्ञानादि गुण अभेद स्वभाववाले ह

(९) भव्यस्वभाव--आत्माके अन्दर समय समय गुणपर्याय कारण कार्यपणे प्रणमते रहेना इनकों भव्य स्वभाव कहेते हैं।

(१०) अभव्यस्वभाव-आत्माका मुल गुण कीसी हालतमे नही बदलता ह याने हरेक द्रव्य अपना मुल गुणकों नही पलटाते ह

उसे अभव्य स्वभाव कहते है। अर्थात् भव्य कि अनेक विवस्थावों होति है और अभव्य कि विवस्था नही पलटती है।

(११) वक्तव्य स्वभाव—एक द्रव्यमे अनंत वक्तव्यता है उसमें जीतनि वक्तव्यता कर सके उसे वक्तव्य स्वभाव कहते है।

(१२) अवक्तव्य स्वभाव—शेष रहे हुवे गुणोंकि वक्तव्यता न हो उसे अवक्तव्य स्वभाव कहते है।

(१३) परम स्वभाव—जो एक द्रव्यमे गुण है वह कोसी दुसरे द्रव्यमें न मीले उसे परम स्वभाव कहते है। जैसे धर्मद्रव्यमें चलनगुण

द्रव्यके विशेष स्वभाव अनंते है। षट्द्रव्यमें धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य यह एकेक द्रव्य है और जीवद्रव्य, पुद्गलद्रव्य अनते अनंते द्रव्य है कालद्रव्य वर्तमानापेक्षा एक समय है वह अनंते जीवपुद्गलोंकी स्थिति पुरण कर रहा है वास्ते उपचरितनयसे कालद्रव्यको भी अनंते कहते है और भूत भविष्यकालके समय अनंत है परन्तु उने यहांपर द्रव्य नही माना है।

(५) क्षेत्रद्वार—जीस क्षेत्रमें द्रव्य रहे के द्रव्य कि क्रिया करे उसे क्षेत्र कहते है धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य यह च्यार द्रव्य लोक व्यापक है। आकाशद्रव्य लोकालोक व्यापक है कालद्रव्य प्रवर्तन रूप आढाइ द्विप व्यापक है और उत्पाद व्यय रूप लोकालोक व्यापक है।

(६) कालद्वार—जीस समय में द्रव्य क्रिया करते है उसे काल कहते है धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य-द्रव्यापेक्षा आदि अन्त रहित है और गति गमनापेक्षा सादि सान्त है। पुद्गलद्रव्य द्रव्यापेक्षा आदि अन्त रहीत है द्विप्रदेशी तीन प्रदेशी यावत् अनत प्रदेशी अपेक्षा सादि सान्त है। कालद्रव्य-द्रव्यापेक्षा आदि अन्त रहीत है और वर्तमान समयापेक्षा सादि सान्त है।

(७) भावद्वार—धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, जीव-द्रव्य, कालद्रव्य. यह पांचद्रव्य अरूपी है वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है और पुद्‌गलद्रव्य रूपी-वर्ण गंध रस स्पर्श संयुक्त है तथा जीव शरीर संयुक्त होनेसे वह भी वर्णादि सयुक्त है परन्तु चैतन्य निजगुणापेक्षा अमूर्त्ति है।

(८) सामान्य विशेषद्वार—सामान्यसे विशेष बलवान है जेसे सामान्य द्रव्य एक-विशेष जीवद्रव्य, अजीवद्रव्य. सामान्य धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है विशेष धर्मद्रव्यका चलन गुण है सामान्य धर्मद्रव्यका चलन गुण है विशेष चलन गुण कि अनंत अगुरु लघु पर्याय है. इसी माफीक सर्व द्रव्य में समजना।

(९) निश्चय व्यवहारद्वार—निश्चय से षट्‌द्रव्य अपने अपने गुणों में प्रवृत्ति करते है और व्यवहार में धर्मद्रव्य जीवा-जीव द्रव्यकों गमनागमन समय चलन सहायता करे अधर्मद्रव्य स्थिर सहायता, आकाशद्रव्य स्थान सहायता करते है, जीव व्यवहारसे रागद्वेष में प्रवृति करते है, पुद्‌गल द्रव्य गलन मीलन सडन पडनादि में प्रवृते, काल-जीवाजीव कि स्थितिकों पुरण करे। तात्पर्य यह है कि व्यवहार में सहायक हो तों अपने गुणोंसे उसे सहायता करे अगर सहायक न हो तो भी द्रव्य अपने अपने गुणमें प्रवृति करते ही रहते है जेसे अलोक में आकाशद्रव्य है किन्तु वहां अवगाहान गुण लेने के लिये जीवाजीव सहायक नही होने पर भी अवगाहन गुण में षट्‌गुण हानिवृद्धि सदैव हुवा करती है इसी माफीक सब द्रव्यमें समजना।

(१०) नयद्वार—धर्मास्तिकाय-एमा तीन काल में नाम होने से नैगमनय धर्मास्तिकाय माने. धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश में चलनगुण सत्ताकों संग्रहनय धर्मास्ति माने. धर्मास्ति-काय के स्कन्ध देश प्रदेश रूपी विभागकों व्यवहारनय धर्मास्ति-

काय मानेः, जीवाजीवकों चलन सहायता देते हुवे कों ऋजुसूत्र नय धर्मास्तिकाय माने एवं अधर्मास्तिकाय, परन्तु ऋजुसूत्रनय स्थिर और आकाशास्तिकाय में ऋजुसूत्रनय अवगाहान. पुद्गलास्तिकाय मे ऋजुसूत्र–गलन मीलन–और कालमें ऋजुसूत्रनय वर्त्तमान गुणकों काल माने। जीवद्रव्य, नैगमनय नाम जीवकों जीव माने. संग्रहनय असंख्यात प्रदेशकों जीव माने-व्यवहार-नय त्रस स्थावर जीवोंकों जीव माने. ऋजुसूत्रनय सुख दुःख भोगवते हुवे जीवोंको जीव माने. शद्बनय वाला क्षायक सम्यक्त्व कों जीव माने संभिरूढनय वाला केवलज्ञानीकों जीव माने एवंभूतनयवाला सिद्धोंकों जीव माने।

(११) निक्षेपद्वार-धर्मास्तिकायका नाम है सो नाम निक्षेप है, धर्मास्तिकाय कि स्थापना (प्रदेशों) तथा धर्मास्तिकाय ऐसा अक्षर लिखना उसे स्थापना निक्षेप कहते है जहांपर धर्मास्तिकाय हमारे उपयोगमें अर्थात् सहायता न दे वह द्रव्य धर्मास्तिकाय और हमारे उपभोग में आवे उसे भाव धर्मास्तिकाय कहते है। एवं अधर्मास्तिकाय के भी च्यार निक्षेप परन्तु भावनिक्षेप स्थिरगुणमें वर्ते एवं आकाशास्तिकाय परन्तु भावनिक्षेप–अवग्गहान गुणमे वर्ते। जीवास्तिकाय उपयोग शून्यकों द्रव्यनिक्षेप और उपयोग संयुक्त कों भावनिक्षेप एवं पुद्‌गलास्तिकाय परन्तु गलन मीलन कों भाव निक्षेप कहते है एवं काल द्रव्य परन्तु भाव निक्षेपे जीवाजीव कि स्थितिकों पुरण करते हुवे कों भावनिक्षेप कहते है।

(१२) गुणद्वार—षट्द्रव्यों में प्रत्येक च्यार च्यार गुण है।
धर्मास्तिकाय—अरूपी अचैतन्य अक्रिय चलन।
अधर्मास्तिकाय ,, ,, ,, स्थिर।
आकाशास्तिकाय ,, ,, ,, अवगाहान।

जीवास्तिकाय	,, चैतन्य	अक्रिय	उपयोग।
,,	अनंत-ज्ञान दर्शन	चारित्र	वीर्य
पुद्गलास्ति—	रूपी अचैतन्य-सक्रिय		गलनपूरण
काल द्रव्य—	अरूपी अचतन्य	अक्रिय	वर्तन

(१३) पर्यायद्वार षट्द्रव्यों कि प्रत्येक च्यार च्यार पर्याय है।

धर्मद्रव्य	स्कन्ध	देश	प्रदेश	अगुरु लघु
अधर्मद्रव्य	,,	,,	,,	,,
आकाशद्रव्य	,,	,,	,,	,,
जीवद्रव्य	अव्यावाद	अनावगगहान	अमूर्त्त	अगुरुलघु
पुद्गलद्रव्य	वर्ण	गन्ध	रस स्पर्श	,,
कालद्रव्य	भूत	भविष्य	वर्तमान	,,

(१४) साधारणद्वार—जो धर्म एक द्रव्यमें है वह धर्म दुसराद्रव्यमें मीले उसे साधारण धर्म कहते है जैसे धर्म द्रव्यमे सगुरु लघु धर्म है वह अधर्म द्रव्यमें भी है एवं षट् द्रव्य में अगुरु लघु धर्म साधारण है और असाधारण गुण जो एक द्रव्य में गुण है वह दुसरे द्रव्य में न मीले। जैसे धर्मद्रव्य में चलन गुण है वह शेष पांचों द्रव्य में नही उसे असाधारण गुण कहते है। एवं अधर्म द्रव्य में स्थिर गुण. आकाश में अवगाहन गुण. जीवमे चैतन्य गुण पुद्गल में मीलन गुण काल मे वर्तन गुण यह सब असाधारण गुण है यह गुण दुसरे कीसी द्रव्य मे नही मीलते है। पांच द्रव्य अजीव परित्याग करने योग है एक जीव द्रव्य ग्रहन करने योग्य है। पांच द्रव्य अरूपी है एक पुद्गल द्रव्य रूपी है।

(१५) स्वधर्मीद्वार—षट्द्रव्यों में समय समय उत्पाद व्यय पणा है वह स्वधर्मी है कारण अगुरु लघु पर्यायमें समय समय षट्गुण हानि वृद्धि होती है वह छवों द्रव्योमें होती है।

(१६) परिणामिद्वार—निश्चय नयसे षट्द्रव्य अपने अपने गुणों मे सदैव परिणमते है वास्ते परिणामि स्वभाव वाले ह और व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल अन्याअन्य स्वभावपणे परिणमते है जेसे जीव, नरक तीर्यंच मनुष्य देवतापणे और पुद्गल द्वि प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी पणे परिणमते है।

(१७) जीवद्वार—षट् द्रव्य में पांच द्रव्य अजीव है और एक जीव द्रव्य है सो जीव है वह असंख्यात आत्म प्रदेश ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य गुण संयुक्त निश्चय नयसे कर्मोंका अकर्ता अभक्ता सिद्ध सामान्य है।

(१८) मूर्त्तिद्वार— षट् द्रव्य में पांच द्रव्य अमूर्त्ति याने अरूपी है एक पुद्गल द्रव्य मूर्त्तिमान है परन्तु जीव जो कर्म संगसे नये नये शरीर धारण करते हं उनापेक्षा जीव भी उपचरित नयसे मूर्त्तिमान है।

(१९) प्रदेश द्वार—षट् द्रव्य में पांच द्रव्य सप्रदेशी ह. एक काल द्रव्य अप्रदेशी है कारण-धर्म द्रव्य अधर्म द्रव्य असंख्यात प्रदेशी है. एक जीव के असंख्यात्त प्रदेश हं और अनंत जीवों के अनंत प्रदेश है. आकाश द्रव्य अनंत प्रदेशी है। पुद्गल द्रव्य निश्चय नयसे तो परमाणु है परन्तु अनंते परमाणु एकत्र होनेसे अनंत प्रदेशी है काल द्रव्य वर्तमान एक समय होनेसे अप्रदेशी है भूत भविष्य काल अनत हं।

(२०) एकद्वार—षट् द्रव्योंमे धर्म द्रव्य अधर्मद्रव्य आकाश द्रव्य यह प्रत्येक एकेक द्रव्य ह जीव. पुद्गल-और कालद्रव्य अनंते अनंते द्रव्य है।

(२१) क्षेत्रद्वार-एक आकाश द्रव्य क्षेत्र है और शेष पांच

द्रव्य क्षेत्र में रहनेवाले क्षेत्री है अर्थात् एक आकाश प्रदेशपर धर्मास्ति अधर्मास्ति जीव पुद्गल और काल द्रव्य अपनि अपनि क्रिया करते हुवे भी एक दुसरे के अन्दर नही मीलते है।

(२२)—कियाद्वार-निश्चय नयसे षट् द्रव्य अपनि अपनि क्रिया करते है परन्तु व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल क्रिया करते है शेष च्यार द्रव्य अक्रिय है।

(२३) नित्यद्वार—द्रव्यास्तिक नयसे षट् द्रव्य नित्य शास्वते है और पर्यायास्तिक नयसे (पर्यायापेक्षा) षट् द्रव्य अनित्य हैं व्यवहार नयसे जीव द्रव्य और पुद्गल द्रव्य अनित्य हे शेष च्यार द्रव्य नित्य है।

(२४) कारणद्वार--पांच द्रव्य है सो जीव द्रव्य के कारण हे परन्तु जीव द्रव्य पांचों द्रव्यों के कारण नहीं है। जेसे जीव द्रव्य कर्ता और धर्मास्तिकाय द्रव्य कारण मीलनेसे जीव के चलन कार्य कि प्राप्ती हुइ इस माफीक सब द्रव्य समझना.

(२५) कर्ताद्वार-निश्चय नयसे षट् द्रव्य अपने अपने स्व भाव कार्य के कर्ता है और व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल कर्ता है शेष च्यार द्रव्य अकर्ता है।

(२६) सर्व गतिद्वार—आकाश द्रव्य कि गति सर्व लोका लोक में है शेष पांच द्रव्य लोक व्यापक होनेसे लोक मे गति है।

(२७) अप्रवेश—एक आकाश प्रदेशपर धर्म द्रव्य चलन क्रिया करे. अधर्म द्रव्य स्थिर क्रिया करे आकाश द्रव्य अव गाहान, जीव उपयोग गुण पुद्गल गलन मीलन काल वर्तमान क्रिया करे परन्तु एक दुसरे कि गतिकों रक सके नहि एक दुसरे मे मील सके नहीं जेसे एक दुकान में पांच वेपारी बेठे हुवे अपनि

अपनि कार रवाइ करे परन्तु एक दुसरेकों न तों बादा करे न एक दुसरे से मीले । इसी माफिक षट् द्रव्य समझ लेना ।

(२८) पृच्छाद्वार—क्या धर्मास्तिकाय के एक प्रदेशकों धर्मास्तिकाय कहते है ? यहांपर एवंभूत नयसे उत्तर दिया जाता है कि एक प्रदेशकों धर्मास्तिकाय नहीं कहा जावे । एवं दो तीन च्यार पांच यावत् दश प्रदेश संख्याते प्रदेश असंख्याते प्रदेश सर्व धर्मास्तिकायसे एक प्रदेश कम होनेसे भी धर्मास्तिकाय नही कही जावे. तर्क—क्या कारण है ? उ—समाधान खंडे दंडको संपुरण दंड नही कहा जाते है एव खड छत्र. वस्त्र. चम्र चक्र इत्यादि जहां तक संपुरण वस्तु, न हो वहां तक एवंभूतनय उन वस्तुकों वस्तु नही माने इस वास्ते संपुरण लोक व्यापक असंख्यात प्रदेशी धर्मास्तिकाय कों धर्मास्तिकाय कहते हैं एवं अधर्मास्तिकाय एवं आकाशास्तिकाय परन्तु प्रदेश अनंत कहना एवं जीव पुद्गल और काल समझना ।

लोकका मध्य प्रदेश रत्नप्रभा नाम पहली नरक १८०००० योजनकी है उनोंके निचे २०००० योजनकी घणोदधि. असंख्यात योजनका घणवायु. असंख्यात योजनका तनवायु उनोंके निचे जो असंख्यात योजनका आकाश है उन आकाशके असंख्यातमें भागमें लोकका मध्य प्रदेश है इसी माफीक अधो लोकका मध्य प्रदेश चोथी पङ्कप्रभा नरकके आकाश कुच्छ अधिक आदा चले-जानेपर अधो लोकका मध्य प्रदेश आता है । उर्ध्व लोकका मध्य प्रदेक पांचवा देवलोकके तीजा रिष्टनामका परतरमें है । तीर्च्छा लोकका मध्य प्रदेश मेरूपर्वतके आठ रूचक प्रदेशोंमे है । इसी माफीक धर्मास्तिकायका मध्य प्रदेश अधर्मास्ति कायका मध्य प्रदेश, आकाशास्ति कायका मध्य प्रदेश समझना, जीवका मध्य प्रदेश आत्मा के आठ रूचक प्रदेशोंमे है, कालका मध्य प्रदेश वर्तमान समय है ।

(२९) स्पर्शना द्वार-धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकायकों स्पर्श नही करते है-कारण धर्मास्तिकाय एक ही है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायकों संपुरण स्पर्श करी है एवं लोकाकाशास्तिकाय कों एवं जीवास्तिकायकों एवं पुद्गलास्तिकायकों. कालको कहां पर स्पर्श कीया है कहांपर न भी कीया है; कारण काल आढाइ द्विपमें ही है। एवं अधर्मास्तिकाय. अधर्मास्तिकायका स्पर्श नही करे शेष धर्मास्तिवत् एवं लोकाकाशास्ति-कारण संपुरण आकाश लोकालोक व्यापक है। अलोकाकाश शेष पांच द्रव्योंकों स्पर्श नही करते है। एवं जीवास्तिकाय, जीवास्ति कायका स्पर्श नही कीया है, कारण जीवास्तिकायका प्रश्न होनेसे सब जीव समावेस होगये. शेष धर्मास्तिवत् एव पुद्गलास्ति काय पुद्गलास्ति कायका स्पर्श नही किया शेष धर्मास्तिवत एवं काल, कालको स्पर्श नही करे शेष पांच द्रव्योंकों आढाइ द्विपमे स्पर्श करे शेष क्षेत्रमे स्पर्श नही करे।

(३०) प्रदेश स्पर्शनाद्वार-धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकायके कीतने प्रदेश स्पर्श करे? जघन्य तीन प्रदेश-कारण अलोककि व्याघत आनेसे लोकके चरम प्रदेशपर तीन प्रदेशोंका स्पर्श करे. उत्कृष्ट छे प्रदेशोंका स्पर्श करे कारण च्यार दिशोंमे च्यार, अधो दिशमें एक, उर्ध्व दिशमें एक.। धर्मास्ति काय अधर्मास्तिकायके जघन्य च्यार प्रदेश स्पर्श करे उ० सात प्रदेश स्पर्श करे भावना पूर्ववत् यहां विशेष इतना है कि जहां धर्म प्रदेश है वहां अधर्म प्रदेश भी है वास्ते ४-७ प्रदेश कहा है। धर्मास्तिका एक प्रदेश, आकाशास्तिका ज० सात प्रदेश, और उत्कृष्ट भी सात प्रदेश स्पर्श करे कारण आकाशके लिये अलोक कि व्याघात नही है। धर्म० एक प्रदेश. जीव पुद्गल के अनंत प्रदेश स्पर्श करते है कारण एकेक आकाशपर जीव पुद्गलके अनंत प्रदेश है। एक धर्म० प्रदेश कालके प्रदेशकों स्यात्

स्पर्श करे स्यात् न भी करे कारण आढाइ द्विपके अन्दर जो धर्मास्ति है वह तो कालके प्रदेशको स्पर्श करे वह अनंत प्रदेश स्पर्श करे यहा उपचरित नयसे कालके अनंत प्रदेश माना है और जो आढाइद्विपके वाहार धर्मास्ति है वह कालके प्रदेश स्पर्श नही करते है। इसी माफीक अधर्मास्तिकाय भी समझना स्वकाया पेक्षा ज० तीन प्रदेश उ० छे प्रदेशपर कायापेक्षा धर्मास्तिकाय वत्-आकाशास्तिकायका एक प्रदेश-धर्मद्रव्यका जघन्य १-२-३ प्रदेश स्पर्श करे उ० सात प्रदेश स्पर्श करे-कारण आकाशास्ति अलोकमें भी है वास्ते लोकके चरमान्तमें एक प्रदेश भी स्पर्श कर सक्ते हैं। शेष धर्मास्ति कायवत् जीवका एक प्रदेश धर्मास्तिकायका ज० च्यार उ० सात प्रदेशोंका स्पर्श करते है शेष धर्मास्तिवत्। पुद्गलास्तिकायका एक प्रदेश-धर्मास्तिकायके ज० च्यार उ० सात प्रदेश स्पर्श करते है शेष धर्मास्तिकायवत्। कालका एक समय धर्मास्तिकायको स्यात् स्पर्श करे स्यात् न भी करे जहांपर करते है वहां ज० च्यार उ० सात प्रदेश स्पर्श करे. शेष धर्मास्तिकायवत्। पुद्गलास्तिकायके दो प्रदेश-धर्मास्तिकायके ज० दुगुणोंसे दो अधिक याने छेप्रदेश उत्कृष्ट पांच गुणोंसे दो अधिक याने वारहा प्रदेश स्पर्श करे एव तीन च्यार पांच छे सात आठ नौ दश संख्याते असंख्याते अनंते सव जगह जघन्य दुगुणोंसे दो अधिक उ० पांचगुणोंसे दो अधिक.

(३१) अल्पाबहुत्वद्वार-द्रव्यापेक्षा सर्व स्तोक धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य तीनों आपसमें तुला है कारण तीनोंका एकेक द्रव्य हे उनोंसे जीवद्रव्य अनंत गुणे है उनोंसे पुद्गलद्रव्य अनंत गुणे है कारण एकेक जीवके अनंते अनंते पुद्गलद्रव्य लगे हुये है। उनोंसे काल द्रव्य अनंत गुणे है इति। प्रदेशापेक्षा, सर्व-स्तोक धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य के प्रदेश है कारण दोनोके प्रदेश असंख्याते २ है (२) उनोंसे जीव प्रदेश अनंतगुणे है (३) उनोंसे

पुद्गल प्रदेश अनंत गुणे है (४) उनोंसे काल प्रदेश अनंतगुणे है (५) उनोंसे आकाश प्रदेश अनंत गुणे है इति । द्रव्यप्रदेशों की सामिल अलपाबहुत्व । सर्व स्तोक धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाश द्रव्य इनोंके आपसमे तूला द्रव्य है (२) उनोंसे धर्मप्रदेश, अधर्म प्रदेश. आपसमें तूले असंख्यात गुने है (३) उनोंसे जीवद्रव्य अनंत गुणे है (४) उनोंसे जीव प्रदेश असंख्यात गुणे है (५) उनोसे पुद्गलद्रव्य अनंतगुणे. (६) उनोसे पुद्गल प्रदेश असंख्यातगुणे (७) उनोसे काल द्रव्यप्रदेश अनंतगुणे (८) उनोसे. आकाश प्रदेश अनंतगुणे । इति ।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेवसच्चम्.

थोकडानम्बर. २३

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद ११ वां.)

(भाषाधिकार)

(१) भाषा की आदि जीवसे है अर्थात् भाषा जीवोंके होती है । अजीव के नही अगर कीसी प्रयोगसे अजीव पदार्थों से अवाज आति हो उसे भाषा नही कही जाती है वह तों जीतना पावर भरा हो उतनाही अवाज हो जाते है वह भी जीवोंकीही सत्ता समजना चाहिये ।

(२) भाषाकी उत्पति—तीन शरीरोंसे है. औदारीक शरीरसे. वैक्रियशरीरसे. आहारीक शरीरसे, और तेजस कारमण यह दो शरीर सूक्ष्म है वास्ते भाषा इनोंमे बोली नही जाती है ।

(३) भाषाका संस्थान वज्रसा है कारण भाषाका पुद्गल है वह वज्रके संस्थानवाला है.

(४) भाषा के पुद्गल उत्कृष्ट लोकान्त तक जाते है।

(५) भाषा दो प्रकारकी है पर्याप्तभाषा, अपर्याप्तभाषा, जेसे सत्यभाषा, असत्यभाषा पर्याप्ति है और मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा अपर्याप्ति है.

(६) भाषा—समुच्चयजीव और तसकाय के १९ दंडकों के जीव भाषावाले है और पांच स्थावर तथा सिद्ध भगवान् अभाषक है सर्वस्तोक भाषक जीव, उनोसे अभाषक अनंतगुणे है।

(७) भाषा च्यार प्रकार की है सत्यभाषा, असत्यभाषा, मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा, समुच्चयजीव और नरकादि १६ दंडकमें भाषा च्यारों पावे तीन वैकलेन्द्रियमे भाषा एक व्यवहार पावे. पांच स्थावरमें भाषा नही है। एक बोल।

(८) भाषा पणे जो जीव पुद्गल ग्रहन करते है वह क्या स्थित पुद्गल याने स्थिर रहा हुवा—अथवा आत्माके अदुर स्थिर पुद्गल ग्रहन करते है या—अस्थिर—चलाचल अथवा आत्मासे दूर रहे पुद्गल ग्रहन करते है ? जीव जो भाषापणे पुद्गल ग्रहन करते है वह स्थिर आत्माके नजदीक रहे पुद्गलों कों ग्रहन करते है। जो पुद्गल भाषापणे ग्रहन करते है वह द्रव्य क्षेत्र काल भावके।

(क) द्रव्यसे एक प्रदेशी दो प्रदेशी तीन प्रदेशी यावत् दश प्रदेशी संख्यात प्रदेशी असंख्यात प्रदेशी पुद्गल वहुत सूक्ष्म होनेसे भाषा वर्गणा के लेने योग्य नही है अनंत प्रदेशी द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है। एक बोल

(ख) क्षेत्रसे अनंत प्रदेशी द्रव्यभी कीतनेकतों अति सूक्ष्म

होनेसे भाषापणे अग्रहन है जैसे एका आकाश प्रदेश अवगाह्ये एवं दो तीन यावत् संख्यात प्रदेश अवगाह्ये नही लेते है किन्तु असंख्यात प्रदेश अवगाह्या अनंत प्रदेशी द्रव्य भाषापणे लीये जाते है। एक बोल।

(ग कालसे. एक समयकि स्थितिवाले एवं दो तीन यावत् दश,समयकि स्थिति संख्यात समयकि स्थिति असंख्यात समयकि स्थिति के पुद्गल भाषापणे ग्रहन करते है। कारण स्थिति है सो सूक्ष्म पुद्गलों कि भी एक समय यावत् असंख्यात समयकि होती है और स्थुल पुद्गलों की भी एक समय से असंख्यात समयकि स्थिति होती है। इस वास्ते एक समय से असंख्यात समयकि स्थिति के द्रव्य ग्रहन करते है. एवं १२ बोल।

(घ) भावसे. वर्ण गन्ध रस स्पर्श के पुद्गल जीव भाषापणे ग्रहन करते है वह वर्ण मे चाहे. एक वर्ण का हो, चाहे दो तीन च्यार पांच वर्णका हो. एक वर्ण होनेसे चाहे वह श्याम वर्ण हो, चाहे हरा–लाल–पीला–सुपेद वर्णका हो; अगर श्याम वर्णका होनेपर चाहे वह एक गुण श्याम वर्ण हो, दो तीन च्यार यावत् दश गुण श्याम वर्ण संख्यातगुण श्याम वर्ण ११ असंख्यात गुण श्याम वर्ण १२ अनंतगुण श्यामवर्ण १३ हो जैसे एक गुणसे अनंतगुण एवं तेरहा बोलोंमे श्याम वर्ण कहा है इसी माफीक पांचों वर्ण के ६५ बोल एवं गन्ध में सुभिगन्ध, दुर्भिगन्ध के तेरहा तेरहा बोल २६ रसके तिक्त कटुक कषाय आंबिल मधुर के तेरह तेरह बोलोंसे ६५ स्पर्श में एक–दो–तीन स्पर्श के द्रव्य भाषापणे नही लेते है किन्तु च्यार स्पर्शवाले द्रव्य भाषापणे लिये जाते है यथा–शीतस्पर्श उष्णस्पर्श, स्निग्ध स्पर्श, रूक्ष स्पर्श जिसमें एक गुणशीत दो तीन च्यार पाच छे सात आठ नौ दश संख्याते असंख्याते और अनंते गुण शीत स्पर्श के द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है इसी माफीक उष्णके १३ स्निग्धके १३ रूक्षके १३ एवं

सर्व सख्या, द्रव्यका एक बोल, अनंत प्रदेशी स्कन्ध, क्षेत्रका एक बोल असख्यात प्रदेशो वगाह्या. कालके बारहा बोल एक समयसे असंख्यात समय तक एवं १४ भावके वर्णके ६५ गन्धके २६ रसके ६५ स्पर्श के ५२ कुल २२२ बोल हुवे.

उक्त २२२ बोलोंके द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है सो (१) स्पर्श कीये हुवे. (२) आत्म अवगाहन कीये हुवे. (३) वह भी परम्पर अवगाहान कीये नही किन्तु अणन्तर अवगाहान कीये हुवे (४) अणुवा–छोटे द्रव्य भी लेवे (५) वादर स्थुल द्रव्य भी लेवे (६) उर्ध्व दिशाका (७) अधोदिशाका (८) तीर्यग्दिशाका (९) आदिका (१०) अन्तका (११)मध्यका (१२) स्वविषयका (भाषाके योग्य) (१३) अनुपूर्वी (क्रमश) (१४ भाषापणे द्रव्य ग्रहन करनेवाले त्रसनालीमें होनेसे नियमा छे दिशाका द्रव्य ग्रहन करे (१५) भाषाका द्रव्य सान्तर ग्रहन करे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात समय का अन्तर महुर्त. (१६) निरान्तर लेवे तो ज० दो समय उ० असख्यात समयका अन्तरमहुर्त (१७) भाषाका पुद्गल प्रथम समय ग्रहन करे. अन्त समय त्याग करे. मध्यम ग्रहन करे और छडता रहे एवं २२२ के अन्दर १७ बोल मीलानेसे २३९ बोल होते है। समुच्चयजीव और १९ दंडक एवं वीस गुना करनेसे ४७८० बोल हुवे।

(९) समुच्चयजीव सत्यभाषापणे पुद्गल ग्रहन करे तो २३९ बोल पूर्ववत् कहना इसीमाफीक पांचेन्द्रियके शालहादंडक एवं सतरेकों २३९ गुना करनेसे ४०६३ बोल हुवा इसी माफीक असत्यभाषाकाभी ४०६३ इसीमाफीक मिश्रभाषाकाभी ४०६३ व्यवहार भाषा मे समुच्चय जीव और १९ दडक है कारण वेकलेन्द्रिय में व्यवहार भाषा है वीसकों २३९ गुणा करनेसे ४७८० बोल हुवे समुच्चयके ४७८० बोल मीलानेसे एक वचनापेक्षा २१७४९

और बहु वचनापेक्षा भी २१७४९ बोल मीलानेसे ४३४९८ भाषाके भांगे हुवे.

(१०) भाषाके पुद्गल मुंहसे निकलते है वह अगर भेदाते हुवे निकलेतों रहस्ते में अनंतगुणे वृद्धि होते होते लोकान्त तक चले जाते है तथा अभेदाते पुद्गल निकले तों संख्याते योजन जाके विध्वंस हो जाते है.

(११) भाषाके पुद्गल जो भेदाते है वह पांच प्रकारसे भेदाते है.

(क) खंडाभेद—पत्थर लोहा काष्टके खंडवत्.
(ख) परतरभेद— भोडल. अभ्रखवत्.
(ग) चूर्णभेद—गाहु चीणा मुगमटरवत्.
(च) अनुतडियाभेद—पाणीके निचेकी मट्टी शुष्कवत्.
(प) उक्करियाभेद—मुग चवलोकि फली तापमें देनेसे फाटे.

इन पांचों प्रकारके भेदाते पुद्गलोंकि अल्पाबहुत्व (१) सर्वस्तोक उक्करिये भेद भेदाते पुद्गल (२) अणुतडिये भेद भेदाते पु० अनंतगुणे (३) चूर्णिय भेद भेदाते पु० अनंतगुणे (४) परतर भेद भेदाने पु० अनंतगुणे (५) खंडाभेद भेदाते पु० अनत गुणे। एवं समुच्चय जीव और १९ दंडक में जीस दंडक में जीतनी भाषा हो अर्थात् १६ दंडकमें च्यारों भाषा और तीन वैकलेन्द्रियमें एक व्यवहार भाषा सबमें पांचों प्रकारसे पुद्गल भेदाते है।

(१२) भाषाके पुद्गलोंकि स्थिति जघन्य एक समय. उत्कष्ट अन्तर महुर्त एवं समुच्चय जीव और १९ दंडकमें.

(१३) भाषाकों अन्तर ज० अन्तर महुर्त उ० अनत काल कारण वनास्पतिमें चला जावे वह जीव अनन काल वहां ही

परिभ्रमन करे वास्ते अनंत काल तक भाषा पणे द्रव्य लेही न सके एवं समु० १९ दंडक ।

(१४) भाषाके द्रव्य कायाके योगसे ग्रहन करते ह (१५) भाषाके पुद्गल वचनके योगसे छोडते है एवं समु० १९ दंडक ।

(१६) कारण द्वार मोहनिय कर्म और अन्तराय कर्मके क्षयोपशम और वचनके योगसे सत्य और व्यवहार भाषा बोली जाती है। ज्ञानावर्णिय कर्म ओर मोहनियकर्म के उदयसे तथा वचनके योगसे असत्यभाषा ओर मिश्रभाषा बोली जाती है एवं १६ दंडक परन्तु केवली जो सत्य ओर व्यवहार भाषा बोलते है उनों के च्यार घातिकर्मका क्षय हुवा है वैकलेन्द्रिय एक व्यवहार भाषा संज्ञारूप बोलते है ।

(१७) जीव सत्यभाषा पणे द्रव्य ग्रहन करते है वह सत्य भाषा बोलते है। असत्य भाषापणे द्रव्य ग्रहन करते वह असत्य भाषा बोलते है मिश्रपणे ग्रहन करनेवाले मिश्रभाषा बोले ओर व्यवहार पणे द्रव्य ग्रहन करनेवाले व्यवहार भाषा बोले एवं १६ दंडक तथा तीन वैकलेन्द्रिय व्यवहार भाषापणे द्रव्य ग्रहन करे सो व्यवहार भाषा बोले। एक वचन कि माफीक बहुवचन भी समजना भांगा १४२

(१८) वचनद्वार भाषा बोलनेवाले व्याख्यान देनेवाले वार्तालाप करनेवाले महाशयजी को निम्नलिखत वचनोंका जानपणा अवश्य करना चाहिये ।

(१) एकवचन-राम देवः-नृपः
(२) द्विवचन- रामौ देवौ नृपौ
(३) बहुवचन-रामाः देवाः नृपाः
(४) स्त्रि वचन-नदी लक्ष्मी अम्बा रंभा रामा
(५) पुरुषवचन-राजा-देवता ईश्वर भगवान्

(६) नपुंसकवचन–ज्ञान कमल तृण

(७) अध्यवसायवचन–दुसरोंके मनका भाव जानना*

(८) वर्णवचन–दुसरों के गुण कीर्त्तन करना

(९) अवर्णवचन–दुसरोंका अवर्णवाद बोलना

(१०) वर्णावर्णवचन–पहले गुण पीछे अवगुण

(११) अवर्णवर्ण–पहले अवगुण पीछे गुण करना

(१२) भूतकालवचन–तुमने यह कार्य कीया था

(१३) भविष्यकालवचन–आखीर तो करनाही पडेंगें

(१४) वर्तमान कालवचन–में यह कार्य कर रहा हूं.

(१५) प्रत्यक्ष—स्पष्टता वचन बोलना.

(१६) परोक्ष—अस्पष्टता वचन बोलना. इनके सिवाय प्रश्न व्याकारण सूत्र में भी कहा है कि काललिंग विभक्ति तद्दत धातु प्रत्यय वचन आदिका जानकार होना परम आवश्यक्ता है।

(१९) सत्यअसत्य मिश्र और व्यवहार यह च्यार भाषा उपयोग सयुक्त बोलता भी आराधिक हो सक्ते है। कारण कीसी स्थानपर मृगादि जीव रक्षाके लिये जानता भी असत्य बोल सक्ते है परन्तु इरादा अच्छा होनेसे वह विराधि नही होते है श्री आचारांगसूत्रमें " जणमाण न जाणु वयेज्ज "

(२०) नाम च्यार भाषाके ४२ नाम है। सत्यभाषाके दश भेद है (१) जीस देशमे जों भाषा बोली जाति है उनोंको देश

---

* एक वणिक गुड का भाव तेज हो जानेपर छोटे गामडे मे गुड खरीदने को गया. रहस्तेमें तापके मारे पीपासा बहुत लगी थी ग्राममें प्रवेश करते एक औरत के घर पर जाके कहा की मुझे पीपासा बहुत लगी है तुई पीलाइये इतनेपर उस औरत को ज्ञान हुवा की शहरमे इसका भाव तेज हुवा है उसे यहा हो बेटा अपने पतिको संकेत कर सब गुड खरीद करवाली इति।

वासी मान राखी है वह भाषा सत्य है जेसे मूर्तिकों परमेश्वर शुक-कों पोपट–रोटीकों भाखरी–पतिकों दादीया इत्यादि (२) स्थापना सत्य कीसी पदार्थकी स्थापना कर उसे उनी नामसे बोलावे जेसे चित्रादिकी स्थापना कर आचार्य कहना. मूर्तिकी स्थापनाकर अरिहत कहना यह भाषा सत्य हे (३) नाम सत्य. जेसे एक गोपाल-का नाम राजाराम. एक मनुष्यका नाम केशरीसिंह, जेसे मूर्तिका नाम चिंतामणि पार्श्वनाथ यह सब नाम सत्य है (४) रूप सत्य एक दुसराका रूप वनावे उनोंको रूपसे बतलावे जेसे पत्थरकि मूर्तिकों परमेश्वरका रूप वनावे वह रूप सत्य है (५) अपेक्षा सत्य–गुरुकि अपेक्षा शिष्य है उनोंके शिष्यकि अपेक्षा वह शिष्य ही गुरु है, पिताकी अपेक्षा पुत्र है, पतिकि अपेक्षा भार्या है उन के पुत्रकि अपेक्षा वह माता है लघुकि अपेक्षा गुरु इत्यादि (७) व्यवहार सत्य–संसारमें कितनीक वातों व्यवहारमें मानीगइ है वह वेसेही संज्ञा पड जानेसे उसे सत्य ही मानी गइ है जेसे मार्ग जावे. जीव मरगया जीव जन्मा इत्यादि (८) भावसत्य–कह-नाथा पांच,पांच दश परन्तु विस्मृतीसे ज्यादाकम भाषासे निकल गया तथपि उनोंका भाव तो सत्य ही है कि पांच पांच दश होते हैं। (९) योग सत्य–मन वचन कायाके योग सत्य वरताना (१०) ओपमासत्य दरियावकों कटोराकि ओपमा जवारकों मोतियोंकी ओपमा मूर्तिकों परमेश्वरकी ओपमा इत्यादि—

असत्य वचनके दश भेद हैं. क्रोधके वस हो वोलना मानके वस. मायाके वस. लोभके वस. रागके वस. द्वेषके वस हास्यके वस भयके वस अगर सत्य भी है परन्तु क्रोधादि के वस हो वोलनेसे उसे असत्य ही कहा जाते है कारण आत्माके स्वरूपको

अज्ञानके वस भूलजानेसे क्रोधादि वस सत्य ही असत्य भाषाकि माफीक है और पर-परतापनावाली भाषा तथा जीवोंके प्राण चला जाय एसी भाषा बोलना यह दशों असत्य भाषा है।

मिश्र भाषाके दश भेद है-इन नगरमें इतने मनुष्यों उत्पन्न हुवे है; उन नगरमें इतने मनुष्योंका मृत्यु हुवा है, इस नगरमें आज इतने मनुष्योंका जन्म और मृत्यु हुवे यह सब पदार्थ जीव है यह सब पदार्थ अजीव है यह सब पदार्थोंमें आदे जीव आदे अजीव है. यह वनास्पति सब अनंतकाय है यह सब परित्तकाय है कालमिश्र. उठो पोरसी दीन आगये है। लो इतने वर्ष हो गये है भावार्थ जब तक जिस बातका निश्चय न हो जाय यहां तक अगर कार्य हुवा भी हो तो भी वह मिश्रभाषा है जिस्में कुच्छ सत्य हो कुच्छ असत्य हो उसे मिश्रभाषा कहते है।

व्यवहार भाषाका बार भेद है (१) आमंत्रणि भाषा-हे वीर, हे देव. २) आज्ञा देना यह कार्य एसा करो (३) याचना करना यह वस्तु हमे दो ४) प्रश्नादिका पुच्छना (५) वस्तु तत्वकि प्ररूपना करना (६) प्रत्याख्यानादि करना (७) आगलेकी इच्छानुंसार बोलना 'जहासुखम्' (८) उपयोग शुन्य बोलना. (९) इरादा पूर्वक व्यवहार करना (१०) शंका सयुक्त बोलना (११) अस्पष्ट बोलना (१२) स्पष्टतासे बोलना। जिस भाषामें असत्य भी नहीं और पूर्ण सत्य भी नहीं उसे व्यवहार भाषा कही जाति है जेसे जीव मरगया इस्में पुर्ण सत्य भी नही है कारणकि जीव कभी मरता नही है और पूर्ण असत्य भी नही है कारण व्यवहारसे सब लोगोंने मरना जन्मना स्वीकार कीया है. इत्यादि —

(२१) अल्पाबहुत्वद्वार (१) सर्वस्तोक सत्य भाषा घो-

लने वाले (२) मिश्र भाषा बोलनेवाले असंख्यात गुणे (३) असत्य भाषा बोलनेवाले असंख्यात गुणे (४) व्यवहार भाषा बोलनेवाले असंख्यात गुणे (५) अभाषक अनंत गुणे कारण अभाषकमें एकेन्द्रिय तथा सिद्धभगवान् है इति ।

सेवंभंते सेवंभंते–तमेव सच्चम्
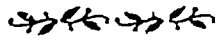
थोकडा नम्बर २४.
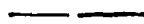
सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २८ वा उ० १

(आहाराधिकार.)

(१) आहार तीन प्रकारके है सचिताहार–जीव संयुक्त पदार्थोंका आहार करना अचिताहार–जीवरहित पुद्गलोंका आहार करना, मिश्राहार जीवाजीव द्रव्योंका आहार करना. नारकी देवतोंमें अचित्त पुद्गलोंका आहार है और पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंचपांचेन्द्रिय और मनुष्य इन दस दंडकोंमें तीन। प्रकारका आहार है सचिताहार अचित्ताहार मिश्राहार ।

(२) नरकादि चौवीस दंडकोंमें आहारकि इच्छा होती है.

(३) नरकमे जीवोंको आहारकी इच्छा कीतने कालसे उत्पन्न होती है ? नरकादि सब जीवों जो अज्ञानपणे आहारके पुद्गल खेचते है वह तों सब संसारी जीव समय समय आहार के पुद्गलोंको ग्रहन करते है। किन्तु परभव गमन समय विग्रह गति या जीव, केवली समुद्घात और चौदवे गुणस्थानके जीव अनाहारी भी रहते है । जो जीवों कों ज्ञानपणे के साथ आहार इच्छा होती

है उनोंका काल-नरकमें असंख्यात समय के अन्तर महुर्तसे. आहारकी इच्छा उत्पन्न होती है असुरकुमार देवोंके जघन्य एक दिनसे उ० एकहजार वर्ष साधिक से, नागादि नौ काय के देवोंको तथा व्यंतर देवों कों ज० एक दिन उ० प्रत्येक दिनोंसे ज्योतिषी देवोंकों जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक दिनोंसे-वैमानीक देवोंमें सौधर्म देवलोक के देवोंकों ज० प्रत्येक दिन उ० २००० वर्ष इशान देवलोक के देवों ज० प्रत्येक दिन उ० साधिक २००० वर्ष, सनत्कुमार देवलोक के देवोंकों ज० २००० वर्ष. उ० ७००० वर्ष महेन्द्र देवोंके ज० साधिक २००० वर्ष, उ० साधिक ७००० वर्ष. ब्रह्मदेवों कों ज० ७००० वर्ष उ० १००० वर्ष लांतक देवों के ज० १०००० उ० १४००० वर्ष महाशुक्र देवोंकों ज० १४००० उ० १७००० वर्ष सहस्रादेवोंकों ज० १७००० उ० १८००० वर्ष अणत्देवोंके ज० १८००० उ० १९००० वर्ष पणत् ज० १९००० उ० २०००० वर्ष. आरण्य ज० २०००० वर्ष उ० २१००० वर्ष अच्युत देवोंकों ज० २१००० उ० २२००० वर्ष. ग्रीवैक प्रथम त्रीक ज० २२००० उ० २५००० वर्ष मध्यम त्रीक ज० २५००० उ० २८००० उपरकी त्रीक कों ज० २८००० उ० ३१००० वर्ष च्यार अनुत्तर-वैमानवासी देवों कों ज० ३१००० उ० ३३००० वर्ष सर्वार्थसिद्ध वैमानवासी देवोंकों ज० उ० ३३००० वर्षोंसे आहार इच्छा उत्पन्न होती है। पांच स्थावर कों निरान्तराहार इच्छा होती है. तीन वकलेन्द्रिय कों अन्तर महुर्तसे. तीर्यंच पांचेन्द्रि ज० अन्तर महुर्त उ० दो दिनोंसे ओर मनुष्यकों आहार इच्छा ज० अंन्तरमहुर्त उ० तीन दिनोंसे आहार इच्छा उत्पन्न होती है।

(४) नारकी के नैरिये जो आहारपणे पुद्गल ग्रहन करते है वह द्रव्यसे अनंते अनंतप्रदेशी, क्षेत्रसे असंख्यात प्रदेश अवगाहान कीये हुवे, कालसे एक समयकि स्थिति यावत् असंख्यात

समयकि स्थिति के पुद्गल, भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श जेसे भाषाधिकारमें कहा है इसी माफीक. परन्तु इतना विशेष है कि भाषापणे च्यार स्पर्शवाले पुद्गल लेते थे यहां आहारपणे आठों स्पर्शवाले पुद्गल ग्रहन करते है. इस वास्ते पांच वर्ण दोगन्ध पांच रस आठ स्पर्श एवं वीस बोलसे प्रत्येक बोल पर तेरह तेरह बोलोंकि भावना करणी जेसे एक गुण काला पुद्गल दोगुण तीनगुण च्यारगुण पांचगुण छेगुण सात गुण आठगुण नौगुण दशगुण सख्यातगुण असख्यातगुण और अनतगुणकाले इसी माफीक वीसों बोलोंकों तेरहा गुणे करनेसे २६० बोल हुवे. स्पर्शादि १४ देखो भाषाधिकारमें बोल मीलानेसे १-१-१२-२६०-१४ सर्व २८८ बोलोंका आहार नारकी ग्रहन करते है। अधिकतर नारकी वर्णमें श्याम वर्ण हरावर्ण गन्धमें दुर्भिगन्ध रसमे तिक्त कटुक रस. स्पर्शमें कर्कश गुरु शीत रूक्ष स्पर्श के पुद्गलो का आहार लेते है वह ग्रहन कीये हुवे. पुद्गलोंको भी सडाके खराब करके पूर्वका वर्णादि गुणोंको विप्रीत कर नये खराव वर्णादि उत्पन्न कर फीर ग्रहन कीए हुए पुद्गलों का आहार करे.

इसी माफीक देवतों के तेरहा दंडकों में भी २८८ बोलोंका आहार लेते है परन्तु वह शुभ द्रव्य वर्णमें पीला सुपेद गन्धमें सुर्भिगन्ध रसमे आंबिल मधुर रस स्पर्शमें मृदुल लघु उष्ण स्निग्ध पुद्गलों का आहार करे वहभी उन पुद्गलोंको पूर्वके खराब गुणो कों अच्छा बनाके मनोज्ञ पुद्गलोंका आहार करे इसी माफीक पृथ्व्यादि दश दंडकों में वीसों बोलोंके पुद्गलों कों ग्रहन कर चाहे उसे अच्छे के खराब बनावे चाहे खराब के अच्छे बनावे २८८ बोल पूर्ववत् आहार ग्रहन करे परन्तु पांच स्थावरमें दिशापेक्षास्यात् ३-४-५ दिशाका भी आहार लेते है कारण

जहां अलौक कि व्याघात है वहां ३-४-५ दिशाका ही पुद्गल लेते है शेष छे दिशा सर्व ७२०० बोल हुवे।

(५) नारकी जो आहारपणे पुद्गल ग्रहन करते है वह क्या सर्व आहार करे. सर्वप्रणमें सर्वउश्वासपणे सर्वनिश्वासपणे प्रणमे तथा पर्याप्ता कि अपेक्षा वारवार आहार करे प्राणमें उश्वासे निश्वासे और अपर्याप्ता कि अपेक्षा कदाच् आहारे कदाच् प्रणमे. कदाच् उश्वासे कदाच् निश्वासे ? उत्तरमें बारहा बोल ही करे है एवं २४ दन्डकों में बारहा बोल होनेसे २८८ बोल हुवे।

(६) नारकी के नैरियों के आहार के योग्य पुद्गल है उनोंसे असंख्यात में भाग के द्रव्यों को ग्रहन करते है ग्रहन कीये हुवे द्रव्योंसे अनंतमे भागके द्रव्य अस्वादन में आते है शेष पुद्गल विगर अस्वादन कियेही विध्वंस हो जाते है इसी माफीक २४ दंडकमें परन्तु पांच स्थावरमें एक स्पर्शेन्द्रिय होनेसे वह विगर स्पर्श कीये अनंत भाग पुद्गल विध्वंस हो जाते है।

(६) नारकी देवताओ और पांचस्थावर एव १९ दंडकोंके आहार पणे पुद्गल ग्रहन करते है वह सबके सब आहार करते जीव जों है कारण उनोंके रोम आहार है और वेइन्द्रिय जों आहार लेते है वह दो प्रकारसे लेते है एक रोम आहार जो समय समय लेते है वह तों सब के सब पुद्गलों का आहार करते है और दुसरा जो कवलाहार है उनीसे ग्रहन कीये हुवे पुद्गलो के असंख्यातमें भागका आहार करते हं और अनेक हजारों भागके पुद्गल विगर स्वाद विगर स्पर्श किये ही विध्वंस हो जाते है जिस्कीतरतमत्ता (१) सर्व स्तोक विगर अस्वादन कीये पुद्गल (२) उनोंसे अस्पर्श पुद्गल अनंत गुणें है एवं तेइन्द्रि परन्तु एक विगर गन्धलिये ज्यादा कहना (१) सर्व स्तोक विगर गन्धके पुद्गल (२) विगर अस्यादन किये पुद्गल अनंत गुणे (३)

विगर स्पर्श किये पुद्गल अनंतगुणे इसी माफीक चोरिन्द्रिय. पांचेन्द्रिय और मनुष्यभी समझना।

(८) नारकी जो पुद्गल आहारपणे ग्रहन करते है वह नारकीके कीस कार्यपणे प्रणमते है? नारकीके आहार किये हुवे पुद्गल श्रोत्रेन्द्रिय. चक्षुइन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय अनिष्ट अकान्त अप्रिय अमनोज्ञ विशेष अमनोज्ञ अशुभ अनिच्छापणे भेदपणे ऊंचापणे नहीं किन्तु निचापणे, सुखपणे नही, किन्तु दुःखपणे, इन सत्तरा बोलोंपणे वारवार प्रणमते है. पांच स्थावर तीनवेकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्य इन दश दंडकोंमें औदारीक शरीर होनेसे अपनि अपनि इन्द्रियोंके सुख ओर दुःख दोनोंपणे प्रणमते है। देवतोंके तेरह दंडकमें नरकसे उलटे याने सत्तरा बोलोभी अच्छे सुखकारी प्रणमते है अर्थात् नारकीमें आहारके पुद्गल एकान्त दुःखपणे देवतोंमें एकान्त सुखपणे और औदारीक शरीरवाले शेषजीवोंके सुख दुःख दोनोंपणे प्रणमते है।

(९) नारकीके नैरिय जो पुद्गल आहारपणे ग्रहन करते है वह क्या एकेन्द्रियके शरीर है यावत् क्या पांचेन्द्रियके शरीर है ? पूर्व पर्यायापेक्षातो जो जीव अपना शरीर छोडा है उनोंकाही शरीर है चाहे एकन्द्रियके हो यावत् चाहे पांचेन्द्रियका हो और वर्तमान वह पुद्गल नारकी ग्रहन किये हुवे है वास्ते पांचेन्द्रियके पुद्गल कहा जाते है एवं १६ दंडक एव पांच स्थावर परन्तु वर्त्तमान एकेन्द्रिय के पुद्गल कहा जाते है एवं बेन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय अपनि अपनि इन्द्रिय कहना कारण पहले आहार लेनेवाले जीव उन पुद्गलोंको अपना करलेते है वास्ते उनोंके ही पुद्गल कहलाते है।

(१०) नारकी देवता और पांच स्थावर—रोमाहारी है किन्तु प्रक्षेप आहारी नही है. तीन वैकलेन्द्रिय. तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्य रोमाहारी तथा प्रक्षेपाहारी दोनों प्रकारके होते है।

(११) नारकी पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्य ओजाहारी है और देवता ओज आहारी ओर मन इच्छताहारी भी है कारण देवता मन इच्छा करे वेसे पुद्गलोंका आहार कर सके है शेष जीवकों जेसा पुद्गल मीले वेसोंका ही आहार करना पडता है इति

॥ सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम् ॥

—०००—

थोकडा नम्बर. २५

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद ७ वा श्वासोश्वास)

नारकीके नेरिया श्वासोश्वास लोहारकि धमणकि माफीक लेते है तीर्यंच और मनुष्य वे मात्रा याने जल्दीसे या धीरे धीरे दोनों प्रकारसे श्वासोश्वास लेते है। देवतोंमें असुर कुमारके देव जघन्यसे सात स्तोक कालसे उत्कृष्ट साधिक एक पक्ष (पन्द्रा-दिन) से श्वासोश्वास लेते हैं। नागादि नौ निकायके देव तथा व्यंतर देव ज० सात स्तोक कालसे उ० प्रत्येक महुर्तसे। ज्योतिःषीदेव ज० प्रत्येक महूर्त उ० प्रत्येक महुर्त. सौधर्म देवलोकके देव ज० प्रत्येक महुर्त उ० दो पक्षसे ईशानदेव ज० प्रत्येक महुर्त उ० साधिक दो पक्षसे सनत्कुमारके देव ज० दो पक्ष उ० सात पक्ष. महेन्द्र ज० दो पक्ष साधिक उ० साधिक सात पक्षसे. ब्रह्मदेव ज० सातपक्ष उ० दशपक्षसे, लांतकदेव, ज० दशपक्ष, उ० चौ-

दापक्ष महाशुक्र देव ज० चौदापक्ष उ० सत्तरापक्ष सहस्रादेव ज० सत्तरापक्ष उ० अठारापक्षसे अणत्‌देव ज० अठारापक्ष. उ० उन्निसपक्षसे, पणत्‌देव ज० उन्निसपक्ष उ० वीस पक्षसे अरण्यदेव ज० वीसपक्ष उ० एकवीस पक्षसे अच्युतदेव ज० एकवीस पक्ष उ० बावीसपक्षसे ग्रीवैकके पहले त्रीकके देव ज० बावीसपक्ष उ० पचवीस पक्ष दुसरी त्रीकके देव ज० पचवीस पक्ष उ. अठावीस पक्षसे तीसरी त्रीकके देव ज० अठावीस पक्ष उ० एकतीस पक्ष च्यारानुत्तर वैमानके देव ज० एकतीस पक्ष उ० तेत्तीसपक्ष सर्वार्थसिद्ध वैमानके देव जघन्य उत्कृष्ट तेत्तीसपक्षसे श्वासोश्वास लेते है। जेसे जेसे पुन्य वडते जाते है वेसे वेसे योगोंकी स्थिरता भी वढती जाती है देवतावोंमें जहां हजारों वर्षोंकि स्थिति है वह सात स्तोक कालसे, पल्योपमकि स्थिति है वह प्रत्येक दिनोंसे और सागरोपमकी स्थिति है वहां जीतने सागरोपम उतनेही पक्षसे श्वासोश्वास लेते है। नोट—असंख्यात समयकि एक आविलका संख्याते आविलका, का एक श्वासोश्वास, सात श्वासोश्वासका एक स्तोक काल होते है इति।

सेवंभंते सेवंभते-तमेवसच्चम्.

थोकडा नम्बर. २६

(सूत्रश्री पन्नवणाजी पद ८ वा संज्ञाधिकार)

संज्ञा—जीवोंकि इच्छा. वह संज्ञा दश प्रकारकी है आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा, परिग्रहसंज्ञा, क्रोधसंज्ञा, मानसंज्ञा, मायासंज्ञा, लोभसंज्ञा, लोकसंज्ञा, ओघसंज्ञा।

आहारसंज्ञा उत्पन्न होनेके च्यार कारण है. उदररीता होनेसे क्षुधावेदनिय कर्मोदयसे आहारकों देखनेसे और आहारकि चिंतवना करनेसे आहार संज्ञोत्पन्न होती है।

भयसंज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है अधैर्य रखनेसे. भयमोहनिय कर्मोदयसे, भय उत्पन्न करनेवा पदार्थ देखने से और भय कि चिंतवना करने से। हा हा अब क्या करुंगा ?

मैथुन सज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है. शरीर को पौष्ट याने हाड मांस रोद्र बढानेसे. वेद मोहनिय कर्मोदयसे, मैथुन उत्पन्न करनेवाले पदार्थ स्त्रि आदि कों देखने से मैथुन कि चिंतवना करने से मैथुनसंज्ञा उत्पन्न होती है।

परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होने का च्यार कारण है. ममत्वभाव बढाने से. लोभ मोहनिय कर्मोदय से, धनादि के देखने से परिग्रह कि चिंतवना करनेसे ”

क्रोध संज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है. क्षेत्र, खला, बागबगेचे. घर, हाट, हवेली. शरीरादि से, धनधान्यादि औपधि से क्रोध उत्पन्न होते है एवं मान, माया, लोभ.

लोकसंज्ञा–अन्य लोकों कों देख के आप ही वह क्रिया करते रहे. ओघसंज्ञा–शुन्य चित्तसे विलापात करे खाजखीणे, तृणतोडे, धरती खीणे इत्यादि उपयोग शुन्यतासे।

नरकादि चौवीसों दंडकों में दश दश संज्ञा पावे. कीसी दंडक में सामग्री अधिक मीलने से प्रवृत्ति रूपमें है कीसी जीवों कों इतनी सामग्री न मीलने से सतारूप में है फीर सामग्री मीलने से प्रवृत्ति रूप में भी प्रवृतेंगे संज्ञा का आस्तित्व छट्ठे गुणस्थान तक है।

अल्पाबहुत्व—नरक में (१) स्तोक मैथुनसंज्ञा (२) आहार संज्ञा संख्यातगुणे (३) परिग्रहसज्ञा संख्यातगुणे (४) भयसंज्ञा सख्यातगुणे-तीर्यंच में (१) सर्वस्तोक परिग्रहसंज्ञा. (२) मैथुन सज्ञा सख्यातगुणे, (३) भयसंज्ञा संख्यातगुणे (४) आहारसंज्ञा संख्यातगुणं । मनुष्य मे (१) सर्वस्तोक भयसज्ञा, (२) आहार-संज्ञा संख्यातगुने (३) परिग्रहसज्ञा सख्यातगुणे (४) मैथुनसंज्ञा संख्यातगुणे । देवतों में (१) सर्वस्तोक आहारसज्ञा (२) भय-संज्ञा संख्यातगुणे (३ / मैथुनसंज्ञा संख्यातगुणे (४) परिग्रहसंज्ञा सख्यातगुने.

नरकमें सर्वस्तोक लोभसज्ञा, मायासंज्ञा संख्यातागुणे मान-संज्ञा संख्या० क्रोधसंज्ञा संख्यागु० तीर्यंच मनुष्य में सर्वस्तोक मानसंज्ञा, क्रोधसंज्ञा. विशेषाधिक मायासज्ञा विशेषाधिक, लोभ-संज्ञा विशेषाधिक । देवतों में सर्वस्तोक क्रोधसंज्ञा मानसज्ञा सं-ख्यातगुणे मायासंज्ञा संख्यातगुणे लोभसंज्ञा संख्यातगुणे इति ।

॥ सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम् ॥

थोकडा नम्बर २७

(सूत्र श्री पन्नवणाजीपद ९ वा योनिपद)

जावों के उत्पन्न होने के स्थानों को योनि कही जाती है. वह योनि तीन पकार की है । शीतयोनि. उष्णयोनि, शीतोष्ण-योनि । पहली, दुसरी, तीसरी. नरक में शीतयोनि नैरिये है. चोथी नरक में शीतयोनि नैरिये ज्यादा है और उष्ण योनि नैरिये

कम है पांचवी नरक में शीतयोनि नेरिये कम है उष्णयोनि ज्यादा है. छठी सातवी नरक में उष्णयोनि नैरिया है। सर्व देवता तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्यों में शीतोष्णायोनि है। च्यार स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय में तीनों योनि पावे. और तेउ काय केवल उष्णयोनि है। सिद्ध भगवान् अयोनि है। (१) सर्व· स्तोक शीतोष्ण योनिवाले जीव. (२) उनो से उष्णयोनिवाले जीव असंख्यातगुणे (३) अयोनिवाले जीध अनंतगुणे ४) शी· तयोनिवाले जीव अनंतगुणे।

योनि तीन प्रकार कि है. सचित्तयोनि, अचित्तयोनि, मिश्र· योनि. नारकी देवता अचितयोनि में उत्पन्न होते है पांच स्थावर तीन वकलेन्द्रि असंज्ञी तीर्यंच, असज्ञी मनुष्य मे योनि तीनों पावे. संज्ञी मनुष्य तीर्यंच मे एक मिश्रयोनि है. (१) सिद्धभगवान अयोनि है (१)सर्वस्तोक, मिश्रयोनिवाले जीव, २) अचितयोनि वाले जीव असंख्यातगुणे, (३) अयोनीवाले जीव अनंतगुणं (४) सचित योनिवाले अनंतगुणे.

योनि तीन प्रकार की ह संवृतयोनि, असंवृतयोनि, मिश्र योनि. नारकी देवता और पांच स्थावर के संवृतयोनि है तीन वैकलेन्द्रिय, असंज्ञा तीर्यंच मनुष्य के असवृतयोनि है. संज्ञी तीर्यंच संज्ञा मनुष्यो के मिश्रयोनि सिद्ध भगवान् अयोनि है।(१) सर्वस्तोक मिश्रयोनिवाले जीव है (२) असंवृतयोनिवाले असंख्यात गुणे(३) अयोनिवाले अनंतगुणे (४)संवृतयोनिनवाले अनंतगुणे है।

योनि तीन प्रकार की है कुम्भायोनि. सक्खावर्तनयोनि, वं· सीपत्तायोनि. कुम्भायोनि तीर्थकरादिके माताकि होती है। संक्खावर्तन योनि चक्रवर्त्ति के स्त्रि रत्नकी होती है जिस्में जीव पुद्गल उत्पन्न होते है विध्वंसभी होते है परन्तु योनिद्वारा जन्मते

नहीं है। वन्सीपत्तायोनि शेष सर्व संसारी जीवोंकि माताके होती है जीस योनि मे जीव उत्पन्न होते है वह जन्मते भी है वि-ध्वंस भी होते है। इति

सेवंभंते सेवंभते तमेवसच्चम्।

थोकड़ा नम्बर २८.

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १ उद्देशा १

सर्व जीव दो प्रकार के है उसे आरंभी कहते है (१) आत्मा का आरभ करे. परका आरंभ करे, दोनों का आरंभ करे. (२) कीसी का भी आरंभ नही करे वह अनारंभीक है इसका यह कारण है कि जो सिद्धों के जीव है वह तो अनारभी है और जो ससारी जीव है वह दो प्रकार के है (१) संयति (२) असयति. जिस्में संयति के दो भेद है. (१) प्रमादि संयति दुसरे अप्र-मादि संयति जो अप्रमादि संयति है वह तो अनारंभी है और जो प्रमादि संयति है उनोंके दो भेद है एक शुभयोगि दुसरा अशुभ योगि जिस्मे शुभ योगि है वहतों अनारभी है और जो प्रमादि संयति अशुभ योगि है वह आत्मा आरंभी है परारभी है उभया-रंभी है एवं असयति भी समजना। एवं नरकादि २३ दंडकनों आत्मारभी परारंभी उभयारभी है परन्तु अनारंभी नही हैं और मनुष्य समुच्चय जीवकि माफीक संयति अप्रमादि और शुभ योग-वाले तो अनारभी है ३। शेष आरंभी है.

लेश्यामयुक्त जीवोंके लिये यह ही वात है जो संयति अप्र-मादि और शुभ योगवाले है यह तो अनारंभी है शेष आरंभी है

एव मनुष्य शेष २३ दंडक के लेश्या सयुक्त जीव आत्मारंभी परारंभी उभयारंभी है. कृष्ण, निल, कापोत, लेश्यावाले समुचय जीव और बावीस बावीस दंडक के जीव सबके सब आरंभी है कारण यह तीनों अशुभ लेश्या है इनोंके परिणाम आरंभसे बच नहीं सकते है। तेजो लेश्या समुच्चय जीव और अठारा दंडकोमे है जिस्मे समुच्चय जीव और मनुष्यके दंडकमें जो संयति अप्रमादि और सुभयोगवाले तों अनारभी है शेष सब आरभी है एव पद्म लेश्या तथा शुक्ल लेश्या भी समजना परन्तु यह समुचय जीव वैमानिक देव ओर संज्ञी मनुष्य तीर्यंचमे ही है जिस्मे संयति अप्रमाद्दिपणा मनुष्यमें ही होते है वह अनारंभी है शेष जीव तों आत्मारंभी परारंभी उभय आरंभी होते है वह अनारभी नही है।

आत्मारभी स्वयं आप आरंभ करे। परारंभी दुसरोंसे आरभ करावे उभयारभी आप स्वयं करे तथा दुसरोंसे भी आरभ करावे इति.

सेवंभंते सेवंभंते—तमेवसच्चम्

—※◎◎◎※—

थोकडा नम्बर २९.

—

(अल्पाबहुत्त्व.)

संज्ञी, असंज्ञी, तस. स्थावर, पर्याप्ता, अपर्याप्ता, सूक्ष्म और बादर. इन आठ बोलोंके लद्धिया अलद्धिया एवं १६।

(१) सर्वस्तोक संज्ञी के लद्धिया. (२) तस जीवोंके लद्धिया असंख्यात गुणे (३) असंज्ञीके अलद्धिये अनतगुणे (४) स्थावर के अलद्धिये विशेष. (५) बादर के लद्धिये अनंत गु० (६) सुक्ष्मके अलद्धिमें विशेष: (७) अप-

र्याप्ता के अलद्धिये असंख्यात गुणे (८) पर्याप्ता के अलद्धिये विशेष. (९) पर्याप्ताके लद्धिया सख्यात गुणे (१०) अपर्याप्ताके अलद्धिये विशेष. (११) सूक्ष्मके लद्धिये विशेष. (१२) वादरके अलद्धिये वि० (१३) स्थावरके लद्धिये विशे० (१४) त्रसके अलद्धिये वि० (१५) असंज्ञीके लद्धिये वि० (१६) सज्ञीके अलद्धिये विशेषाधिक । लद्धिया जेसे संज्ञीके लद्धिये. कहनेसे संज्ञी जीव और संज्ञीके अलद्धिये कहनेसे असंज्ञी जीव और सिद्धोंके जीव गीने जाते हैं इसी माफीक जीसके लद्धिये कहनेसे वह जीव है और जीसको अलद्धिया कहनेसे उन जीवोंके सिवाय शेष जीव अलद्धिये में गीने जाते है इति ।

चौदाभेद जीवोंकी अल्पावहुत्व. (१) सर्व स्तोक संज्ञी पांचेन्द्रियका अपर्याप्ता. (२) संज्ञी पांचेन्द्रियके पर्याप्ता संख्यातगुणे. (३) चौरिन्द्रिय पर्याप्ता संख्या. गु० (४) असंज्ञी पांचेन्द्रिय पर्याप्ता विशेषः (५) वेइन्द्रियके पर्याप्ता विशे० (६) तेइन्द्रियके पर्याप्ता विशेषः (७) असंज्ञी पांचेन्द्रिय के अपर्याप्ता असंख्यात गुणे (८) चौरिन्द्रियके अपर्याप्ता विशे० (९) तेइन्द्रियके अपर्याप्ता विशे० (१०) वेइन्द्रियके अपर्याप्ता विशे. (११) बादर एकेन्द्रियके पर्याप्ता अनंत गुणे (१२) बादर एकेन्द्रियके अपर्याप्ता असंख्यात गुणे (१३) सूक्ष्म एकेन्द्रियके अपर्याप्ता असंख्यात गुणे (१४) सूक्षम एकेन्द्रियके पर्याप्ता संख्यातगुणे इति ।

आठ वोलोंकि अल्पाबहुत्व-(१) सर्वस्तोक अभव्यजीव (२) प्रतिपाति सम्यग्दृष्टि अनंतगुणे (३) सिद्धभगवान् अनंतगुणे (४) संसारीजीव अनंतगुणे (५) सर्व पुद्गल अनंतगुणे (६) सर्व काल अनंतगुणे (७) आकाशप्रदेश अनंतगुणे (८) केवलज्ञान केवलदर्शनके पर्यव अनंत गुणे ।

स्तोक परत्तसंसारी जीव, शुक्लपक्षी जीव अनंतगुणे, कृष्ण-

पक्षीजीव अनंतगुणे, अपरत्त संसारी जीव विशेष: । पुनः । स्तोक अपर्यासा जीव सुत्ताजीव संख्यातगुणे जागृतजीव संख्यातगुणे पर्यासाजीव विशेषः ॥ पुन. ॥ स्तोक समोइ वा मरणवाले जीव. इन्द्रिय वहुता संख्यात गुणे नोइन्द्रिय वहुते विशेष: असमोइये जीव विशेषा । पुनः । स्तोक वादरजीव, अणाहारी जीव संख्यात गुणे, सूक्ष्मजीव संख्यातगुणे आहारीक जीव विशेष ॥ पुन:॥ स्तोक बादरके लद्धिये, सूक्षमके अलद्धिये विशेष: सूक्षमके लद्धिये असंख्यातगुणे बादरके अलद्धिये विशेष: इति ।

थोकडा नम्बर ३०.

स्तोक अभव्यके लद्धिये (२) शुक्लपक्षके लद्धिये अनंत गुणे (३) भव्यके अलद्धिये अनंतगुणे (४) भव्यके लद्धिये अनंत गुणे (५) कृष्णपक्षीके लद्धिये विशेषः (६) कृष्णपक्षीके अलद्धिये अनंतगुण (७) शुक्लपक्षीके अलद्धिये विशेषः (८) अभव्य के अलद्धिये विशेष: ॥ पुनः ॥ स्तोक मनुष्यके लद्धिये (२) नारकीके लद्धिये असंख्यातगुणे (३) देवतोंके लद्धिये अस० गु० (४) तीर्यचके अलद्धिये विशेष (५) तीर्यचके लद्धिये अनंतगुणे (६) देव अलद्धिये वि० (७) नरक अलद्धिये वि० मनुष्य अलद्धिये विशेषः ॥

स्तोक मिश्रदृष्टि [२] पुरुषवेद असख्यात गुणे [३] स्त्रिवेद संख्यात गुणे (४) अवधिदर्शन विशेष (५) चक्षुदर्शन सं० गु० (६) केवलदर्शन अनंतगुणे (७) सम्यग्दृष्टि विशेषः (८) नपुंसकवेद अनंतगुणे (९) मिथ्यादृष्टि वि० (१०) अचक्षुदर्शन विशेषः ॥ पुनः ॥ स्तोक अचर्मजीव (२) नोसंज्ञीजीव अनंतगुणे (३, नोमनयोगीजीव विशेष: ४) नोगर्भजजीव विशेषः ॥

स्तोक मनः बलप्राण [२] वचन बलप्राण असंख्यातगुणे [३] श्रोत्रेन्द्रिय बलप्राण असंख्यात गुणे [४] चक्षुइन्द्रिय बलप्राण विशेष: [५] घ्राणेन्द्रिय बलप्राण विशेषः वि० [६] रसेन्द्रिय बलप्राण वि० (७) स्पर्शेन्द्रिय बलप्राण अनंतगुणे [८] काय बल प्राण विशेष: [९] श्वासोश्वास बलप्राण वि० [१०] आयुष्य बलप्राण विशेषः ॥ पुनः ॥ स्तोक मन. पर्याप्तिके जीव [२] भाषापर्याप्तिके जीव असंख्यात गुणे [३ . श्वासोश्वास पर्याप्ति के जीव अनंतगुणे [४] इन्द्रिय पर्याप्ति० वि० [५] शरीर पर्याप्तिके जीव वि० [६] आहार पर्याप्तिके जीव विशेषः ॥पुन ॥ स्तोक मनुष्य [२] नारकी असंख्यात गुणे [३] देवता असंख्यातगुणे [४] पुरुषवेद विशेषः [५] स्त्रिवेद संख्यातगुणे [६] नपुसकवेद अनंत गुणे [७] तीर्यंच विशेषाधिक ॥ इति

थोकडा नम्बर ३१.

स्तोक मनुष्यणी [२] मनुष्य असंख्यात गुणे [३] नैरिये असंख्यातगुणे [४] तीर्यंचणी असंख्यातगुणी [५] देवता संख्यात गुणे [६] देवी संख्यातगुणी [७] पांचेन्द्रिय संख्यात गुणे [८] चोरिन्द्रिय वि० [९] तेइन्द्रिय वि० [१०] वेइन्द्रिय वि० (११) त्रसकाय वि० [१२] तेउकाय असंख्यात गुणे [१३] पृथ्वी काय वि० [१४] अपकाय वि० [१५] वायुकाय वि० [१६] सिद्ध भगवान अनंतगुणे [१७] अनेन्द्रिय विशेष. [१८] वनास्पति अनंतगुणे [१९] एकेन्द्रिय वि० [२०] तीर्यंच विशेष. [२१] सेन्द्रिय वि० [२२] सकाया वि० [२३] समुच्चय जीव विशेषः

स्तोक मनुष्य [२] नारकी असंख्यात गुणे [३] देवता असंख्यात गुणे [४] पुरुषवेद विशेषः (५) स्त्रियोंसंख्यातगुणी

[६] पांचेन्द्रिय वि० [७] चोरिन्द्रिय वि० [८] तेइन्द्रिय वि० [९] बेइन्द्रिय वि० [१०] त्रसकाय वि० [११] तेउकाय असंख्यात गुणे [१२] पृथ्वीकाय वि० [१३] अपकाय वि० [१४] वायुकाय विशेषः [१५] वनास्पतिकाय अनतगुणे [१६] एकेन्द्रिय विशेषः [१७] नपुंसक जीव विशेष [१८] तीर्यचर्जीव विशेषः ।

सर्व स्तोक पांचेन्द्रियके लब्धिये [२] चोरिन्द्रियके लब्धिये विशेषः [३] तेइन्द्रियके लब्धिये वि० [४] बेइन्द्रियके लब्धिये वि० [५] तेउकायके लब्धिये असं० गु० [६] पृथ्वीकायके लब्धिये वि० [७] अपकायके लब्धिये वि० [८] वायुकायके लब्धिये वि० [९] अभव्यके लब्धिये अनंतगुणे [१०] परत्त ससारी जीवोंके लब्धिये अनंतगुणे [११] शुक्लपक्षी विशेषः [१२-१३] सिद्धोंके लब्धिये और संसारके अलब्धिये आपसमें तूला और अनंतगुणे [१४] वनास्पतिकायके अलब्धिये विशेषः [१५] भव्य जीवोंके अलब्धिये विशेषः [१६] परत्तजीवोके अलब्धिये वि० [१७] कृष्णपक्षीके अलब्धिये वि० [१८] वनास्पतिके लब्धिये अनतगुणे [१९] कृष्णपक्षीके लब्धिये वि० [२०] अपरत्तजीवोंके लब्धिये वि० [२१] भव्यजीवोंके लब्धिये वि० [२२-२३] संसारी जीवोंके लब्धिये और सिद्धके अलब्धिये आपसमें तूला वि० [२४] शुक्लपक्षीके अलब्धिये वि० [२५] परत्तजीवोंके अलब्धिये वि० [२६] अभव्यजीवोंके अलब्धिये वि० [२७] वायुकायके अलब्धिया वि० [२८] अपकायके अलब्धिये वि० [२९] पृथ्वीकायके अलब्धिये वि० [३०] तेउकायके अलब्धिये वि० [३१] बेइन्द्रियके अलब्धिये वि० [३२] तेइन्द्रियके अलब्धिये वि० [३३] चोरिन्द्रियके अलब्धिये वि० [३४] पांचेन्द्रियके अलब्धिये विशेषाधिकार इति ।

इति शीघ्रबोध भाग तीजो समाप्तम्

श्री सयंप्रभसूरीश्वराय नमः

शीघ्रबोध भाग ४ था.

थोकडा नम्बर ३२.

सूत्र श्री उत्तराध्ययनजी अध्ययन २४.

(अष्ट प्रवचन)

ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदान भंडमत्तोवगणसमिति, उच्चार पासवण जल खेल मैल परिठावणिया समिति, मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति इन पांच समिति तीन गुप्तिके अन्दर पांच समिति अपवाद है और तीन गुप्ति उत्सर्ग है जेसे मुनिको उत्सर्ग मार्गमें गमनागमन करना मना है: परन्तु अपवाद मार्गमें आहार, निहार, विहार और जिनमन्दिर दर्शन करनेको जाना हो तो इर्यासमितिपूर्वक जावे. उत्सर्ग मार्गमें मुनिको मौन रखना; परन्तु अपवाद मार्गमें याचना पुच्छना, आज्ञा लेना और प्रश्नादि पुच्छाका उत्तर देना इन कारणों से बोलाना पडे तो भाषा समिति संयुक्त बोले उत्सर्ग मार्गमें मुनिको आहार करना ही नहीं अपवादमें संयम यात्रा-शरीरके निर्वाहके लिये आहार करना पढे तो एषणासमिति निर्दोष आहार लाके करे, उत्सर्ग मार्गमें मुनिको निरूपाधि रहना, अपवादमें लज्जा तथा परिसह न सहन हो तो मर्यादा माफिक औषधि राखे, उत्सर्गमें

मल मात्र करे नही, आहार पाणीके अभाव परठे नही; अपवाद मार्गमें निर्वद्य भूमिपर विधिपूर्वक परठे।

(१) इर्यासमितिका च्यार भेद है-आलम्बन, काल, मार्ग, यत्ना. जिस्मे आलम्बन-ज्ञान, दर्शन, चारित्र. काल-अहोरात्री. मार्ग-कुमार्ग त्याग ओर सुमार्ग प्रवृत्ति. यत्नाका च्यार भेद है-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव. द्रव्यसे इर्यासमिति-छे कायाके जीवोंकि यत्ना करते हुवे गमन करे. क्षेत्रसे-च्यार हाथ परिमाण भूमि देखके गमनागमन करे. कालसे दिनकों देखके रात्रीमें पूंजके चाले. भावसे-गमनागमन करते हुवे वाचना, पुच्छना, परावर्तना, अनुपेक्षा, धर्मकथा न कहे. शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्शपर उपयोग न रखते हुवे इर्यासमिति पर ही उपयोग रखे।

(२) भाषासमितिके च्यार भेद—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव. द्रव्यसे-कर्कशकारी, कठोरकारी, छेदकारी, भेदकारी, मर्मकारी, सावद्य पापकारी, मृषावाद ओर निश्चयकारी भाषा न बोले क्षेत्र से-गमनागमन करते समय रहस्तेमें न बोले. कालसे-एक पहर रात्री जानेके बाद सूर्योदय हो वहांतक उच्चस्वरसे नही बोले. भावसे-राग द्वेष संयुक्त भाषा नही बोले।

(३) एषणासमितिके च्यार भेद--द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव. द्रव्यसे मुनि निर्दोष आहार, पाणी, वस्त्र, पात्र, मकानादिको ग्रहन करे; कारण निर्दोष अशनादि भोगवनेसे चित्तवृत्ति निर्मल रहती है, इसवास्ते फासुक आहार देनेवाले और लेनेवाले दुष्कर बतलाये ह और विगर कारण दोषित आहारादि देनेवाले या लेनेवाले दोनोंको शास्त्रकारोंने चोर बतलाये हैं श्री स्थानांगसूत्र स्थाने ३ जे तथा भगवतीसूत्र शतक ५ उ० ६ में दोषित आहार देनेसे स्वल्प आयुष्य तथा अशुभ दीर्घायुष्य बन्धते हैं और भगवतीसूत्र शतक १ उ० ९ में आधाकर्मी आहार करनेवालोंको

साताठ्ठ कर्मोंका-वन्ध अनत ससारी और छे कायाकी अनुकम्पा रहित वतलाये है और निर्दोषाहार करनेवालेको शीघ्र संसारसे पार होना वतलाया है। निर्दोषाहार ग्रहन करनेवाले मुनियोको निम्नलिखत दोषोंपर पूर्ण ध्यान रखना चाहिये।

(१) आधाकर्मी दोष—जिनोंके पर्याय नाम च्यार है (१) आधाकर्मी–साधुके निमत्त छे काया जीवोंकि हिस्या कर अशनादि तैयार करे (२) अधोकर्मी–एसा दोषिताहार करनेवाले आखीर अधोगतिमे जाते हैं (३) आत्मकर्मी–आत्माके गुण जो ज्ञान दर्शन चारित्र है उनोंके उपर ओच्छादन करनेवाले है (४) आत्मघ्नकर्मी-आत्मप्रदेशोंके साथ तीव्र कर्मोंका वन्ध घन माफिक करनेवाले है। आधाकर्मी आहार लेनेसे आठ जीव प्रायश्चितके भागी होते है यथा— आधाकर्मी आहार करनेवाला, करानेवाला लेनेवाला, देनेवाला, दीरानेवाला, अनुमोदन करनेवाला, खानेवाला, और आलोचना नही करनेवाला. इसवास्ते मुनिकों सदैव निर्वद्याहार ही करना चाहिये।

एक मुनि निर्वद्य फासुक जल लेके जंगलमे ध्यान करनेको गया था उस जल भाजनको एक वृक्षके नीचे रख आप कुच्छ दूर चले गये थे. पीच्छेसे सैन्य रहित पीपासा पिडित एक राजा उन वृक्ष नीचे आया. मुनिका शीतल पाणी देख राजाने जलपान कर लिया. पीच्छेसे राजाकि सेना आइ, उन मुनिके पात्रमें राजा अपना जल डालके सब लोक चले गये। कुच्छ देरी से मुनि उन वृक्ष नीचे आया: अपना जल समजके जलपान कीया. दोनो पाणीका असर एसा हुवा कि राजाको संसार असार लगने लगा, और योग धारण करनेकी इच्छा हुइ. इधर मुनिकों योगसे रूची हटके संसारकि तर्फ चित्त आकर्षण होने लगा. देखिये सदोष, निर्दोष आहार पानीका कैसा असर है. आखीर समजदार श्रावकोंने

मुनिजीको जुलाव दीया और अकलमन्द प्रधानोंने राजाको जुलाब दीया. दोनोंके पाणीका अश निकल जाने से राजा राजमें और मुनि अपने योगमें रमणता करने लगे.

[२] उद्देसीक दोष—एक साधुके लिये किसीने आहार बनाया है वह साधु गवेषना करने पर उसे मालुम हुवा कि यह आहार मेरे ही लिये बना है उसे आधाकर्मी समजके ग्रहन नही किया अगर वह आहार कोइ दुसरा साधु ग्रहन न करे तो उनोंके लिये उद्देसीक दोष है.

[३] पुतिकर्म दोष—निर्वद्याहारके अन्दर एक सीत मात्र भी आधाकर्मीकि मील गइ हो तथा सहस्र घरोंके अन्तर भी आधाकर्मीका लेप मात्र भी मीला हुवा शुद्धाहारभी ग्रहन करनेसे पुतिकर्म दोष लगते हैं. श्री सूत्रकृतांग अध्ययन पहले उद्देसे तीजे पूतिकर्माहार भोगवनेवालोंको द्रव्ये साधु और भावे गृहस्थ एवं दो पक्ष सेवन करनेवाला कहा है।

[४] मिश्रदोष—कुच्छ गृहस्थोंका, कुच्छ साधुवोंका निमित्त से बनाया आहार लेनेसे मिश्रदोष लगता है।

[५] ठवणा दोष—साधुके निमत्त स्थापके रखे.

[६] पाहुडिय—महेमान—कीसी महेमानोंको जीमाणा हैं. साधुके लिये उनोंकि तीथी फीरा देवे उन महेमानोंके साथ मुनि कों भी मिष्टान्नादि से तृप्त करे। एसा आहार लेना दोषित है।

[७] पावर—जहां आंधेरा पडता हो वहां साधुके निमित्त प्रकाश [बारी] करधाके आहार देना.

[८] क्रिय—क्रियविक्रय. मुनिके निमित्त मूल्य लायके देवे.

[९] पामिच्चे दोप—उधारा लाके देवे.

[१०] परियठे दोष—वस्तु बदलाके देवे

[११] अभिहड दोष—अन्यस्थानसे सन्मुख लाके देवे.

[१२] भिन्नेदोष—छान्दो कीमाडादि खुलवाके देवे.

[१३] मालोहड दोष—उपरसे जो मुश्किलसे उतारी जावे एसे स्थानसे उतारके दी जावे।

[१४] अच्छीजे दोष—निर्बल जनोंसे सबल जबरदस्ति बलात्कारे दीरावे उसे लेना.

[१५] अणिसिट्ठे दोष—दो जनोंके विभागमें हो एकको देने का भाव हो एकके भाव न हो वह वस्तु लेवे तो भी दोषित है.

[१६] अज्झोयर दोष—साधुके निमित्त कमाहार बनाते समय ज्यादा करदे वह आहार लेना। ,,

इन १६ दोषोंको उदूगमन दोष कहते है यह दोष जो गृहस्थ भद्रीक साधु आचारसे अज्ञात और भक्तिके नामसे दोष लगाते है.

[१७] धाइदोष—धात्रीपणा याने गृहस्थ लोगोंके बालबच्चों को रमाना, खेलाना इनोंसे आहार लेना। ,,

[१८] दुइदोष—दूतिपणा इधर उधर के समाचार कह के आहार लेना.

[१९] निमित्तदोष—भूत भविष्यका निमित्त कहके आ० ,,

[२०] आजीवदोष—अपनि जातिका गौरव बतलाके ,,

[२१] वणिमग्गदोष—रांककि माफिक याचना कर आ०,,

[२२] तिगच्छदोष—औषधि वगरह बतलाके आ० ,,

[२३] कोहेदोष—क्रोध कर भय बतलाके आहार लेना.

[२४] माणेदोष—मान अहंकार कर आहार लेना.

[२५] मायादोष—मायावृत्ति कर आहार लेना.

[२६] लोभेदोष—लालच लोलुपता से आहार लेना.

[२७] पुब्बंपच्छसंथुव दोष—आहार ग्रहन करनेके पहले या पीच्छे दातारके गुण कीर्तन करके आहार लेना।

[२८] विज्जादोष—गृहस्थोंको विद्या बतलाके अर्थात् रोहणि आदि देवीयोंको साधन करनेकी विद्या „

[२९] मित्तदोष—यंत्र मंत्र शीखाना अर्थात् हरीणगमेषी आदि देवतोंका साधन करवाना „

[३०] चून्नदोष—एक पदार्थके साथ दुसरा पदार्थ मीला के एक तीसरी वस्तु प्राप्त करना सीखाके „

[३१] जोगेदोष—लेप वसीकरणादि बताके आ० „

[३२] मूलकम्मेदोष—गर्भापात्तादि औषधीयों उपायों बतलाके आहार पाणी ग्रहन करना दोष है.

[क] यह सोलह दोष मुनियोंके कारण से लगते है वास्ते मोक्षाभिलाषीयोंको अपने चारित्र विशुद्धिके लिये इन दोषोंको टालना चाहिये इन १६ दोषोंको उत्पात दोष कहते है।

[३३] सकिए दोष—आहार ग्रहन समय मुनिकों तथा गृहस्थोंको शंका हो कि यह आहार शुद्ध है या अशुद्ध है, एसे आहारकों ग्रहन करना यह दोष है।

[३४] मंक्खिए दोष—दातारके हाथकि रेखा तथा बाल कच्चे पाणी से संसक्त होनेपर भी आहार ग्रहन करना।

[३५] निक्खित्तिये दोष—सचित्त वस्तुपर अचित्ताहार रखा हुवा आहार ग्रहन करे.

[३६] पहियेदोष—अचित्तवस्तु सचित्तसे ढांकी हुइ हो „

[३७] मिसीयेदोष—सचित्त अचित्त वस्तु सामिल हो „

[३८] अपरिणियेदोष—शस्त्र पूरा नहीं लागा हो अर्थात् जो जलादि सचित्तवस्तु है उनोंको अग्न्यादि शस्त्र पूरा न लगा हो „

[३९] सहारियेदोष—एक वर्तनमे दुसरे वर्तनमें लेके देवे

वह कटोरी कुडछी लीस पडी रहने से जीवोंकि विराधना होती है और धोने से पाणीके जीवोंकी विराधना हो ,,

[४०] दायगोदोष—दातार अगोपांगसे हिन हो, अंधा हो जिनसे गमनागमनमें जीव विराधना होती हो ,,

[४१] लीत्तूदोष—तत्कालका लिपा हुवा आंगण हो ,,

[४२] छडियेदोष—घृतादिके छांटे टीपके पडते देवे ,,

[ख] यह दश दोष मुनि गृहस्थों दोनोंके प्रयोग से लगते है वास्ते दोनोंको ख्याल रखना चाहिये। एवं ४२ दोष श्री आचारांग सूयगडायांग तथा निशिथसूत्रोंमें और विशेष खुलासो पिंडनिर्युक्तिमें है। प्रसगोपात अन्य सूत्रों से मुनि भिक्षाके दोष लिखे जाते है।

श्री आवश्यकसूत्रमें [१] गृहस्थोंके घरका कमाड दरवाजा खुलाके तथा कुच्छ खुला हो उनोंके अन्दर जा के भिक्षा लेना मुनियोंके लिये दोषित है [२] कीतनेक देशोमें पहले उत्तरी हुइ रोटी तथा घाट खीच चावल अग्रभागका गौ कुत्तादिकों डालते है वह लेना मुनिको दोषित है [३] देव देवीके बलीका आहार लेना दोषित है [४] विगर देखी हुइ वस्तु लेना दोष है [५] पहले निरस आहार आया हो पीच्छे से कीसी गृहस्थोंने सरसाहारकि आमत्रण करी हो वह लोलुपतासे ग्रहन करते समय विचार करे कि अगर आहार वड जावेगें तो निरस आहार परठ देगें तो दोषित है कारण आहार परठनेका वडा भारी प्रायश्चित्त है.

श्री उत्तराध्ययनजीसूत्र—

[१] अज्ञात कुलकि भिक्षा न करके अपने सज्जन संबंधीयोंके यहांकि भिक्षा करना दोष है [२] सकारण याने विनों कारण आहार करना भी दोष है वह कारण छे प्रकारके है शरीर में रोगादि होने से, उपसर्ग होने से ,, ब्रह्मचर्य न पलता हो तो०

जीव रक्षा निमित्त० तपश्चर्या निमित्त० और अनसन करने निमित्त इन छे कारण से आहारका त्याग कर देना चाहिये। और छे कारण से आहार करना कहा है क्षुधा वेदना सहन नही हो सके, आचार्यादिकि व्यावञ्च करना हो, इर्या सोधनेके लिये, सयम यात्रा निर्वाहानेको, प्राणभूत जीव सत्वकि रक्षा निमित्ते, धर्मकथा कहनेके लिये इन छे कारणों से मुनि आहार कर सक्के है।

श्री दशवैकालिक सूत्रमे—

[१] निचा दरवाजा हो वहां गौचरी जानेमें दोष है कारण सिरके लग जावे पात्रा विगेरे फूट जानेका संभव है।

[२] जहांपर अन्धकार पडता हो वहां जानेमें दोष है.

[३] गृहस्थोंके घर द्वारपर बकरे बकरी [४] बचे बची [५] श्वान कुत्ते [६] गायोंके वाछरू बेठे हो उनोंको उलगके जाना दोष है। कारण वह भीडके–भय पामे इत्यादि [७] औरभी कोइ प्राणी हो उनोंको उलघके जानेसे दोष है कारण यहां शरीर या सयमकि घात होनेका प्रसग आ जाते हैं।

[८] गृहस्थोंके वहां मुनि जानेके पहले देनेकि वस्तुवों आघी–पाछी कर दी हो संघटेकि वस्तुवों इधर उधर रख दी हो वह लेनेमें दोष है।

[९] दानके निमित्त बनाया हुवा भोजन [१०] पुन्यके निमित्त [११] वणिमग्ग–रांकादिके [१२] श्रमण शाक्यादिके निमित्त इन च्यारोंके लिये बनाया हुवा भोजन मुनि ग्रहन करे तो दोष। अगर गृहस्थ उन निमित्तवालोंको भोजन कराके बचा हुवा आहार अपने घरमें खाते पीते हो तो उनोंके अन्दर से लेना मुनिको कल्पता है कारण वह आहार गृहस्थोंका हो चुका है।

[१३] राजाके वहांका बलीष्टाहार तथा राज्याभिशेक स-

मयका आहार (शुभाशुभ निमित्त) या राजाके वचीत आहारमें पंडालोगोंके भाग होते है वास्ते अन्तरायका कारण होनेसे दोष है।

[१४] शय्यातर—मकानके दातारका आहार लेनेसे दोष.

[१५] नित्यपंड—नित्य एक ही घरका आहार लना दोष

[१६] पृथ्व्यादिके संघटे से आहार लेना दोष हे।

[१७] इच्छा पुरण करनेवाली दानशालाका आहार लेना,,

[१८] कम खानेमे आवे ज्यादा परठना पडे एसा आहार,,

[१९] आहार ग्रहन करनेके पहले हस्तादि धोके तथा आहार ग्रहन करनेके वाद सचित्त पाणी आदिसे हाथ धोवे एसा आहार लेना दोष है।

[२०] प्रतिनिषेध कुल स्वल्पकालके लिये सुवासुतक (जन्म मरण) वाले कुलमें तथा जावजीव—चंडालादि कुलमें गौचरी जाना मना हे अगर जावे तो दोष है।

[२१] जास कुलमें ओरतोका चाल चलन अच्छा न हो एसे अप्रतितकारी कुलमें मुनि गौचरी जावे तो दोष है।

[२२] गृहस्थ अपने घरमें आनेके लिये मना करदी हो कि मेरे घर न आना एसे कुलमे गौचरी जाना दोष है।

[२३] मदिरापान लेना तथा करना महा दोष है।

श्री आचारांगसूत्रमें—

(१) पाहुणोंके लिये वनाया आहार जहांतक पाहुणा भोजन नही किया हो वहांतक वह आहार लेना दोष हैं।

(२) त्रस जीवका मांस विलकुल निषेध है।

(३) जिस गृहस्थोंके पेदाससे आधा भाग तथा अमुक भाग पुन्यार्थ निकालते हो उनोंसे अशनादि देवे वह भी दोष है।

(४) जहां बहुत मनुष्योंके लिये भोजन किया हो तथा न्याति सबन्धी जीमणवार हो वहां आहार ले तो दोष है।

(५) जहांपर बहुतसे भिक्षुक भोजनार्थी एकत्र हुवे हो उन घरोंमें जा के आहार ले तो दोष [अविश्वास हो]

(६) भूमिगृह तेखानादिसे निकालके आहार देवे तो दोष।

[७] उष्णादि आहारको फूंक दे आहार दे तो भी दोष है।

[८] वींजणादि से शीतल कर आहार दे तो भी दोष है।

श्री भगवतीसूत्रमें—

[१ लाये हुवे आहारको मनोज्ञ बनानेके लिये दूसरी दफे जेसे दुध आ जानेपर भी सकरके लिये जाना इसे सयोग दोष कहते है।

[२] निरस आहार मीलनेपर नफरत लाके करना इसीसे चारित्रके कोलसा हो जाते है [द्वषका कारण]

[३] सरस मनोज्ञ आहार मीलनेपर गृद्धि बन जावे तो चारित्रसे धूवा निकल जावे [रागका कारण]

[४] प्रमाणसे अधिकाहार करनेसे दोष, कारण आलस्य प्रमाद अजीर्णादि रोगोत्पत्तिका कारण है।

[५] पहले पहोरमें लाया हुवा आहारादि चरम पेहरमे भोगवनेसे कालातिक्रुत दोष लगते है।

[६] दो कोश उपरान्त ले जाके आहार करने से मार्गातिक्रुत दोष लगता है।

[७] सूर्योदय होनेके पहले और सूर्य अस्त होनेके पीच्छे अशनादि ग्रहन करना तथा भोगवना दोष है।

[८] अटवी विगरेमें,दानशालाका आहार लेना दोष।

[९] दुष्कालमें गरीबोंके लिये किया आहार लेना दोष।

(१०) ग्लोनोंके लिये किया आहार लेना दोष।

(११) वादलोंमे अनाथोंके लिये बनाया आहार लेना दोष.

(१२) गृहस्थ नेंताकि तोर कहे कि हे स्वामिन् आज हमारे घरे गोचरीको पधारो इस माफीक जावे तो दोष।

श्री प्रश्नव्याकरण सूत्रमें—

(१) मुनिके लिये रूपान्तर रचना करके देवे जेसे नुकती दानोंका लड्डु बना देवे इत्यादि तों दोष है।

(२) पर्याय बदलके-जेसे दहीका मठ्ठा राइता बनाके देवे

(३) गृहस्थोंके वहां अपने हाथों से आहार लेवे तो दोष.

(४) मुनिके लिये अन्दर ओरडादि से आहार लाके देवे तो दोष।

(५) मधुर मधुर वचन बोलके आहारादिकि याचना करे

श्री निशिथसूत्रमें—

(१) गृहस्थोंके वहां जाके पुच्छे कि इस बर्तनमें क्या है? इस्में क्या है एसी याचना करने से दोष है।

(२) अटवीमें अनाथ मजुरीके लिये गया हुवा से याचना कर दीनता से आहार ले तो दोष है।

(३) अन्यतीर्थी जो भिक्षावृत्ति मे लाया हुवा आहार है उनों से याचना कर आहार ले तो दोष है।

(४) पासत्थे शीथिलाचारीयों से आहार ले तो दोष।

(५) जीस कुलमें गोचरी जावे वह लोग जेन मुनियोंकि दुगच्छा करे एसे कुलमें जाके आहार ले तो दोष।

(६) शय्यातरको साथ ले जाके उनोंकि दलाली से अशानादिकि याचना करना दोष है।

(४) जहां बहुत मनुष्योंके लिये भोजन किया हो तथा न्याति सबन्धी जीमणवार हो वहां आहार ले तो दोष है।

(५) जहांपर बहुतसे भिक्षुक भोजनार्थी एकत्र हुवे हो उन घरोंमें जा के आहार ले तो दोष [अविश्वास हो]

(६) मूमिगृह तखानादिसे निकालके आहार देवे तो दोष।

[७] उष्णादि आहारको फूक दे आहार दे तो भी दोष है।

[८] वींजणादि से शीतल कर आहार दे तो भी दोष है।

श्री भगवतीसूत्रमें—

[१ लाये हुवे आहारको मनोज्ञ बनानेके लिये दूसरी दफे जेसे दुध आ जानेपर भी सकरके लिये जाना इसे सयोग दोष कहते है।

[२] निरस आहार मीलनेपर नफरत लाके करना इसीसे चारित्रके कोलसा हो जाते है [द्वेषका कारण]

[३] सरस मनोज्ञ आहार मीलनेपर गृद्धि बन जावे तो चारित्रसे धूवा निकल जावे [रागका कारण]

[४] प्रमाणसे अधिकाहार करनेसे दोष, कारण आलस्य प्रमाद अजीर्णादि रोगोत्पत्तिका कारण है।

[५] पहले पहोरमें लाया हुवा आहारादि चरम पेहरमे भोगवनेसे कालातिक्रंत दोष लगते है।

[६] दो कोश उपरान्त ले जाके आहार करने से मार्गातिक्रंत दोष लगता है।

[७] सूर्योदय होनेके पहले और सूर्य अस्त होनेके पीछे अशनादि ग्रहन करना तथा भोगवना दोष है।

[८] अटवी विगेरेमें दानशालाका आहार लेना दोष।

[९] दुष्कालमें गरीबोंके लिये किया आहार लेना दोष।

(१०) ग्लोनोंके लिये किया आहार लेना दोष ।

(११) वादलोंमें अनाथोंके लिये बनाया आहार लेना दोष.

(१२) गृहस्थ नेंताकि तोर कहे कि हे स्वामिन् आज्ञ हमारे घरे गोचरीको पधारो इस माफीक जावे तो दोष ।

श्री प्रश्नव्याकरण सूत्रमें—

(१) मुनिके लिये रूपान्तर रचना करके देवे जेसे नुकती दानोंका लड्डु बना देवे इत्यादि तों दोष है ।

(२) पर्याय बदलके-जेसे दहीका मठ्ठा राइता बनाके देवे

(३) गृहस्थोंके वहां अपने हाथों से आहार लेवे तो दोष.

(४) मुनिके लिये अन्दर ओरडादि से बाहार लाके देवे तो दोष ।

(५) मधुर मधुर वचन बोलके आहारादिकि याचना करे

श्री निशिथसूत्रमें—

(१) गृहस्थोंके वहां जाके पुच्छे कि इस वर्तनमें क्या है? इस्में क्या है एसी याचना करने से दोष है ।

(२) अटवीमें अनाथ मजुरीके लिये गया हुवा से याचना कर दीनता से आहार ले तो दोष है ।

(३) अन्यतीर्थी जो भिक्षावृत्ति से लाया हुवा आहार है उनों से याचना कर आहार ले तो दोष है ।

(४) पासत्थे शीथिलाचारीयों से आहार ले तो दोष ।

(५) जीस कुलमें गोचरी जावे वह लोग जैन मुनियोंकि दुगंच्छा करे एसे कुलमें जाके आहार ले तो दोष ।

(६) शय्यातरकों साथ ले जाके उनोंकि दलाली से अशनादिकि याचना करना दोष है ।

(४) जहां बहुत मनुष्योंके लिये भोजन किया हो तथा न्याति सबन्धी जीमणवार हो वहां आहार ले तो दोष है।

(५) जहांपर बहुतसे भिक्षुक भोजनार्थी एकत्र हुवे हो उन घरोंमें जा के आहार ले तो दोष [अविश्वास हो]

(६) भूमिगृह तैखानादिसे निकालके आहार देवे तो दोष।

[७] उष्णादि आहारको फूक दे आहार दे तो भी दोष है।

[८] वींजणादि से शीतल कर आहार दे तो भी दोष है।

श्री भगवतीसूत्रमें—

[१ लाये हुवे आहारको मनोज्ञ बनानेके लिये दूसरी दफे जेसे दुध आ जानेपर भी सकरके लिये जाना इसे सयोग दोष कहते है।

[२] निरस आहार मीलनेपर नफरत लाके करना इसीसे चारित्रके कोलसा हो जाते है [द्वेषका कारण]

[३] सरस मनोज्ञ आहार मीलनेपर गृद्धि बन जावे तो चारित्रसे धूवा निकल जावे [रागका कारण]

[४] प्रमाणसे अधिकाहार करनेसे दोष, कारण आलस्य प्रमाद अजीर्णादि रोगोत्पत्तिका कारण है।

[५] पहले पहोरमें लाया हुवा आहारादि चरम पेहरमे भोगवनेसे कालातिकृत दोष लगते है।

[६] दो कोश उपरान्त ले जाके आहार करने से मार्गातिकृत दोष लगता है।

[७] सूर्योदय होनेके पहले और सूर्य अस्त होनेके पीछे अशनादि ग्रहन करना तथा भोगवना दोष है।

[८] अटवी विगेरेमें दानशालाका आहार लेना दोष।

[९] दुष्कालमें गरीबोंके लिये किया आहार लेना दोष।

धिक किया हुवा, शंकावाला, मूल्य लाया हुवा, सचित्त पाणीको छुन्द जो शीतल आहारमें गीर गइ है वह इति। एषणा समिति।

(४) आदान मत्त भंडोपगरणीय समिति के च्यार भेद है द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव.

द्रव्यसे संयम यात्रा निर्वाहनेकों वस्त्रपात्रादि भंडोमत्तो पगरण रखा जाते है उनोंकि संख्या।

(१) रजोहरण-जीवरक्षानिमत्त तथा जैन मुनियोंका चन्ह इनकों शास्त्रकारोने धर्मध्वज कहा है वह आठ अगुलकि दसीयों चौवीस अंगुल कि दंडी कुल ३२ अगुलका रजोहरण होनाचाहिये।

(२) मुखवस्त्रिका-मक्खी मच्छरादि त्रस जीवों कि वोलते समय विराधना न हो या सूत्रादिक पर थुक से अशातना न हो. वोलते समय मुंह आगे रखनेकों एकविलस च्यार अगुल समचोरस होना चाहिये।

(३) चोलपट्टा-कटीबन्ध पांच हाथका होता है।

(४) चदर-मुनियोंको तीन साध्वीयोको च्यार।

(५) कम्बली-जीवरक्षानिमत्त, गमनागमन समय शरीर आच्छादन करनेकों चतुर्मासमें छेघडी, शीतकालमें च्यार घडी, उष्णकालमें दो घडी पाछला दिनसे उक्त काल दिन उगणे के बाद कम्बली रखना चाहिये।

(६) दंडो-मुनियोंकों अपने कान प्रमाणे दंडा संयम या शरीर रक्षणनिमित्त रखना चाहिये।

(६) पात्रे-काष्टके तुंबेके मट्टीके आहार पाणी लानेके लिये. एक बिलसके चाडे हो तीन बिलास च्यारांगुलके परधीवाले।

(८) झोली-पात्रे वन्ध जानेके बाद गांठसे च्यारों पले च्यारांगुल ज्यादा रहना चाहिये. आहार लेनेको।

(९) गुच्छे-उनके गुच्छे पात्रोंके उपर नीचे देके जीवरक्षाके लिये पात्रा वन्धनेको रख जाते है।

श्री दशाश्रुतस्कन्ध सूत्रमें—

(१) बालकके लिये बनाया हुवा आहार मुनि लेवे तो दोष है कारण बालक रोने लग जावे हठ पकड लेवे।

(२) गर्भवन्तीके लिये बनाया आहार लेवे तो दोष।

श्री वृहत्कल्पसूत्रमें—

(१) अशांन, पान, खादिम, स्वादिम यह च्यार प्रकारके आहार रात्रीमें वासी रखके भोगवे तो दोष।

एवं ४२-५-२-२३-८-१२-५-६-२-१ सर्व १०६ जिस्में पांच दोष मांडलेके और १०१ दोष गोचरी लानेका है. द्रव्यसे इन दोषोंको टाले।

(२) क्षेत्रसे दो कोश उपरान्त ले जाके नही भोगवे

(३) कालसे पहिलापहर का लाया चरमपहर में न भोगवे।

(४) भावसे मांडलेके पांच दोष. संयोग, अंगाल, धूम, परिमाण, कारण इनी दोषों कों वर्ज के आहार करे उनसमय सरसराट चरचराट न करे स्वादके लिये एक गलाफका दुसरी गलाफमें न लेवे टेरा टीपके न डाले केवल संयम यात्रा निर्वाहने के लिये. गाडा के भांगण तथा गुमडेपर चगती कि माफीक शरीर का निर्वाह करने के लिये हो आहार करे॥ आहार पाणी के दोष दो प्रकार के होते हे। (१) आम दोष जोकि आम दोषवाला आहार पात्रमें आजावे तों भी परठने योग्य होते है। (२) गन्ध दोष जोकि सामान्य दोषीत आहार अनोपयोगसे आ जावे तों उनोकि आलोचना लेके भोगवीया जाते है। आम दोषवाला आहार बारहा प्रकारके है शेष गन्ध दोषवाला आहार समझना।

आधाकर्मी उद्देसीक पूतिकर्म, मिश्र, सूर्योदय पहलेका, सूर्यास्त पीच्छेका, कालातिक्रमका, मार्गातिक्रमका, ओछामें अ-

धिक किया हुवा, शंकावाला, मूल्य लाया हुवा, सचित्त पाणीको बुन्द जो शीतल आहारमें गीर गइ है वह इति। एषणा समिति।

(४) आदान मत्त भंडोपगरणीय समिति के च्यार भेद है द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव.

द्रव्यसे संयम यात्रा निर्वाहनेकों वस्त्रपात्रादि भंडोमत्तो पगरण रखा जाते है उनोंकि संख्या।

(१) रजोहरण-जीवरक्षानिमत्त तथा जैन मुनियोंका चन्ह इनकों शास्त्रकारोने धर्मध्वज कहा है वह आठ अगुलकि दसीयों चौवीस अंगुल कि दंडी कुल ३२ अगुलका रजोहरण होनाचाहिये।

(२) मुखवस्त्रिका-मक्खी मच्छरादि त्रस जीवों कि बोलते समय विराधना न हो या सूत्रादिक पर थुक से अशातना न हो. बोलते समय मुंह आगे रखनेकों एकविलस च्यार अगुल समचो-रस होना चाहिये।

(३) चोलपट्टा-कटीबन्ध पांच हाथका होता है।

(४) चदर-मुनियोंकों तीन साध्वीयोको च्यार।

(५) कम्बली-जीवरक्षानिमत्त, गमनागमन समय शरीर आच्छादन करनेकों चतुर्मासमें छेघडी, शीतकालमें च्यार घडी, उष्णकालमें दो घडी पाछला दिनसे उक्त काल दिन उगणे के बाद कम्बली रखना चाहिये।

(६) दंडो-मुनियोंकों अपने कान प्रमाणे दंडा संयम या शरीर रक्षणनिमित्त रखना चाहिये।

(६) पात्रे-काष्टके तुंबेके मट्टीके आहार पाणी लानेके लिये. एक विलसके चाहे दो तीन विलास च्यारांगुलके परधीवाले।

(८) झोली-पात्रे बन्ध जानेके बाद गांठसे च्यारों पले च्यारांगुल ज्यादा रहना चाहिये. आहार लेनेको।

(९) गुच्छे-उनके गुच्छे पात्रोंके उपर नीचे देके जीवरक्षाके लिये पात्रा बन्धनेको रख जाते है।

(१०) रजतान—पात्रे बन्धते समय विचमें कपडे दिये जाते है जीवरक्षा तथा पात्रोंकी रक्षा निमित्त ।

(११) पडिले-अढाइ हाथके लंबे, आधा हाथसे ज्यादा चोडे घट कपडेके ३-५-७ पडिले गोचरी जाते समय झोलीपर डाले जाते है जीवरक्षा निमित्ते ।

(१२) पायकेसरी—पात्रे पुंजनेके लिये छोटी पुंजणी. जीवरक्षा निमित्त ।

(१३) मंडलो-आहार करते समय उनका वस्त्र-पात्रोंके नीचे वीछाया जाते है, जिनसे आहार कीसी धरतीपर न गीरे. जीवरक्षाके निमित्त रखते है ।

(१४) संस्तारक—उनका २॥ हाथ लम्बा रात्रीमें संस्तारा —शयन समय विछाया जाता है ।

कंचवों और जंघीयों यह साध्वीयोंको शीलरक्षा निमित्त रखा जाते है, इन सिवाय उपग्रहा ही उपगरण जो कि—

ज्ञाननिमित्त—पुस्तक पाने कागज कलम सहि आदि ।

दर्शननिमित्त—स्थापनाचार्य स्मरणका आदि ।

चारित्रनिमित्त—दंडासन तृपणी लुणा गरणा आदि ।

(१) द्रव्यसे इन उपगरणोंको यत्नासे ग्रहन करे, यत्नासे रखे, यत्नासे काममें ले-वापरे-भोगवे ।

(२) क्षेत्रसे सब उपकरण यथायोग योग्यस्थानकपर रखे. न कि इधर उधर रखे सो भी यत्नापूर्वक ।

(३) कालोकाल प्रतिलेखन करे. प्रतिलेखन २५ प्रकारकी है जिस्में बारह प्रकारकी प्रशस्त प्रतिलेखन है ।

१ प्रतिलेखन समय वस्त्रकों धरतीसे उंचा रखे ।

२ प्रतिलेखन समय वस्त्रकों मजबुत पकडे ।

३ उतावला-आतुरतासे प्रतिलेखन न करे।

४ वस्त्रके आदि अन्त तक प्रतिलेखन करे।

इन च्यार प्रकारकी प्रतिलेखनकों दृष्टिप्रतिलेखन कहते है।

५ वस्त्रपर जीव चढ गया हो तो उसे थोडासा खंखेरे।

६ खखेरनेसे न निकले तो रजोहरणसे पुंजे।

७ वस्त्र या शरीरकों हीलावे नहीं।

८ वस्त्रके शल पड जानेपर मसले नही झट न देवे।

९ स्वल्प भी वस्त्र विगर प्रतिलेखन कीया न रखे।

१० ऊंचा नीचा तीरछा भित विगेरेके अटकावे नहीं।

११ प्रतिलेखन करते जीवादि दृष्टिगोचर हो तो यत्नापूर्वक परठे।

१२ वस्त्रादिकों झटका पटका न करे।

इनको प्रशस्त प्रतिलेखन कहते है अन्य अप्रशस्त कहते है, जलदी जलदी करे. वस्त्रकों मसले, उंचा नीचा अटकावे, भींत जमीनका साहारा लेवे, वस्त्रकों झटकावे, वस्त्र इधर उधर तथा प्रतिलेखन किया हुवा-विगर किया हुवा सामिल रखे, वेदिका ठीक न करे याने एक गोडेपर दोनों हाथ रख प्रतिलेखन करे, दोनों हाथ गोडोंसे निचे रखे, दोनों हाथ गोडोंसे उंचे रखे, दोनों हाथ गोडोंके भीतर रखे, एक हाथ गोडोंके अन्दर एक वहार यह पांच वेदिक दोष है (दोनों हाथ गोडोंसे कुच्छ उंचा रखना शुद्ध है) वस्त्रकों अति मजबुत पकडे, वस्त्रकों वहुत लम्बा करे, वस्त्र जमीनसे रगडे, एक ही वखतमें संपूर्ण वस्त्रको प्रतिलेखन करे, शरीर वस्त्रकों वारवार हलावे, पांच प्रकारके प्रमाद करता-हुवा प्रतिलेखन करे. इन वाराह प्रकारकी प्रतिलेखनकों अप्रशस्त कहते है. एवं २४ प्रतिलेखन करतां शंका पडनेसे

गीणती करे, उपयोगशुन्य हो एवं २५ प्रकारकी प्रतिलेखन हुइ इससे न्युन भी न करे, अधिक भी न करे, विप्रोत न करे, जिस्के विकल्प आठ है।

सं.	ज्यादा.	कम.	विप्रीत.	सं.	ज्यादा.	कम.	विप्रीत.
१	नकरे	नकरे	नकरे	५	करे	नकरे	नकरे
२	नकरे	नकरे	करे	६	करे	नकरे	करे
३	नकरे	करे	नकरे	७	करे	करे	नकरे
४	नकरे	करे	करे	८	करे	करे	करे

इन आठ भांगासे प्रथम भांगा विशुद्ध है, सात भांगा अशुद्ध है. प्रतिलेखन करते समय परस्पर वार्ते न करे, च्यार प्रकारको विकथा न करे, प्रत्याख्यान न करे न करावे, आगमवाचना लेना, आगमवाचना देना. यह पांच कार्य न करे अगर करे तो छे कायाके विराधक होते है।

(४) भावसे भंड उपगरणादि ममत्वभाव रहित वापरे, संयमके साधन-कारण समझे ।

(५) परिष्टापनिका समितिके च्यार भेद है. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव. जिस्में द्रव्यसे मल, मूत्र, श्लेष्मादि वडी चातुर्यमे परठे. कारण प्रगट आहार-निहार करनेसे मुनि दुर्लभबोधि होता है।

(१) कोइ आवे नही देखे नही वहां जाके परठे ।
(२) कीसी जीवोंको तकलीफ या घात न हो वहां परठे।
(३) विषम भूमि हो वहांपर न परठे
(४) पोली भूमि हो वहां न परठे कारण निवे जीवादि.
(५) सचितभूमिका हो वहां न परठे। [होतो मरे।

(६) विशाल लम्बी चोडी हो वहां जाके परठे ।
(७) स्वल्प कालकि अचित भूमि हो वहां न परठे ।
(८) नगर ग्रामके नजदीकमें न परठावे ।
(९) मूषादिके वील हो वहांपर न परठे ।
(१०) जहां निलण फूलण त्रस प्राणी हो वहां न परठे ।

इन दशों स्थानोंका विकलप १०२४ होते है जिस्मे १०२३ विकलप तो अशुद्ध है मात्र १ भांगा विशुद्ध है जहांतक वने वहां तक विशुद्धिकि खप करना चाहिये ।

(२) क्षेत्रसे मुनियोंको मल मात्र जंगल नगरसे दुर जाना चाहिये जहां गृहस्थ लोग जाते हो वहां नही जाना चाहिये. नगरके वाहार ठेरे होतों नगरमे तथा नगरके अन्दर ठेरे होतों गृहस्थोंके घरमें जाके नहीं परठे ।

(३) कालसे कालोकाल भूमिकाकी प्रतिलेखन करे ।

(४) भावसे पूंजी प्रतिलेखी भूमिकापर टटी पेशाव करते समय पहिले आवस्सही तीन दफे कहे 'अणुजाणह जस्सग्गो' आज्ञालेवे परठनेके वाद 'वोसिरामि' तीन दफे कहे पीछा आति वरूत 'निसिही' शब्द कहे स्थानपर आके इर्यावहि याने आलोचना करे इति समिति.

(१) मनोगुप्तिका चार भेद. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्यसे मनको सावद्य—सारंभ समारंभ आरंभमें न प्रवर्तावे. क्षेत्रसे सर्वत्र लोकमें. कालसे जाव जीवतक. भावसे मन आर्त रौद्र विषय कषायमें न प्रवर्तावे.

(२) वचनगुप्तिका चार भेद. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्यसे चार प्रकारकी विकथा न करे. क्षेत्रसे सर्वत्र लोकमें. कालसे जाव जीवतक. भावसे राग द्वेष विषयमें वचन न प्रवर्तावे सावद्य न बोले.

(३) कायगुप्तिका चार भेद. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्यसे खाजखुने नहीं. मैल उतारे नहीं. थुक थूके नहीं. आदि शरीरकी शुश्रूषा न करे. क्षेत्रसे सर्वत्र लोकमें. कालसे जावजीव तक. भावसे कायाको सावद्ययोगमें न प्रवर्तावे. इति तीन गुप्ति.

सेवं भंते सेवं भंते—तमेवसच्चम्.

—※—

थोकडा नम्बर ३३

(३६ बोलोंका संग्रह)

(१) असंयम. यह संग्रह नयका मत है।

(२) वन्ध दो प्रकारका है (१) रागवन्धन (२) द्वेषवन्धन।

(३) दंड ३ मनदंड, वचनदंड, कायदंड, ३ गुप्ति—मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति. ३ शल्य—मायाशल्य, नियाणाशल्य, मिथ्याशल्य. ३ गार्व—ऋद्धिगार्व, रसगार्व सातागार्व ३ विराधना—ज्ञानविराधना, दर्शनविराधना, और चारित्र विराधना.

(४) चार कषाय - क्रोध, मान, माया, लोभ. ४ विकथा—स्त्रीकथा, राजकथा, देशकथा, भक्तकथा. ४ संज्ञा—आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा, परिग्रहसंज्ञा. ४ ध्यान—आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान.

(५) पांच क्रिया—काईया, अधिगरणिया, पाउसिया, परितापणिया, पाणाईवाईया. पांच कामगुण—शब्द, रुप, गन्ध, रस, स्पर्श। ५ समिमि—इर्यासमिति, भाषासमिति एषणासमिति, आदान भंडमत निक्षेपणासमिति, उच्चार पासवण जलखेलमेल संघयण परिठापनिका समिति। ५ महाव्रत—सव्वाओ

पाणाईवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मृषाओ वायाओ वेरमण, सव्वाओ अदीन्नादानाओ वेरमणं, सव्वाओ मेहुआणो वेरमणं, सव्वाओ परिगाहो वेरमणं।

(६) छे काय—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय। छ लेश्या—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजसलेश्या पद्मलेश्या, शुक्लेश्या।

(७) सात भय—आलोक भय, परलोक भय, आदान भय, अंकश मात्र भय, मरण भय, अपयश भय, आजीवका भय।

(८) आठ मद—जातीमद, कुलमद, बलमद, रूपमद, तप मद, सूत्रमद, लाभमद, ऐश्वर्यमद।

(९) नौ ब्रह्मचर्यगुप्ति—स्त्री पशु नपुंसक सहीत उपाश्रयमें न रहे। यथा बिल्ली और मूषकका दृष्टांत १ स्त्रियोंकी कथा वारता न करे। यथा नीबूकी खटाईका दृष्टांत २ स्त्री जिस आसनपर बैठी हो उस आसनपर दो घडीसे पहिले न बठे। अगर बैठे तो तपी हुई जमीन पर ठसे हुवे घृतका दृष्टांत। ३ स्त्रीके अंगोपांग इन्द्रिय वगेरह न देखे। जैसे कच्ची आंख और सूर्यका दृष्टांत। ४ विषयभोगादि शब्दोंको भींत, टाटा, कनात आदिके अन्तरसेभी न सुने। यथा गजबीज समय मयूरका दृष्टांत। ५ पूर्व (गृहस्थाश्रम) के कामभोगको याद न करे। इसपर पंथिक और डोकरीके छासका दृष्टांत। ६ प्रतिदिन सरस आहार न करे। अगर करे तो सन्निपातका रोगमें दूध मिश्रीका दृष्टांत। ७ प्रमाणसे अधिक आहार न करे। जैसे सेरकी हंडीमें सवासेर पकाना (रांधना) का दृष्टांत ८ शरीरकी शुश्रुषा विभूषा न करे। अगर करे तो काजलकी कोठरीमे सफेद कपडेका दृष्टांत ९

(१०) दश यति धर्म—खंते (क्षमा करना) मुत्ते (निर्लोभना) अज्जवे (सरलता) मद्दवे (मदरहित) लाघवे (द्रव्य-

भावसे हलका) सच्चे (सत्य बोले०) संयमे (१७ प्रकार संयम पाले) तवे (१२ प्रकारका तप करे) चईए (ग्लानिमुनिको आहार प्रमुख लादे) बंभचेरे (ब्रह्मचर्य पाले)

(११) इग्यारा श्रावक प्रतिमा (अभिग्रह विशेष) दर्शन प्रतिमा, व्रतप्रतिमा, आवश्यकप्रतिमा, पौषधप्रतिमा, एकरात्रीप्रतिमा, ब्रह्मचर्यप्रतिमा, सचित्तप्रतिमा, आरंभप्रतिमा, सारंभ प्रतिमा, अदिट्ठभूतप्रतिमा, श्रमणभूतप्रतिमा, विस्तारमें शीघ्रबोध भाग २० वा में

(१२) बाराहों भिक्षुप्रतिमा. क्रमशः सातों प्रतिमा एकेक मासकि है, आठवी प्रथम सात रात्री, नौवी दुसरे सात रात्री, दशवी तीसरे सात रात्रीकी. इग्यारवी दो रात्रीकी, बारहवी एक रात्रीकि महाप्रतिमा इनका भी सविस्तर वर्णन शीघ्रबोध भाग २० पृष्ट में देखो।

(१३) तेरहा क्रिया. अर्थदंडक्रिया, अनर्थदंडक्रिया, हिंसादंड, अंकशमात्र, अज्ञत्यदोषवत्तिया. पेज्जवत्तिया, मित्रदोषवत्तिया. मोसवत्तिया, अदत्तवत्तिया. मानवत्तिया, माया० लोभ० इर्यावहिक्रिया.

(१४) जीवके चौदे भेद—सूक्ष्मएकेन्द्री, बादरएकेन्द्री, बेइन्द्री, तेइंद्री, चौरेन्द्रि, असन्नीपंचेन्द्री. सन्नीपचेन्द्री इन सातों का पर्याप्ता अपर्याप्ता गणने से चौदे भेद हुवे.

---

(१५) पनरह परमाधांमी देवता—आंम्रे. अम्ररसे. सांबे, सबले, रुद्रे, विरुद्रे, काले, महाकाले, असीपति. घणु, कुंभे, वालु वैतरणी, खरखरे, महाघोषे.

(१६) सुयगडांगसूत्रके प्रथम स्कंधका सोलह 'अध्ययन— स्वसमय परसमय, वेताली, उपसर्गप्रज्ञा, स्त्रीप्रज्ञा, नरक० वीरस्थुई० कुसीलप्रवास० धर्मपन्नति० वीर्य० समाधी० मोक्षमार्ग०

समोसरण० यथास्थित० ग्रन्थ अध्ययन० यमतिथि अध्ययन० गहा अध्ययन०

(१७) सतरह प्रकारे संयम—पृथ्विकायसयम, अप्पकाय० तेउकाय० वायुकाय० वनस्पतिकाय० वेइन्द्री० तेइन्द्री० चौरिंद्री० पंचेन्द्री० अजीव० प्रेक्षा० (जयणापूर्वक वर्ते बहु मूल्य वस्तु न वापरे) उपेक्षा० (आरभ तथा उत्सूत्रादि न प्ररुपे) पुंजणप्रतिलेखन० परठावणीय० मन० वचन० काय०

(१८) ब्रह्मचर्य १८ प्रकार—औदारिक शरीर संबंधी मैथुन (न सेवे) न करे न दूसरेसे करावे और न करतेको अच्छा समजे मनसे, वचनसे, कायासे यह नौ भेद औदारिक से हुवे ऐसे ही नौ वैक्रियसे भी समज लेना एवम् १८

(१९) ज्ञातासूत्रका अध्ययन १९ मेघकुमार, धनासार्थवाह, मोरडीकाईडा, कूर्म-काच्छप, शैलकराजऋषीश्वर, तूंवडीके लेप का, रोहिणीजीका, मल्लीनाथजीका, जिनऋषीजिनपालका, चन्द्र-माकीकलाका, दवदवावृक्षका, जयशत्रु राजा और सुबुद्धि प्रधान का, नन्दनमणीयारका, तेतलीप्रधान पोटलासोनारीका, नदीफल वृक्षका, महासती द्रौपदीका, कालोद्वीपके अश्वोंका, सुसमा वाल-काका, पुंडरीकजीका.

(२०) असमाधीस्थान—बीस बोलोंको सेवन करनेसे स-यम असमाधी होते है। धमधम करते चले, विना पूंजे चले, कहीं पूंजे और कहीं चले, मर्यादासे उपरान्त पाट पाटलादिक भोगवे, आचार्योपाध्यायका अवर्णवाद बोले, स्थिवरकी घात चिंतवे, प्रणभूतकी घात चिंतवे, प्रतिक्षण क्रोध करे, परोक्षे अव-गुणवाद बोले, शंकाकारी भाषाको निश्चयकारी बोले, नया क्रोध करे, उपशमे हुये क्रोधको फीर उत्पन्न करे, अकालमें सझाय करे, सचित रजयुक्तपांवसे आसनपर बैठे. पेहररात्री पीछे दिन निक-

ले यहांतक उंचे स्वरसे उच्चारण करे, मनसे जुंजकरे, वचनसे जुंजकरे, कायसे जुंजकरे, सूर्यके उदयसे अस्त तक लाउंखाउं करे, आहारपानीकी शुद्ध गवेषणा न करे तो असमाधी दोष लगे.

(२१) सवला—यह एकवीस दोषका सेवन करनेसे संयमकी घातरूपी सवला दोष लगे. हस्तकर्म करेतो० मैथुन सेवेतो० रात्रिभोजन करेतो० आधाकर्मी आहार करेतो० राजपिंड भोगवेतो० पांच+ दोष सहित आहार करेतो० वारंवार प्रत्याख्यान भांगेतो० दिक्षा लेकर छे महीना पहिले एक गच्छसे दूसरे गच्छमें जावेतो० एक मासमें तीन नदीका लेप लगावेतो० एक मासमें तीन मायास्थान सेवेतो० सिज्झातरका पिंड (आहार) भोगवेतो० आकुटी (जानकर) जीव मारेतो० जानकर झूठबोले तो० जानकर चोरी करेतो० सचित्त पृथिवी उपर वैठे जीवको उपसर्ग करेतो० स्निग्ध पृथिवीपर वैठके जीवको उपद्रव करेतो० प्राण भूत जीव सत्ववाली धरतीपर वैठेतो० दशजातकी हरी वनास्पति खावेतो० एक वर्षमें दश नदीका लेप लगावेतो० एक वर्षमें दश मायास्थान सेवेतो० सचित पानी पृथ्वी आदि लगेहुवे हाथसे आहारपांनी लेतो सवला दोष लागे।

(२२) वावीस परिसह—क्षुधा, पीपासा, शीत, उष्ण, डांस, (मच्छर) अचेल (वस्त्ररहित) अरति, स्त्री, सिझाय, चर्या (चलना) निसिया, (वैठना) आक्रोश, वद्ध याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, जल्लमेल, सत्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, और दर्शन परिसह.

(२३) सुयगडांगसूत्रके पहले दूसरे श्रुत स्कंधके २३ अध्ययन जिसमें पहिले श्रुत स्कंधके १६ अध्ययन सोलहवें वोलमें लिखआये

+ पांच दोष—इंगालि, धूमगद, पामीचे, अछीजे, अणिसठि

है और दूसरे श्रुत स्कधके सात अध्ययन—पुष्करणीवावडीका० क्रियाका० भाषाका० अनाचारका० आहारप्रज्ञा० आर्द्रकुमारका० उदक पेढालपुत्रका० एवं २३

(२४) चौवीस तीर्थंकर—ऋषभदेवजी, अजीत, संभव, अभिनदन, सुमती, पद्मप्रभु, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभु, सुविधि, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्थु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व, वर्धमान० एवं २४ तथा देवता-दश भुवनपति, आठ वाणव्यंतर, पांच ज्योतिषि, एक वैमानिक. एवं २४ देव।

(२५) पांच महाव्रतकी पचवीस भावना (संयमकी पुष्टी) यथा पहिले महाव्रतकी पांच भावना—ईर्याभावना, मनभावना, भाषाभावना, भंडोपगरण यत्नापूर्वक लेने रखनेकि भावना, आहारपानीकी शुद्ध गवेषणा करना भावना॥ दूसरे महाव्रतकी पांच भावना—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देखकर विचार पुर्वक बोले, क्रोधके वस न बोले (क्षमा करे) लोभवस न बोले. (सन्तोष रखे) भयवस न बोले (धैर्य रखे) हास्यवस न बोले (मौन रखे)॥ तीसरे महाव्रतकी पांच भावना—विचार कर अविग्रह (मकानादिकी आज्ञा) ले, आहारपानी आचार्यादिककी आज्ञा लेकर वापरे, आज्ञा लेतां कालक्षेत्रादिककी आज्ञा ले, साधर्मीका भंडोपगरण वापरे तो रजा लेकर वापरे, ग्लानी आदिक की वैयावच्च करे॥ चौथे महाव्रतकी पांच भावना—वारंवार स्त्रीके श्रृंगारादिककी कथा वार्ता न करे, स्त्रीके मनोहर इन्द्रियों को न देखे. पुर्वमें किये हुवे काम क्रीडाओंको याद न करे, प्रमाण उपरान्त आहारपानी न वापरे, स्त्रीपुरुष नपुंसकवाले मकानमें न रहे॥ पांचवे महाव्रतकी पांच भावना—विषयकारी शब्द न

सुने, विषयकारीरुप न देखे, विषयकारी गन्ध न ले, विषयकारी रस न भोगवे, विषयकारी स्पर्श न करे.

(२६) दशाश्रुतस्कंधका दश अध्ययन, व्यवहारसूत्रका दशअध्ययन, वृहत्कल्पका छे अध्ययन, कुल मिलाकर २६ अध्ययन हुवे.

(२७) मुनिके गुण सत्तावीस—पांच महाव्रत पाले. पांच इन्द्रिय दमे, चार कषाय जीते, मनसमाधी, वचनसमाधी, कायसमाधी, नाणसंपन्ना, दर्शनसंपन्ना, चारित्रसंपन्ना, भावसच्चे, करणसच्चे, योगसच्चे, क्षमावंत, वैराग्यवंत, वेदनासहे, मरणका भय नही, जीनेकि आशा नहीं.

(२८) आचारांग कल्पका २८ अध्ययन—आचारांग प्रथम श्रुतस्कंधका नौ अध्ययन—शस्त्रप्रज्ञा, लोकविजय, शीतोष्ण समकितसार, लोकसार, धुत्ता, विमुखा, उपाधान, महाप्रज्ञा ॥ दूसरे श्रुतस्कंधका १६ अध्ययन—पंडेषणा, सज्झाएषणा, इर्यापएषणा, भाषाएषणा वस्त्रेषणा, पात्रेषणा, उग्गपडिमा, उच्चारशतकीया, ठाणशतकीया, निसिहशतकीया, शब्दशतकीया, रुपशतकीया, अन्योन्यशतकीया, प्रक्रीयाशतकीया, भावना अध्ययन, विमुत्ति अध्ययन ॥ निशियसूत्रके तीन अध्ययन—उग्धाया (गुरु प्रायश्चित्) अनुग्धाया (लघु प्रायश्चित्) आरोपण (प्रायश्चित्त देनेकी विधि).

पापसूत्र—भूमिकंप, उप्पाए, (आकाशमें उत्पातादिक) सुपन (स्वप्ना) अंगे (अग स्फुरण) स्वर (चन्द्रसूर्यादिक) अंतलिख्खे (आकाशादिम चिन्ह) व्यंजन (तिलमसादि) लख्खण (हस्तादिकी रेखा वगेरे) ये आठ सूत्रसे, आठ वृत्तिसे और आठ सूत्रवृत्ति दोनोंसे, एवम् चोवीस, विकाणुयोग, विज्ञाणुयोग, मंत्राणुयोग, योगाणुयोग, अणतिन्थीय पयत्ताणुयोग २९ ॥

(३०) महा मोहनियवंधका कारण तीस—१ त्रस जीवोंको
पानीमें डुवाकर मारनेसे महा मोहनियकर्म बांधे, २ त्रस जीवों-
को श्वास रोकके मारे तो० ३ त्रस जीवोंको अग्निमें या धूप देकर
मारे तो० ४ त्रस जीवोंको मस्तकपर चोट देकर मारे तो० ५ त्रस
जीवोंको मस्तकपर चमडे वगेरेका वंधन देकर मारे तो० ६ पा-
गल (घेला) गूंगा वावला (चित्तभ्रम) वगेरेकी हांसी करे तो०
७ मोटा (भारी) अपराधको गोपकर (छिपाकर) रखे तो० ८
अपना अपराध दूसरेपर डाले तो० ९ भरीसभामें मिश्रभाषा
वोले तो० १० राजाकी आती हुइ लक्ष्मी रोके या दाणचोरी करे
तो० ११ ब्रह्मचारी न हो और ब्रह्मचारी कहावे तो० १२ वाल
ब्रह्मचारी न हो और वालब्रह्मचारी कहावे तो० १३ जिसके प्र-
योगसे अपनेपर उपकार हुवा हो उसीका अवगुण वोले तो० १४
नगरके लोगोंने पंच वनाया वह उसी नगरका नुकसान करे तो०
१५ स्त्री भरतारको या नौकर मालिकको मारे तो० १६ एक देश
के राजाकी घात चिंतवे तो० १७ वहुत देशोंके राजावोंकि घात
चिंतवे तो० १८ चारित्र लेनेवालेका परिणाम गिरावे तो०
१९ अरिहंतका अवर्णवाद वोले तो० २० अरिहतके धर्मका
अवर्णवाद वोले तो० २१ आचार्योपाध्यायका अवर्णवाद वोले
तो० २२ आचार्योपाध्याय ज्ञान देनेवालेकी सेवाभक्ति यशः
कीर्ति न करे तो० २३ वहुश्रुति न होकर वहुश्रुति नाम धरावे
तो० २४ तपस्वी न होकर तपस्वी नाम धरावे तो० २५ ग्लानी-
की व्यावच्च (टेहल चाकरी) करनेका विश्वास देकर वैयावच्च
न करे तो० २६ चतुर्विधसघमें छेदभेद करे तो० २७ अधर्मकी
प्ररूपणा करे तो० २८ मनुष्य. देवतोंके कामभोगसे अतृप्त हो-
कर मरे तो० २९ कोई श्रावक मरके देवता हुवा हो उसका
अवर्णवाद वोले तो० ३० अपने पास देवता न आते हो और
कहे कि मेरे पास देवता आता है तो महा मोहनियकर्म वांधे।

उपरोक्त तीस बोलोंमें से कोई भी बोलका सेवन करनेवाला ७० कोडाकोडी सागरोपम स्थितिका महा मोहनियकर्म बांधे.

(३१) सिद्धोंके गुण ३१ ज्ञानावर्णिय कर्मकि पांच प्रकृति क्षय करे यथा—मतिज्ञानावर्णिय, श्रुतज्ञा० अवधिज्ञा० मनःपर्यव ज्ञा० केवलज्ञानावर्णिय० दर्शनावर्णियकर्मकी नौ प्रकृति क्षय करे यथा—चक्षुदर्शणावर्णिय, अचक्षुद० अवधिद० केवलद० निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, थीणद्धी, वेदनिकर्मकी दो प्रकृति क्षय करे—शाता वेदनिय, अशाता वेदनिय, मोहनियकर्मकी दो प्रकृति—दर्शनमोहनी, चारित्रमोहनी आयुष्यकर्मकी चार प्रकृति—नारकी, तिर्यंच, मनुष्य, देवताका आयुष्य० नामकर्मकी दो प्रकृति—शुभनाम अशुभनाम, गोत्र-कर्मकी २ प्रकृति—उच्चगोत्र, निचगोत्र और अंतरायकर्मकी पांच प्रकृति—दानांतराय, लाभांतराय भोगांतराय, उपभोगांतराय, वियांतराय एवं ३१ प्रकृति क्षय होनेसे ३१ गुण प्रगट हुवे है.

(३२) योगसंग्रह—मोक्षके लिये आलोचना देनी, आलोचन देनेवाले सिवाय दूसरेको न कहना, आपत्तीकालमें भी दृढता धारण करनी, किसीकी सहायता विना उपधानादि तप करना, गृहण आसेवना शिक्षा धारणकरनी, शरीरकी सालसंभाल न करनी, गुप्त तपस्या करनी, निर्लोभ रहना, परिषह सहन करना, सरल भाव रखना. सत्यभाव रखनी, सम्यक्‌दर्शन शुद्ध० चित्त-स्थिरता० निष्कपटता० अभिमान रहित० धैर्यता० संवेग० माया-शल्य रहित० शुद्धक्रिया० संवरभाव० आत्मनिर्दोष० विषय रहित० मूलगुण धारणा० उत्तरगुण धारणा० द्रव्यभावसे पापकों वोसिरे २ कहना० अप्रमाद० कालोकाल क्रियाकरनी० ध्यानस-माधि धरना. मरणांत कष्ट सहन करना प्रतिज्ञा दृढता० प्राय-श्चित लेना० समाधासे संथारा करना०

(३३) गुरुकी तैतीस आशातना—गुरुके आगे शिष्य चले तो आशातना, गुरुकी बराबर चलेतो० गुरूके पीछे स्पर्श करता चलेतो० एवम् तीन, बैठते समय और तीन खडे रहते समय तीन एवं नौ प्रकारसे गुरुकी आशातना होती है गुरुशिष्य एकसाथ स्थंडिल जावे और एक पात्रमें पानी होतो गुरूसे शिष्य पहिले सुचि करे तो. स्थंडिलसे आकर गुरूसे पहिले इरियावही पडि कमेंतो० विदेशसे आयेहुवे श्रावकके साथ गुरुसे पहिले शिष्य वार्तालाप करेतो० गुरू कहे कौन सूते है और कौन जागते है, तो जागताहुवा शिष्य न बोलेतो० शिष्य गौचरी लाकर गुरूसे आलोचना न ले और छोटेके पास आलोचना करेतो० पहिले छोटेको आहार बताकर फिर गुरूको आहार बतावेतो० पहले छोटे साधुको आमंत्रण करके फिर गुरुको आमंत्रण करेतो० गुरुसे बिना पुछे दुसरोंको मनमान्य आहार देतो० गुरुशिष्य एक पात्रमें आहार करे और उसमेंसे शिष्य अच्छा २ आहार करेतो० गुरुके बोलानेपर पीछा उत्तर न देतो० गुरुके बुलानेपर शिष्य आसनपर बैठाहुवा उत्तर देतो० गुरुके बुलानेपर शिष्य कहे क्या कहते हो ऐसा बोलेतो० गुरु कहे यह काम मतकरो शिष्य जवाब दे कि तू कौन कहनेवालातो० गुरु कहे इस ग्लानीकी वैयावच करो तो बहोत लाभ होगा इसपर जवाब दे क्या आपको लाभ नहीं चाहिये ऐसा बोलेतो० गुरुको तुंकारा तुंकारा दे लापर-वाईसे बोले) तो० गुरुका जातीदोष कहेतो० गुरु धर्मकथा करे और शिष्य अप्रसन्न होवेतो० गुरु धर्मदेशना देताहो उसवक्त शिष्य कहे यह शब्द ऐसा नहीं ऐसा है तो० गुरु धर्मकथा कहे उस परिषदामें छेदभेद करेतो० जो कथा गुरु परिषदामें कहीहो उसी कथाको उसीपरिषदामें शिष्य अच्छीतरहसे वर्णन करेतो० गुरु धर्मकथा कहतेहो और शिष्य कहे गोचरीकी वखत होगई

कहांतक व्याख्यान होगे तो० गुरुके आसनपर शिष्य बैठे तो० गुरुके पाट या बिछौनेको ठोकर लगाकर क्षमा न मांगेतो० गुरुसे ऊचे आसनपर बैठे तो० यह तैतीस आशातना अगर शिष्य करेंगे तो यह गुरु आज्ञाका विराधि हो ससारमें परिभ्रमन करेंगें।

(३४) तीर्थंकरोंके चौतीस अतिसय--तीर्थंकरके केश, नख न वधे सुशोभित रहे० शरीर निरोग० लोहीमांस गोक्षीरजैसा० श्वासोश्वास पद्म कमलजैसा सुगन्धी, आहार निहार चर्मचक्षु-वाला न देखे० आकाशमें धर्मचक्र चले० आकाशमें तीन छत्र धारण रहै० दो चामर वींजायमान रहे० आकाशमें पादपीठ सहित सिंहासन चले० आकाशमें इन्द्रध्वज चले० अशोकवृक्ष रहे० भामंडल होवे० भूमीतल सम होवे० कांटा अधोमुख होवे० छहो ऋतु अनुकुल होवे० अनुकूल वायु चले० पांच वर्णके पुष्प प्रगट होवे० अशुभ पुद्गलका नाश होवे० सुगंधवर्षासे भूमी स्वच्छ होवे० शुभ पुद्गल प्रगटे० योजनगामिना ध्वनी होवे० अर्ध मागधी-भाषामें देशना दे० सर्व सभा अपनी २ भाषामें समझे० जन्मवैर. जातीवैर शांतहो० अन्य मतावलंबी भी आकर धर्म सुने और विनय करे० प्रतिवादी निरूत्तर होवे० पचीस योजनसुधी कोइ किस्मका रोग उपद्रव न होवे० मरकी न होवे० स्वचक्रका भय न होवे० परलश्करका भय न होवे० अतिवृष्टि न होवे० अना-वृष्टि नहो० दुकाल न पडे० पहिले हुवा उपद्रव भी शांत होवे० इन अतिशयोंमें ४ अतिशय जन्मसे होते है. ११ अतिशय केव-लज्ञान होनेसे होते है और १९ अतिशय देवकृत होते है.

(३५) वचनातिशय पैंतीस--संस्कारवचन, उदात्त गंभीर० अनुनादी० दाक्षिण्यता० उपनीतराग० महा अर्थगर्भित० पुर्वापर अविरुद्ध० शिष्ट० संदेह रहित० योग्य उत्तरगर्भित० हृदयग्राही०

क्षेत्रकालानुकूल० तत्वानुरूप० प्रस्तुत व्याख्या० परस्पर अपि-रूद्ध० अभिजात० अति स्निग्ध० मधुर० अन्य मर्मरहित० अर्थ धर्मयुक्त० उदार० परनिंदा स्वश्लाघा रहित० उपगतश्लाघा० अनयनीत० कुतूहल रहित० अद्भूत स्वरूप० विलंब रहित० विभ्रमादि दोष रहित विचित्रवचन० आहित विशेष० साकार विशेष० सत्व विशेष० खेद रहित० अव्युच्छेद०

(३६) उत्तराध्ययनसूत्रके ३६ अध्ययन—विनय० परिसह० चउरंगिय० असंक्खय० अकाम सकाम मरण० खुड्डानियंठि० पलय० काविल० नमिपव्वज्झा० दुमपत्तय० वहुस्सुय० हरिएस-वल० चित्तसंभू० उसुयार० भिक्खू० वंभचेरसमाहि० पाव-समण संजईराय० मियापुत्तो० महानिग्गंथी० समुद्दपालिय० रहनेमी० केसीगोयम० पवयणमाया० जयघोस विजयघोस० सामायारी० खलुंकि० मुक्खमग्गई० समत्त परिक्कमिय० तवमगाय० चरणविहीय० पमायठाण० अठकम्मपगडी० लेस० अणगारमग्ग० जीवजीव विभत्ती० इति।

सेवंभंते सेवंभंते—तमेवसच्चम्

थोकडा नम्बर ३४.

श्री भगवतीजीसूत्र श० २५ उ० ६

(निग्रन्थोंके ३६ द्वार)

पन्नवणा—प्ररुपणा वेय—वेद ३ राग—सरागी २ कप्प—क[illegible] नही[illegible] ६ चारित्र—सामायिकादि ५ पडिसेवण—दोष लागेके

ज्ञान-मत्यादि ५, तित्थे-तीर्थमें होवे २, लिंग-स्वलिंगादि शरार-औदारिकादि, खित्ते-किसक्षेत्रमें, काले-किसकालमें, गती-किस-गतीमें संयम-संयमस्थान निकासे-चारित्रपर्याय योग--सयोगी अयोगी उपयोग-साकार बहुता २ कषाय-सकषाय २ लेसा-कृष्णादि ६ परिणाम-हियमानादि ३ बंध-कर्मका वेदय-कर्मवेदे, उदीरणा-कर्मकी, उवसंपझाण-कहांजावे सन्नो-सन्नाबहुता, आहार -आहारी २ भव-कितना भव करे आगरेस कितने वख्त आवे काल-स्थिती अंतरा समुदघात-वेदना ७ क्षेत्र-कितने क्षेत्रमें होवे फुसणा-किताक्षेत्रस्पर्शे भाव-उदयादि ५ परिणाम-कितनालाधे अल्पाबहुत्व इति ३६ द्वार।

(१) पन्नवणा-नियठा (साधु) छे प्रकारके है

(१) पुलाक-दो प्रकारके है। (१) लब्धी पुलाक जैसे चक्रवर्ती आदि कोई जैनमुनी या शासनकी आशातना करे तो उसकी सेना वगेरहको चकचूर करनेके लिये लब्धीका प्रयोग करे (२) चारित्र पुलाक—जिसके पांच भेद ज्ञानपुलाक, दर्शन पुलाक, चारित्रपुलाक. लिंगपुलाक, (विना कारण लिंग पल-टावे) अहसुहम्मपुलाक, (मनसेभी अकल्पनीय वस्तु भोगनेकी इच्छा करे। जेसे चावलोंकि सालीका पुला जिसमें सार वस्तु कम और मटी कचरा ज्यादा।

(२) बकुश-के पांच भेद है। आभोग (जानता हुवा दोष लगावे) अणाभोग, (विनाजाने दोष लगे) संवुडा. (प्रगट दोष लगावे) असवुडा. (छाने दोष लगावे) अहासुहम्म, (हस्त मुख धोवे या आंखें आंजे) जेसे शालका गाइटा जिसमे खला कर-नेसे कुच्छ मट्टी कम हुइ है।

(३) पडिसेवना—५ भेद-ज्ञान, दर्शन, चारित्र में अति-चार लगावे। लिंगपलटावे, आहासुहम, तप करके देवताकी

पदवी वांच्छे। जैसे शालीके गाइठाकों उपण-वायुसे बारीक झीणे कचरेकों उठा दीया परन्तु बडे बडे डांखले रह गये।

(४) कषायकुशील-५ भेद-ज्ञान, दर्शन, चारित्रमें कषाय करे, कषायकरके लिंग पलटावे, अहासुहम, (तप करी कषाय करे) कचरा रहित शाली।

(५) निग्रंथ-५ भेद-प्रथम समय निग्रंथ, (दशमें गुण-स्थानकसे, इग्यारवें गु० बारहवें गु० वाले प्रथम समयवर्ते) अप्रथम समय, (दो समयसें ज्यादा हो) चर्मसमय, जिसको १ समयका छद्मस्थापना शेष रहा हो) अचर्मसमय, (जिसको दो समयसे ज्यादा बाकी हो) अहासुहम, (सामान्य प्रकारे वर्ते) शालीकों दल छातु निकालके चावल निकाले हुवे।

(६) स्नातक-५ भेद-अच्छवी, (योगनिरोध) असवले, (अतिचारादि सबला दोष रहित) अकम्मे, (घातीकर्म रहित) संसुद्ध ज्ञानदर्शन धारी केवली, अपरिस्सावी, (अबंधक) ज्ञान दर्शनधारी अरिहंत जिन केवलीजेसे निर्मल अखंडित सुग-न्धी चावलोंकी माफीक।

ऐसे छे प्रकारके साधु कहे हैं. इनकी परस्पर शुद्धता शालीका दृष्टांत देकर समझाते हैं। जैसे मट्टी सहित उखाडी हुई शालाका पुला जिसमें सार कम और असार जादा. वैसेही पुलाकसाधुमें चारित्रकी अपेक्षा सारकम और अतिचारकी अ-पेक्षा असार ज्यादा है दूसरा शालका गाईटा (पुला) पहलेमे इसमें सार जादा है. क्योंकि पूलमें जो रेतीथी वह निकल गई वैसेही पुलाकसे बकुशमें सार जादा है. तीसरा उडाई हुई शाली. जो बारीक कचराथा वह हवासे उड गया. वैसेही बकुशसे पडिसे-

वनमें सार जादा है. चौथा सर्व कचरा निकाली हुई शाली के समान कषाय कुशील है. पांचवा शालीसे निकालाहुवा चावल इसके समान निग्रंथ है. छठा साफ किया हुवा अखंड चावल जिसमें किसी किसमका कचरा नहीं वैसे स्नातक साधु है. द्वारम्.

(२) वेद—पुरुष, स्त्री, नपुंसक, अवेदी० जिस्मे पुलाक. पुरूष वेदी और-पुरुष नपुंसकवेदी होते है, वकुश. पु० स्त्री० न० वेदी होते है. वैसेही पडिसेवनमें तीनो वेद कषायकुशील. सवेदी, और अवेदी, सवेदी होतो तीनोवेद अवेदी होतो उप-शान्त अवेदी या क्षीण अवेदी निग्रंथ उपशान्त अवेदी और क्षीण अवेदी होते है. और स्नातक क्षीणअवेदी होते है द्वारम्

(३) रागी—सरागी वीतरागा—पुलाक, वुकश, पडिसेवना कषाय कुशील एवं ४ नियंठा सरागी होते है निग्रंथ उपशान्त वीतरागी और क्षीण वीतरागी होते है. स्नातक क्षीण वीतरागी होते है द्वारम्.

(४) कल्प ५=स्थितकल्प, अस्थितकल्प, स्थिवरकल्प, जिनकल्प, कल्पातीत.—कल्प दश प्रकारके है, १ अचेल २ उदेशी, ३ रायपिंड, ४ सेझात्तर, ५ मासकल्प, ६ चौमासीकल्प, ७ व्रत, ८ पडिक्रमण, ९ किर्तीकर्म, १० पुरुषाजेष्ट, यह दशकल्प० पहिले और छेहले तीर्थंकरोंके साधूवोंके स्थितकल्प होता है. शेष २२ तीर्थंकरोंके शासनमें अस्थितकल्प है उपर जो १० कल्प कहआये है. उसमें ६ अस्थितकल्प है १–२–३–५–६–८ और चार स्थितकल्प है ४-७–९–१० (३) स्थिवरकल्प वस्त्रपात्रादि शास्त्रोक्त रखे. (४) जिनकल्प जघन्य २ उत्कृष्ट १२ उपगरण-रक्खे (५) कल्पातित केवलज्ञानी, मनः पर्ययज्ञानी, अवधिज्ञानी,

चौदे पूर्वधर, दश पूर्वधर, श्रुतकेवली, और जातिस्मरणादि-
ज्ञानी ॥ पुलाक-स्थितीकल्पी, अस्थितीकल्पी, स्थिवरकल्पी, होते
है. वकुश, पडिसेवणा पूर्ववत् तीन और जिनकल्प भी होवे.
कषायकुशील पूर्ववत् चार और कल्पातीतमें भी होवे. निग्रंथ,
स्नातक-स्थित० अस्थित० और कल्पातीतमें होवे द्वारम्.

(५) चारित्र ५ सामायिक, छेदोपस्थापनिय, परिहारवि-
शुद्धि, सुक्षमसंपराय, यथाख्यात—पुलाक, वकुस, पडिसेवणमें०
समायक, छेदो० चारित्र होता है. कषायकुशीलमें सामा० छेदो०
परि० सूक्ष० चारित्र होते है. और निग्रंथ, स्नातकमें यथाख्यात
चारित्र होता है. द्वारम्

(६) पडिसेवण २ मूलगुणप० उत्तरगुणप० पुलाक, पडिसे-
वणी मुलगुणमें (पंचमहाव्रत) और उत्तरगुणमें (पिण्डविसु-
द्धादि) दोषों लगावे वुकश मुलगुणअपडिसेवी उत्तरगुणपडिसेवी
वाकी तीन नियंठा अपडिसेवी द्वारम्

(७) ज्ञान. ५ मत्यादि पुलाक, वकुश, पडिसेवणमें दो-
ज्ञान मति, श्रुति ज्ञान और तीन हो तो मति, श्रुति, अवधि, क-
पायकुशील, और निग्रंथमें ज्ञान दो. तीन चार पावे. दो हो तो
मति, श्रुति तीनहो तो मति श्रुति, अवधि या मनःपर्यव० चार हो
तो मति, श्रुति, अवधि और मनःपर्यव स्नातकमें एक केवलज्ञान
और पढनेआश्री पुलाक जघन्य नौ (९) पूर्वन्युन उत्कृष्ट नौ (९)
पूर्व सम्पूर्ण. वकुश, पडिसेवण जघन्य अष्टप्रवचनमाता उ० दश-
पूर्व. कषायकुशील ज० अष्टप्रवचनमाता उ० १४ पूर्व. निग्रंथ भी
ज० अष्ट प्र० उ० १४ पूर्व एक स्नातकसूत्र वितिरिक्त. द्वारम्.

(८) तीर्थ-पुलाक, वकुश, पडिसेवण तीर्थमें होवे शेष

तीन नियंठा तीर्थमें और अतीर्थमें भी होते है. तीर्थंकर हो और प्रत्येक बुद्धि हो. द्वारम्.

(९) लिंग–छेहो नियंठा (साधु) द्रव्य लिंग आश्री स्वलिंग, अन्यलिंग, गृहलिंग तीनोंमें होवे. और भावलिंग आश्री स्वलिंगमें होते है. द्वारम्.

(१०) शरीर—५ औदारिक वैक्रिय, आहारक, तेजस. कार्मण, पुलाक, निर्ग्रंथ, स्नातकमें औ० ते० का० तीन शरीर. वकुश. पडिसेवणमें औ० ते० का० वै० और कषायकुशीलमें पांचों शरीरवाले मिलते है. द्वारम्।

(११) क्षेत्र २ कर्मभूमी, अकर्मभूमी–छे हों नियंठा जन्म-आश्री १५ कर्मभूमीमें होवे और संहरणआश्री पुलाकको छोडके शेष ५ नियंठा कर्मभूमी. अकर्मभूमी, दोनोमें होते है. प्रसंगोपात पुलाक लब्धि आहारिक शरीर, सध्वीका, अप्रमादी, उपशम श्रेणीवालेका, क्षपकश्रेणी०, केवलज्ञान उत्पन्न हुवे पीछे, इन सातोंका संहरण नहीं होता द्वारम्.

(१२) काल—पुलाक, उत्सर्पिणीकालमें जन्मआश्री तीजे, चौथे आरामें जन्मे और प्रवर्तनाश्री ३-४-५ आरामें प्रवर्ते. अवसर्पिणीकालमे दूजे, तीजे चौथे आरामें जन्मे और तीजे, चौथे आरामें प्रवर्ते. नो उत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी चौथे पली भाग (दुषमासुषमा काल महाविदेह क्षेत्रमें) होवे और प्रवर्ते एसेही निग्रंथ स्नातकमें समझलेना. पुलाकका संहरण नही. और निग्रंथ स्नातक संहरणआश्री दुसरे कालमें भी होते है और वकुश, पडिसेवण, कषायकुशील, अवसर्पिणीकालके ३-४-५ आरेमें जन्मे और प्रवर्ते.उत्सर्पिणीकालमें २-३-४ आरेमें जन्मे और ३-४ आरेमें प्रवर्ते. नो उत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी. चौथा पली-भागमें होवे और संहरणआश्री दूसरे पली भागोंमें होवे द्वारम

(१३) गति—देखो यंत्रसे.

	गति.		स्थिति.	
नाम.	जघन्य.	उत्कृष्ट.	जघन्य.	उत्कृष्ट.
पुलाक	सुधर्म देवलोक	सहस्रार दे०	प्रत्येक पल्योपम	१८ सागर
बकुश	"	अच्युत दे०		२२ सागर
पडिसेवण	"	"	"	"
कषायकुशील	..	अनुत्तर वि०	"	३३ सागर
निग्रंथ	अनुत्तर वि०	सर्वार्थसिद्ध	३१ सागर	..
स्नातक	०	मोक्ष	३३ सागर	..

देवताओंमें पद्वि ५ है. इन्द्र, लोकपाल, त्रायत्रिंपक, सामानिक, अहमइन्द्र. पुलाक, बकुश. पडिसेवणमें पहिलेकी ४ पद्विमेंसे १ पद्विवाला होवे, कषायकुशीलको ५ मेंकी १ पद्वि होवे, निग्रंथको अहमइन्द्रकी १ पद्वि होवे एवं स्नातक तथा मोक्षमें जावे और जघन्य विराधक हो तो चार जातिका देवता होवे. उत्कृष्ट विराधक चोवीस दंडकमें भ्रमण करे द्वारं.

(१४) संयम—संयमस्थान असंख्याते है. पुलाक, बकुश, पडिसेवण. कषायकुशील. इन चारोंके संयमस्थान असंख्याते २ है. निग्रंथ स्नातकका संयमस्थान एक है. अलपाबहुत्व सर्वस्तोक निग्रंथ स्नातकके संयमस्थान एक है. इनोंसे असंख्यातगुणे पुलाकके संयमस्थान. इनोंसे असं० गुणे बकुशके, इनोंसे असं० गुणे पडिसेवणके. इनोंसे असं० गुणे कषायकुशीलके संयमस्थान. द्वारं.

(१५) निकासे—(संयमके पर्याय) चारित्र पर्याय अनंते

है. पुलाकके चारित्र पर्याय अनन्ते एवं यावत्. स्नातक कहना, पुलाकसे पुलाकके चारित्र पर्याय. आपसमे छे ठाणवलिया. यथा १ अनन्तभागहानि, २ असंख्यातभागहानि, ३ संख्यातभागहानि, ४ संख्यातगुणहानि, ५ असंख्यातगुणहानि, ६ अनन्तगुणहानि ॥ १ अनन्तभागवृद्धि. २ असंख्यातभागवृद्धि, ३ संख्यातभागवृद्धि. ४ संख्यातगुणवृद्धि, ५ असंख्यातगुणवृद्धि, ६ अनन्तगुणवृद्धि, पुलाक, वकुश पडिसेवणसे अनन्तगुणहीन, कषायकुशील. छे ठाणवलिया. निर्ग्रंथ स्नातकसे अनन्तगुणहीन ।। वकुश पुलाकसे अनन्तगुणवृद्धि. वकुश वकुशसे छे ठाणवलिया. वकुश, पडिसेव· ण,कषायकुशीलसे छे ठाणवलिया. निर्ग्रंथ, स्नातकसे अनन्तगुणहीन. ॥ २ ॥ पडिसेवण, वकुश माफिक समजना. ॥ ३ ॥ कषायकुशील है सो पुलाक, वकुश, पडिसेवण और कषायकुशील, इन चारोंसे छे ठाणवलिया. और निर्ग्रंथ स्नातकसे अनन्तगुणहीन. ॥ ४ ॥ निर्ग्रंथ प्रथमके चारोंसे अनन्तगुणे अधिक. निग्रथ स्नातकमे समतुल्य ॥ ५ ॥ स्नातक निर्ग्रंथके माफिक समजना ॥ ६ ॥

अल्पाबहुत्व—पुलाक और कषायकुशीलके जघन्य चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य १ पुलाकका उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्त गुणे. २ वकुश और पडिसेवणके जघन्य चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य अनन्तगुणे, वकुशका उ० चा० पर्याय अनं० ४ पडिसेवणका उ० चा० पर्याय अनं० ५ कषायकु० उ० चा० पर्याय० अनं० ६ निर्ग्रंथ और स्नातकका जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य अनन्तगुणे. द्वारं.

(१६) योग ३ मन, वचन, काय-पहलेके पांच नियंठा संयोगी, स्नातक संयोगी और अयोगी. द्वारं.

(१७) उपयोग २ साकार. अनाकार-छए नियंठामें दोनों उपयोग मिले. द्वारम्

(१८) कषाय ४ पहलेके ३ नियंठामें सकषाय संज्वलका चौक० कषायकुशीलमे. सज्वलका ४-३-२-१ निग्रंथ अकषायी उपशमकषायी या क्षीणकषायी. स्नातक क्षीणकषायी होते है. द्वारं.

(१९) लेश्या ६ पुलाक, वकुश, पडिसेवणमें तीन लेश्या तेजु, पद्म. शुक्ललेश्या पावे. कषायकुशीलमें छेहो लेश्या पावे. निग्रंथमें शुक्ललेश्या पावे. और स्नातकमें शुक्ललेश्या तथा अलेश्या. द्वारं.

(२०) परिणाम—पहिलेके चार नियंठामें तीनों परिणाम पावे. हियमान, वर्द्धमान, अवस्थित. जिसमें हियमान, वर्द्धमानकी जघन्य स्थिति १ समय उ० अन्तर्मुहुर्त. अवस्थितकी ज० १ समय उ० ७ समय निग्रंथमें वर्द्धमान. अवस्थित दो परिणाम पावे. स्थिति ज० १ समय उ० अन्तर्मुहुर्त. स्नातकमें वर्द्धमान. अवस्थित दो परिणाम. वर्द्धमानकी ज० समय उ० अन्तर्मुहुर्त. अवस्थितकी स्थिति ज० अन्तर्मुहुर्त. उ० देशोणो पूर्व कोड. द्वारं.

(२१) बंध—पुलाक. आयुष्य छोडके सात कर्म बांधे. वकुश और पडिसेवण सात या आठ कर्म बांधे. कषायकुशील ७-८-६ कर्म बांधे. (आयुष्य मोहनी छोडके) निग्रंथ १ शातावेदनी बांधे और स्नातक १ शातावेदनी बांधे या अबंधक. द्वारं.

(२२) वेदे—पहलेके चार नियंठा आठों कर्म वेदे निग्रंथ मोहनी छोडके ७ कर्म वेदे स्नातक चार कर्म वेदे. (वेदनी, आयुष्य. नाम, गोत्र.) द्वारं.

(२३) उदिरणा—पुलाक आयुष्य मोहनी छोडके ६ कर्मोंकी उदिरणा करे. वकुश और पडिसेवण ७-८ ६ कर्मोंकी उदिरणा करे. (आयुष्य मोहनी छोडके) कषायकुशील ७-८-६-५ कर्मोंकी उदिरणा करे. वेदनी विशेष. निग्रंथ ५-२ कर्मोंकी उदिरणा करे. पुर्ववत् २ नाम. गोत्रकर्म. स्नातक उणोदरिक. द्वारं.

(२४) उपसंपज्झणं—पुलाक पुलाकको छोडके कषायकुशीलमें या असंयममें जावे. बुकश बुकशपणा छोडे तो पडिसेवणमें, कषायकुशीलमें या असंयममें या संयमासंयममें जावे, एवं पडिसेवण भी चार ठीकाने जावे. कषायकुशील छे ठीकाने जावे. (पु० बु० प० असंयम० संयमासं० निग्रथ) निग्रथ निग्रंथपना छोडे तो कषायकुशील स्नातक और असंयममें जावे और स्नातक मोक्षमें जावे. द्वारं.

(२५) संज्ञा ४ पुलाक, निग्रंथ, स्नातक नोसज्ञावउत्ता० बुकश, पडिसेवण और कषायकुशील, संज्ञावहुत्ता, नोसंज्ञावहुत्ता.

(२६) आहारी—पहलेके ५ नियंठा आहारीक, स्नातक आहारीक वा अनाहारीक. द्वारं.

(२७) भव—पुलाक. निग्रंथ जघन्य १ उ० ३ भव करे. बुकश, पडिसेवणा, कषायकुशील ज० १ उ० १५ भवकरे स्नातक तद्भव मोक्ष जावे. द्वारं.

(२८) आगरिसं—पुलाक एक भवमें जघन्य १ उ० ३ वार आवे. घणा (वहुत) भवआश्रयी ज० २ उ० ७ वार आवे. बुकश पडिसेवण और कषायकुशील एक भव० ज० १ उ० प्रत्येक सो वार आवे. घणा भवआश्रयी ज० २ उ० प्रत्येक हजार वार आवे. निग्रंथपना एक भवआश्रयी ज० १ उ० २ वार वहुत भवआश्रयी ज० २ उ० ५ वार आवे. स्नातकपना जघन्य उत्कृष्ट एक ही वार आवे. द्वारं.

(२९) काल—स्थिति, पुलाक एक जीव आश्रयी जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त वहोतसे जीवों आश्रयी ज० १ समय उ० अन्तरमु० बुकश एक जीवाश्रयी ज० १ समय उ० देशोणा पूर्व क्रोड वहुत जीवों आश्रयी शाश्वता. एवं पडिसेवण, कषायकुशील वकुशवत् समजना. निग्रंय एक जीव तथा वहुत जीवों आश्रयी ज०

१ समय उ० अन्तर मुहूर्त्त० स्नातक एक जीवाश्रयी ज० अन्तर्मु० उ० देशोणा पूर्वक्रोड बहुत जीवो आश्रयी शाश्वता. द्वारं.

(३०) आंतरा—पहलेके पांच नियंठाके एक जीवाश्रयी ज० अन्तर्मु० उ० देशोणा अर्ध पुद्गलपरावर्तन. स्नातकका आंतरा नहीं. बहुत जीवो आश्रयी पुलाकका आंतरा ज० १ समय उ० संख्यात काल निग्रंथ ज० १ समय उ० छे मास शेष चार नियंठाका आंतरा नहीं.

(३१) समुद्घात+ पुलाकमें समुद्घात. तीन वेदनी, कषाय और मरणन्ति, बुकशमें पांच वे० क० म० वैक्रिय और तेजस, कषायकुशीलमें ६ (केवली छोडके) निग्रंथमें समुद्० नहीं है द्वारं.

(३२) क्षेत्र—पहलेके पांच नियंठा लोकके असंख्यात भागमें होवे, स्नातक लोकके असंख्यातमें भागमें हो या बहोतसे असंख्यात भागमें होवे या सर्व लोकमें होवे. द्वार.

(३३) स्पर्शना—जैसे क्षेत्र कहा वैसे ही स्पर्शना भी समजना, स्नातककी अधिक स्पर्शना भी होती है. द्वारं.

(३४) भाव—पहलेके ४ नियंठा क्षयोपशम भावमें होवे. निग्रंथ उपशम या क्षायिकभावमें होवे, स्नातक क्षायिकभावमें होवे. द्वारं.

(३५) परिमाण—पुलाक वर्तमान पर्यायआश्रयी स्यात् मीले स्यात् न भी मीले. मीले तो जघन्य १–२–३ उ० प्रत्येक सो. पूर्वपर्यायआश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले अगर मीले तो ज० १–२–३ उ० प्रत्येक हजार मीले. बुकश वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले. यदि मीले तो ज० १–२–३ उ० प्रत्येक सो. पूर्वपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक सो क्रोड मीले. एवं पडिसेवणा, कषायकुशील वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले. जो

+ वेदनी, कषाय, मरण, वैक्रिय, तेजस, आहारिक, केवली

मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले, पूर्वपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक हजार क्रोड मीले. निर्ग्रंथ वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले न मीले, अगर मीले तो ज० १-२-३ उ० १६२ मीले. पूर्वपर्यायाश्री स्यात् मीले न मीले. मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक सो मीले. स्नातक वर्तमान पर्यायाश्री जघन्य १-२-३ उ० १०८ मीले पूर्वपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक क्रोड मीले. द्वारं.

(३६) अल्पाबहुत्व (१) सबसे थोडा. निर्ग्रंथ नियंठाका जीव, (२) पुलाकवाले जीव संख्यातगुणे, (३) स्नातकके संख्यातगुणे, (४) बकुशके संख्यातगुणे, (५) पडिसेवणके संख्यातगुणे, (६) कषायकुशील नियंठाके जीव संख्यातगुणे. इति द्वारम् ।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर ३५.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २५ उद्देशा ७.

(संयति)

संयति (साधु) पांच प्रकारके होते है. यथा सामायिक संयति, छदोपस्थापनिय संयति परिहार विशुद्ध संयति, सूक्ष्म संपराय संयति, यथाख्यात संयति. इन पांचों सयतियोंके ३६ द्वारसे विवरण कर शास्त्रकार बतलाते है ।

(१) प्रज्ञापना द्वार—पांच संयतिकी प्ररूपणा करते है. (१) सामायिक संयतिके दो भेद है. (१) स्वल्प कालका जो प्रथम और चरम जिनोंके साधुवोंको होता है, उसकी मर्यादा जघन्य सात

दिन मध्यम च्यार मास उत्कृष्ट छे मास. (२) बावीस तीर्थंकरों-के तथा महाविदेह क्षेत्रमे मुनियोंके सामायिक सयम जावजीव तक रहते है. (२) छदोपस्थापनिय संयम, जिस्का दो भेद है. (१) स अतिचार जो पूर्व सयमके अन्दर आठवां प्रायश्चित सेवन करने पर फीरसे छदो० संयम दिया जाता है (२) तेवीसवे तीर्थ-करोंका साधु चौवीसवें तीर्थकरोंके शासनमें आते है उसकों भी छंदो० संयम दिया जाते है वह निरातिचार छंदो० संयम है (३) परिहार विशुद्ध संयमके दो भेद हैं (१) निवृतमान जेसे नौ म-नुष्य नौ नौ वर्षके हो दीक्षा ले बीस वर्ष गुरुकुलवासमें रहकर नौ पूर्वका अध्ययन कर विशेष गुण प्राप्तिके लिये गुरु आज्ञासे परिहार विशुद्ध संयमको स्वीकार करे। प्रथम छे मास तक च्यार मुनि तपश्चर्या करे च्यार मुनि तपस्वी मुनियोंकि व्यावच्च करे एक मुनि व्याख्यान वांचे दूसरे छ मासमें तपस्वी मुनि व्यावच्च करे व्याव-च्चवाले तपश्चर्या करे तीसरे छ मासमें व्याख्यानवाला तपश्चर्या करे सात मुनी उन्होंकि व्यावच्च करे, एक मुनि व्याख्यान वांचे। तपश्चर्यका क्रम: उष्णकालमें एकान्तर शीत कालमें छट छट पा-रणा चतुर्मासामें अठम अठम पारणा करे, एसे १८ मास तक तपश्चर्या करे। फीर जिनकलपको स्वीकार करे अगर एसा न हो तो वापिस गुरुकुल वासाको स्वीकार करे। (४) सूक्ष्म संपराय संयमके दो भेद है। (१) संक्लेश परिणाम उपशम श्रेणिसे गिरते हुवेके (२) विशुद्ध परिणाम क्षपकश्रेणि छडते हुवेके (५) यथा-ख्यात संयमके दो भेद है (१) उपशान्त वीतरागी (२) क्षिणवित-रागी जिस्में क्षिणवितरागीके दो भेद है (१) छदमस्त (२) केवली जिस्में केवलीका दोय भेद है (१) सयोगी केवली (२) अयोगी केवली। द्वारम्

(२) वेद—सामायिक स० छदोपस्थापनियसं० सवेदी, तथा अवेदा भी होते है कारण नौवा गुण स्थानके दो समय शेष र-

हनेपर वेद क्षय होते है और उक्त दोनों सयम नौवा गुणस्थान तक है। अगर सवेद होतो स्त्रिवेद, पुरुषवेद नपुंसकवेद इस तीनों वेदमें होते है। परीहार विशुद्ध संयम पुरुषवेद पुरुष नपुसकवेदमें होते है सुक्ष्म० यथाख्यात यह दोनो सयम अवेदी होते है जिस्मे उपशांत अवेदी (१०-११-गु०) और क्षिण अवेदी (१० १२-१३-१४ गुणस्थान) होते है इति द्वारम्

(३) राग-च्यार सयम सरागी होते है यथाख्यात सं० वितरागी होते है सो उपशान्त तथा क्षिण वीतरागी होते है।

(४) कल्प-कल्पके पांच भेद है।

(१) स्थितकल्प-वस्त्रकल्प उदेशीक आहारकल्प राजपण्ह शय्यातरपण्ह मासीकल्प चतुर्मासीक कल्प व्रतकल्प प्रतिक्रमणकल्प कृतकर्मकल्प पुरुषजेष्टकल्प एवं (१०) प्रकारके कल्प प्रथम और चरम जिनोंके साधुवोंके स्थितकल्प है।

(२) अस्थित कल्प पूर्वजो १० कल्प कहा है वह मध्यमके २२ तीर्थकरोंके मुनियोंके अस्थित कल्प है क्योंकि (१) शय्यातर व्रत, कृतकर्म, पुरुष जेष्ट, यह च्यार कल्पस्थित है शेष छे कल्प अस्थित है विवरण पर्युषण कल्पमें है।

(३) स्थिवर कल्प-मर्यादा पूर्वक १४ उपकरण से गुरुकुल वासो सेवन करे गच्छ संग्रहत रहै। और भी मर्यादा पालन करे।

(४) जिनकल्प-जघन्य मध्यम उत्कृष्ट उत्सर्ग पक्ष स्वीकार कर अनेक उपसर्ग सहन करते जंगलादिमे रहे देखो नन्दीसूत्र विस्तार।

(५) कल्पातित-आगम विहारी अतिशय ज्ञानवाले महात्मा जो कल्पसे वीतिरक्त अर्थात् भूत भविष्यके लाभालाभ देख कार्य करे इति। सामा० सं० में पूर्वोक्त पांचों कल्पपावे छेदो० परिहार० में कल्प तीन पावे, स्थित कल्प, स्थिवर कल्प, जिन कल्प,

सूक्ष्म० यथाख्या० मे कल्पदोय पावे अस्थित कल्प और कल्पातित इतिद्वारम्।

(५) चारित्र-सामा० छदो० में निग्रंथ च्यार होते है पुलाक बुक्श प्रतिसेवन, कषायकुशील। परिहार० सूक्ष्म० में एक कषाय कुशील निगंथ होते है यथाख्यात संयममें निर्गथ और स्नातक यह दोय निग्रन्थ होते है द्वारम्।

(६) प्रति सेवना-सामा० छेदो० मूलगुण (पांच महाव्रत) प्रति सेवी (दोष लगावे) उत्तर गुण (पिंड विशुद्धादि) प्रतिसेवी तथा अप्रतिसेवी शेष तीन संयम अप्रतिसेवीहोते है द्वारम्।

(७) ज्ञान-प्रथमके च्यार संयममें क्रम:सर च्यार ज्ञानकि भजना २-३-३-४ यथाख्यातमें पांच ज्ञानकि भजना ज्ञान पडने अपेक्षा सामा० छदो० जघन्य अष्ट प्रवचन उ० १४ पूर्व पड। परिहार० ज० नौवां पूर्वकि तीसरी आचार वस्तु उ० नौ पूर्व सम्पुर्ण, सूक्ष्म० यथाख्यात ज० अष्ट प्रवचन उ० १४ पूर्व तथा सूत्र वितिरक्त हो इति द्वारम्।

(८) तीर्थ-सामा० तीर्थमें हो, अतीर्थमें हो, तीर्थकरोंके हो और प्रत्येक बुद्धियोंके होते है। छेदो० परि० सूक्ष्म० तीर्थमें ही होते है यथाख्यात० सामायिक संयमवत् च्यारोंमें होते है। इति द्वारम्।

(९) लिंग-परिहार विशुद्धि द्रव्ये और भावे स्वलिंगी; शेष च्यार संयम द्रव्यापेक्षा स्वलिंगी अन्यलिंगी गृहलिंगी भी होते है। भावे स्वलिंगी होते इति द्वारम्।

(१०) शरीर—सामा० छेदो० शरीर ३-४-५ होते है शेष तीन संयममें शरीर तीन होते है वह वैक्रय आहारीक नही करते है द्वारम्।

(११) क्षेत्र-जन्मापेक्षा सामा० सूक्ष्म सपराय, यथाख्यात,

पन्दरा कर्मभूमियें होते है। छदो० परि० पांच भरत पांच इर भरत एवं दश क्षेत्रोंमें होते है। साहारणपेक्षा परिहार० का साहारण नहीं होते है शेष च्यार संयम कर्मभूमि अकर्मभूमिमें भी मीलते है इतिद्वारम्।

(१२) काल-सामा० जन्मापेक्षा अवसर्पिणि कालमें ३-४-५ आरे जन्मे और ३-४-५ आरे प्रवृते। उत्सर्पिणि कालमें २-३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। नोसर्पिणि नोउत्सर्पिणि चोथे पली-भाग (महाविदहे) में होवे। साहारणापेक्षा अन्यपली भाग (३० अकर्मभूमि) में भी मील सके। एवं छदो० परन्तु जन्म प्रवृतन तथा सर्पिणि उत्सर्पिणि विदेहक्षेत्रमें न हुवे, साहारणापेक्षा सव क्षेत्रोंमें मीले। परिहार० अवसर्पिणि कालमें ३-४ आरे जन्मे प्रवृते उत्सर्पिणि कालमें २-३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। सूक्ष्म० यथाख्यात अवसर्पिणिकाले ३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। उत्सर्पिणिकालमें २-३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। नो सर्पिणि नोउत्सर्पिणि चोथापली भागमें भी मीले साहारणापेक्षा अन्य पली भागमें लाधे इति द्वारम्।

(१३) गतिद्वार यंत्रसे

संयमके नाम	गति		स्थिति	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामा० छेदोप०	सौधर्म कल्प	अनुत्तर वै०	२ पल्यो०	३३ सागरो०
परिहार०	सौधर्म०	सहस्त्र	२ पल्यो०	१८ सागरो०
सूक्षम०	अनुत्तर वै०	अनुत्तर व०	३१ साग०	३३ सा०
यथाख्या०	अनु०	अनु०	३१ सा०	३३ सा०

देवतावोंमें इन्द्र, सामानिक, तावत्रीसका, लोकपाल, और अहमेन्द्र यह पांच पद्वि है। सामा० छेदो० आराधि होतों पांचोंसे एक पद्विवाला देव हो. परिहार विशुद्धि प्रथमकि च्यार पद्विसे एक पद्वि धर हों। सुक्ष० यथा० अहमेन्द्रि पद्विधर हों। जघन्य विराधि होतों च्यार प्रकारके देवोंसे देव होवें। उत्कृष्ट विराधि हो तों संसारमंडल। इतिद्वारम्।

(१४) संयमके स्थान—सामा० छेदो० परि० इन तीनों संयमके स्थान असंख्याते असंख्याते है। सूक्षम० अन्तर महुर्त्त के समय परिमाण असंख्याते स्थान है। यथाख्यात के संयमका स्थान एक ही है। जिस्की अल्पाबहुत्व।

(१) स्तोक यथाख्यात सं० के संयम स्थान।
(२) सूक्ष्म० के संयमस्थान असंख्यातागुने।
(३) परिहारके ,, ,,
(४) सामा० छेदो० सं० स्थ० तूल्य असं० गु०

(१५) निकाशे=संयमके पर्यव एकेक संयमके पर्यव अनंते अनन्ते है। सामा० छेदो० परिहार० परस्पर तथा आपसमें षट्गुन हानिवृद्धि है तथा आपसमे तुल्य भी है। सूक्ष्म० यथाख्यातसे तीनों संयम अनन्तगुने न्यून है। सूक्ष्म० तीनोंसे अनन्तगुन अधिक है आपसमें षट्गुन हानि वृद्धि, यथाख्यातसे अनन्त गुन न्यून है। यथा० च्यारोंसे अनन्तगुन अधिक है। आपसमें तूल्य है। अल्पावहुत्व।

(१) स्तोक सामा० छेदो० जघन्य सयम पर्यव आपसमें तूल्य,
(२) परिहार० ज० स० पर्यव अनतगुने।
(३) ,, उत्कृष्ट० ,, ,,
(४) सा० छ० ,, ,, ,,
(५) सू० .ज० ,, ,,

(६)　,,　　उ०　　,,　　,,

(७) यथा　　ज० उ० आपसमें तूल्य अनतगु० द्वारम्

(१६) योग-पहलेके च्यार संयम संयोगि होते है, यथा ख्यात० संयोगि अयोगि भी होते है। द्वारम्

(१७) उपयोग-सूक्ष्म० साकारोपयोगवाले, शेष च्यार सयम साकार अनाकार दोनों उपयोगवाले होते है। द्वारम्

(१८) कषाय-प्रथमके तीनसंयम संज्वलनके चोकमें होता है। सूक्ष्म० संज्वलनके लोभमें और यथाख्यात० उपशान्त कषाय और क्षिण कषायमें भी होता है। द्वारम्

(१९) लेश्या-सामा. छेदो० में छेओं लेश्या, परिहार० तेजों पद्म शुक्ल तीनलेश्या, सूक्ष्म० एक शुक्ल, यथाख्यात० एक शुक्ल० तथा अलेशी भी होते है। द्वारम्

(२०) परिणाम-सामा० छेदो० परिहार० हियमान० वृद्धमान और अवस्थित यह तीनों परिणाम होते है। जिस्मे हियमान वृद्धमानकि स्थिति ज० एक समय उ० अन्तरमहुर्त और अवस्थितकि ज० एक समय उ० सात समय०। सूक्ष्म० परिणाम दोय हियमान वृद्धमान कारण श्रेणि चढते या पडते जीव वहां रहते है उन्होंकि स्थिति ज० उ० अन्तरमहुर्तकि है। यथाख्यात० परिणाम वृद्धमान अवस्थित जिस्में वृद्धमानकि स्थिति ज० उ० अन्तर महुर्त और अवस्थितकि ज० एक समय उ० देशोनाकोड पूर्व (केवलीकि अपेक्षा) द्वारम्।

(२१) बन्ध सामा० छदो० परि० सात तथा आठ कर्म बन्धे. सात बन्धे तो आयुष्य नहीं बन्धे। सूक्ष्म० आयुष्य० मोहनिय कर्म वर्जके छे कर्मबन्धे। यथाख्यात० एक साता वेदनिय बन्धे तथा अबन्ध। द्वारम्

(२२) वेदे प्रथमके च्यार सयम आठों कर्मवेदे। यथाख्यात० ात (मोहनिय वर्जके) कर्मवेदे तथा च्यार अघातीया कर्म वेदे।

(२३) उदिरणा-सामा० छेदो० परि० ७-८-६ कर्मउदिरे० सात आयुष्य और छे आयुष्य मोहनीय वर्जके। सूक्ष्म- ५=६ कर्म उदिरे पांच आयुष्य मोहनिय वेदनिय वर्जके। यथाख्या० ५-२ दोय नाम गौत्र कर्मकि उदिरणा करे तथा अनु- दिरणा भी है।

(२४) उवसंपझाण—सामा० सामायिक सयमकों छोडे तो० छदोपस्थापनिय सूक्षम सपराय संयमासंयमि (श्रावक) तथा असंयम में जावे। छेदो० छदोपस्थापनीयकों छोडे तो० सामा० परि० सूक्ष्म० असंयम, सयमासयम में जावे। परि० परिहार विशुद्धिकों छोडे तो छेदो० असंयम दो स्थानमें जावे। सूक्ष्म० सूक्ष्मसपराय छोडे तो सामा० छेदो० यथा० असयममें जावे। यथा यथाख्यातको छोडके सूक्ष्म० असंयम और मोक्षमें जावे सर्व स्थान असयम कहा है वह सयम कालकर देवतावों मे जाते है उस अपेक्षा समझना इतिद्वारम्।

(२५) संज्ञा-सामा० छेदो० परि० च्यारो सज्ञावाले होते है तथा संज्ञा रहित भी होते हैं शेष दोनों नो संज्ञा है।

(२६) आहार=प्रथमके च्यार संयम आहारीक है यथाख्यात स्यात् आहारीक स्यात् अनाहारीक (चौदवागुण०)

(२७) भव=सामा० छेदो० परि० जघन्य एक उत्कृष्ट ८ भव करे अर्थात् सात देवके और आठ मनुष्यके एवं १५ भव कर मोक्ष जावे सूक्ष्म ज० एक उ० तीन भव करे। यथा० ज० एक उ० तीन भव करे तथा उसी भव मोक्ष जावे॥

(२८) आगरेस—संयम कितनीवार आते है।

संयम नाम.	एकभवापेक्षा.		बहुतभवापेक्षा.	
	ज०	उत्कृष्ट	ज०	उत्कृष्ट
सामायिक०	१	प्रत्येक सौवार	२	प्रत्येक हजारवार
छेदो०	१	प्रत्येक सौवार	२	साधिक नौसोवार
परिहार०	१	३ तीनवार	२	साधिक नौसोवार
सूक्ष्म०	१	च्यारवार	२	नौवार
यथाख्यात	१	दोयवार	२	५ वार

(२९) स्थिति—संयम कितने काल रहे।

संयम नाम.	एकजीवापेक्षा.		बहुत जीवापेक्षा.	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामा०	एक समय	देशोनक्रोड पूर्व	शाश्वते	शाश्वते
छेदो०	,,	,,	२५० वर्ष	५० क्रो० सा०
परिहार०	,,	२९ वर्षोना क्रोड	दे.दोसोवर्ष	देशोनक्रोड पूर्व
सूक्ष्म०	,,	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
यथा०	,,	देशोनक्रोड पूर्व	शाश्वते	शाश्वते

(३०) अन्तर—एक जीवापेक्षा पांचों संयमका अन्तर ज० अन्तर्मुहुर्त उ० देशोना आधा पुद्गलपरावर्तन बहुत जीवापेक्षा सा० यथा० के अन्तर नहीं है। छेदो० ज० ६३००० वर्ष परिहार० ज० ८४००० वर्ष उत्कृष्ट अठारा क्रोडाक्रोड सागरोपम देशोना। सूक्ष्म० ज० एक समय उ० छे मास।

(३१) समुद्घात—सामा० छेदो० में केवली समु० वर्जके छे समु० पावे. परिहार० तीन क्रमसर सूक्ष्म० समु० नहीं. यथा० एक केवली समुद्घात।

(३२) क्षेत्र० च्यार संयम लोकके असंख्यातमे भागमें होवे। यथा० लोकके असंख्यात भागमे होवे तथा सर्व लोकमें (केवली समु० अपेक्षा)

(३३) स्पर्शना—जेसे क्षेत्र है वेसे स्पर्शना भी होती है परन्तु यथाख्यातापेक्षा कुच्छ स्पर्शना अधिक भी होती है।

(३४) भाव—प्रथमके च्यार संयम क्षयोपशम भावमें होते है और यथाख्यात, उपशम तथा क्षायिक भावमें होता है।

(३५) परिणाम द्वार—सामा० वर्तमानापेक्षा स्यात् मीले स्यात् न मीले अगर मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले। पूर्व पर्यायापेक्षा नियम प्रत्येक हजार क्रोड मीले। एवं छेदो० वर्तमानापेक्षा मीले तो १-२-३ प्रत्येक सौ मीले। पूर्व पर्यायापेक्षा अगर मीले तो ज० उ० प्रत्येक सौ क्रोड मीले। परिहार० वर्तमान अगर मीले तो १-२-३ प्रत्येक सौ पूर्व पर्याय मीले तो १-२-३ प्रत्येक हजार मीले। सूक्ष्म० वर्तमानापेक्षा मीले तो १-२-३ उ० १६२ मीले जिस्में १०८ क्षपकश्रेणि और ५४ उपशमश्रेणि चढते हुवे पूर्व पर्यायापेक्षा मीले तो १-२-३ उ० प्रत्येक सौ मीले। यथा० वर्तमान अगर मीले तो १-२-३ उ० १६२। पूर्व पर्यायापेक्षा नियमा प्रत्येक सौ क्रोड मीले (केवलीकी अपेक्षा)

(३६) अल्पाबहुत्व।

(१) स्तोक सूक्ष्म संपराय संयमवाले।

(२) परिहार विशुद्ध संयमवाले संख्याते गुने।

(३) यथाख्यात संयमवाले संख्यात गुने ।

(४) छदोपस्थापनिय संयमवाले संख्यात गुने ।

(५) सामायिक संयमवाले संख्यात गुने ।

॥ सेवंभंते सेवंभंते तमेव सचम् ॥

थोकडा नम्बर ३६

सूत्र श्री दशवैकालिक अध्ययन ३ जा.

(५२ अनाचार)

जिस वस्तुका त्याग कीया हो उन वस्तुको भोगवनेकी इच्छा करना, उनकों अतिक्रम कहते है और उन वस्तुप्राप्तिके लिये कदम उठाना प्रयत्न करना, उनको व्यतिक्रम कहते है तथा उन वस्तुको प्राप्त कर भोगवनेकी तैयारीमें हो उनको अतिचार कहते है और त्याग करी वस्तुकों भोगव लेनेसे शास्त्रकारोंने अनाचार कहा है। यहांपर अनाचारके ही ५२ बोल लिखते है।

(१) मुनिके लिये वस्त्र, पात्र, मकान और असनादि च्यार प्रकारका आहार मुनिके उद्देशसे कीया हुवा मुनि लेवे तो अनाचार लागे।

(२) मुनिके लिये मूल्य लाइ हुइ वस्तु लेके मुनि भोगवे तो अनाचार लागे।

(३) मुनि नित्य एक घरका आहार भोगवे तो अनाचार ,,

(४) सामने लाया हुवा आहार भोगवे तो अनाचार ,,

(५) रात्रिभोजन करते अनाचार लागे।

(६) देशस्नान सर्वस्नान करे तो अनाचार लागे।
(७) सचित्त-अचित्त पदार्थोंकी सुगन्धी लेवे तो अना०
(८) पुष्पादिकी माला सेहरा पहेरे तो अनाचार ,,
(९) पंखा वींजणासे वायु ले हवा खावे तो अना०
(१०) तैल घृतादि आहारका संग्रह करे तो अना०
(११) गृहस्थोंके वर्तनमें भोजन करे तो अना०
(१२) राजपिंड याने बलिष्ट आहार लेवे तो अना०
(१३) दानशालाका आहारादि ग्रहन करे तो अना०
(१४) शरीरका विना कारण मर्दन करे तो अना०
(१५) दांतोसे दांतण करे तो अनाचार लागे।
(१६) गृहस्थोंको सुखशाता पुच्छे टैल वन्दगी करे तो ,,
(१७) अपने शरीरकों दर्पणादिमें शोभा निमित्त देखे तो ,,
(१८) चोपाट सेतरंजादि रमत रमे तो अनाचार।
(१९) अर्थोपार्जन करे तथा जुवारमें सठा करे तो अना०
(२०) शीतोष्णके कारण छत्र धारण करे तो अना०
(२१) औषधि दवाइयों बतलाके आजीवीका करे तो अना०
(२२) जुत्ते मोजे त्रुंटादि पावोंमें पहरे तो अना०
(२३) अग्निकायादि जीवोंके आरंभ करे तो अना०
(२४) गृहस्थोंके वहां गादीतकीयों आदि पर बैठनेसे ,,
(२५) गृहस्थोंके वहां पलंग मेज खाट पर बैठनेसे ,,
(२६) जीसकी आज्ञासे मकानमें ठेरे उनोंका आहार भोगवनेसे ,,
(२७) विना कारण गृहस्थोंके वहां बेठना कथा कहनेसे ,,
(२८) विगर कारण शरीरके पीठी मालीसादिका करनेसे,,

(२९) गृहस्थ लोगोंकि वैयावच्च करनेसे अनाचार ,,

(३०) अपनि जाति कुल बतलाके आजीविका करे तो ,,

(३१) सचित्त पदार्थ जलहरी आदि भोगवे तो अना ,,

(३२) शरीरमें रोगादि आनेसे गृहस्थोंकि सहायता लेनेसे,

(३३) मूलादि बनस्पति (३४) इक्षु (३५) कन्द (३६ मूल भोगवे तो अनाचार लागे.

(३७) फल फूल (३८) बीजादि भोगवेतो अनाचार ,,

(३९) सचित्तनमक (४०) सिंधु देशका सिंधालुण (४१) सांवर देशका सांवरलुण (४२) धूल खाडिका लुण (४३) समुद्रका लुण (४४) कालानमक यह सर्व सचित्त भोगवे तो अनाचारलागे।

(४५) कपडोंको धूपादि पदार्थोंसे सुगन्ध बनानेसे अना०

(४६) भोजन कर वमन करने से अनाचार ,,

(४७) विगर कारण जुलावादिका लेनासे अनाचार ,,

(४८) गुंजस्थानको धोना समारनादि करनेसे अना०

(४९) नैत्रोंमि सुरमा अञ्जन लगाके शोभनिक बनावे ,,

(५०) दांतोंको अलतादिका रंग लगाके सुन्दर बनावे ,,

(५१) शरीरको तैलादिसे उघटनादि कर सुन्दर बनानेसे,,

(५२) शरीरकि शुश्रूषा करना रोम नख समारणादि शोभा करनेसे.

उपर लिखे अनाचारको सदैव टालके निर्मल चारित्र पालना चाहिये।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

थोकडा नम्बर ३७

सूत्र श्री दशवैकालिक अध्ययन ४.

(पांच महाव्रतोंका १७८२ तणावा.)

जिस तरह तंवू (डेरे) को खडा करनेके लिये मुल चोब, (वडी) उत्तर चोव (छोटी) बांस और तणावा (खूटीसे बंधी हुई रसी) की जरूरत है, इसी तरह साधूकों संयमरूपी तंवूके खडे (कायम) रखनेमें पांच महाव्रतादि सात बडी चोबकी जरूरत है. और प्रत्येक चोवकी मजवूतीके लिये सूक्ष्म, वादरादि (४-४-६-३-६-४-६) करके तेतीस उत्तर चोव है. प्रत्येक उत्तर चोवको सहारा देनेवाले तीन करण, तीन जोगरूपी नौ २ वांस लगे है (इस तरह ३३ को ९ का गुणा करनेसे २९७ हुए) और इन वांसोंको स्थिर रखनेके वास्ते प्रत्येक वांसके दिनरात्रादि, छे २ तणावा है. इस तरह २९७ कों छे गुणा करनेसे १७८२ तणांवे हुए यह तणावे चोव वांसादिकों स्थिर रखते है. जिससे तंवू खडा रहता है. यदि इनमें से एक भी तणावा मोहरूपी हवा से ढीला हा जाय तो तत्काल आलोचना रूपी हथोडेसे ठोक कर मजवूत करदे तो संजमरूपी तंवू कायम रह सकता है. अगर एसा न किया जावे तो क्रमसे दूसरे तणावे भी ढीले हो कर तंवू गिर जानेका संभव है. इस लिये पूर्णतय इसको कायम रखनेका प्र- यत्न करना चाहिये. क्योंकि संयम अक्षयसुखका देनेवाला है.

अव प्रत्येक महाव्रतके कितने २ तणावे है सो विस्तार सहित दिखाते है.

(१) महाव्रत प्राणातिपात—सूक्ष्म, बादर. त्रस और स्था

वर. इन चार प्रकारके जीवोंको मनसे हणे नहीं, हणावे नहीं, हणताकों अनुमोदे नहीं एवम् बाराह और बाराह वचनका, तथा बाराह कायासे कुल छत्रीश हुए इनकों दिनकों, रातकों अकेलेमें, पर्षदा मे, निद्रावस्थामें, जागृत अवस्थामें, ६-इन भागोंको ३६ के साथ गुणा करनेसे प्रथम महाव्रतके २१६ तणावे हुए.

(२) महाव्रत मृषावाद—क्रोधसे, लोभसे, हास्यसे, और भयसे. इस तरह चार प्रकारका झूठ मनसे बोले नहीं, बोलावे नहीं, वोलतेको अनुमोदे नहीं. एवम् वचन और कायासे गुणतां ३६ हुए इनको दिन, रात्रि अकेलेमें, पर्षदामें, निद्रा और जागृत अवस्था, ये छै प्रकारसे गुणा करनेसे २१६ तणावा दूसरे महाव्रतके हुए.

(३) महाव्रत अदत्तादान—अल्पवस्तु, वहुतवस्तु, छोटी वस्तु, वडी वस्तु, सचित्त, (शीष्यादि) अचित्त, (वस्त्रपात्रादि) ये छै प्रकारकी वस्तुको किसीके विना दिये मनसे लेवे नही, लेवावे नही, और लेतेको अनुमोदे नही एवम् मन वचन और काया से गुणानेसे ५४ हुए जिसको दिन, रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे तीसरे महाव्रतके हुए.

(४) महाव्रत ब्रह्मचार्य—देवी, मनुष्यणी, और त्रीयंचणी, के साथ मैथुन मनसे सेवे नहीं, सेवावे नहीं, सेवतेको अनुमोदे नहीं. एवम् वचन और कायासे गुणातां २७ हुए जिसको दिन रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे १६२ तणावे चौथे महाव्रतके हुए.

(५) महाव्रत परिग्रह—अल्प, बहुत, छोटा वडा, सचित, अचित, छे प्रकार परिग्रह मनसे रखे नहीं रखावै नहीं, राखतेकों अनुमोदे नहीं, एवम् वचन और कायासे गुणातां ५४ हुए जिस कों दिनरात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे पांचवे महाव्रतके हुए.

(६) रात्रिभोजन—अशन, पांण, खादिम, स्वादिम, ये चार

प्रकारका आहार मनसे रात्रिको करे नही, करावे नही, करतेको अनुमोदे नही, एवम् वचन और कायासे गुणातां ३६ हुए इनको दिनमें (पहिले दिनका लाया हुवा दूसरे दिन) रात्रिमें, अकेलेमें, पर्षदामें, निद्राअवस्था, और जागृत अवस्था ६ का गुणां करनेसे २१६ तणावे हुए.

(७) छकाय—पृथ्वीकाय, अप्पकाय, तेउकाय, वायुकाय वनास्पतिकाय, और त्रसकायको मनसे हणे नही, हणावे नही, हणतेको अनुमोदे नही एवम् वचन और कायासे गुणतां ५४ हुए जिसको दिन रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे हुए.

एवम् सर्व २१६-२१६-३२४-१६२-३२४-२१६-३२४ सब मिला कर १७८२ तणावा हुए.

अब प्रसंगोपात दशवैकालिक सूत्रके छठ्ठे अध्ययनसे अठाराह स्थानक लिखते है. यथा पांच महाव्रत, तथा रात्रिभोजन, और छ काय एवं १२ अकल्पनीय वस्त्र, पात्र, मकान और चार प्रकारका आहार १३ गृहस्थके भाजनमें भोजन करना १४ गृहस्थके पलंग खाट आसन पर बैठना १५ गृहस्थके मकानपर बेठना अर्थात् अपने उतरे हुवे मकानसे अन्य गृहस्थके मकान बेठना १६ स्नान देससे या सर्वसे स्नान करना १७ नख केस रोम आदि समारना १८ इन अठाराह स्थान में से एक भी स्थानकको सेवन करनेवालोंको आचारसे भ्रष्ट कहा है।

गाथा—दश अठ्ठय ठाणाइं, जाइं बालो वरज्झइ
तथ्थ अन्नयरे ठाणे, निग्गंथ ताउ भेसइ

अर्थ—दस आठ अठाराह स्थानक है उनको बालजीव विराधे या अठाराहमेंसे एक भी स्थान सेवे तो निर्ग्रंथ (साधु) उन स्थानसे भ्रष्ट होता है. इस लिये अठाराह स्थानकी सदैव यतना करणी चाहिये. इति

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नंबर ३८

श्री भगवती सूत्र श० ८ उद्देसा १०

आराधना.

आराधना तीन प्रकारकी है. ज्ञान आराधना १, दर्शन आराधना २ और चारित्र आराधना.

ज्ञान आराधना तीन प्रकारकी है उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य. उत्कृष्ट ज्ञान आराधना. चौदे पूर्वका ज्ञान या प्रबल ज्ञानका उद्यम करे. मध्यम आराधना. इग्यारे अंग या मध्यम ज्ञानका उद्यम करे. जघन्य आराधना. अष्ट प्रवचन माताका ज्ञान. व जघन्य ज्ञानका उद्यम

दर्शन आराधनाके तीन भेद. उत्कृष्ट (क्षायक सम्यक्त्व) मध्यम (क्षयोपशम स०) जघन्य (क्षयोपशम या सास्वादनस०)

चारित्र आराधनाके तीन भेद -उत्कृष्ट (यथाख्यात चारित्र) मध्यम (परिहार विशुद्धादि) जघन्य (सामायिक०)

उत्कृष्ट ज्ञान आराधनामें दर्शन आराधना कितनी पावे ? दो पावे. उत्कृ० मध्य० ॥ उत्कृष्ट दर्शन आराधनामें ज्ञान आराधना कितनी पावे ? तीनो पावे. उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य.

उत्कृष्ट ज्ञान आराधनामें चारित्र आराधना कितनी पावे ? दो पावे. उत्कृष्ट और मध्यम ॥ उत्कृष्ट चारित्र आराधनामें ज्ञान आराधना कितनी पावे ? तीनो पावे. उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य.

उत्कृष्ट दर्शन आराधनामें चारित्र आराधना कितनी पावे ?

तीनो पावे. उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य ॥ उत्कृष्ट चारित्र आरा-
धनामें दर्शन आराधना कितनी पावें ? एक पावे. उत्कृष्ट ॥

उत्कृष्ट ज्ञानआराधना वाले जीव कितने भव करे ? जघन्य
एक भव, उत्कृष्ट दोय भव.

मध्यम ज्ञान आराधनावाले जीव कितने भव करे ? जघन्य
दो. उत्कृष्ट तीन भव करे.

जघन्य ज्ञान आराधनावाले जीव कितने भव करे ? जघन्य
तीन और उत्कृष्ट पंदराह भव करे ॥ एवम् दर्शन और चारित्र
आराधनामें भी समझ लेना.

एक जीवमें उत्कृष्ट ज्ञानआराधना होय, उत्कृष्ट दर्शन आरा-
धना होय और उ० चारित्र आराधना होय. जिसके भांगा नीचे
यंत्रमें लिखे हैं.

पहिला एक ज्ञान दुसरा दर्शन और तीसरा चारित्र तथा
३ के आंकको उत्कृष्ट २ के आंकको मध्यम और १ के आंकको
जघन्य समझना.

३-३-३	२-३-२	२—१—२	१—३—१
३-३-२	२-३-१	२—१—१	१—२—२
३-२-२	२-२-२	१—३—३	१—२—१
२-३-३	२-२-१	१—३—२	१—१—२
			१—१—१

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

—✻◎✻—

थोकडा नम्बर ३९

श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र अध्ययन २६

(साधु-समाचारी)

श्री जिनेन्द्र देवोंकि फरमाइ हुइ सामाचारी को आराधन कर अनन्ते जीव मोक्षमें गये है-जाते है, और जावेंगे.

दश प्रकारकी समाचारीके नाम (१) आवस्सिय (२) निसिहिय (३) आपुच्छणा (४) पडिपुच्छणा (५) छंदणा (६) इच्छाकार (७) मिच्छाकार (८) तहकार (९) अभ्भुठणा (१०) उवसंपया.

(१) आवस्सिय—साधु को आवश्य × कारण हो तब ठेरे हुवे उपासरासे बाहर जाना पडे तो जाती वक्त पेस्तर आवस्सिय ऐसा शब्द उच्चारण करे ताके गुरुवादिको ज्ञात हो जावे की अमुक साधु इस टाइममें बाहर गया है.

(२) निसिहि—कार्यसे निवृत्ती पाके पीछा स्थान पर आती वक्त निसिहि शब्द उच्चारण करे ताके गुरुवादिको ज्ञात हो की अमुक साधु बाहरसे आया है यदि कम--ज्यादा टाइम लगी हो तो इस बातका निर्णय गुरु महाराज कर सक्ते है.

(३) आपुच्छणा—स्वयं अपने लिये यद्किंचत् भी कार्य हो तो गुरुवादिको पुच्छे अगर गुरु आज्ञा दे तो वह कार्य करे. (गोचरिआदि.)

× साधु चार कारण पा के उपासरा बाहर जाते है सो कारण [१] आहार पानी आदि लानेको [२] निहार—स्थंडिले मात्रे जाना हो तो [३] वीहार—एक ग्रामसे दुसरे ग्राम जाना हो तो [४] जिनप्रासाद जाना हो तो. सिवाय चार कारण के बाहार न जावे अपने स्थानपर हि स्वाध्याय ध्यान में ही मस्त रहे.

(४) पडिपुच्छना—अन्य साधुवोंको हरेक कार्य हो तो गुरुसे पुच्छ कर वह कार्य गुरु आदेशसे ही करे।

(५) छंदणा—जो गोचरी में आया हुवा आहार पाणी गुरुवादि की मरजी माफिक सर्व साधुवोंको संविभाग करे अपने विभागमें आये हुवे आहार की क्रमशः सर्व महा पुरुषोंको आमन्त्रण करे. याने सर्व कार्य गुरु छांदे (आज्ञा) से करे।

(६) इच्छार—हरेक कार्यके अन्दर गुरुवादिसे प्रार्थना करेकि हे भगवान ! आपश्रीकी मरजी हो तों यह कार्य करे या में करुं (पात्रलेपादि)

(७) मिच्छार—यत्किंचित् भी अपराध हुवा हो तो गुरु समीप अपनी आत्मा कों निंदनारुप मिच्छामि दुक्कडं देना. आइन्दासे मैं यह कार्य नही करुंगा।

(८) तहकार—गुरुवादिका वचन हरवक्त तहत्त करके परिमाण खुश दीलसे स्वीकार करना।

(९) अभ्भुठणा—गुरुवादि साधुभगवान या ग्लानी तपस्वी आदि की व्यावच्च के लिये अग्लानपणे व्यावच्च में पुरुषार्थ कर लाभ लेना मेघमुनिकी माफीक अपना क्षणभंगुर शरीर मुनियों की व्यावच्च में अर्पण करना.

(१०) उवसंपया—जीवन पर्यन्त गुरुकुल वास सेवन करना क्षण मात्र भी दुर नहीं रहेना (गुरुआज्ञाका पालन करना)

(साधुओंकी दिन कृत्य.)

सूर्योदय होनेसे दिन कहा जाता है, एक दिनकी चार पेहर और एक रात्रिकी चार पेहर एवं आठ पेहरका दिनरात्री होती है

पेहर दीनका प्रमाण वताते है. जीससे साधुओंको टाइमकी घडीयां रखनेकी जरूरत न पडे.

असाढ सुद १५ कर्के शक्रांत सूर्य दक्षीणायन सर्व अभीत्तर मन्डले चाल चाले तव १८ मूहुर्तका दीन होता है उस वक्त तडका

करो तो अग्लानपने व्यावच्च करे अगर गुरु आदेश करेकी स्वाध्याय करो तो प्रथम पेहरका रहा हुवा तीन भागमें मुलसूत्रोंकि स्वाध्याय करे अथवा अन्य साधुवोंकों वाचना देवे स्वाध्याय केसी है की सर्व दुखोंकों अन्त करनेवाली हैं.

दिनका दुसरा पहेरमें ध्यान करे अर्थात् प्रथम पेहरमें मूल पाठकी स्वाध्याय करी थी उस्का अर्थोपयोग संयुक्त चिंतवन करे. शास्त्रोंका नया नया अपूर्वज्ञानके अन्दर अपना चित्त रमण करते रहना जीनसे जगत् कि सर्व उपाधीयां नष्ट हो जाती है वही चेतनका मोक्ष है.

दिनके तीसरे पेहरमें जब पूर्ण क्षुधा सताने लग जावे अर्थात् छ कारण (थोकडा नं० ३२ में देखो) से कोइ कारण हो तो पूर्व पडिलेहा हुवा पात्रा ले के गुरु महाराजकी आज्ञा पूर्वक आतुरता चपलता रहित भिक्षाके लिये अटन करे भिक्षा लानेका ४२ तथा १०१ दोष (थोकडे नं० ३२ में देखो) वर्जित निर्वद्याहार लावे इरियावहि आलोचना कर गुरुकों आहार दीखा के अन्य महात्मावोंको आमन्त्रण करे शेष रहा हुवा आहार माण्डलाका पांच दोष वर्जके क्षणवार भावना भावे धन्य है जो मुनि तपश्चर्या करे बादमे अमुच्छित अगिर्द्धीपणे संयम यात्रा निर्वाहने के लिये तथा शरीरको भाड़ा रुप आहार पाणी करे। अगर कीसी क्षेत्रमें तीसरा पेहरमें भिक्षा न मिलती हो तो जीस वक्तमें मीले उस वक्तमें लावे एसा लेख दशवैकालिकसूत्र अ० ५ उ २ गाथा ४ में है) इस कार्यमें तीसरी पेहर खतम हो जाति है

दिनके चोथे पेहरका चार भागमें तीन भाग तक स्वाध्याय करे और चोथा भागमें विधिपूर्वक पडिलेहन (पूर्व प्रमाणे) करे साथमें स्थंडिल भी द्रष्टीसे प्रतिलेखे बादमें दीनके विषय जो लागा हुवा अतिचार जिस्की आलोचना रुप उपयोग संयुक्त प्रतिक्रमण करे.

क्रमशः षटावश्यक और साथमें इन्होंका + फल बताते है.

षटावश्यकका नाम *

यथाः—सावद्य जोगविरइ उक्कित्तणगुण पडिवति ॥
खलियस्स निंदवणा तिगिच्छगुण धारणाचेव ॥ १ ॥

तथा सामायिक चउवीसत्थो वन्दना प्रतिक्रमण काउस्सग पच्चखाण. (आवश्यकसूत्र)

(१) प्रथम सामायिकावश्यक इरियावहि पडिक्कमे देवसि प्रतिक्रमणठाउ जाव अतिचारका काउस्सग पारके एक नमस्कार कहे वहांतक प्रथम आवश्यक है दीनके अन्दर जीतना अतिचार लगा हो वह उपयोग संयुक्त काउस्सगमें चिंतवन करना इसका फल सावद्य योगोंसे निवृती होती है. कर्मोनेका अभाव.

(२) दुसरा चउवीसत्थावश्यक । इन अव सर्पिणिमें हो गये चोवीश तीर्थंकरोंकी स्तुति रूप लोगस्स कहेना-फल सम्यक्त्व निर्मल होता है.

(३) तीसरावश्यक वन्दना--गुरु महाराजको द्वादशावृतनसे वन्दना करना, फल निच गौत्रका नास होता है और उच्च गौत्रकी प्राप्ती होती है.

(४) चोथा प्रतिक्रमणावश्यक दिनके विषय लागा हुवा अतिचार कों उपयोग संयुक्त गुरु साखे पडिक्कमे सो देवसी अतिचारसे लगाके आयरियोवज्झाया तीन गाथा तक चोथा आवश्यक हे फल संयम रुपि जो नोका जिस्मे पडा हुवा छेद्रकों दे-

---

+ फल उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन २९ मा बताया है ।

* सूत्र श्री अनुयोगद्वारमें ।

संके छेद्रका निरुद्ध करणा, जीनसे असबला चारित्र और अष्ट प्रवचन माताकी उपयोग संयुक्त आराधना (निर्मल) करे.

(५) पचम काउसग्गावश्यक--प्रतिक्रमण करतां अना उपयोग रहा हुवा अतिचार रुपि प्रायश्चित जीस्को शुद्ध करणे के लिये चार लोगस्सका काउस्सग करे पक लोगस्स प्रगट करे फल–भूत और वर्तमान कालका प्रायश्चितको शुद्ध करे जैसे कोइ मनुष्यको देना हो या वजन कीसी स्थानपर पहुंचाना हो उनको पहुंचा देवे या देना दे दीया फिर निर्भय होता है इसी माफीक व्रत मे लगाहुवा प्रायश्चितकों शुद्ध कर प्रशस्त ध्यानके अन्दर सुखे सुखे विचरे.

(६) छठा पच्चखाणावश्यक–गुरु महाराजको द्वादशा वृतसे २ वन्दना देके भविष्यकालका पच्चखाण करे। फल आता हुवा आश्रवकों रोके और इच्छाका निरुद्ध हानासे पूर्व उपार्जित कर्मोंका क्षय करे.

यह षटावश्यक रुप प्रतिक्रमण निर्विघ्नपणे समाप्त होने पर भाव मंगल रुप तीर्थंकरादि स्तुति चैत्यवन्दन जघन्य ३ श्लोक उत्कृष्ट ७ श्लोकसे स्तुति करना। फल ज्ञान दर्शन चारित्रकि आराधना होती है जीससे जीव उन्ही भवमें मोक्ष आवे अथवा विमानीक देवतां में जावे वहांसे मनुष्य होके मोक्षमें जावे उत्कृष्ट करे तो भी १५ भवसे अधिक न करे.

रात्रिका कृत्य.

जब प्रतिक्रमण हो जावे तब स्वाध्यायका काल आनेसे काल पडिलेहन करे जेसे ठाणयंग सूत्रका दशमा ठाणामें १० प्रकारकी आकाशकी असज्झाय बताइ है यथा तारो तुटे, दीशा लाल, अकालमें गाज बीजली, कडक, भूमिकम्प, बालचन्द्र,

यक्षचिन्ह, अग्निका उपद्रव, धुधलु (रजोघातादि) यह दश प्रकारकी आस्वाध्यायसे कोइ भी अस्वाध्याय न हो तो.

+ रात्रिके प्रथम पेहरमें मुनि स्वाध्याय (सूत्रका मूल पाठ) करे. रात्रिके दुसरे पेहरमें जो प्रथम पेहरमें मूल सूत्रका पाठ किया था उन्हीका अर्थ चिंतवनरुप ध्यान करे परन्तु वार्तो-की स्वाध्याय और सुत्ताका ध्यान जो कर्मबन्धका हेतु है उनको स्पर्श तक भी न करे. स्वाध्याय सर्व दुःखोंका अन्त करती है।

रात्रिके तीसरा पेहरमें जब स्वाध्याय ध्यान करतां निंद्राका आगमन हो तो विधिपूर्वक सथारा पोरसी भणा के यत्नापूर्वक सथारा करके स्वल्प समय निन्द्राकों मुक्त करे.

रात्रिका चोथा पेहर–जब निंद्रासे उठे उस बखत अगर कोई खराब सुपन विगेरे हुवा हो तो उसका प्रायश्चितके लिये काउस्सग्ग करना फिर एक पेहरका ४ भागमें तीन भाग तक मूल सूत्रकी स्वाध्याय करणा वार वार स्वाध्यायका आदेश देते है इसका कारण यह है की श्री तीर्थकर भगवान् के मुखारविंद से निकली हुइ परम पवित्र आगमकी वाणी जिसको गणधर भगवानने सूत्ररुपे रचना करी उस वानीके अन्दर इतना असर भरा हुवा है कि भव्य प्राणी स्वाध्याय करते करते ही सर्व दु खोंका अन्त कर केवलज्ञानको प्राप्त कर लेते है. इससे हा शास्त्रकार कहते हैं कि यथा " सव्वदुःरकविमोरकाणं "

जब पेहरका चाथा भाग (दो घडी) रात्रि रहे तब रात्रि सबन्धी जो अतिचार लागा हो उसकि आलोचना रुप षटावश्यक पूर्ववत् प्रतिक्रमण करना + सूर्योदय होता हि गुरु महाराजको

+ रात्रिका काल पोरसीका प्रमाण नक्षत्र आदिसे मुनि जाने वह जोतीपीयाका अधिकारका थोकडामें लिखा जावेगा.

+ मुभेका काउस्सगमें तप चिन्तवन करना मुझे क्या तप करना है ?

वन्दन कर पच्चखांन करना और गुरु आज्ञा माफिक पूर्ववत् दीनकृत्य करते रहेना.

इसी माफिक दिन और रात्रिमें वरताव रखना और भी, ज्ञान, ध्यान, मौन, विनय, व्यावच्च पर्वाराधन तपश्चर्या दीनरात्रिमें सात वेर चैत्यवन्दन चार वार सज्झाय समिति गुप्ति भाषा पूजन प्रतिलेखनके अन्दर पूर्ण तय उपयोग रखना पंच महाव्रत पंच समिति तीन गुप्ति यह १३ मूल गुण है जीस्मे हमेशा प्रयत्न करते रहेना एक भवमे यद्किंचित् परिश्रम उठाणा पडता है परन्तु भवोभवमें जीव सुखी हो जाता है.

यह श्री सुधर्मास्वामिकी समाचारी सर्व जैनोंको मान्य है वास्ते झगडे की समाचारीयांको तिलाञ्जलि देके सुधर्म समाचारीमे यथाशक्ति पुरुषार्थ करे ताके शीघ्र कल्याण हो.

शान्तिः शान्तिः शान्तिः

सेवंभंते—सेवंभंते—तमेवसच्चम्.

॥ इति शीघ्रबोध चतुर्थ भाग समाप्तम् ॥
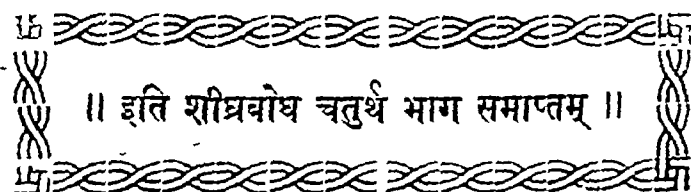
श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प नं. ३०

श्री रत्नप्रभसूरि सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ५ वां.

थोकडा नम्बर ४०

(जड चैत्यन्य स्वभाव.)

जीवका स्वभाव चैतन्य और कर्मोंका स्वभाव जड एवं जीव और कर्मोका भिन्न भिन्न स्वभाव होने पर भी जैसे धूलमें धातु तीलोंमें तैल दूधमें घृत है, इसी माफीक अनादि काल से जीव और कर्मों के सबन्ध है जैसे यंत्रादि के निमित्त कारण से धूलसे धातु तीलोंसे तैल दूधसे घृत अलग हो जाते है इसी माफीक जीवों को ज्ञान, दर्शन, तप, जप, पूजा, प्रभावनादि शुभ निमित्त मीलनेसे कर्मो और जीव अलग अलग हो जीव सिद्ध पदकों प्राप्त कर लेते है.

जबतक जीवोंके साथ कर्म लगे हुवे है तबतक जीव अपनि दशाको मूल मिथ्यात्वादि परगुण में परिभ्रमन करता है जैसे सुवर्ण आप निर्मल अकलक कोमल गुणवाला है किन्तु अग्निका संयोग पाके अपना असली स्वरुप छोड उष्णता को धारण करता है फीर जल वायुका निमित्त मीलने पर अग्निको त्यागकर अपने असली गुणको धारण कर लेता है इसी माफीक जीव भी निर्मल

अकलंक अमूर्त्ति है परन्तु मिथ्यात्वादि अज्ञानके निमित्त कारण से अनेक प्रकारके रूप धारण कर संसारमें परिभ्रमन करता है परन्तु जब सद्ज्ञान दर्शनादिका निमित्त प्राप्त करता है तब मिथ्यात्वादिका संग त्याग अपना असली स्वरूप धारण कर सिद्ध अवस्थाको प्राप्त कर लेता है.

जीव अपना स्वरूप कीस कारणसे भूल जाता है ? जेसे कोइ अकलमंद समजदार मनुष्य मदिरापान करने से अपना भान भूल जाता है फीर उन मदिराका नशा उतरने पर पश्चात्ताप कर अच्छे कार्यमें प्रवृत्ति करता है इसी माफीक अनंत ज्ञान दर्शनका नायक चैतन्यको मोहादि कर्मदलक विपाकोदय होता है तब चैतन्यको बेभान-विकल-बना देता है फीर उन कर्मोको भोगवके निर्ज्जरा करने पर अगर नया कर्म न बन्धे तो चैतन्य कर्म मुक्त हो अपने स्वरूपमें रमणता करता हुवा सिद्ध पदको प्राप्त कर लेता है.

कर्म क्या वस्तु है ? कर्म एक कीस्मके पुद्गल है जिस पुद्गलोंमें पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, च्यार स्पर्श है जीवोंके उन पुद्गलों से अनादि कालका संबन्ध लगा हुवा है उन कर्मोकि प्रेरणासे जीवोंके शुभाशुभ अध्यवसाय उत्पन्न होते है उन अध्य-वसायोंकी आकर्षणासे जीव शुभाशुभ कर्म पुद्गलोंको ग्रहन करते है। वह पुद्गल आत्माके प्रदेशोंपर चीपक जाते है अर्थात् आत्म प्रदेशोंके साथ उन कर्म पुद्गलोंका खीरनिरकी माफीक बन्ध होते है जिनों से वह कर्म पुद्गल आत्माके गुणोंको झांखा बना देते है जैसे सूर्यको बादल झांखा बनाता है। जैसे जैसे अध्यव-सायोंकी मंदना तीव्रता होती है वैसे वैसे कर्मोके अन्दर रस तथा स्थिति पड जाति है वह कर्म बन्धने के बाद वह कर्म कीतने कालमे विपाक उदय होते है उसको अबाधा काल कहते है जैसे हुन्डीके अन्दर मुदत डाली जाति है। कर्म दो प्रकारसे भोगवीये

जाते है (१) प्रदेशोदय (२) विपाकोदय जिस्मे तप, जप, ज्ञान, ध्यान, पूजा, प्रभावनादि करनेसे दीर्घ कालके भोगवने योग्य कर्मोंको आकर्षण कर स्वल्प कालमें भोगव लेते है जिसकी खबर छद्मस्थोंको नहीं पडती है उसे प्रदेशोदय कहते है तथा कर्म विपाकोदय होने से जीवोंको अनेक प्रकारकी विटम्बना से भोगवना पडे उसे विपाकोदय कहते है।

अशुभ कर्मोदय भोगवते समय आर्तध्यानादि अशुभ क्रिया करने से उन अशुभ कर्मोंमें और भी अशुभ कर्म स्थिति तथा अनुभाग रसकि वृद्धि होती है तथा अशुभ कर्म भोगवते समय शुभ क्रिया ध्यान करने से वह अशुभ पुद्गल भी शुभपणे प्रणम जाते है तथा स्थितिघात रसघात कर वहुत कर्म प्रदेशों से भोगवके निर्ज्जरा कर देते है ॥ शुभ कर्मोदय भोगवते समय अशुभ क्रिया करनेसे वह शुभ कर्म पुद्गल अशुभपणे प्रणमते है और शुभ क्रिया करनेसे उन शुभ कर्मोंमें और भी शुभकि वृद्धि होती है वह शुभ कर्म सुखे सुखे भोगवके अन्तमें मोक्षपदको प्राप्त कर लेते है।

साहुकार अपने धनका रक्षण कब कर सकेंगे कि प्रथम चौर आनेका कारण हेतु रहस्तेको ठीक तोरपर समज लेंगे फीर उन चोर आनेके रहस्तेकों बन्ध करवादे या पेहरादार रखदे तो धन का रक्षण कर सके इसी माफीक शास्त्रकारोंने फरमाया है कि प्रथम चौर याने कर्मोंका स्वरूपको ठीक तोरपर समजो फीर कर्म आनेका हेतु कारणको समजो. फीर नया कर्म आनेके रहस्तेकों रोको और पुराणे कर्मोंको नाश करनेका उपाय करो तांके संसार का अन्त कर यह जीव अपने निज स्थान (मोक्ष) को प्राप्त कर सादि अनंत भागे सुखी हो।

कर्मोंकि विषय के अनेक ग्रन्थ है परन्तु साधारण मनुष्योंके लिये एक छोटीसी कीतान्न द्वारा मूल आठ कर्मोंकि उत्तरकर्म

प्रकृति १५८ का संक्षिप्त विवरण कर आप.क सेवामें रखी जाति है आशा है कि आप इस कर्म प्रकृतियोंकों कंठस्थ कर आगे के लिये अपना उत्साह बढाते रहेगें इत्यलम् ।

—※○※—
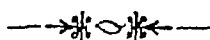
थोकडा नम्बर ४१

(मूल आठ कर्मोंकि उत्तर प्रकृति १५८.)

(१) ज्ञानावर्णियकर्म—चैतन्यके ज्ञान गुणकों रोक रखा है ।
(२ दर्शनावर्णियकर्म—चैतन्यके दर्शन गुणकों रोक रखा है ।
(३) वेदनियकर्म—चैतन्यके अव्याबाद गुणकों रोक रखा है ।
(४) मोहनियकर्म—चैतन्यके क्षायिक गुणकों रोक रखा है ।
(५) आयुष्यकर्म—चैतन्यके अटल अवगाहाना गुणकों रोक रखा है.
(६) नामकर्म—चैतन्यके अमूर्त्त गुणकों रोक रखा है ।
(७) गौत्रकर्म—चैतन्यके अगुरु लघु गुणकों रोक रखा है ।
(८) अन्तरायकर्म—चैतन्यके वीर्य गुणकों रोक रखा है ।
इन आठों कर्मोंकि उत्तर प्रकृति १५८ है उनोंका विवरण—

(१) ज्ञानावर्णियकर्म जेसे घाणीका बहल-याने घाणीके बहलके नैत्रोंपर पाट्टा बान्ध देनेसे कीसी वस्तुका ज्ञान नही होता है. इसी माफीक जीवोंके ज्ञानावर्णिय कर्मपडल आजानेसे वस्तुतत्त्वका ज्ञान नहीं होता है। जीस ज्ञानावरणीय कर्मकि उत्तर प्रकृति पांच है यथा—(१) मतिज्ञानावर्णिय, ३४० प्रकारके मतिज्ञान है (देखो शीघ्रबोध भाग ६ टा) उनपर आवरण करना अर्थात् मतिसे कीसी प्रकारका ज्ञान नही होने देना अच्छी बुद्धि

उत्पन्न नही होना तत्त्व वस्तुपर विचार नही करने देना. प्रज्ञा नही फेलना-बदलेमें खराब मति-बुद्धि-प्रज्ञा-विचार पैदा होना यह सब मतिज्ञानावर्णियकर्मका ही प्रभाव है (२) श्रुतज्ञानावर्णिय-श्रुतज्ञानको रोके, पठन पाठन श्रवण करतेको रोके, सद्ज्ञान होंने नही देवे योग्य मीलनेपर भी सूत्र सिद्धान्त वाचना सुननेमें अन्तराय होना-बदलेमें मिथ्याज्ञान पर श्रद्धा पठन पाठन श्रवण करनेकि रूची होना यह सब श्रुतिज्ञानावर्णियकर्मका प्रभाव है (३) अवधिज्ञानावर्णियकर्म- अनेक प्रकारके अवधिज्ञानकों रोके (४) मन पर्यवज्ञानावर्णियकर्म आते हुवे मनःपर्यवज्ञानको रोके (५) केवलज्ञानावर्णियकर्म-सपूर्ण जो केवलज्ञान है उनकों आते हुवेकों रोके इति ॥

(२) दर्शनावर्णियकर्म—राजाके पोलीया जैसे कीसी मनुष्यकों राजासे मीलना है परन्तु वह पोलीया मीलने नही देते है इसी माफिक जीवोंको धर्म राजा से मीलना है परन्तु दर्शनावर्णियकर्म मीलने नही देते है जीसकि उत्तर प्रकृति नौ है. (१) चक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदय से जीवोंको नेत्र (ऑखों) हिन बना दे अर्थात् एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय जातिमें उत्पन्न होते है कि जहां नेत्रोंका बिलकुल अभाव है और चौरिन्द्रिय पांचेन्द्रिय जातिमें नेत्र होने पर भी रातीदा होना, काणा होना तथा बिलकुल नही दीखना इसे चक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति कहते है (२) अचक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदयसे त्वचा जीभ नाक कान और मनसे जो वस्तुका ज्ञान होता है उनोंको रोके जिस्का नाम अचक्षु दर्शनावर्णिय कहते है (३) अवधि दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदयसे अवधि दर्शन नही होने देवे अर्थात् अवधि दर्शनको रोके (४) केवल दर्शनावर्णिय कर्मोदय, केवल दर्शन होने नही देवे अर्थात् केवल दर्शनपर आवरण कर रो[illegible] रखे ॥ तथा निंद्रा-निंद्रा निंद्रा दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदय [illegible]

निद्रा आति है परन्तु सुखे सोना सुखे जाग्रत होना उसे निद्रा कहते है। और सुखे सोना दुःखपूर्वक जाग्रत होना उसे निद्रानिद्रा कहते है। खडे खडेकों तथा बैठे बैठेकों निद्रा आवे उसे प्रचला नामाकि निद्रा कहते है। चलते फीरतेकों निद्रा आवे उसे प्रचला प्रचला नामकि निद्रा कहते है। दिनकों या रात्रीमें चिंतवन (विचाराहुवा) किया कार्य निद्राके अन्दर कर लेते हो उसको स्त्यानर्द्धि निद्रा कहते है. एवं च्यार दर्शन और पांच निद्रा मीलाने से नौ प्रकृति दर्शनावर्णियकर्मकि है।

(३) वेदनियकर्म—मधुलीप्त छुरी जैसे मधुका स्वाद मधुर है परन्तु छुरीकी धार तीक्षण भी होती है इसी माफीक जीवोंको शातावेदनि सुख देती है मधुवत् और असातावेदनि दुःख देती है छुरीवत् जीसकि उत्तर प्रकृति दोय है सातावेदनिय, असाता-वेदनिय, जीवोंको शरीर–कुटुम्ब धन धान्य पुत्र कलत्रादि अनुकुल सामग्री तथा देवादि पौद्गलीक सुख प्राप्ति होना उसे सातावेदनियकर्म प्रकृतिका उदय कहते है और शरीरमें रोग निर्धनता पुत्र कलत्रादि प्रतिकुल तथा नरकादि के दुःखोका अनुभव करना उसे असातावेदनियकर्म प्रकृति कहते है।

(४) मोहनियकर्म–मदिरापान कीया हुवा पुरुष बेभान हो जाते है फीर उनकों हिताहितका ख्याल नहा रहते है इसी माफीक मोहनियकर्मोदयसे जीव अपना स्वरूप भूल जानेसे उसे हिताहितका ख्याल नही रहता है जिस्के दो भेद है दर्शनमोहनिय सम्यक्त्व गुणको रोके और चारित्रमोहनिय चारित्र गुणको रोके जीसकि उत्तर प्रकृति अठावीस है जिस्का मूल भेद दोय है (१) दर्शनमोहनिय (२) चारित्र मोहनिय जिस्मे दर्शनमोह-निय कर्मकि तीन प्रकृति है (१) मिथ्यात्वमोहनीय (२) सम्यक्त्व मोहनिय (३) मिश्रमोहनिय- जेसे एक कोद्रव नामका

अनाज होते है जिस्को खानेसे नशा आ जाता है उन नशाके मारे अपना स्वरूप भूल जाता है।

(क) जिस कोद्रव नामके धांनकों छाली सहित खानेसे विलकुल ही बैभान हो जाते है इसी माफीक मिथ्यात्व मोहनिय कर्मोदयसे जाव अपने स्वरूपको भूलके परगुणमें रमणता करते है अर्थात् तत्व पदार्थंकि विप्रीत श्रद्धाकों मिथ्यात्व मोहनिय कहते है जिस्के आत्म प्रदेशोंपर मिथ्यात्वदलक होनेसे धर्मपर श्रद्धा प्रतित न करे अधर्मकि प्ररूपना करे इत्यादि।

(ख) उस कोद्रव धानका अर्ध विशुद्ध अर्थात् कुछ छाली उतारके ठीक किया हो उनको खानेसे कभी सावचेती आति है इसी माफीक मिश्रमोहनीवाले जीवोंकों कुच्छ श्रद्धा कुच्छ अश्रद्धा मिश्रभाव रहते है उनोंको मिश्रमोहनि कहते है लेकीन वह है मिथ्यात्वमें परन्तु पहला गुणस्थान छुट जानेसे भव्य है।

(ग) उस कोद्रव धानकों छाशादि सामग्रीसे धोके विशुद्ध बनावे परन्तु उन कोद्रव धांनका मूल जातिस्वभाव नही जानेसे गलछाक बनी रहती है इसी माफीक क्षायक सम्यकत्व आने नही देवे और सम्यक्त्वका विराधि होने नही देवे उसे सम्यक्त्व मोहनिय कहते है। दर्शनमोह सम्यकत्व घाति है

दुसरा जो चारित्र मोहनिय कर्म है उसका दो भेद है (१) कषाय चारित्र मोहनिय (२) नौकषाय चारित्र मोहनिय और कषाय चारित्र मोहनिय कर्मके १६ है। जिस्मे एकेक कषायके च्यार च्यार भेद भी हो सक्ते है जेसे अनंतानुबन्धी क्रोध अनंतानुबन्धी जेसा. अप्रत्याख्यानि जेसा-प्रत्याख्यानि जेसा-और संज्वलन जेसा एवं १६ भेदोंका ६४ भेद भी होते है यहांपर १६ भेद ही लिखते है।

अनंतानुवन्धी क्रोध-पत्थरकि रेखा सादश, मान वज्रके

स्थंभ साद्दश, माया वांसकी जड साद्दश, लोभ करमजी रेसम रंग साद्दश घात करे तो सम्यक्त्वगुणकि स्थिति यावत् जीवकि गति करें तों नरककि ॥ अप्रत्याख्यानि क्रोध तलावकि तड मान दान्तकास्थंभ, माया मेंढाका श्रृंग, लोभ नगरका कीच घात करे तों श्रावकके व्रतोंकि स्थिति एक वर्षकि, गति तीर्यंच कि ॥ प्रत्याख्यानि क्रोध गाडाकी लीक, मान काष्टका स्थंभ, माया चालता बैलकासूत्र, लोभ नेत्रोंके अञ्जन घात करे तों सर्व व्रतकि, स्थिति करे तो च्यार मासकि, गति करें तों मनुष्यकी ॥ संज्वलनका क्रोध पाणीकी लीक, मान तृणका स्थंभ, मायावांसकी छाल लोभ हलदिका रंग, घात करे तों वीतरागपणाकों, स्थिति क्रोधकी दो मास मानकी एक मास. मायाकी पन्दरा दिन, लोभकी अन्तर मुहुर्त. गति करे तो देवतावोंमें जावे. इन सोलह प्रकारकी कषायकों कषाय मोहनिय कहते है

नौ नोकषाय मोहनिय- हास्य-कतूहल मश्करी करना। भय-डरना चिस्मय होना। शोक-फीकर चिंता आर्तध्यान करना। जुगुप्सा-ग्लानी लाना नफरत करना। रति आरंभादिकार्योंमे खुशी लाना। अरति-संयमादि कार्योंमे अरति करना। स्त्रीवेद-जिस प्रकृतिके उदय पुरुषोंकि अभिलाषा करना। पुरुषवेद जिस प्रकृतिके उदय स्त्रियोंकि अभिलाषा करना। नपुंसक वेद जिस प्रकृतिके उदय स्त्रि-पुरुष दोनोंकि अभिलाष करना ॥ एवं २८ प्रकृति. मोहनियकर्मकी है।

(५) आयुष्य कर्मकि च्यार प्रकृति है यथा-नरकायुष्य -तीर्यंचायुष्य, मनुष्यायुष्य, देवायुष्य । आयुष्यकर्म जेसे कारागृहकी मुदत हो इतने दिन रहना पडता है इसी माफीक जोम गतिका आयुष्य हो उसे भोगवना पडता है।

(६) नामकर्म चित्रकार शुभ और अशुभ दोनों प्रकारके

चित्रोंका अवलोकन करता है इसी माफीक नामकर्मोदय जींवोंको शुभाशुभ कार्यमें प्रेरणा करनेवाला नामकर्म है जीसकी एकसो-तीन (१०३) प्रकृतियों है।

(क) गतिनामकर्मकि च्यार प्रकृतियों है नरकगति, तीर्यंचगति, मनुष्यगति देवगति। एक गतिसे दुसरी गतिमें गमनागमन करना उसे गतिनाकर्म कहते है।

(ख) जातिनाम कर्म कि पांच प्रकृति है एकेन्द्रिय जाति, बेइन्द्रिय० तेइन्द्रिय० चोरिन्द्रिय० पंचेन्द्रिय जाति नाम।

(ग) शरीर नामकर्मकि पांच प्रकृति है औदारिक शरार वैक्रिय० आहारीक० तेजस० कारमण शरीर०। प्रतिदिन नाश-विनाश होनेवालोंको शरीर कहते है।

(घ) अंगोपांग नामकर्मकि तीन प्रकृति है. औदारिक शरीर अंग उपांग. वैक्रिय शरीर अंगोपांग आहारीक शरीर अंगोपांग, शेष तेजस कारमण शरीरके अंगोपांग नही होते है।

(ङ) बन्धन नामकर्मकि पंदरा प्रकृति है-शरीरपणे पौद्गल ग्रहन करते है फीर उनोंको शरीरपणे बन्धन करते है यथा-औदारीक औदारीकका बन्धन, १ औदारीक तेजसका बन्धन, २ औदारीक कारमणका बन्धन, ३ औदारीक तेजस कारमणका बन्धन, ४ वैक्रिय वैक्रियका बन्धन, ५ वैक्रिय तेजसका बन्धन, ६ वैक्रियकारमणका बन्धन. ७ वैक्रिय तेजस कारमणका बन्धन ८ आहारीक आहारीकका बन्धन९ आहारीक तेजसका बन्धन. १० आहारीक कारमणका बन्धन. ११ आहारीक तेजस कारमणका बन्धन १२ तेजस तेजसका बन्धन. १३ तेजस कारमणका बन्धन. १४ कारमणकारमणका बन्धन १५ एवं १५।

(च) संघातन नाम कर्म कि पांच प्रकृति है जो पौद्गल शरीरपणे ग्रहन कीया है उनोंको यथायोग्य अवयवपणे मजबुत बनाना।

जेसे औदारिक सघातन, वैक्रियसंघातन, आहारीक संघातन, तेजस संघातन कारमण संघातन।

(छ) संहनन नामकर्मकि छे प्रकृति है. शरीरकि ताकत और हाडकि मजबुतिकों संहनन कहते है यथा वज्र ऋषभनाराच संहनन। वज्रका अर्थ है खीला. ऋषभका अर्थ है पाट्टा, नाराचका अर्थ है दोनों तर्फ मर्कट याने कुटीयाके आकार दोनो तर्फ हडी जुडी हुइ अर्थात् दोनो तर्फ हड्डीका मीलना उसके उपर एक हडीका पट्टा और इन तीनोंमें एक खीली हो उसे वज्रऋषभ नाराच संहनन कहते है ॥ नाराच संहनन-उपरवत् परन्तु बीचमें खीली न हो. नाराच संहनन-इस्में पट्टा नही है। अर्द्ध नाराच संहनन-एक तर्फ मर्कट बन्ध हो दुसरी तर्फ खीली हो। किलीका संहनन-दोनो तर्फ अंकुडाकि माफीक एक हडीमें दुसरी हडी फसी हुइ हो। छेवट्टं सहनन-आपस में हड्डीयों जुडी हुइ है ॥

(ज) संस्थाननामकर्मकि छे प्रकृतियों है—शरीरकी आकृतिकों संस्थान कहते है समचतुरस्र संस्थान-पालटीमार के (पद्मासन) वेठनेसे चोतर्फ बराबर हो याने दोनों जानुके बिचमें अन्तर है इतना ही दोनों स्कन्धोंके बिचमें। इतना ही एक तर्फसे जानु और स्कन्धके अन्तर हो उसे समचतुरस्र संस्थान कहते है। निग्रोध परिमंडल संस्थान नाभीके उपरका भाग अच्छा सुन्दर हो और नाभीके निचेका भाग हिन हो। सादि संस्थान-नाभीके निचेका विभाग सुन्दर हो, नाभीके उपरका भाग खराब हो। कुब्ज संस्थाम-हाथ पैर शिर गर्दन अवयव अच्छा हो परन्तु छाती पेट पीठ खराब हो। वामन संस्थान-हाथ पैरादि छोटे छोटे अवयव खराब हो। हुंडक संस्थान-सर्व शरीर अवयव खराब अप्रमाणीक हो।

(झ) वर्णनामकर्मकि पांच प्रकृति है—शरीरके जो पुद्गल लागा है उन पुद्गलोंका वर्ण जैसे कृष्णवर्ण, निलवर्ण, रक्तवर्ण,

पेतवर्ण, श्वेतवर्ण जीवोंके जिस वर्ण नाम कर्मोदय होते है वेसा वर्ण मीलता है।

(ञ) गन्ध नामकर्मकि दो प्रकृति है—सुर्भिगन्धनाम कर्मोदयसे सुर्भिगन्धके पुद्गल मीलते है दुर्भिगन्धनाम कर्मोदयसे दुर्भिगन्धके पुद्गल मीलते है।

(ट) रस नामकर्मकि पांच प्रकृति है—पूर्ववत् शरीरके पुद्गल तिक्तरस, कटुकरस, कषायरस, अम्लरस, मधुररस, जैसे रस कर्मोदय होता है वेसे ही पुद्गल शरीरपणे ग्रहन करते है।

(ठ) स्पर्श नामकर्मकि आठ प्रकृति हे जिस स्पर्श कर्मका उदय होता है वेसे स्पर्शके पुद्गलोंकों ग्रहन करते है जैसे कर्कश, मृदुल, गुरु, लघु, शित, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष।

(ड) अनुपूर्वि नामकर्मकि च्यार प्रकृतियों है एक गतिसे मरके जीव दुसरी गतिमें जाता हुवा विग्रह गति करते समयानुपूर्वि, प्रकृति उदय हो जीवकों उत्पत्तिस्थान पर ले जातें है जेसे बेचा हुवा वहलकों धणी नाथ गालके लेजावे जीस्का च्यार भेद नरकानुपूर्वि, तीर्यचानुपूर्वि, मनुष्यानुपूर्वि, देवआनुपूर्वि।

(ढ) विहायगति नामकर्मकि दो प्रकृतियों है जिस कर्मोदयसे अच्छी गजगामिनी गति होती है उसे शुभ विहायगति कहते है और जिन कर्मोदयसे उंट खरवत् खरात्र गति होती है उसे अशुभ विहायगति कहते है। इन चौदा प्रकारकि प्रकृतियोंके पिंड प्रकृति कही जाती है अब प्रत्येक प्रकृति कहते है।

पराघातनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे कमजोरकों तो क्या परन्तु वडे वडे सत्ववाले योद्धोंको भी एक छीनकमें पराजय कर देते है।

उश्वासनाम—शरीरकि बाहीरकि हवाकों नासीकाद्वारा

शरीरके अन्दर खींचना उसे श्वास कहते है और शरीरके अन्द-रकी हवाको बाहर छोडना उसे निश्वास कहते है।

आतपनाम—इस प्रकृतिके उदयसे स्वयं उष्ण न होनेपर भी दुसरोंको आतप मालुम होते है यह प्रकृति 'सूर्य' के वैमानके जो बादर पृथ्वीकाय है उनोंके शरीरके पुद्गल है वह प्रकाश करता है, यद्यपि अग्निकायके शरीर भी उष्ण है परन्तु वह आतप नाम नही किन्तु उष्ण स्पर्श नामका उदय है।

उद्योतनाम—इस प्रकृतिके उदयसे उष्णता रहीत-शीतल प्रकृति जेसे चन्द्र ग्रह नक्षत्र तारोंके वैमानके पृथ्वी शरीर है तथा देव और मुनि वैक्रिय करते है तब उनोंका शितल शरीर भी प्रकाश करता है। आगीया-मणि-औषधियों इत्यादिको भी उद्योत नामकर्मका उदय होता है।

अगुरुलघुनाम—जीस जीवोंके शरीर न भारी हो कि अपनेसे सभाला न जाय. न हलका हो कि हवामें उड जावे याने परिमाण संयुक्त हो शीघ्रता से लिखना हलना चलनादि हरेक कार्य कर सके उसे अगुरुलघु नाम कहते है।

जिननाम—जिस प्रकृतिके उदय से जीव तीर्थंकर पद को प्राप्त कर केवलज्ञान केवलदर्शनादि ऐश्वर्य संयुक्त हो अनेक भव्यात्माओंका कल्याण करे।

निर्माणनाम—जिस प्रकृतिके उदय जीवोंके शरीरके अंगो-पांग अपने अपने स्थानपर व्यवस्थित होते हो जेसे सुतार चित्र-कार, पुतलीयोंके अंगोपांग यथास्थान लगाते है इसी माफीक यह कर्म प्रकृति भी जीवोंके अवयव यथास्थान पर व्यवस्थित बना देती है।

उपघातनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे जीवों को अपने ही

अवयव से तकलीफों उठानी पडे जेसे मस नसूर दो जीभों अधिक दान्त होठों से बाहार निकल जाना अंगुलीयों अधिक इत्यादि। इन आठ प्रकृतियोंको प्रत्येक प्रकृति कहते है अब त्रसादि दश प्रकृति बतलाते है।

त्रसनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे त्रसपणा याने बेइन्द्रियादिपणा मीले उसे त्रसनाम कहते हैं।

बादरनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे बादरपणा याने जिसको छदमस्थ अपने चरमचक्षुसे देख सके यद्यपि बादर पृथ्वीकायादि एकेक जीव के शरीर दृष्टिगोचर नहीं होते है. तथपि उनोंके बादर नाम कर्मोदय होनेसे असंख्याते जीवोंके शरीर एकत्र होनेसे दृष्टिगोचर हो सक्ते है परन्तु सूक्ष्म नामकर्मोदयवाले असख्यात शरीर एकत्र होनेपर भी चरमचक्षुवालों के दृष्टिगोचर नहीं होते है।

पर्याप्त नाम—जिस जातिमें जितनि पर्याप्ती पाती हो उनोंको पूरण करे उसे पर्याप्तनाम कहते है पुद्गल ग्रहन करनेकि शक्ति पुद्गलोंको परिणमानेकि शक्तिको पर्याप्ति कहते है।

प्रत्येक शरीर नाम—एक शरीरका एक ही स्वामी हो अर्थात् एकेक शरीरमें एकेक जीव हो उसे प्रत्येक नाम कहते है। साधारण बनस्पति के सिवाय सब जीवोंको प्रत्येक शरीर है.

स्थिर नाम—शरीर के दान्त हड्डी ग्रीवा आदि अवयव स्थिर मजबुत हो उसे स्थिरनामकर्म कहते हैं।

शुभनाम—नाभी के उपरका शरीरको शुभ कहते है जैसे हस्तादिका स्पर्श होनेसे अप्रीति नहीं है किन्तु पैरोंका स्पर्श होते ही नाराजी होति है।

सुभाग नाम—कीसीपर भी उपकार किया विगर ही लोगों के प्रीतीपात्र होना उसको सुभागनाम कर्म कहते है। अथवा सौभाग्यपणा सदैव बना रहना युगल मनुष्यवत्.

सुस्वर नाम—मधुरस्वर लोगोंको प्रीय हो पंचमस्वरवत्

आदेय नाम—जिनोंका वचन सर्वमान्य हो आदर सत्कारसे सर्व लोन मान्य करे।

यशःकीर्त्ति नाम—एक देशमें प्रशंसा हो उसे कीर्ति कहते है और वहुत देशोंमें तारीफ हो उसे यशः कहते है अथवा दान तप शील पूजा प्रभावनादिसे जो तारीफ होती है उसे कीर्ति कहते है और शत्रुवोंपर विजय करनेसे यशः होता है। अब स्थावरकि दश प्रकृति कहते है।

स्थावर नाम—जिस प्रकृतिके उदयसे स्थिर रहे याने शरदी गरमीसे वच नही सके उसे स्थावर कहते है जेसे पृथ्व्यादि पांच स्थावरपणे में उत्पन्न होना।

सूक्ष्म नाम—जिस प्रकृति के उदयसे सूक्ष्म शरीर–जो कि छद्मस्थोंके दृष्टिगोचर होवे नहीं कोसीके रोकनेपर रूकावट होवे नही. खुदके रोका हुवा पदार्थ रूक नही सके। वैसे सूक्ष्म पृथ्व्यादि पांच स्थावरपणेमें उत्पन्न होना।

अपर्याप्ता नाम—जिस जातिमें जितनी पर्याय पावे उनोंसे कम पर्यायबान्धके मर जावे, अथवा पुद्गल ग्रहनमें असमर्थ हो।

साधारण नाम अनंत जाव एक शरीरके स्वामि हो अर्थात् एक ही शरीरमें अनंत जीव रहते हो कन्दमूलादि.

अस्थिर नाम–दान्त हाड कान जीभ ग्रीवादि शरीरके अवयवों अस्थिर हो–चपल हो उसे अस्थिर नाम कर्म कहते है।

अशुभनाम—नाभीके नीचेका शरीर पैर विगेरे जोकि दुस-

रोंके स्पर्श करतेही नाराजी आवे तथा अच्छा कार्य करनेपरभी नाराजी करे इत्यादि।

दुर्भागनाम—कीसीके पर उपकार करनेपरभी अप्रीय लगे तथा इष्टवस्तुओंका वियोग होना।

दुःस्वरनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे ऊंट, गर्दभ जेसा खराब स्वर हो उसे दुःस्वरनाम कर्म कहते है।

अनादेयनाम—जिसका वचन कोइभी न माने याने आदर करनेयोग्य वचन होनेपरभी कोइ आदर न करे।

अयशःकीर्तिनाम—जिस कर्मोदयसे दुनियोंमें अपयश-अकीर्ति फैले, याने अच्छे कार्य करनेपरभी दुनियों उनोंको भलाइ न देके बुराइयोंही करती रहै इति नामकर्मकी १०३ प्रकृति है।

(७) गोत्रकर्म—कुंभकार जेसे घट बनाते है उसमें उच्च पदार्थ घृतादि और निच पदार्थ मदीरा भी भरे जाते है इसी माफीक जीव अष्ट मदादि करनेसे निच गोत्र तथा अमदसे उच्च गोत्रादि प्राप्त करते है जीसकि दो प्रकृति है उच्चगोत्र, निचगोत्र जिस्में इक्ष्वाकुवंस हरिवंस चन्द्रवंसादि जिस कुलके अन्दर धर्म और नीतिका रक्षण कर चीरकालसे प्रसिद्धि प्राप्ति करी हो उच्चकार्य कर्त्तव्य करनेवालोंको उच्च गोत्र कहते है और इन्होंसे विप्रीत हो उसे निचगोत्र कहते है।

(८) अन्तरायकर्म—जैसे राजाका खजांनची—अगर राजा हुकमभी कर दीया हो तों भी वह खजांनची इनाम देनेमें विलम्ब करसक्ता है इसी माफीक अन्तराय कर्मोदय दानादि कर नहो सक्ते है तथा वीर्य—पुरुषार्थ कर नहो सके जीसकि पांच प्रकृति है (१) दानअंतराय—जेसे देनेकि वस्तुवों मोंजुद हो. दान लेनेवाला उत्तम गुणवान पात्र मौजुद हो. दानके फलोंको जानता

हो, परन्तु दान देनेमें उत्साह न बढे यह दानांतराय कर्मका उदय है.

दातार उदार हो दानकी चीजों मौजुद हो आप याचना करनेमें कुशल हो परन्तु लाभ न हो तथा अनेक प्रकारके व्यापारादिमें प्रयत्न करनेपरभी लाभ न हो उसे लाभान्तराय कहते है।

भोगवने योग्य पदार्थ मौजुद है उस पदार्थोंसे वैराग्यभाव भी नही है न नफरत आति है परन्तु भोगान्तराय कर्मोदयसे कीसी कारणसे भोगव नहीं सके उसे भोगान्तराय कहते है जो वस्तु एक दफे भोगमें आति हो असानादि।

उपभोगान्तराय-जो खि वस्त्र भूषणादि वारवार भोगनेमें आवे एसी सामग्री मोजुद हो तथा त्यागवृत्ति भी नहो तथापि उपभोगमें नहीं ली जावे उसे उपाभोगान्तराय कहते है।

वीर्यान्तराय-रोग रहीत शरीर बलवान सामर्थ्य होनेपरभी कुच्छभी कार्य न कर सके अर्थात् वीर्य अन्तराय कर्मोदयसे पुरुषार्थ करनेमें वीर्य फोरनेमें कायरोंकी माफीक उत्साह रहित होते है उठना बेठना हलना चलना बोलना लिखना पढना आदि कार्य करनेमें असमर्थ हो वह पुरुषार्थ कर नही सकते है उसे वीर्य अन्तरायकर्म कहते है इन आठों कर्मोकी १५८ प्रकृतिको कंठस्थ कर फीर आगेके थोकडेमें कर्मबन्धनेका कर्म तोडनेके हेतु लिखेंगे उसपर ध्यान दे कर्मबन्धके कारणोंको छोडनेका प्रयत्न कर पुरांणे कर्मोको क्षय कर मोक्षपद प्राप्त करना चाहिये इति।

सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम्

थोकडा नम्बर ४२

(कर्मोंके बन्धहेतु)

कर्मबन्धके मूलहेतु चार है यथा-मिथ्यात्व (५) अवृति (१२) कषाय (२५) योग (१५) एवं उत्तर हेतु ५६ जिसद्वारा कर्मोंके दल एकत्र हो आत्मप्रदेशोंपर बन्धन होते है यह विशेष पक्ष हे परन्तु यहांपर सामान्य कर्मबन्धहेतु लिखते है। जेसे ज्ञानावर्णिय कर्म-बन्धके कारण इस माफीक है

ज्ञान या ज्ञानवान् व्यक्तियोंसे प्रतिकूळ आचरणा या उनोंसे वैर भाव रखना। जीसके पास ज्ञान पढा हो उनका नाम को गुप्त रख दुसरोंका नाम कहना. या जो विषय आप जानता हो उनको गुप्त रख कहनाकि में इस बातको नहि जानता हूं। ज्ञानी-योंका तथा ज्ञान ओर ज्ञानके साधन पुस्तक विधा-मन्दिर पाटी पोथी ठवणी कलमादिका जलसे या अग्निसे नष्ट करना या उसे विक्रय कर अपने उपभोगमें लेना। ज्ञानीयोंपर तथा ज्ञानसाधन पुस्तकादिपर प्रेम स्नेह न करके अरुची रखना। विधार्थीयोंकि विद्याभ्यासमें विघ्न पहुंचाना जैसे कि विद्यार्थीयोंके भोजन वस्त्र स्थानादिका उनको लाभ होता हो तो उसे अंतराय करना या विधाध्ययन करते हुवों को छोडा के अन्य कार्य करवाना। ज्ञानी-योंकि आशातना करना करवाना जैसे कि यह अध्यापक निच कुलके है या उनोंके मर्म की बातें प्रकाश करना ज्ञानीयोंको मर-णान्त कष्ट हो एसे जाल रचना निंधा करना इत्यादि। इसी मा-फीक निषेध द्रव्य क्षेत्र काल भावमें. पढना पढानेवाले गुरुका विनय न करना जुटा हाथोंसे तथा अंगुलीके थुक लगाके पुस्त-कोंके पत्रोंको उलटना ज्ञानके साधन पुस्तकादिके पैरोंसे हटाना

पुस्तकोंसे तकीयेका काम लेना। पुस्तकों कों भंडारमें पडे पडे सडने देना किन्तु उनोंका सद्उपयोग न होने देना उदरपोषणके लक्षमे रखकर पुस्तके वेचना इनोंके सिवाय भी ज्ञान द्रव्यकि आमंद्को तोडना ज्ञानद्रव्यका भक्षण करना इत्यादि कारणोंसे ज्ञानावर्णीय कर्मका वन्ध होता है अगर उत्कृष्ट वन्ध हो तो तीस कोडाकोड सागरोपम के कर्म वन्ध होनेसे इतनेकाल तक कीसी कीस्मका ज्ञान हो नहीं सक्ते है वास्ते मोक्षार्थी जावोंको ज्ञान आशातना टालके ज्ञानकी भक्ति करना-पढनेवालोंकों साहिता देना पढनेवालोंकों साधन वस्त्र भोजन स्थान पुस्तकादि देना।

(२) दर्शना वरणीय कर्मवन्धका हेतु-दर्शनी साधु भगवान् तथा जिनमन्दिर जैनमूर्ति जैन सिद्धान्त यह सब दर्शनके कारण है इनोंकी अभक्ति आशातना अवज्ञा करना तथा साधन इन्द्रियों-का अनिष्ट करना इत्यादि जेसे ज्ञानविर्णिय कर्म वन्धके हेतु कहा है इसी माफीक स्वल्प ही दर्शनावर्णियकर्मका भी समजना। वन्ध ओर मोक्षमें मुख्य कारण आत्मा के परिणाम है वास्ते ज्ञान ओर ज्ञानसाधना तथा दर्शनी (साधु) ओर दर्शन साधनोके सन्मुख अप्रीती अभक्ति आशातना दीखलाना यह कर्मवन्धके हेतु है वास्ते यह वन्धहेतु छोडके आत्माके अन्दर अनंत ज्ञानदर्शन भरा हुवा है उनको प्रगट करनेका हेतु है उनोंसे प्रेमस्नेह और अन्तमें रागद्वेषका क्षयकर अपनि निज वस्तुवोंके प्राप्त कर लेना यहही विद्वानोंका काम है

(३) वेदनियकर्म दो प्रकारसे वन्धता है (१) सातावे-दनिय (२) असातावेदनिय—जिस्मे सातावेदनियकर्मवन्धके हेतु जैसे गुरुओंकी सेवा भक्ति करना अपनेसे जा श्रेष्ट है वह गुरु जैसे माता पिता धर्माचार्य विद्याचार्य कलाचार्य जेष्ट भ्रातादि क्षमा करना याने अपनेमे वदला लेनेकी सामर्थ्य होनेपर भी

अपने साथ बुरा वरताव करनेवालेकों सहन करना। दया—दीन दुःखीयोंके दुर करनेकि कोसीस करना। अनुव्रतोंके तथा महाव्रतोंका पालन करना अच्छा सुयोगध्यान मौन ओर दश प्रकार साधु समाचारीका पालन करना-कषायोंपर विजय प्राप्त करना-अर्थात् क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष ईर्षा आदिके वेगोंसे अपनि आत्माको बचाना—दान करना-सुपात्रोंको आहार वस्त्रादिका दान करना—रोगीयोंके औषधि देना जो जीव भयसे व्याकूल हो रहे है उने भयसे छुडाना विद्यार्थीओंके पुस्तकें तथा विद्याका दान करना अन्य दानसे भी वढके विद्यादान है। कारण अन्नसे क्षणमात्र तृप्ती होती है। परन्तु विद्यादानसे चीरकाल तक सुखी होता है—धर्ममें अपनि आत्माकों स्थिर रखना बाल वृद्ध तपस्वी और आचार्यादिकि वैयावच्च करना इत्यादि यह सब सातावेदनिय बन्धका हेतु है। इन कारणोंसे विप्रीत वरताव करनेसे असातावेदनिय कर्मको बन्धे है जैसेकि गुरुवोंको अनादर करे अपने उपर कीये हुवे उपकारोंका बदला न देके उलटा अपकार करे क्रूर प्रणाम निर्दय अविनय क्रोधी व्रत खंडित करना कृपण सामग्री पाके भी दान न करे धर्मके बारेमें वेपरवा रखे हस्ती अश्व वेहेलों पर अधिक वोजा डालनेवाला अपने आपको तथा औरोंको शोक संतापमें डालनेवाला इत्यादि हेतुवोंसे असातावेदनिय कर्मका बन्ध होता है।

(४) मोहनियकर्मबन्धके हेतु—मोहनियकर्मका दो भेद है (१) दर्शनमोहनिय (२) चारित्रमोहनिय जिसमें दर्शन मोहनीयकर्म जैसे—उन्मार्गका उपदेश करना जिनकृत्योंसे संसारकि वृद्धि होती है उनकृत्योंके विषयोंमें इस प्रकारका उपदेश करना कि यह मोक्षके हेतु है जैसेकि देवी देवोंके सामने पशुवोंकी हिंसा करनेसे पुन्यकार्य मानना। एकान्त ज्ञान या

क्रियासे ही मोक्षमार्ग मानना मोक्षमार्गका अल्पा करना याने नास्ति है इस लोक परलोक पुन्य पाप आदिकी. नास्ति करना खाना पीना ऐस आराम भोग विलास करनेका उपदेश करना इत्यादि उपदेश दे भद्रीक जीवोंको सन्मार्गसे पतितकर उन्मार्ग के सन्मुख करवा देना. जिनेन्द्रभगवानकी या भगवानके मूर्तिकि तथा चतुर्विध संघकि निंदा करने-समवसरण—चम्र छत्रादिका उपभोग करनेवालेमें वीतरागत्व हो ही न सके इत्यादि कहना—जिनप्रतिमाकी निंदा करना पूजा प्रभावना भक्तिके हानि पहुंचना सूत्र सिद्धान्त गुरु या पूर्वाचार्योंकी तथा महान् ज्ञानसमुद्र जैसे ग्रन्थोंकी निंदा करना यह सर्व दर्शन मोहनियकर्म बन्धके हेतु है जिनोंसे अनंतकाल तक वीतरागका धर्म मीलनाभी असंभव हो जाता है।

चारित्र मोहनिय कर्म बन्धके हेतु—जैसे चारित्रपर अभाव लाना. चारित्रवन्त कि निंदा करना मुनि के मल-मलीन गात्र वस्त्र देख दुगंच्छा करना खराब अध्यावसाय रखना. व्रत करके खंडन करना विषय भोगों कि अभिलाषा करना यह सब चारित्र मोहनीयकर्म बन्धका हेतु है जिस चारित्र मोहनियका दो भेद है (१) कषाय चारित्र मोहनिय (२) नोकषाय चारित्र मोहनीय-जिस्मे कषाय चारित्र मोहनिय जैसे अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ करनेसे अनन्तानुबन्धी आदिका बन्ध एवं अप्रत्याख्यानी—प्रत्याख्यानी और संज्वलन इनोंके करनेसे कषाय चारित्र मोहनीय कर्मबन्धता है तथा भांड जैसी कुचेष्टा करना हँसी करना कतूहल करना दुसरोंकी हाँसी विस्मय कराना इत्यादि इनोंसे हास्य मोहनिय कर्मबन्ध होता है। आरंभमें खुशी माननेवाला, मेला खेला देखनेवाला चक्षुलोलुपी देशदेशके नया नया नाटक देखना चित्रचित्रामादि खींचना प्रेमसे दुसरोंके

मन अपने के आधिन करना इत्यादिसे रति मोहनिय कर्म व-न्धता है। ईर्षालु-पापाचरणा-दुसरोंके सुखमें विघ्न करनेवाले बुरे कर्ममें दूसरेको उत्साही बनानेवाला संयमादि अच्छा कार्यमें उत्साहा रहित इत्यादि हेतुओसे अरति मोहनिय कर्मबन्ध होते है। खुद डरे औरोंके डरावे त्रास देनेवाला दया रहित मायावी पापाचारी इत्यादि भयमोहनिय कर्मबन्ध करता है। खुद शोक करे दुसरोंको शोक करावे चिंता देनेवाला विश्वास-घात स्वामिद्रोही दुष्टता करनेवाला—शोकमोहनियकर्म वन्धता है। सदाचारकि निंदा करे चतुर्विध संघकि निंदा करे जिन-प्रतिमाकि निंदा करनेवाला जीव जुगप्सा मोहनिय कर्म वन्धता है। विषयाभिलाषी परस्त्रि लंपट कुचेष्टा करनेवाला हावभावसे दुसरोंसे ब्रह्मचर्यसे भृष्ट करनेवाला जीव स्त्रिवेद वन्धता है। सरल स्वभावी-स्वदारा संतोषी सदाचारवाला मंद विषयवाला जीव पुरुषवेद वन्धता है। सतीयोका शील खंडन करनेवाला तीव्र विषयाभिलाषी कांमक्रीडामें आसक्त स्त्रि-पुरुषोंके कामकि पुरण अभिलाषा करनेवाला नपुंसक वेद मोहनियकर्म वन्धता है इन सब कारणोंसे जीव मोहनीयकर्म उपार्जन करता है।

(५) आयुष्य कर्मबन्धके कारण—जेसे रौद्र प्रणामी महा-रंभ. महा परिग्रह पांचेन्द्रियका घाती. मांसाहारी, परदारागमन विश्वासघाती, स्वामिद्रोही इत्यादि कारणोंसे जीव नरकका आयुष्य वान्धता है.। मायावृत्ति करना गुढ माया करना कुडा तोल माप जूटे लेख लिखना, जूटी साख देना परजीवोंकों तकलीफ पहुचाना दुसरेका धन छीन लेना इत्यादि कारणोंसे जीव तीर्यचका आयुष्य वान्धता है। प्रकृतिका भद्रीक होना विनय-वान् होना-स्वभावसेही जिनोंका क्रोध मान माया लोभ पतला हो दुसरोंकि संपत्ति देख इर्ष्या न करे भद्रीक दयावान् कोमलता

गांभीर्य सर्व जनसे प्रिति गुणानुरागी उदार परिणामि इत्यादि कारणोंसे जीव मनुष्यका आयुष्य बन्धता है। सराग संयम, संयमासंयम अकाम निर्ज्जरा वाल तपस्वी देवगुरु मातापितादिका विनय भक्ति करे देव पूजन सत्यका पक्ष गुणोंका रागी निष्कपटी संतोषी ब्रह्मचर्य व्रत पालक अनुकम्पा सहित श्रमणोपासक शास्त्ररागी भोग त्यागी इत्यादि कारणोंसे जीव देवायुष्य बान्धता है।

(६) नामकर्मकि दो प्रकृति है (१) शुभनामकर्म (२) अशुभ नामकर्म जिस्मे सरल स्वभावी-माया रहित मन वचन काया वेपार जिस्का एकसा हो वह जीव शुभनामकों बन्धता है गौर्वरहित याने ऋद्धिगौर्व रसगौर्व. सातागौर्व इन तीनों गौर्वसे रहित होना पापसे डरनेवाला क्षमावान्त मर्दवादि गुणोंसे युक्त परमेश्वरकि भक्ति गुरु वन्दन तत्त्वज्ञ राग द्वेष पतले गुणगृहो हो एसे जीव शुभ नामकर्म उपार्जन कर सकते है। दुसरा अशुभ नामकर्म-जैसे मायावी जिनोंके मन वचन कायाकि आचारणा में और बतलाने में भेद है। दुसरों के ठगनेवाले जूटी गवाही देनेवाले। घृत में चरवी दुद्ध में पाणी या अच्छी वस्तु में बुरी वस्तु मीला के वेचने वाले। अपनि तारीफ और दुसरोंकी निंदा करनेवाले वैश्यावों के वस्त्रालंकार दे दुसरे को ब्रह्मव्रत से पतित बनानेवाले इत्यादि देवद्रव्य ज्ञानद्रव्य साधारणद्रव्य खानेवाले विश्वासघात करने वाले इत्यादि कारणों से जीव अशुभ नामकर्म उपार्जन कर संसार मे परिभ्रमन करते है.

(७) गौत्रकर्म कि दो प्रकृति है (१) उच्चगौत्र २) निचगौत्र-जिस्मे किसी व्यक्ति में दोषों के रहते हुवे भी उनको विषय में उदासीन सिर्फ गुणो को ही देखनेवाले है। आठ प्रकार के मदों से रहित अर्थात् जातिमद, कुलमद, बलमद, चोथो रुपमद, श्रुत-

मद पेश्वर्यमद लाभमद तपमद इन मदों का त्याग करे अर्थात् यह आठों प्रकार के मद न करे। हमेशां पठन पाठन में जिनका अनुराग हे देवगुरु की भक्ति करनेवाला हो दुःखी जीवों को देख अनुकम्पा करनेवाला हो इत्यादि गुणोंसे जीव उच्चगौत्र का बन्ध करता है और इन कृत्यों से विपरीत वरताव करने से जीव निच गौत्र बन्धता है अर्थात् जिनमें गुणदृष्टि न होकर दोषदृष्टि है जाति कुलादि आठ प्रकार के मद करे पठन पाठन में प्रमाद आलस्य-घृणा होती हे आशातना का करनेवाला हे एसे जीव निच्चगोत्र उपार्जन करते है

(८) अंतराय कर्म के बन्ध हेतु-जो जीव जिनेन्द्र भगवान् कि पूजा मे विघ्न करते हो-जैसे जल पुष्प अग्नि फल आदि चढाने मे हिंस्या होती है वास्ते पूजा न करना ही अच्छा है तथा हिंस्या झूट चौरी मैथुन रात्रीभोजन करनेवाले ममत्वभाव रखनेवाले हो, तथा सम्यक् ज्ञानदर्शन चारित्ररूप मोक्षमार्ग में दोष दिखलाकर भद्रीक जीवों कों सद्मार्ग से भ्रष्ट बनानेवाले हो दुसरों को दान लाभ-भोग उपभोग में विघ्न करनेवाले हो। मंत्र यंत्र तंत्र द्वारा दुसरों कि शक्ति कों हरन करनेवाले हो इत्यादि कारणों से जीव अतराय कर्म उपार्जन करते है

उपर लिखे माफीक आठ कर्मों के वन्ध हेतु के सम्यक् प्रकारे समज के सदैव इन कारणों से वचते रहना ओर पूर्व उपार्जन कीये हुवे कर्मो को तप जप संयम ज्ञान ध्यान सामायिक प्रभावना आदि कर हटा के मोक्ष की प्राप्ति करना चाहिये।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

—◆◎◆—

थोकडा नम्बर ४३

(कर्म प्रकृति विषय.)

ज्ञानगुण दर्शनगुण चारित्रगुण और वीर्यगुण यह च्यार चैतन्य के मूल गुण है जिस्कों कोनसी कर्म प्रकृति चैतन्य के सर्व गुणों कि घातक है और कोनसो कर्म प्रकृति देश गुणों कि घातक है वह इस थोकडा द्वारा वतलाते है।

कैवल्यज्ञानावर्णिय कवल्य दर्शनावर्णिय मिथ्यात्व मोहनिय, निद्रा, निद्रा निद्रा, प्रचलानिद्रा, प्रचलाप्रचलानिद्रा, स्त्यानर्द्धि निद्रा अनंतानुवन्धी क्रोध-मान-माया-लोभ, अप्रत्याख्यानि क्रोध-मान-माया-लोभ, प्रत्याख्यानि क्रोध-मान-माया-लोभ, एवं २० प्रकृति सर्व घाती है।

मतिज्ञानावर्णिय श्रुतिज्ञानावर्णिय अवधिज्ञानावर्णिय मनः पर्यवज्ञानावर्णिय-चक्षुदर्शनावर्णिय अचक्षुदर्शनावर्णिय अवधि दर्शनावर्णिय संज्वलनका क्रोध-मान-माया लोभ-हास्य भय शोक जुगप्सा रति अरति स्त्रिवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद दांनान्तराय लाभान्तराय भोगान्तराय उपभोगान्तराय वीर्यान्तराय एवं २५ प्रकृति देशघाती हैं तथा मिश्रमोहनिय. सम्यक्त्वमोहनिय यह दो प्रकृति भी देशघाती है।

शेष प्रत्येक प्रकृति आठ, शरीरपांच, अंगोपांगतीन, संहनन छे, संस्थान छे, गतिच्यार, जातिपांच, विहायोगति दो, अनुपूर्वी आयुष्यच्यार त्रसकिदश, स्थावरकिदश, वर्णादिच्यार, गोत्रकि २ प्रकृति एवं ७३ प्रकृति अघाती है।

थोकडा नंम्बर ४१ में आठ कर्मो कि १५८ प्रकृति हैं जिस्में

१३२ प्रकृतियोंका उदय समुच्चय होते हैं जिस्मे २० प्रकृति सर्व घाती है २७ प्रकृति देशघाती है ७३ प्रकृति अघाती हैं इस्को लक्षमें लेके उदय प्रकृतिको समझना चाहिये।

उदय प्रकृति १२२का विपाक अलग २ कहते है।

(१) क्षेत्र विपाकी च्यार प्रकृति है जोकि जीव परभव गमन करते समय विग्रह गतिमें उदय होती है जिस्के नाम नरकानुपूर्वि तीर्यचानुपूर्वी मनुष्यानुपूर्वी और देवानुपूर्वी ।

(२) जीव विपाकी. जिस प्रकृतियोंके उदयसे विपाकरस जीवको अधिकांश भोगवते समय दुःख सुख होते है। यथा—ज्ञानावर्णिय पांच प्रकृति. दर्शनावर्णिय नौप्रकृति. मोहनिय अठावीस प्रकृति अन्तरायकि पांच प्रकृति गौत्र कर्मकि दो प्रकृति. वेदनिय कर्मकि दो प्रकृति–सातावेदनिय—असातावेदनिय. तीर्थंकर नामकर्म त्रसनाम बादरनाम पर्याप्तानाम स्थावरनाम सूक्षमनाम अपर्याप्तानाम सौभाग्यनाम दुर्भाग्यनाम सुस्वरनाम दुःस्वरनाम आदेयनाम अनादेयनाम यश.कीर्तिनाम अयश कीर्तिनाम उश्वासनाम एकेन्द्रिय जातिनाम बेइन्द्रय जातिनाम तेइन्द्रिय० चौरिंद्रय० पांचेन्द्रिय० नरकगतिनाम तीर्यचगतिनाम मनुष्य गतिनाम देवगतिनाम सुविहागतिनाम असुविहागतिनाम. एवं ७८ प्रकृति जीवविपाकी है ।

(३) भवविपाक जसे नरकायुष्य तीर्यचायुष्य मनुष्यायुष्य और देवायुष्य एवं च्यार प्रकृति भवप्रत्यय उदय होती है।

(४) पुद्गलविपाकी प्रकृतियों। यथा–निर्माण नाम स्थिर नाम अस्थिर नाम शुभनाम अशुभ नाम वर्णनाम गन्धनाम रसनाम स्पर्शनाम अगारु लघु नाम औदारीक शरीर नाम वैक्रयशरीर नाम आहारीक शरीर नाम तेजस शरीर नाम कारमण

शरीर नाम तीन शरीरके आंगोपांग नाम छे संहनन छे संस्थान उपघात नाम साधारण नाम प्रत्येक नाम उद्योत नाम आताप नाम पराघात नाम एवं ३६ प्रकृतियां पुद्गल विपाकी है एवं ४-७८-४-३६ कुध १२२ प्र० उदय।

परावर्तन प्रकृतियों-एक दुसरे के वदलेमें बन्ध सके-यथा शरीरतीन आंगोपांगतीन संहनन छे संस्थान छे जातिपांच गति-च्यार विहागतिदो अनुपूर्वीचार वेदतीन दोयुगलकि च्यार कषा-यशोला उद्योत आताप उच्चगौत्र निच्चगौत्र वेदनिय-साता-असाता निद्रापांच त्रसकीदश स्थावरकीदश नरकायुष्य तीर्यचायुष्य मनु-ष्यायुष्य देवायुष्य एवं ९१ प्रकृति परावर्तन है।

शेष ५७ प्रकृति अपरावर्त्तन याने जीसकी जगह वह ही प्र-कृति वन्धती है उसे अपरावर्तन कहते है। शेष आगे चोथा कर्मग्रंथाधिकारे लिखा जावेगा

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

थोकडा नंबर ४४

(कर्म ग्रंथ दूसरा)

मूल कर्म आठ है जिनकी उत्तर प्रकृति १४८× जिनके नाम थोकडा नं० ४२ में लिख आये हैं वहां देख लेना उन १४८ प्रकृतियोंमें से वध, उदय, उदीरणा, और सत्ता किस २ गुण-स्थान में कितनी २ प्रकृतियाकी है सो लिखते है.

(प्र) गुणस्थानक किसे कहते है ?

× श्री प्रज्ञाप्ना सूत्रानुस्वार १४८ प्रकृति है और कर्मग्रन्थानुस्वार १५८ परन्तु दोनु मत्तानुसार वन्ध प्रकृति १२० है वह ही अधिकार यह वतलावेंगे।

(उत्तर) जिस तरह शिव (मोक्ष) मंदिर पर चढने के लिये पावडिया (सीढी) है उसी तरह कर्म शत्रु को विदारने के लिये जीव के शुद्ध. शुद्धतर, शुद्धतम अध्यवसाय विशेष. यद्यपि अध्यवसाय असंख्याते है. परन्तु स्थूल याने व्यवहार नयसे १४ स्थान कहे है यथा मित्थ्यात्व १ सास्वादन २ मिश्र ३ अविरति सम्यक्दृष्टि ४ देशविरति ५ प्रमत्त संयत ६ अप्रमत्त संयत ७ निवृत्ति वादर ८ अनिवृत्ति वादर ९ सूक्ष्म संपराय १० उपशांत मोह वीतराग ११ क्षीणमोह वीतराग छद्मस्थ १२ सयोगी केवली १३ और अयोगी केवली १४ यह चवदे गुणस्थानक है

पहिले वताई हुई १४८ प्रकृतियों में से वर्णादिक १६ पांच शरीरका वंधन ५ संघातन ५ और मिश्र मोहनीय ! सम्यक्त्व मोहनीय १ एवम् २८ प्रकृति कम करनेंसे शेष १२० प्रकृतिका समुचय वंध है।

(१) मिथ्यात्व गुणस्थानक में १२० प्रकृतियोंमें से तीर्थंकर नामकर्म १ आहारक शरीर २ आहारक अगोपांग ३ तीन प्रकृतियोंका वंध विच्छेद होनेसे वाकी ११७ प्रकृतियोंका वंध है.

(२) सास्वादन गुणस्थानक मे नरक गति १ नरकायुष्य २ नरकानुपूर्वी ३ एकेन्द्रि ४ वेइन्द्री ५ तेइन्द्री ६ चौरिन्द्री ७ स्थावर ८ सूक्ष्म ९ साधारण १० अपर्याप्ता ११ हुंडक संस्थान १२ आतप १३ छेवट्टुं संघयण १४ नपुंसक वेद १५ मिथ्यात्व मोहनीय १६ ये सोला प्रकृति का वंध विच्छेद होनेसे १०१ प्रकृति का वध है.

(३) मिश्र गुणस्थानकमें पूर्वकी १०१ प्रकृति में से त्रियँचगति १ त्रियँचायुष्य २ त्रियँचानुपूर्वी ३ निद्रा निद्रा ४ प्रचला प्रचला ५ थीणद्धी ६ दुर्भाग्य ७ दु स्वर ८ अनादेय ९ अनंतानुवन्धी क्रोध १० मांन ११ माया १२ लोभ १३

ऋषभ नाराच संघयण १४ नाराचसंघयण १५ अर्द्ध नाराच सं० १६ कीलिका सं० १७ न्यग्रोध संस्थान १८ सादि संस्थान १९ वामन सं० २० कुब्ज सं० २१ नीचगोत्र २२ उद्योत नाम २३ अशुभविहायोगति २४ स्त्री वेद २५ मनुष्यायु २६ देवायुः २७ सत्ताईस प्रकृति छोडकर शेष ७४ का बंध होय.

(४) अविरति सम्यकदृष्टि गुणस्थानक में मनुष्यायुष्य १ देवायुष्य २ तीर्थंकर नाम कर्म ३ यह तीन प्रकृतियोंका बंध विशेष करे इस वास्ते ७७ प्रकृति का बंध होय.

(५) देशविरति गुणस्थानक पूर्व ७७ प्रकृति कही उसमें से वज्रऋषभनाराचसंघयण १ मनुष्यायु २ मनुष्यजाति ३ मनुष्यानुपूर्वी ४ अप्रत्याख्यानी क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८ औदारिक शरीर ९ ओदारिक अंगोपांग १० इन दश प्रकृतियों का अबंधक होने से शेष ६७ प्रकृति बांधे.

(६) प्रमत्त संयत गुणस्थानक में प्रत्याख्यानी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ का विच्छेद होनेसे शेष ६३ प्रकृति बांधे.

(७) अप्रमत्त संयत गुणस्थानक में ५९ प्रकृतिका बंध है. पूर्व ६३ प्रकृति कही जिसमेंसे शोक १ अरति २ अस्थिर ३ अशुभ ४ अयश ५ असाता वेदनीय ६ इन छे प्रकृतियोंका बंध विच्छेद करें और आहारक शरीर १ आहारक अंगोपांग २ विशेष बांधे एवम् ५९ प्रकृतिका बंध करे. अगर देवायुष्य न बांधे तो ५८ प्रकृतिका बंध क्योंकि देवायुष्य छट्टे गुणस्थानकसे बांधता हुवा यहां आवे. परन्तु सातवें गुणस्थानकसे आयुष्यका बन्ध शुरु न करे.

८) निवृत्ति बादर गुणस्थानक का सात भाग है जिसमें पहिले भागमें पूर्ववत् ५८ का बंध. दूजे भागमें निद्रा १ प्रचला २ का बंध विच्छेद होनेसे ५६ का बंध हो. एवम् तीजे, चौथे, पांचवे और

छठे भाग में भी ५६ प्रकृतिका बंध है. सातवें भागमें देवगति १ देवानुपूर्वी २ पंचेन्द्री जाति ३ शुभविहायोगति ४ त्रसनाम ५ बादर ६ पर्यांप्ता ७ प्रत्येक ८ स्थिर ९ शुभ १० सौभाग्य ११ सुःस्वर १२ आदेय १३ वैक्रिय शरीर १४ आहारक शरीर १५ तेजस शरीर १६ कार्मण शरीर १७ वैक्रिय अंगोपांग १८ आहारक अंगोपांग १९ समचतुःस्त्र संस्थान २० निर्माण नाम २१ जिन नाम २२ वरण २३ गंध २४ रस २५ स्पर्श २६ अगुरुलघु २७ उपघात २८ परा घात २९ और उश्वास ३० एवम् तीस प्रकृति का बंध विच्छेद होने से बाकी २६ प्रकृति बांधे.

(९) अनिवृत्ति गुणस्थानक का पांच भाग है. पहिले भाग में पूर्ववत् २६ प्रकृतिमेंसे हास्य १ रति २ भय ३ जुगुप्सा ४ ये चार प्रकृतिका बंध विच्छेद होकर बाकी २२ प्रकृति बांधे दूसरे भाग में पुरुषवेद छोडकर शेष २१ बांधे. तीजे भाग में सज्वलन का क्रोध १ चौथे भाग में संज्वलन का मान २ और पांचवे भाग में संज्वलनकी माया ३ का बंध विच्छेद होने से १८ प्रकृति का बंध होता है.

(१०) सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानक में संज्वलन के लोभका अबंधक है इसवास्ते १७ प्रकृतिका बंध होय.

(११) उपशांत मोह गुणस्थानक में १ शाता वेदनीय का बंध है. शेष ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ४ अंतराय ५ उच्चैगोत्र १ यशःकिर्ति १ इन १६ प्रकृतिका बंध विच्छेद हो.

(१२) क्षीणमोह गुणस्थानक में १ शाता वेदनीय बांधे.

(१३) सयोगी केवली गुणस्थानकमें १ शाता वेदनीय बांधे.

(१४) अयोगी गुणस्थानक में (अबंधक) बंध नहीं.

इति बंध समाप्त. सेवंभंते सेवंभंते तमेय सच्चम्.

थोकडा नं. ४५

(उदय)

समुच्चय १४८ प्रकृति में से १२२ प्रकृति का ओघ उदय है. बंधकी १२० प्रकृति कही उसमें से समकित मोहनीय १ मिश्रमोहनीय २ ये दो प्रकृति उदयमें ज्यादा है क्योंकि इन दो प्रकृतियों का बंध नहीं होता परन्तु उदय है।

(१) मिथ्यात्व गुणस्थानक में ११७ का उदय होय क्योंकि सम्यक्त्व मोहनीय १ मिश्रमोहनीय २ जिन नाम ३ आहारक शरीर ४ आहारक अंगोपांग ५ ये पांच का उदय नहीं है.

(२) सास्वादनगुण० ११२ प्र० का उदय है. मिथ्यात्व में ११७ का उदय था उसमें से सूक्ष्म १ साधारण २ अपर्याप्ता ३ आताप ४ मिथ्यात्व मोहनीय ५ और नरकानुपूर्वी ६ इन छ प्रकृतियोंका उदय विच्छेद हुवा.

(३) मिश्रगुण० में १०० प्रकृतिका उदय होय क्योंकि अनंतानुबन्धी चौक ४ एकेंद्री ५ विकलेंद्री ८ स्थावर ९ तिर्यंचानुपूर्वी १० मनुष्यानुपूर्वी ११ देवानुपूर्वी १२ इन बारे प्रकृतियोंका उदय विच्छेद होने से शेष ९९ प्रकृति रही. परन्तु मिश्रमोहनीय का उदय होय इस वास्ते १०० प्रकृतिका उदय कहा।

(४) अविरती सम्यक्दृष्टी गुण० में १०४ का उदय होय - क्योंकि मनुष्यानुपूर्वी १ त्रियंचानुपूर्वी २ देवानुपूर्वी ३ नरकानुपूर्वी ४ और सम्यक्त्व मोहनीय ५ इन पांच प्रकृतिका उदय विशेष होय और मिश्रमोहनीय का उदय विच्छेद होय. इस वास्ते १०४ प्रकृतिका उदय कहा.

(५) देशविरति गुण० में ८७ प्रकृतिका उदय होय क्यों

कि प्रत्याख्यानी चौक ४ त्रियंचानुपूर्वी ५ मनुष्यानुपूर्वी ६ नरक
गति ७ नरकायुष्य ८ नरकानुपूर्वी ९ देवगति १० देवायुष्य ११
देवानुपूर्वी १२ वैक्रिय शरीर १३ वैक्रिय अंगोपांग १४ दुर्भाग्य
१५ अनादेय १६ अयश १७ इन सतरे प्रकृतिया का उदय नहीं
होता.

(६) प्रमात्त संयतगुण० मे प्रत्याख्यानी चौक ४ त्रियंचगति
५ त्रियंचायुष्य ६ निचगोत्र ७ एवं आठ का उदय विच्छेद होने
से शेष ७९ प्रकृति रही. आहारक शरीर १ आहारक अंगोपांग २
इन दो प्रकृतिका उदय विशेष होय इस वास्ते ८१ प्रकृतिका
उदय होय.

(७) अप्रमत्त संयत गुण० में. थीणद्धी त्रिक ३ आहारक
द्विक ५ इन पांचका उदय न होय. शेष ७६ प्रकृति का
उदय होय.

(८) निवृति बादर गुण० में सम्यक्त्व मोहनीय १ अर्द्ध
नाराच सं० २ कीलिका सं० ३ छेवट्ठु स० ४ इन चार को छोडकर
शेष ७२ प्रकृति का उदय होय.

(९) अनिवृति बादर गु० में हास्य १ रति २ अरति ३
शोक ४ जुगुप्सा ५ भय ६ इनका उदय विच्छेद होने से शेष ६६
प्रकृति का उदय होय.

(१०) सूक्ष्म संपराय गुण० में पुरुषवेद १ स्त्रीवेद २ नपुस
वेद ३ संज्वलना क्रोध ४ मान ५ माया ६ इन छः का उदय वि
च्छेद होने से बाकी ६० प्रकृति का उदय होय.

(११) उपशांत मोह गुण० में संज्वलन लोभ का उद
विच्छेद हो बाकी ५९ का दय हो.

(१२) क्षीण मोह गुण० के दो भाग है पहिले भाग
ऋषभ नाराच और नाराच संघयण तथा दूसरे भाग में नि

और निद्रा निद्रा एवम् ४ प्रकृति का उदय विच्छेद होने से शेष ५५ का उदय होय.

(१३) सयोगी केवली गुण० में ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ४ अन्तराय ५ एवम् १४ प्रकृति का उदय विच्छेद होने से ४१ प्रकृति और तिर्थंकर नाम कर्म को मिलाकर ४२ प्रकृति का उदय होय.

(१४) अयोगी गुण० में १२ प्रकृति का उदय होय मनुष्यगति १ मनुष्यायु २ पंचेन्द्री ३ सौभाग्य नाम कर्म ४ त्रस ५ बादर ६ पर्याप्ता ७ उच्चैगौत्र ८ आदेय ९ यशकीर्ति १० तिर्थंकर नाम ११ वेदनी १२ ये बारे प्रकृतियों का उदय चरम समय विच्छेद होय. ॥ इति उदयद्वार समाप्तम् ॥

अब उदीरणा अधिकार कहेते हैं. पहिले गुण स्थानक से छट्ठे गुण स्थानक तक जैसे उदय कहा वैसे ही उदीरणा भी कहनी. और सात में गुण स्थानक से तेरमें गुण स्थानक तक जो उदय प्रकृति कही है उसमें से शाता वेदनीय १ अशाता वेदनीय २ और मनुष्यायु ३ ये तीन प्रकृति कम करके शेष प्रकृति रहे सो हरेक जगह कहना. चौदमें गुण स्थानकमें उदीरणा नहीं.

॥ इति उदीरणा समाप्तम् ॥

थोकडा नं. ४६

(सत्ता अधिकार)

(१) मिथ्यात्व गुण० में १४८ प्रकृति की सत्ता.

(२) सास्वादन गुण० में जिन नाम कर्म छोडकर १४७ प्रकृतिकी सत्ता रहती है.

(३) मिश्र गुण० में पूर्ववत् १४७ प्र० की सत्ता होय.

चौथे अविरति सम्यक्दृष्टि गु० से ११ वे उपशांत मोह गु० तक संभव सत्ता १४८ प्रकृति की हैं. परन्तु आठवें गु० से ११ वें गु० तक उपशम श्रेणी करनेवाला अनंतानुवंधी ४ नरकायु ५ त्रियंचायु ६ इन छै प्रकृतियों की विसंयोजना करे इस वास्ते १४२ प्रकृति का सत्ता होय.

क्षायक सम्यक्दृष्टिअचरम सरीरी चौथे से सातवें गु० तक अनंतानुवंधी ४ सम्यक्त्वमोहनीय ५ मिथ्यात्वमोहनीय ६ मिश्र-मोहनीय ७ इन सात प्रकृतियों को खपावे शेष १४१ प्रकृति सत्ता में होय,

क्षायक सम्यक्दृष्टि चरम शरीरी क्षपक श्रेणी करनेवालों के चौथे से नवमें (अनिवृत्ति) गु० के प्रथम भाग तक १३८ प्रकृति की सत्ता रहे. क्योंकि पूर्व कही हुइ सात प्रकृतियों के सिवाय नरकायु १ त्रियंचायु २ देवायु ३ ये तीन भी सत्ता से विच्छेद करना से।

क्षयोपशम सम्यक्त्व में वर्तता हुआ चौथे से सातवें गुण० तक १४५ प्रकृति की सत्ता होय क्योंकि चरम शरीरी है इसलिये नरकायु १ त्रियंचायु २ देवायु की सत्ता न रहे।

नवमें गुण० के दुसरे भागमें १२२ की सत्ता स्थावर १ सूक्ष्म २ त्रियच गति ३ त्रियंचानुपूर्वी ४ नरकगति ५ नरकानुपूर्वी ६ आताप ७ उद्योत ८ थीणर्द्धी ९ निद्रा निद्रा १० प्रचला प्रचला ११ एकेन्द्री १२ वेइन्द्री १३ तेरिन्द्री १४ चौरिन्द्री १५ साधारण १६ इन सोले प्रकृतियों की सत्ता विच्छेद होय.

नवमें गुण० के दुसरे भागमें ११४ प्रकृति की सत्ता प्रत्याख्यानी ४ और अप्रत्याख्यानी ४ इन ८ प्रकृति की सत्ता विच्छेद होय.

नवमें गु० के चोथे भाग में ११३ प्रकृति की सत्ता. नपुमकवे-दका विच्छेद हो.

नवमें गु० के पांचवें भाग में ११२ प्र० की सत्ता स्त्रीवेद विच्छेद हो.

नवमें गु० के छट्ठे भागमें १०६ प्र० की सत्ता. हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ जुगुप्सा ६ इन प्रकृतियों का सत्ता विच्छेद होय.

नवमें गु० के सातवे भाग मे १०५ प्र० की सत्ता. पुरुषवेद निकला.

नवमें गु० के आठवें भागमें १०४ प्र० की सत्ता संज्वलन का क्रोध निकला.

नवमें गु० के नवमें भाग मे १०३ प्र० की सत्ता. संज्वलन का मान निकला

दशमें गु० १०२ की सत्ता हो. यहां संज्वलन कि माया का विच्छेद हुआ.

इग्यारमे गु० में १०१ की सत्ता हो. यहां संज्वलन के लोभकी सत्ता विच्छेद हुई

बारमें गुण० मे १०१ की सत्ता द्विचरम समयतक रहे हैं पीछे निद्रा १ प्रचला २ इन दो प्रकृतियों कों क्षय करे चरम समय ९९ की सत्ता रहै।

तेरमें गुणस्थानक में ८५ की सत्ता होय चक्षुदर्शनावर्णीय अचक्षुदर्शनावर्णीय २ अवधिदर्शनावर्णीय ३ केवलदर्शनावर्णीय ज्ञानावर्णीय ५ अंतराय ५ इन चौदे प्रकृति की विच्छेद हुई.

चौदमें गुण० में पहिले समय ८५ की सत्ता रहै. पीछे देव १ देवानुपूर्वी २ शुभ विहायोगति ३ अशुभविहायोगति ४ ...क ६ स्पर्श १४ वर्ण १९ रस २४ शरीर २९ बंधन ३४ संघा... ९ निर्माण ४० संघयण ४६ अस्थिर ४७ अशुभ ४८ दुःभग...

कौ...
और
आवे,

४९ दुस्वर ५० अनादेय ५१ अयशः कीर्ति ५२ संस्थान ५८ अगुरू लघु ५९ उपघात ६० पराघात ६१ उश्वास ६२ अपर्याप्ता ६३ वेदनी ६४ प्रत्येक ६५ स्थिर ६६ शुभ ६७ औदारिक उपांग ६८ वैक्रिय उपांग ६९ आहारक उपांग ७० सुस्वर ७१ नीच्चैर्गोत्र ७२ इन बोहत्तर प्रकृतियों की सत्ता टलने से १३ की सत्ता रहै फिर मनुष्यानुपूर्वी के विच्छेद होने से १२ प्रकृति की सत्ता चरम समय होय इनकों उसी समय क्षय करके सिद्ध गति को प्राप्त हो। बारह प्रकृतियों के नाम-मनुष्य गति १ मनुष्यायु २ त्रस ३ बादर ४ पर्याप्ती ५ यशः कीर्ति ६ आदेय ७ सौभाग्य ८ तीर्थंकर ९ उच्चगौत्र १० पंचेन्द्री ११ और वेदनी १२ इति सत्ता समाप्त.

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

थोकडा नं. ४७.

श्री पन्नवणाजी सूत्र. पद २३

(अबाधाकाल.)

कर्मकी मूल प्रकृति आठ है, और उत्तर प्रकृति १४८ है.× कौन जीव किस २ प्रकृतिको कितने २ स्थितिकी बांधता है, और बांधनेके बाद स्वभावसे उदयमें आवे तो, कितने कालसे आवे. यह सब इस थोकडेद्वारा कहेंगे.

अबाधाकाल उसे कहते हैं. जैसे हुंडीकी मुदत पकजानेपर

× कर्म ग्रन्थ में पाच शरीर के बन्धन १५ कहा है वास्ते १५८ प्रकृति मानी गई है.

रुपिया देना पडता है, वैसेही कर्मका अबाधाकाल पूर्ण होनेपर कर्म उदयमें आते हैं. उस वख्त भोगना पडता है. हुंडीकी मुदत पकने के पहिलेही रुपिया दे दिया जाय, तो लेनदार मांगनेको नहीं आता. इसी तरह कर्मोंके अबाधाकालसे पूर्व तप संयमादिसे कर्म क्षय कर दिये जाय तो कर्मविपाकों भोगने नहीं पडते. (अर्जुनमालीवत्)

अबाधाकाल चार प्रकारका है. यथा.

(१) जघन्य स्थिति और जघन्य अबाधाकाल. जैसे दशमें गुणस्थानकमें अंतरमुहूर्त स्थितिका कर्मबंध होता है. और उसका अबाधाकाल भी अंतरमुहूर्तका है.

(२) उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अबाधाकाल. जैसे मोहनीयकर्म उ० स्थिति ७० कोडाकोडी सागरोपमकी है. और अबाधाकाल भी ७००० वर्षका है.

(३) जघन्य स्थिति और उत्कृष्ट अबाधाकाल. जैसे मनुष्य तिर्यंच, क्रोड पूर्वका आयुष्यवाला क्रोड पूर्वके तीसरे भागमें मनुष्य या तिर्यंच गतिका अल्प आयुष्य बांधे. तो क्रोड पूर्व के तीजे भागका अबाधाकाल और अंतर महुर्तका आयुष्य.

(४) उत्कृष्ट स्थिति और जघन्य अबाधाकाल. जैसे अंत (छेले) अंतरमुहूर्तमें ३३ सागरोपमका उ० नरकका आयुष्य बांधे.

मूल कर्म आठ-ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयुष्य ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ समुच्चय जीव और २४ दंडक के जीवोंके आठों कर्म है.

मूल आठो कर्मोंकी उत्तर प्रकृति १४८ यथा ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ९ वेदनीय २ मोहनीय २८ आयुष्य ४ नामकर्म ९३ गोत्रकर्म २ और अंतराय कर्मकी ५ एवम १४८. जीस्में

मोहनीय कर्मकी २८ प्रकृतिमेंसे सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्र मोहनीयका बंध नही होता. बाकी १४६ प्रकृति बंधती है.

उत्तर प्रकृति १४६ की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति और अबाधाकाल कितना २ तथा बंधाधिकारी कौन २ है ?

मतिज्ञानावरणीय १ श्रुत ज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मनःपर्यव ज्ञानावरणीय ४ केवल ज्ञा० ५ चक्षु द० ६ अचक्षु द० ७ अवधि द० ८ केवल द० ९ दानांतराय १० लाभा० ११ भोगा० १२ उपभोगा० १३ वीर्या० १४ इन चौदा प्रकृतियोंको समुच्चय जीव बांधे तो जघन्य अंतरमुहूर्त तथा निद्रा १ निद्रानिद्रा २ प्रचला ३ प्रचला प्रचला ४ थीणद्धी ५ और अशातावेदनीय ६ यह छे प्रकृति समुच्चय जीव बांधे तो, जघन्य १ सागरोपमका सातिया. तीन भाग पल्योपमके असंख्यातमे भाग उणा (न्यून) और उत्कृष्ट स्थितीबंध इन वीसों प्रकृतियोंका ३० कोडाकोडी सागरोपम और अबाधाकाल ३००० वर्षका है. यही वीस प्रकृति एकेंद्री बाधे तो जघन्य १ सागरोपम पल्योपमके असख्यातमें भाग ऊणी बेइन्द्री जघन्य २५ सा० पल्यो० के असं० भाग ऊणी. तेइन्द्री ५० सा० पल्यो० के असं० भाग ऊणी, चौरिन्द्री १०० साग० पल्यो० के असं० भाग ऊंणी. और असंज्ञी पचेन्द्री १ हजार साग० पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊंणी बांधे. तथा उत्कृष्ट स्थिति एकेन्द्री १ सागरोपम, बेइन्द्री २५ साग० तेइन्द्री ५० साग० चौरिन्द्री १०० साग० असंज्ञी पंचेंद्री १ हजार साग० और संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य १४ प्रकृति अंतरमुहर्त और ६ प्रकृति अंतः कोडाकोडी सागरोपमकी बांधे. उत्कृष्ट वीसो प्रकृतिकी स्थिति और अबाधाकाल समुच्चय जीववत् ।

एक कोडाकोडी सागरोपमकी स्थिति पीछे सामान्यसे १ सौ वर्षका अबाधाकाल है. एसेही एकेन्द्रियादिक मनमें समझ लेना.

अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, इन सोलह प्रकृतियोंमेसे प्रथमकी १२ प्रकृति समुच्चय जीव बांधे तो, जघन्य १ सागरोपमका सा तिया ४ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊणी. और संज्वलनका क्रोध २ महीना. मान १ महीना, माया १५ दिन और लोभ अंतर मुहूर्तका बांधे. उत्कृष्ट १६ प्रकृतिका स्थितिबंध ४० कोडाकोडी सागरोपम. और अबाधाकाल ४ हजार वर्षका है ॥ यही सोलह प्रकृति एकेन्द्री जघन्य १ साग० बेइन्द्री २५ सा० तेइन्द्री ५० साग० चौरिंद्री १०० साग० असंज्ञी पंचेन्द्री १ हजार साग० पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊणी सर्व स्थान और उत्कृष्ट सब जीव पूरी २ बांधे, संज्ञी पचेन्द्री १२ प्रकृति जघन्य अंतः कोडाकोडी सागरोपम तथा ४ प्रकृति पहिले लिखी उस मुजब बांधे. और उत्कृष्ट सोलहो प्रकृतिका स्थितिबंध तथा अबाधाकाल समुच्चय जीववत् समझना।

भय १ शोक २ जुगुप्सा ३ अरति ४ नपुसक वेद ५ नरकगति ६ तिर्यंचगति ७ एकेन्द्री ८ पंचेन्द्री ९ औदारिक शरीर १० " बंधन ११ अंगोपांग १२ और संघातन १३ वैक्रियशरीर १४ बन्धन १५ अंगोपांग १६ तथा संघातन १७ तैजस शरीर १८" बंधन १९ संघातन २० कारमण शरीर २१ कारमण शरीरका बंधन २२ तस्य संघातना २३ छेवट्ठसंहनन २४ हुंडक संस्थान २५ कृष्ण वर्ण २६ तिक्तरस २७ दुरभिगंध २८ करकश स्पर्श २९ गुरु स्पर्श ३० सीत स्पर्श ३१ रुक्ष स्पर्श ३२ नरकानुपूर्वी ३३ तिर्यंचानुपूर्वी ३४ अशुभगति ३५ उश्वास ३६ उद्योत ३७ आतप ३८ पराघात ३९ उपघात ४० अगुरु लघु ४१ निर्माण ४२ त्रस ४३ बादर ४४ पर्याप्ता ४५ प्रत्येक ४६ अस्थिर ४७ अशुभ ४८ दुर्भाग्य ४९ दुःस्वर ५० अयश ५१ अनादेय ५२ स्थावर ५३ और नीच गोत्र

५४ एवम् चौपन प्रकृति समुच्चय जीव बांधे तो, जघन्य १ सागरोपमका सातीया २ भाग पल्योपमके असख्यातमें भाग उंणी और उत्कृष्ट २० कोडाकोडी सागरोपम अबाधाकाल २ हजार वर्षका हो. यही प्रकृति एकेन्द्री जघन्य १ साग० बेइन्द्री २५ साग० तेइन्द्री ५० साग० चौरिन्द्री १०० साग० असंज्ञी पंचेन्द्री १००० साग० पल्योपमके असंख्यातमें भाग उंणी. सर्व स्थान और उत्कृष्ट पूरी बांधे. संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अतः कोडाकोडी साग० उत्कृष्ट समुच्चयवत्.

हास्य १ रति २ पुरुषवेद ३ देवगति ४ वज्रऋषभ नाराच संघयण ५ समचतुरस्र संस्थान ६ लघु स्पर्श ७ मृदुस्पर्श ८ उष्ण स्पर्श ९ स्निग्ध स्पर्श १० श्वेतवर्ण ११ मधुरस, १२ सुरभिगंध १३ देवानुपूर्वी १४ सुभगति १५ स्थिर १६ शुभ १७ सोभाग्य १८ सुस्वर १९ आदेय २० यशःकीर्ति २१ उच्चैर्गोत्र २२ एवम् २२ प्रकृति जिसमें पुरुषवेद ८ वर्षका, यश· कीर्ति और उच्चैर्गोत्र इन दोनों प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति ८ मुहूर्त शेष १९ प्रकृतियोंकी ज० स्थिती एक सागरोपमका सातिया १ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊंणी, और २२ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति १० कोडाकोडी सागरोपमकी बांधे, अबाधाकाल १ हजार वर्ष ॥ एकेन्द्रीसे यावत् असंज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् १—२५—५० १००—१००० साग० प० अ० उणी. संज्ञी पचेन्द्री ३ प्रकृति समुच्चयवत्, और १९ प्रकृति अतः कोडाकोडी सागरोपम तथा उत्कृष्ट स्थिति २२ प्रकृतिकी दश कोडाकोडी सागरोपम अबाधाकाल एक हजार वर्षका है।

स्त्रीवेद १ ×सातावेदनीय २ मनुष्यगति ३ रक्तवर्ण ४ कषायरस ५ मनुष्यानुपूर्वी ६ इन छः प्रकृतियोमेसे शातावेदनीयका जघ-

× शातावेदनीय २ प्रकारकी १ इर्यावहीं पहेले समय बांधे दूसरे समय वेदे, और तीजे समय निर्जरे संप्रायको समुच्चयवत् ।

न्यबन्ध १२ मुहुर्त्त और शेष पांच प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध १ सागरोपमका सातिया १ ॥ भाग प० अ० उंणी. उत्कृष्ट छ प्रकृतिका बन्ध १५ कोडाकोडी सागरोपम और अबाधाकाल १५ सो वर्षका है. एकेन्द्री यावत् असंज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् १-२५-५० १००-१००० सा० और संज्ञी पंचेन्द्री शातावेदनीय जघन्य १२ मुहुर्त शेष पांच प्रकृति जघन्य अंत कोडाकोडी साग० को बांधे. उत्कष्ट बंध समुच्चयवत् ?।

बेइन्द्रिय १ तेइन्द्रिय २ चौरिन्द्रिय ३ सूक्ष्म ४ साधारण ५. अपर्याप्ता ६ कीलिकासंहनन ७ और कुब्जसंस्थान ८ ये आठ प्रकृतिका समुच्चय जीव जघन्य १ सागरोपमका पैतीसीया ९ भाग पल्योपमके असख्यातमें भाग उणी. और उत्कृष्ट १८ कोडाकोडी सागरोपमकी बांधे. अबाधाकाल १८०० वर्षका । एकेन्द्री यावत् असंज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् १-२५-५० १०० १००० सागरोप. प० संज्ञी पचेन्द्री जघन्य अत कोडाकोडी सागरोपम उत्कृष्ट समुच्चयवत्.

न्यबन्ध १२ मुहूर्त्त और शेष पांच प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध १ सागरोपमका सातिया १॥ भाग प० अ० उंणी. उत्कृष्ट छ

आहारक शरीर १ तस्य बंधन २ अंगोपांग ३ संघातन ४ और जिननाम ५ ये पांच प्रकृति समुच्चय बांधे तो, जघन्य अंतर-मुहुर्त उत्कृष्ट अंतः कोडाकोडी सागरोपम, एवम् संज्ञी पंचेन्द्री ॥

मिथ्यात्व मोहनी समुच्चयजीव बांधे तो, जघन्यबंध १ साग-रोपम उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी साग० अ० काल ७ हजार वर्ष. एकेन्द्री यावत् पचेन्द्री पूर्ववत्. और संज्ञी पचेन्द्री जघन्य अतः कोडाकोडी सागरोपम. उत्कृष्ट समुच्चयवत्

ऋषभनाराच संहनन १ न्यग्रोध संस्थान २ ये दो प्रकृति समुच्चय जीव बांधे तो, जघन्य १ सागरोपमका पैतीसिया ६ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊंणी. उत्कृष्ट १२ कोडाकोडी सा-गरोपमकी बांधे. अबाधाकाल १२०० वर्ष. एकेन्द्री यावत् असंज्ञी

पंचेन्द्री पूर्ववत्. संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अंतः कोडाकोडी सागरोपम. उत्कृष्ट समुच्चयवत्.

नाराच संहनन १ और सादि संस्थान २ ये दो प्रकृति जो समुच्चय जीव बांधे तो जघन्य १ सागरोपम के पेंतीसिया ७ भाग उत्कृष्ट १४ कोडाकोड सागरोपम अबाधाकाल १४०० वर्ष एकेन्द्री यावत् असज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अन्तः कोडाकोड सागरोपम उत्कृष्ट पूर्ववत् ।

अर्द्ध नाराच संहनन और बामन संस्थान ए दो प्रकृति समुच्चयजीव बांधे तो ज० १ सागरोपम के पेंतीसीय ८ भाग० उ० १६ कोडाकोड सागरोपम-अबाधा काल १६०० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

नील वर्ण और कटुक रस ए दो प्रकृति समु० जीव बांधे तो जघन्य एक सागरोपम के अठावीसीया ७ भाग उ० १७॥ कोडा कोड सागरोपम अबाधा काल १७५० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

पेत्त वर्ण और आंबिल रस ए दो प्रकृति समु० जीव बांधे तो जघन्य एक सागरोपम के अठावीसीया ५ भाग उ० १२॥ कोडकोड सागरोपम अबाधाकाल १२५० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

नरकायुष्य और देवायुष्य ए दो प्रकृति, पंचेन्द्री बांधे तो जघन्य १०००० वर्ष उ० ३३ सागरोपम अबाधाकाल ज० अन्तर महुर्त उ० कोड पूर्व के तीजे भाग ।

तीर्यचायुष्य और मनुष्यायुष्य ए दो प्रकृति बांधे तो जघन्य अन्तर मुहुर्त उ० ३ पल्योपम अबाधाकाल ज० अन्तर० उ० कोड पूर्व के तीजे भाग इसी को कण्ठस्थ करो और विस्तार गुरुमुखसे सुनो।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

थोकडा नं. ४८.

श्री भगवतिसूत्र शतक ८ उ० १०

(कर्म विचार.)

लोकके आकाशप्रदेश कितने है ?

असंख्यात है.

एक जीवके आत्मप्रदेश कितने है ?

असंख्याते है. (जितने लोकाकाशके प्रदेश है, उतनेही एक जीवके आत्मप्रदेश है.)
कर्मकी प्रकृति कितनी है ?

आठ—यथा ज्ञानावर्णीय, दर्शनावर्णीय, वेदनी, मोहनी, आयुष्य, नाम, गोत्र, और अंतराय, नरकादि चोवीस दंडकके जीवोंके आठ कर्म है. परंतु मनुष्योंमे आठ, सात, और चार भी पाये जाते है. (वीतराग केवली कि अपेक्षा)

ज्ञानावर्णीय कर्मके अविभाग पलीछेद (विभाग) कितने है?

अनंत है. एवम् यावत अंतरायकर्मके नरकादि चोवीस दंडकमें कहना.

एक जीवके एक आत्मप्रदेशपर ज्ञानावर्णीय कर्मकी कितनी अवेडा पवेडी (कर्मका आंटा जैसे ताकलेपर सूतका आंटा) है?

कितनेक जीवोंके है और कितनेक जीवोंके नहीं है (केवलीके नहीं.) जिन जीवोंके है, उनके नियमा अनंती २ है. एवम दर्शनावर्णीय, मोहनी, और अंतरायकर्मभी यावत् आत्माके असख्यात प्रदेशपर समझ लेना.

कर्मोंकि नियमा भजना.

एक जीवके एक आत्मप्रदेशपर वेदनी कर्मकी कितनी अवेडी
अवेडा है ?

सर्व संसारी जीवोंके आत्मप्रदेशपर नियमा अनंता २ है. एवम्
आयुष्य, नामकर्म, और गोत्रकर्मभी है. यावत् असंख्यात आत्म-
प्रदेशपर है. इसी माफीक २४ दंडकोंमे समझ लेना. कारण जीव
और कर्मके बंधनका सम्बध अनंत कालसे लगा हुवा है. और
शुभाशुभ कार्य कारणसे न्यूनाधिक भी होता रहता है.

जहां ज्ञानावर्णीय है, वहां क्या दर्शनावरणीय है. एवम
यावत् अंतराय कर्म ?

नीचेके यंत्रद्वारा समझलेना. जहां (नि) हो वहां नियमा
और (भ) हो वहां भजना (हो या न भी हो) समझना. इति

कर्ममार्गणा	ज्ञाना	दर्श	वेदनी	मोह	आयु	नाम.	गोत्र.	अंतराय
ज्ञानावरणीय	०	नि	नि	भ	नि	नि	नि	नि
दर्शनावरणीय	नि	०	नि	भ	नि	नि	नि	नि
वेदनीय	भ	भ	०	भ	नि	नि	नि	भ
मोहनीय	नि	नि	नि	०	नि	नि	नि	नि
आयुष्य	भ	भ	नि	भ	०	नि	नि	भ
नामकर्म	भ	भ	नि	भ	नि	०	नि	भ
गोत्रकर्म	भ	भ	नि	भ	नि	नि	०	भ
अंतराय	नि	नि	नि	भ	नि	नि	नि	०

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—※—
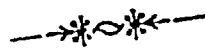
थोकड़ा नं० ४९

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २४)

(बांध तो बांधे)

मूल कर्म प्रकृति आठ हैं यथा ज्ञानावर्णीय, दर्शनावर्णीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम कर्म, गोत्र कर्म अन्तराय कर्म ॥

वेदनीय कर्मका बंध प्रथम से तेरहवा गुणस्थान तक है ॥ ज्ञनावर्णीय, दर्शना; नामकर्म, गोत्र, और अन्तराय ए पांच कर्मोंका बंध प्रथम से दशवां गुणस्थान तक है ॥ मोहनीय कर्मका बंध प्रथम से नवमा गुणस्थान तक है ॥ आयुष्य कर्मका बंध प्रथम से सातमा गुणस्थान तक है ॥

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधता हुवा सात कर्म (आयु: वर्ज) बांधे-आठ कर्म बांधे, छ कर्म बांधे (आयु: मोहनी वर्जके) एवं मनुष्य भी ७-८-६ कर्म बांधे। शेष नरकादि २३ दंडक सात कर्म बांधे आठ कर्म बांधे। इति।

समुच्चय घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधते हुवे ७-८-६ कर्म बांधे जिसमें ७-८ कर्म बांधणेवाला सास्वता और छे कर्म बान्धनेवाले असास्वता जिस्का भांगा ३.

(१) सात-आठ कर्म बांधनेवाले घणा (सास्वता) (२) सात-आठ कर्म बांधनेवाले घणा और छ कर्म बांधनेवाला एक। (३) सात=आठ कर्म बांधनेवाले घणा और छे कर्म बांधनेवाले भी घणा ॥

घणा नारकीका जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधता ७-८ कर्म बांधे जिसमें सात कर्म बांधनेवाले सास्वते और आठ कर्म बां-

धनेवाले असास्वता भांगा ३। (१) सात कर्म बांधनेवाले घणा (सास्वता है) (२) सात कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाला एक। (३) सात कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाले भी घणा इसी माफिक १० भुवनपति, ३ विकलेंद्री, तीर्यंच पांचेंद्री, व्यंतर देव, जोतीषि, और वैमानीक एवं १८ दंडक का ५४ भांगा समझना।

पृथ्व्यादि पांच स्थावर में ज्ञानावर्णीय कर्म बांधतां सात कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाले भी घणा। भांगा नहीं उठता है।

घणा मनुष्य ज्ञानावर्णीय कर्म बांधे तो ७-८-६ कर्म बांधे जिसमें सात कर्म बांधनेवाले सास्वता ८-६ कर्म बांधनेवाले असास्वते जिसका भांगा ९.

सात कर्म	आठ कर्म	छ कर्म	सात कर्म	आठ कर्म	छ कर्म
३ (घणा)	०	०	३ ,,	१	१
३ ,,	१	०	३ ,,	१	३
३ ,,	३	०	३ ,,	३	१
३ ,,	०	१	३ ,,	३	३
३ ,,	०	३	एवं ९ भांगा हुवा.		

समुच्चय जीवोंका भांगा ३ अठारे दंडकका भांगा ५४ और मनुष्यका भांगा ९ सर्व मीलके ज्ञानावर्णीय कर्मका ६६ भांगा हुवा इति।

एवं दर्शनावर्णीय, नाम, गोत्र, अन्तराय. एवं चार कर्म ज्ञानावर्णीय साद्दश होनेसे पूर्ववत् प्रत्येक कर्मका ६६ छासट भांगा गीणनेसे ३३० भांगा हुवा।

समुच्चय एक जीव वेदनीय कर्म बांधता हुवा ७-८-६-१ कर्म बांधे. इसी माफिक मनुष्य भी ७-८-६-१ कर्म बांधे. शेष २३ दंडकके एक एक जीव ७-८ कर्म बांधे।

समुच्चय घणा जीव वेदनीय कर्म बाधता ७-८-६-१ वांधे. जिसमें ७-८-१ कर्म बांधनेवाले सास्वता और ६ कर्म बांधनेवाले असास्वता जिसका भांगा ३।

(१) ७-८-१ कर्म बांधनेवाला घणा (सास्वता)

(२) ७-८-१ का घणा और छ कर्म बांधनेवाला एक।

(३) ७-८-१ का घणा और छै कर्म बांधनेवाले घणा।

घणा नारकीका जीव वेदनीय कर्म वांधता ७-८ कर्म बांधे, जिसमें ७ कर्म बांधनेवाले सास्वते और ८ कर्म बांधनेवाले असास्वते जिसका भांगा ३। (१) सात कर्म बांधनेवाले घणा। (२) सात कर्म बांधनेवाले घणा और ८ कर्म बांधनेवाला एक। (३) सात कर्म बांधनेवाले घणा ८ कर्म बांधनेवाले घणा। एवं १० भुवनपति ३ विकलेंद्री, तिर्यंच, पंचेंद्री, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक, नरकादि १८ दंडकमें तीन भांगा गीणतां ५४ भांगा हुवा।

पृथ्व्यादि पांच स्थावरमें सात कर्म बांधनेवाले घणा और ८ कर्म बांधनेवाले भी घणा वास्ते भांगां नहीं उठते है।

घणा मनुष्य वेदनीय कर्म बांधता ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७-१ कर्म बांधनेवाले घणा जिसका भाग ९

७-१ का	८	६	७-१ का	८	६
३ (घणा)	०	०	३ ,,	१	१
३ ,,	१	०	३ ,,	१	३
३ ,,	३	०	३ ,,	३	१
३ ,,	०	१	३ ,,	३	३
३ ,,	०	३	एवं ९ भांगा		

समुच्चय जीवका भांगा ३ अठारे दंडकका ५४ मनुष्यका ९ सर्व ६६ भांगा हुवा इति ।

समुच्चय एक जीव मोहनीय कर्म बांधता ७-८ कर्म बांधे एवं २४ दंडक ।

समुच्चय घणा जीव मोहनीय कर्म बांधतां ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाले भी घणा इसी माफिक ५ स्थावर भी समझ लेना ।

घणा नारकीका जीव मोहनीय कर्म बांधतां ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधनेवाले सास्वता ८ का असास्वता जिसका भांगा ३ ।

(१) सात कर्म बांधनेवाले घणा (सास्वता)
(२) „ „ „ आठ बांधनेवाला एक
(३) „ „ „ „ घणा

एवं पांच स्थावर वर्जके १९ दंडकमें समझ लेना ५७ भांगा हुवा ।

समुच्चय एक जीव आयुष्य कर्म बांधतां नियमा ८ कर्म बांधे एवं नरकादि २४ दंडक इसी माफिक घणा जीव आश्रयी समुच्चय जीव और २४ दंडकमें भी नियम ८ कर्म बांधे इति ।

भांगा ३३०-६६-५७ सर्व मीली ४५३ भांगा हुवा ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

थोकडा नम्बर ५०

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २५)

(बांधतो वेदे)

मूल कर्म प्रकृति आठ यावत् पद २४ के माफिक समझना।

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधतो हुवो नियमा आठ कर्म वेदे कारण ज्ञानावरर्णीय कर्म दशमा गुणस्थान तक बांधे है वहां आठ ही कर्म मौजूद है सो वेद रहा है एवं नरकादि २४ दंडक समझना।

समुच्चय घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधते हुवे नियमा आठ कर्म वेदे यावत् नरकादि २४ दंडकमें भी आठ कर्म वेदे।

एवं वेदनीय कर्म वर्जके शेष दर्शनावर्णीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, अन्तराय कर्म भी ज्ञानावर्णीय माफिक समझना।

समुच्चय एक जीव वेदनीय कर्म बांधे तो ७–८–४ कर्मवेदे कारण वेदनीय कर्म तेरहवांगुणस्थान तक बांधते है। एवं मनुष्य भी समझना शेष २३ दंडक नियमा ८ कर्म वेदे।

समुच्चय घणा जीव वेदनी कर्म बांधते हुवे ७ ८–४ कर्म वेदे एवं मनुष्य। शेष २३ दंडक के जीव नियमा आठ कर्म वेदे।

समुच्चय जीव ७-८–४ कर्म वेदे जिसमें ८–४ कर्म वेदनेवाले सास्वता और ७ कर्म वेदने वाले असास्वता जिसका भांगा ३

(१) आठ कर्म और चार कर्म वेदनेवाले घणा

(२) ८–४ कर्म वेदनेवाले घणे सात कर्म वेदनेवाला एक

(३) आठ-चार कर्म वेदनेवाले घणा, और सात कर्म वेदनेवाले घणा एवं मनुष्यमें भी ३ भांगा समझना सर्व भांगा ६ हुआ इति।

सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम्

थोकडा नम्बर ५१

—•—

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २६

(वेदता बांधे)

मूल कर्म प्रकृति आठ है यावत् पद २४ माफिक समजना

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतों हुवों ७-८-६-१ कर्म वांधे (कारण ज्ञानावरणीय वारहावों गुण स्थानक तक वेदे है) एवं मनुष्य शेष २३ दंडक ७-८ कर्म वांधे।

समुच्चय घणाजीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतो ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७-८ कर्म बांधनेवाला सास्वता और ६-१ कर्म बांधणेवाला असास्वता जिसका भांगा ९

७-८	६	१
३ (घणा)	०	०
३	१	०
३	३	०
३	०	१
३	०	३

७-८	६	१
३	१	१
३	१	३
३	३	१
३	३	३

एवं ९ भांगा

एकेंद्रीका पांच दंडक और मनुष्य वर्जके शेष १८ दंडक में ज्ञानावर्णिय कर्म वेद तो ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ का सास्वता ८ का असास्वता जिसका भांगा ३

(१) सातका घणा (२) सातका घणा, आठको एक (३) सातका घणा और आठका भी घणा एवं १८ दंडक का भांगा ५४

एकेन्द्री में ७ का भी घणा और आठ कर्मबांधनेवाले भी

घणा मनुष्य में ज्ञानावर्णीय कर्म वेद तो ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधने वाला सास्वता शेष ८-६-१ का असास्वता जिसका भागा २७

७ कर्म	८ कर्म	६ कर्म	१ कर्म	७ क.	८	६	१
(१) ३	०	०	०	(१५)३	३	०	३
(२) ३	१	०	०	(१६)३	०	१	१
(३) ३	३	०	०	(१७)३	०	१	३
(४) ३	०	१	०	(१८)३	०	३	१
(५) ३	०	३	०	(१९)३	०	३	३
(६) ३	०	०	१	(२०)३	१	१	१
(७) ३	०	०	३	(२१)३	१	१	३
(८) ३	१	१	०	(२२)३	१	३	१
(९) ३	१	३	०	(२३)३	१	३	३
(१०)३	३	१	०	(२४)३	३	१	१
(११)३	३	३	०	(२५)३	३	१	३
(१२)३	१	०	१	(२६)३	३	३	१
(१३)३	१	०	३	(२७)३	३	३	३
(१४)३	३	०	१		एवं भांगा		२७

एव दर्शनावर्णीय और अन्तराय कर्म भी समझना।

समु० एक जीव वेदनीय कर्म वेदतो ७-८-६-१-० (अबाध) कर्म बान्धे एवं मनुष्य। शेष २३ दंडक ७-८ कर्म बांधे।

समु० घणा जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-६-१-० जिसमें ७-८-१ का सास्वता और छ कर्म तथा अबांधे का असास्वता जिसका भागा ९।

७-८-१	६	अबाध	७-८-१	६	अबाध
३ (घणा)	०	०	३ ,,	१	१
३ ,,	१	०	३ ,,	१	३
३ ,,	३	०	३ ,,	३	१
३ ,,	०	१	३ ,,	३	३
३ ,,	०	३	एवं भांगा ९		

नारकी का जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ का सास्वते और ८ कर्म बांधने वाले असास्वते जिसका भांगा ३।

(१) सात का घणा (२) सात का घणा आठको एक (३) सात का घणा और आठ कर्म बांधने वाले भी घणा ।

एवं एकेन्द्री का ५ दंडक और मनुष्य वर्ज के १८ दंडक में समजना भांगा ५४। एकेन्द्रियमें भांगा नहीं है।

घणा मनुष्य वेदनोय कर्म वेदता ७-८-६-१-० (अबांध) जिसमें ७-१ कर्म बांधने वाले सास्वते और ८-६-० का असास्वते जिसका भांगा २७।

७-१	८	६	०
(१) ३ (घणा)	०	०	०
(२) ३ ,,	१	०	०
(३) ३ ,,	३	०	०
(४) ३ ,,	०	१	०
(५) ३ ,,	०	३	०
(६) ३ ,,	०	०	१
(७) ३ ,,	०	०	३
(८) ३ ,,	१	१	०
(९) ३ ,,	१	३	०
(१०) ३ ,,	३	१	०
(११) ३ ,,	३	३	०
(१२) ३ ,,	१	०	१
(१३) ३ ,,	१	०	३
(१४) ३ ,,	३	०	१
(१५) ३ ,,	३	०	३

(१६)	३ ,,	०	१	१
(१७)	३ ,,	०	१	३
(१८)	३ ,,	०	३	१
(१९)	३ ,,	०	३	३
(२०)	३ ,,	१	१	१
(२१)	३ ,,	१	१	३
(२२)	३ ,,	१	३	१
(२३)	३ ,,	१	३	३
(२४)	३ ,,	३	१	१
(२५)	३ ,,	३	१	३
(२६)	३ ,,	३	३	१
(२७)	३ ,,	३	३	३

एव भांगा २७+

समु० एक जीव मोहनीय कर्म वेदतों ७-८-६ कर्म बांधे एवं मनुष्य शेष २३ दंडक ७-८ कर्म बांधे।

समु० घणा जीव मोहनीय कर्म वेदतां ७-८-६ कर्म बांधे जिस्मे ७-८ कर्म बांधने वाले सास्वते ६ कर्म बांधने वाले असास्वते जिसका भांगा ३।

(१) ७-८ कर्म बांधने वाले घणा।

(२) ,, ,, ,, छ कर्म बांधने वाले एक

(३) ,, , ,, घणा

घणा नारकी मोहनी कर्म वेदता ७-८ कर्म बांधे जिसमे ७ कर्म बांधने वाले सास्वते ओर ८ कर्म बांधने वाले असास्वते जिसका भांगा ३।

(१) सात का घणा (२) सात का घणा आठ को एक (३) सात का घणा आठ का भी घणां एवं मनुष्य तथा एकेंद्री वर्ज १८ दण्डकोंका भांगा ५४ समजना. एकेंद्री में सात कर्म बांधने वाला घणा और आठ कर्म बांधने वाला भी घणा।

घणा मनुष्य में मोहनी कर्म वेदतां ७-८-६ कर्म बांधे जिसमें

× जैसे वेदनीय कर्म वैसे ही आयुष्य, नाम, गोत्र, समझना।

७ कर्म बांधने वाले सास्वते और ८-६ कर्म बांधने वाले असास्वते जिसका भांगा ९।

७ कर्म	८ कर्म।	६ कर्म
३ घणा	०	०
३ ,,	१	०
३ ,,	३	०
३ ,,	०	१
३ ,,	०	३
३ ,	१	१
३ ,,	१	३
३ ,,	३	१
३ ,,	३	३

एवं भांगा ९

सर्व भांगा ज्ञानावर्णीय कर्म का ९-५४-२७ सर्व ९० इसी माफिक ७ कर्म का ६३० और मोहनीय कर्म का ३-५४-९ सर्व ६६ भांगा हुवे। वेदते हुवे बांधे जिसका कुल भांगा ६९६ भांगा हुवा इति।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

—※—

थोकडा नंबर ५२

(सूत्र श्रीपन्नवणाजी पद २७ ;

[वेद तो वेदे]

मूल कर्म प्रकृति आठ यावत् पद २४ से सममना।

समु० एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतो ७-८ कर्म वेदे एवं मनुष्य शेष २३ दंडक में नियमा ८ कर्म वेदे।

समु० घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदता ७-८ कर्म वेदे जिसमें ८ कर्म वेदने वाले सास्वते और ७ कर्म वेदने वाले असास्यता जिसका भांगा ३.

(१) आठ कर्म वेदने वाले घणा,
(२) ,, ,, सात का एक.
(३) , ,, , घणा.

मनुष्य वर्ज के शेष २३ दंडकमे नियमा ८ कर्म वेदे और मनुष्य में समुच्चय जीवकी माफिक भांगा ३ समजनां इसी माफिक दर्शनावर्णीय और अन्तराय कर्म भी समझना.

समु० एक जीव वेदनीय कर्म वेदतो ७-८-४ कर्म वेदे एवं मनुष्य शेष २३ दंडक का जीव नियमा ८ कर्म वेदे.

समु० घणा जीव वेदनीय कर्म वेदना ७-८-४ कर्म वेदे जिसमें ८-४ कर्म वेदने वाले सास्वता और ७ कर्म वेदने वाले असास्वता भांगा ३

(१) ८-४ का घणा (२) ८-४ का घणा ७ को एक (३) ८-४ का घणा ७ का भी घणा एवं मनुष्य में भी ३ भांगा समझना. शेष २३ दंडक में वेदनीय कर्म वेदता नियमा ८ कर्म वेदे.

वेदनीय कर्म की माफिक आयुष्य; नाम गोत्र कर्म भी समझना.

समु०एक जीव मोहनीय कर्म वेदतों नियमा ८ कर्म वेदे एव २४ दंडक समझना इसी माफिक घणा जीव भी ८ कर्म वेदे.

सर्व भांगा ज्ञानावर्णीयादि सात कर्म में समुच्चयजीवका तीन तीन और मनुष्य का तीन तीन एवं ४२ भांगा हुवा इति.

सेवं भन्ते सेवं भन्ते तमेव सच्चम्.

च्यारो थोकडे के भांगा

४९३ बांधतां बांधे का भांगा	६९६ वेदता बांधे का भांगा
६ बांधतो वेदे का भांगा	४२ वेदता वेदे का भांगा

११९७

थोकडा नम्बर ५३

(श्री भगवतीजी सूत्र श० ६ उ० ३)

५० बोल की वांधी-द्वार १५

वेद ४ (पुरुष १ स्त्री २ नपुंसक ३ अवेदी ४) सयति ४ (संयति
असंयति २ सयता संयति ३ नोसंयति नो सयति नोसंयता
संयति ४) दृष्टि, ३ (सम्यक्त्व दृष्टि १ मिथ्या दृष्टि २ मिश्र दृष्टि ३
सन्नी, ३ (संज्ञी १ असंज्ञी २ नोसंज्ञानोअसंज्ञी ३) भव्य, ३ (भव्य १
अभव्य २ नोभव्याभव्य ३) दर्शन, ४ (चक्षुदर्शन १ अचक्षु दर्शन
२ अवधिदर्शन ३ केवलदर्शन ४) पर्याप्ता ३ (पर्याप्ता १ अपर्याप्ता २
नो पर्याप्तापर्याप्ता ३) भाषक, २ (भाषक १ अभाषक २) परत्त ३,
(परत्त १ अपरत्त २ नो परत्तापरत्त ३) ज्ञान, ८ मतिज्ञान श्रुतज्ञान
अवधिज्ञान मनःपर्यवज्ञान केवलज्ञान मतिअज्ञान श्रुतिअज्ञान
विभंगज्ञान, योग, ४ (मनयोग वचनयोग काययोग अयोगी) उप-
योग २ (साकार अनाकार) आहार २ (आहारी अनाहारी) सूक्ष्म ३
सूक्ष्मबादरनोसूक्ष्मनो बादर चरम २(चरम १ अचरम २) एवम् ५०

(१४) स्त्रीवेद १ पुरुषवेद २ नपुंसक वेद ३ असंयति ४
संयतासंयति ५ मिथ्यादृष्टि ६ असंज्ञी ७ अभव्य ८ अपर्याप्ता ९
अपरत्त १० मतिअज्ञान ११ श्रुतिअज्ञान १२ विभंगज्ञान १३ और
सूक्ष्म १४ इन चौदाबोलोंमें ज्ञानावर्णियादि सातो कर्मोंको नियमा
बांधे, आयुष्य कर्म बांधे ने की भजना (स्यात् बांधे स्यात् न
बांधे)

(१३) संज्ञी १ चक्षुदर्शन २ अचक्षुदर्शन ३ अवधिदर्शन ४
भाषक ५ मतिज्ञान ६ श्रुतिज्ञान ७ अवधिज्ञान ८ मनःपर्यव ज्ञान
९ मनयोग १० वचनयोग ११ काययोग १२ और आहारी १३ इन

तेरह बोलों में वेदनी कर्म बांधने की नियमा शेष साता कर्म बांधने की भजना

(११) संयति १ सम्यक्त्व दृष्टि २ भव्य ३ अभाषक ४ पर्याप्ता ५ परत्त ५ साकारोपयोग ७ अनाकारोपयोग ८ बादर ९ चरम १० और अचरम ११ इन ग्यारे बोलों में आठो कर्म बांधने की भजना

(६) नो संयतिनोअसंयतिनोसंयतासयति १ नो भव्याभव्य २ नोपर्याप्तानोअपर्याप्ता ३ नो परत्तापरत्त ४ अयोगी ५ और नो सुक्ष्म नो बादर ६ एवम् छे बोलोंमें किसी कर्मका बंध नहीं है (अबंधक)

(३) केवलज्ञान १ केवल दर्शन २ नो संज्ञी नो असंज्ञी ३ इन तीनों में वेदनीय कर्म बांधनेकी भजना. बाकी सातों कर्मों का अबंध.

(२) अवेदी १ अणाहारी २ इन दोनों में सात कर्म बांधने की भजना आयुष्य कर्मका अबधक और (१) मिश्रदृष्टि में सातो कर्म बांधे आयुष्य न बांधे इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नंबर ५४

(श्री भगवतीजी सूत्र श० ८ उ० ८)

कर्मोंका बंध

कर्मोंका बंध जाणने से ही उसको तोडनेका उपाय सरलतासे कर सकते है इसवास्ते शिष्य प्रश्न करता है कि—

इर्यावहिवन्ध.

हे भगवन्! कर्म कितने प्रकारसे वंधता है!

दो प्रकारसे-यथा? इर्यावहि (केवल योगोंकि प्रेरणा से ११-१२-१३ गुणस्थानक में वधता है) २ संप्राय (कषाय और योगों से पहिले गुणस्थानक से दसवे गुणस्थानक तक वंधता है।

इर्यावहि कर्म क्या नारकी, के जीव वांधे तीर्यंच, तीर्यंचणी मनुष्य, मनुष्यणी देवता देवी वांधते है!

नारकी, तीर्यंच, तीर्यंचणी देवता, देवी न वांधे शेष मनुष्य, और मनुष्यणी, वांधे. मूतकाल में वहुत से मनुष्य और मनुष्यणीयों ने इर्यावहि कर्म वांधा था और वर्तमान काल का भांगा ८ था १ मनुष्य एक २ मनुष्यणी एक ३ मनुष्य वहुत ४ मनुष्यणी वहुत ५ मनुष्य एक और मनुष्यणी एक ६ मनुष्य एक और मनुष्यणी वहुत ७ मनुष्य वहुत और मनुष्यणी एक ८ मनुष्य वहुत और मनुष्यणीया वहुत।

इर्यावहि कर्म क्या एक स्त्री वांधे या एक पुरुष वांधे या एक नपुंसक वांधे! एसेही क्या वहुत से स्त्री, पुरुष, नपुंसक वांधे!।

उक्त ६ ही वोलवाले जीव नहीं वांधे।

क्या इर्यावहि कर्मनोस्त्री, नोपुरुष, नोनपुंसक वान्धे (पहिलेवेदका उदयथा तव स्त्री पुरुषादि कहलाते थे फीर वेदके क्षय-होने से नोस्त्री नोपुरषादि कह जाते है। (उत्तरमें)

हां, वांधे मूतकाल में वांधा वर्तमान में वांधे और भविष्यमें वांधेगे. जिसमें वर्तमान वंध के भांगा २६ यथा असंयोगभांगा ६ एक नोस्त्री वांधे २ वहुतसी नो स्त्रीयां वांधे २ एक नो पुरुप वांधे ३ वहुत से नोपुरुष वांधे ४ एक नो नपुसक वांधे ५. वहुत से नो नपुंसक वांधे।

द्वीसंयोगी भांगा १२

नोस्त्री	नोपुरुष	नोस्त्री	नो नपुंसक	नो पुरुष	नो नपुंसक
१		२		३	
१	१	१	१	१	१
१	३	१	३	१	३
३	१	३	१	३	१
३	३	३	३	३	३

चिन्ह (१) एक वचन (३) बहुवचन समजना

त्रिक संयोगी भांगा ८ ।

नोस्त्री.	नो पुरुष	नोनपुंसक	नोस्त्री.	नोपुरुष	नोनपुंसक
१	१	१	३	१	१
१	३	३	३	१	३
१	१	१	३	३	१
१	३	३	३	३	३

इति २६ भांगा घणा भव आश्री इर्यावही कर्म जो ८ भांगे नीचें लिखे है उनका वंध कहां २ होता है ? कोण सा जीव इण भांगा का अधिकारी है ।

(१)	वांधाथा,	वांधता है,	वांधेगा,
(२)	वांधाथा,	वांधता है,	नवांधेगा,
(३)	वांधाथा,	नहीं वांधता है,	वांधेगा,
(४)	वांधाथा,	नहीं वांधता है,	नवांधेगा,
(५)	नवांधाथा,	वांधता है,	वांधेगा,
(६)	नवांधाथा,	वांधता है,	नवांधेगा,
(७)	नवांधाथा,	नवांधता है,	वांधेगा,
(८)	नवांधाथा,	नवांधता है,	नवांधेगा,

(पहिला) भांगा उपशम श्रेणी वाले जीव में मिले. जैसे उपशम श्रेणी १ भवमें १ जीव जघन्य एक वार और उत्कृष्ट २ वार करता है कोइ जीव १ वार उपशम श्रेणी करके पीछा गीरा तो पहिले उपशम श्रेणी करीथी इसलिये इर्यावही कर्म बांधा था और वर्तमानकाल में दुवारा उपशमश्रेणी वरतता है इसलिये इर्यावही कर्म बांध रहा है. और उपशम श्रेणीवाला अवश्य पीछा गिरेगा. परन्तु फिरभी नियमा मोक्ष जानेवाला है इस वास्ते भविष्य में इर्यावही कर्म बांधेगा.

(दूसरा) भांगा पहिले उपशम श्रेणी की थी तब इर्यावही कर्म बांधा था. वर्तमानमें क्षपक श्रेणी पर वरतता है इसलिये बांधता है आगे मोक्ष चला जायगा इस वास्ते न बांधेगा.

(तीसरा) भांगा पहिले उपशम श्रेणी करके बांधा था वर्तमानमें नीचे के गुणस्थानक पर वर्तता है इसलिये नहीं बांधता और मोक्षगामी है इसलिये भविष्य में बांधेगा.

(चोथा) भांगा चौदमा गुणस्थानक या सिद्धों के जीवों में है।

(पांचमां) भांगा भूतकालमें उपशम श्रेणि नहीं की इसलिये नहीं बांधा था वर्तमान में उपशम श्रेणी पर है इसलिये बांधता है भविष्यमें मोक्षगामी है इसलिये बांधेगा।

(छठा) भांगा प्रथम ही क्षपक श्रेणी करने वाला भूतकाल में न बांधा था, वर्तमानमें बांधे है भविष्यमें मोक्ष जावेगा वास्ते न बांधेगा।

(सातमा) भांगा भूतकाल और वर्तमानमें उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी नहीं की इसलिये नहीं बांधा और नहीं बांधता है परन्तु भव्य है इसलिये नियमा मोक्ष जायगा तब बांधेगा।

(आठमा) भांगा अभव्य प्रथमगुणस्थानकवर्ती में मिलता

है एवं एक भवापेक्षी ७ भांगोका जीव मिले छठा भांगों शून्य है समय मात्र बंधभावापेक्षा है।

इर्यावहि कर्म क्या इन चार भांगो से बांधे ? १ सादिसांत २ सादि अनंत ३ अनादि सांत ४ अनादि अनंत १

सादि सांत भांगे से बांधे. क्यों कि इर्यावहि कर्म ११-१२-१३ से गुणस्थानक के अंत समय तक बंधता है इसलिये आदि है और चौदमे गुणस्थानक के प्रथम समय बंध विच्छेद होने से अंत भी है बाकी तीन भांगे शून्य है.

इर्यावहि कर्म क्या देश (जीवकाएकदेश) से देश (इर्यावहि केएकदेश) बांधे १ या देस से सर्व २ या सर्व से देश ३ या सर्व से सर्व बांधे ४ ?

हां सर्व से सर्वका बंध हो सक्ता है बाकी-तीनों भांगे शुन्य है. इति इर्यावहि कर्मबन्ध ॥

सम्प्राय कर्म क्या नारकी. तिर्यंच, तिर्यंचणी मनुष्य मनुष्यणी, देवता, देवी, बांधे ४.

हां बांधे क्योंकि सम्प्राय कर्म का बंध पहिले गुणस्थानक से दशमे गुणस्थानक तक है.

सम्प्राय कर्म क्या स्त्री, पुरुष नपुंसक या वहुत से स्त्री, पुरुष, नपुंसक बांधे.

हां सब बांधे भूतकाल मे वहुत जीवोंने बांधा था. वर्तमान में बांधते है और भविष्य में कोइ बांधेगा कोई न बांधेगा कारण मोक्षमे जानेवाले है.

सम्प्राय कर्म क्या अवेदी (जिनकावेदक्षय होगयाहो) बांधे ?

हां, भूतकालमें वहुतसे जीवोंने बांधाथा. और वर्तमान

में भांगे २६ से इर्यावही कर्मवत् वांधे. क्योंकि अवेदी नवमें गुण-
स्थानक के २ समय बाकी रहने पर (वेदोंका क्षय होते है)
होजाते हैं और सम्प्राय कर्मका वध दशवें गुणस्थानक तक है

सम्प्राय कर्म क्या इन चार भांगों से वांधे १ सादि सांत,
२ सादि अनंत, ३ अनादिसांत, ४ अनादि अनत,

तीन भांगों से बांधे, और १ भांगा शून्य. यथा. १ सादिसांत
भांगों से बांधे सम्प्रायकर्मबांधनेकी जीवों के आदि नहीं है.
परन्तु यहां अपेक्षायुक्त वचन है जैसे कि जीव उपशम श्रेणी
करके ग्यारह गुणस्थानक वर्तता हुवा इर्यावही कर्म वांधे परतु
इग्यारमें गुणस्थानक से नियमा गिरकर सम्प्राय कर्म वांधे इस
अपेक्षा से सम्प्राय कर्मकी आदि है और क्षपक श्रेणीकर के बारमें
गुणस्थानक अवश्य जावेगा. वहां सम्प्राय कर्म का वंध नहीं है
इसलिये अंतभी है २ सादि अनंत भांगा शून्य है क्योंकि
ऐसा कोई जीव नहीं है कि जिसके सम्प्राय कर्मकी आदि हो.
यदि उपशम श्रेणी की अपेक्षा से कहोगे तो वह नियमा मोक्षभी
जायगा तो अन्त पणाकी बाधा आवेगी वास्ते यह भांगा शास्त्र-
कारोंने शून्य कहा है.

३ अनादि सांत. भांगा भव्य जीवोंकी अपेक्षा से. क्योंकि
जीवके सम्प्राय कर्मकी आदि नहीं है परंतु मोक्ष जायगा इसवास्ते
अंत है।

४ अनादि अनंत अभव्य जीवकी अपेक्षासे जिसके सम्प्राय
कर्मकी आदि नहीं है और न कभी अंत होगा.

सम्प्राय कर्म क्यों इन चार भांगों से बांधे १ देश (जीवका)
से देश (सम्प्राय कर्मका) २ देशसें सर्व ३ सर्व से देश ४ सर्व
से सर्व.

सर्व से सर्व. इस भांगे से सम्प्राय कर्मबांधे बाकी तीनों भांगे शुन्य सम्प्रायकर्म जगतमे रुलाने वाला है और इर्यावहि मोक्ष नगर में पहुंचाने वाला है दोनुं बंध छूटने से जीव मोक्ष मे जाता है इति-समाप्तम्

सेव भंते सेव भते तमेव सचम् ॥

थोकडा नं० ५५

(श्री भगवतीजी सूत्र० २६ उ० १)

(४७ बोल की बांधी)

इस शतक में कर्मों का अति दुर्गम्य सम्बन्ध हैं. इस वास्ते गणधरों ने सूत्रदेवता को पहिले नमस्कार करके फिर शतक को प्रारंभ किया है.

गाथा-जीवय १ लेश्या ६ पक्खिय २ दिठ्ठी ३ नाण ६ अनाण ४ सन्नाओ ५ वेय ५ कसाये ६ जोगे ५ उवओगे २ एक्कारसवि ट्ठाणे ॥ १ ॥

अर्थ—समुच्चय जीव १ ॥ कृष्णादि लेश्या ६ अलेशी ७ संलशी ८ ॥ पक्ष० कृष्णपक्षी १ शुक्लपक्षी २॥ दृष्टी० सम्यक्त्वदृष्टि १ मिश्र-दृष्टि २ मिथ्यादृष्टि ३ ॥ मत्यादि ज्ञान ५ सनाणी ६ ॥ अज्ञान ३ अनाणी ४॥ संज्ञा ४ नोसज्ञा ५ ॥ वेद ३ ॥ संवेदी ४ अवेदी ५ ॥ कषाय ४ सकषाय ५ अकषाय ६ ॥ योग० ३ सयोगी ४ अयोगी ५ ॥ उपयोग० साकार १ ॥ अनाकार २ ॥ एवम् ४७

चौवीसों दंडकों में से कौन २ से दंडक में कितने २ भेद पावे यह नीचे के यंत्र द्वारा समजलेना ।

४७ बोलोंकि बन्धी.

सं	नाम दंडक	जी १	ले ६	प २	द ३	ज्ञा ६	अज्ञा ४	सं ५	[illegible] ५	क ६	यो ५	[illegible] २	कु ४७
१	नारकी	१	४	२	३	४	४	४	२	५	४	२	३५
१२	भुवन पति १० वाण व्यंतर १	१	५	२	३	४	४	४	३	५	४	२	३७
१३	ज्योतिषी १	१	२	२	३	४	४	४	३	५	४	२	३४
१४	वैमानिक देवलोक १—२	१	२	२	३	४	४	४	३	५	४	२	३४
	देवलोक ३ से १२	१	२	२	३	४	४	४	२	५	४	२	३३
	ग्रैवेक ९	१	२	२	२	४	४	४	२	५	४	२	३२
	अनुत्तर ५	१	२	१	१	४	०	४	२	५	४	२	२६
१७	पृ. पाणी वन० ३	१	५	२	१	०	३	४	२	५	२	२	२७
१९	तेऊ वायु २	१	४	२	१	०	३	४	२	५	२	२	२६
२२	विकलेन्द्री ३	१	४	२	२	३	३	४	२	५	३	२	३१
२३	तीर्यंच, पचेन्द्री	१	७	२	३	४	४	४	४	५	४	२	४०
२४	मनुष्य	१	८	२	३	६	४	५	५	६	५	२	४७

तीजे, चौथे और पांचमें, देवलोकमें एक पद्मलेश्या और छट्ठे, से बारमें देवलोक तक एक शुक्ल लेश्या है इस लिये प्रत्येक देवलोकमें एक १ लेश्या है।

बंधाका भांगा ४ है. इसपर विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है। (१) कर्म बांधा, बांधे, बांधसी. (२) कर्म बांधा, बांधे, न बांधसी, (३) कर्म बांधा न बांधे बांधसी. (४) कर्म बांधा, न बांधे, न बांधसी,

आठ कर्म है. जिसमें ४ घाती कर्मो को एकांत पाप कर्म माना है (ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, और अंतराय,) और इनमें मोहनीय कर्म सब से प्रबल माना गया है.

शेष वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, ये चार अघाती कर्म हैं (पाप पुण्य मिश्रित) इसलिये शास्त्रकारों ने प्रथम समुच्चय पापकर्म की पृच्छा अलग की है उपरोक्त ४७ बोलोमेंसे कौन २ से बोलके जीव इन चार भांगों में से कौन २ से भांगों से पाप कर्म को बांधे. इस में मोहनीय कर्मकी प्रबलता है इसलिये उसके बंध विच्छेद होने से शेष कर्मों के विद्यमान होते हुए भी उनके बंध की विवक्षा नहीं की. क्योंकि उववाई पन्नवणा सूत्रमे भी मोहनीय कर्म परही शास्त्रकारों ने ज्यादा जोर दिया है कारण कि मोहनीय कर्म सर्व कर्मों का राजा है. उस के क्षय होने से शेष तीन कर्मों का किंचित् भी जोर नहीं चलता, उपरोक्त सैतालीस बोलों में से समुच्चय जीव की पृच्छा करते है समुच्चयजीव १ शुक्ललेशी २ संलेशी ३ शुक्ल पक्षी ४ सज्ञानी ५ मतिज्ञानी ६ श्रुतज्ञानी ७ अवधिज्ञानी ८ मनःपर्यवज्ञानी ९ सम्यकदृष्टि १० नों संज्ञा ११ अवेदी १२ सकषायी १३ लोभ कषायी १४ सयोगी १५ मनयोगी १६ वचनयोगी १७ काययोगी १८ साकार उपयोगी १९ अनाकार उपयोगी २० इन वीस बोलों के जीवां मे चारों भांगों मिलते है यथाः—

(१) बांधा, बांधे, बांधसी, मिथ्यात्वादि, गुणठाणों अभव्य जीव. भूतकालमें बान्धा-बान्धे-बान्धसी.

(२) बांधा, बांधे, न बाधसी, क्षपक श्रेणी चढता हुआ नवमें गु० तक. बान्धे फीर मोक्ष जायगा-न बन्धसी.

(३) बांधा, न बांधे, बांधसी, उपशम श्रेणी. दशमें, इग्यार में गु० तक. वर्तमानमें नहीं बान्धते है.

(४) बांधा, न बांधे, न बांधसी, क्षपक श्रेणी दशमें गुण० तद्भव मोक्षगामी.

२१) मिश्रदृष्टि दो भांगा से मीलता है. १-२ जो। यथा—

४७ बोलोंकि बन्धी.

यह सामान्यता से कहा है.

(१) बांधा, बांधे बांधसी,

हुत भवपेक्षा.

(२) बांधा बांधे, न बांधसी, यह विशेष व्याख्या है.

क्योंकि भव्य जीव है व तद्भव मोक्ष जायगा तब (न बांधसी.)

२२) अकषायी में दो भांगा यथा-३-४ था.

(३) बांधा, न बांधे, बांधसी, उपशम श्रेणी दशमें. इग्या-

रमें गुण० वर्तता हुआ भूत कालमें बांधा वर्तमान (न बांधे)

परन्तु नियमा पीछा गिरेगा. तब (बांधसी)

(४) बांधा न बांधे, न बांधसी. क्षपक श्रेणी वाले अकषायी

है (२५) अलेशी, केवली और अजोगी, में भांगा १ बांधा, न

बांधे, न बांधसी. बन्ध अभाव।

(४७) लेश्या पांच, कृष्णपक्षी, अज्ञाना चार, वेद चार, संज्ञा

चार, कषाय तीन, और मिथ्यात्वदृष्टि इन बाइस बोलों के जीवों

में भांगा २ मिलते है यथा। १-२ जो।

(१) बांधा, बांधे, बांधसी, अभव्य की अपेक्षा से.

(२) बांधा, बांधे, न बांधसी भव्य की अपेक्षा से.

यह समुच्चय जीव की अपेक्षा से कहा. ऐसे ही मनुष्य

के दंडक में समझ लेना. शेष तेवीस दंडक के जीव में दो भांगा

मिलते है यथा. १-२ जो.

(१) बांधा. बांधे, न बांधसी, अभव्य की अपेक्षा विशेष

व्याख्या न करके सामान्यता से.

(२) बांधा, बांधे, न बांधसी, यह विशेष व्याख्या है

क्योंकि भव्य जीव है वह भविष्य में निश्चय मोक्ष जायगा तब

(न बांधसी)

यह समुच्चय पापकर्म की व्याख्या की है. अब आठों कर्म

की भिन्न २ व्याख्या करते है जिसमें मोहनीय कर्म समुच्चय पाप कर्मवत् समझ लेना.

ज्ञानावरणीय कर्म को पूर्वे कहे हुए वीस बोलोंमें से सकषायी और लोभ कषायी, यह दो बोलों को छोडकर शेष अठारा बोलोंके जीव पूर्वोक्त चारो भांगोंसे बांधे (पूर्वमें जो कुछ कह आये है. और आगे जो कुछ कहेंगे, यह सब वातें गुणस्थानक से संबध रखती है. इसलिये पाठकों को हरेक बोल पर गुणस्थानक का उपयोग रखना अति आवश्यक है, विना गुणस्थानक के उपयोगी वातें समझ में आना मुश्किल है.)

अलेशी, केवली, और अयोगी, में भांगा १ चोथा. बांधा, न बांधे, न बांधसी.

मिश्रदृष्टि में भांगा २ पहिला और दूसरा पूर्ववत्

अकषायी में भागा २ तीसरा और चौथा पूर्ववत्

शेष चौवीस बोलों (बावीस पापकर्म की व्याख्या मे कहा वह और सकषायी. लोभ कषायी) में भांगा २ पहिला और दूसरा पूर्ववत्

यह समुच्चय जीव की अपेक्षा से कहा. इसी तरह मनुष्य दंडक में समझ लेना. शेष तेवीस दंडक के जीवों में दो भांगों (पहिला और दूसरा) जैसे ज्ञानावरणीय कर्म बांधे. एवम् दर्शनावरणीय नाम कर्म, गोत्रकर्म और अंतराय कर्म का भी वंध आश्रयी भांगा लगालेना—संवन्ध सादृश है ।

समुच्चय जीवों की अपेक्षा से वेदनीय कर्म को, समुच्चय जीव, सलेशी, शुक्ललेशी, शुक्लपक्षी, सम्यकदृष्टि, संज्ञानी केवल ज्ञानी. नोसंज्ञा, अवेदी. अकषायी, साकार उपयोगी, और अनाकार उपयोगी, इन (१२) वारहा बोलों के जीवो में तीन भांगा

मिलता है पहिला, दूसरा और चौथा भांगा और बांधा. न बांधे बांधसी, इस तीसरे भांगों में पूर्वोक्त बारहा बोलों के जीव नहीं मिलते. क्योंकि यह भांगा वर्तमानकाल में वेदनीय कर्म न बांधे. और फीर बांधेगा यह नहीं होसक्ता. कारण वेदनीय कर्म का बंध तेरवा गुणस्थानक के अंत समय तक होता है.

अलेशी, अजोगी, में भांगो १ चौथो. बांधा, न बांधे, न बांधसी, शेष तेतीस बोलों में भांगा २ पहिला और दूसरा.

एवम् मनुष्य दंडक में भी भांगा ३ समुच्चयवत् समझ लेना शेष तेवीस दंडक में भांगा २ पहिला और दूसरा.

समुच्चय जीवोंकी अपेक्षा से आयुष्य कर्ममें. अलेशी, केवली और अयोगी, ये तीन बोलों के जीवोंमें केवल चौथा भांगा पावें.

कृष्णपक्ष में भांगा २ पहिला और तीसरा.

मिश्रदृष्टि, अवेदी और अकषायी में २ भांगा. तिसरा और चौथा, मनः पर्यव ज्ञानी, नोसंज्ञा में ३ भांगा. पहिले तीसरा और चौथा. शेष अडतीस बोलों के जीवों में चारों भांगा से आयुष्य कर्म बांधे, अब चोवीस दंडकों की अपेक्षा आयुष्य कर्म के बध के भांगे कहते हैं नारकी के पूर्वोक्त ३५ बोलोमेंसे कृष्ण पक्षी और कृष्ण लेशी में भांगा दो पावे. पहिला और तीसरा. मिश्रदृष्टि में भांगा दो पावे तीसरा और चौथा. शेष बत्तीस बोलों के जीव चारो भांगो से आयुष्य कर्म बांधे.

देवताओं में भुवनपति से यावत् बारहावें देवलोक तक के देवताओंमे पूर्वोक्त कहे हुए बोलोंमें से कृष्णपक्षी, और कृष्णलेशी (जहां पावे वहांतक) में दो भांगा पहिला और दूसरा मिश्रदृष्टिमें दो भांगा तीसरा और चौथा, शेष बोलों के जीवों में भांगा चारो पावे। नव ग्रैवेक के देवताओंमें पूर्वोक्त ३२ बोलोंमें से कृष्णपक्षीमें

भांगा दो पावे. पहिला और तीसरा. शेष ३१ बोलों में चारों भांगा पावे. ॥ चार अनुत्तर विमानों के देवताओं में पूर्वोक्त २६ बोलोमें भांगा चारों पावे ॥ सर्वार्थ सिद्ध विमानके देवताओं में पूर्वोक्त २६ बोलो मे भांगा ३ पावे. दूसरा, तीसरा, और चौथा.

पृथ्वीकाय, अप्पकाय, और वनस्पतिकाय के जीवों में पूर्वोक्त २७ बोलो में से तेजोलेशी, में भांगा एक पावे. तीसरा शेष २६ बोलों के जीव चारों भांगो से आयुष्य कर्म बांधे ॥ तेजस-काय और वायुकाय के जीवो के पूर्वोक्त २६ बोलो में भांगा २ पावे पहिला और तीसरा ॥ तीनों विकलेन्द्री जीवों के पूर्वोक्त ३१ बोलों में से सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, और सम्यकदृष्टि इन चार बोलों के जीवों में भांगा तीसरा पावे शेष २७ बोलो में भांगा २ पहिला और तीसरा.

तीर्यंच पंचेन्द्री जीवों के पूर्वोक्त ३५ बोलों में से कृष्णपक्षी म भांगा २ पहिला और तीसरा. मिश्रदृष्टि में दो भांगा तीसरा और चौथा. और सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी तथा अवधिज्ञानी और सम्यकदृष्टि में भांगा ३ पावे पहिला, तीसरा, और चौथा. शेष २८ बोलों में भाँगा चारों पावे.

मनुष्य के दंडक में पूर्वोक्त ४७ बोलों में से कृष्णपक्षी में भांगा दो पावे. पहिला और तीसरा. मिश्रदृष्टि, अवेदी और अकषाइ मे भांगा दो पावे तीसरा और चौथा. अलेशी, केवली, और अजोगी मे एक भांगा चौथा, नोसंज्ञा, चार ज्ञान, सज्ञानी और सम्यकदृष्टि में तीन भांगा पहिला तीसरा और चौथा. शेष तेतीस बोलो में भांगा चारो पावे.

इस छव्वीसवें शतक के प्रथम उद्देशाका जितना विस्तार किया जाय उतना हो सक्ता है परन्तु ग्रन्थ वढजाने से कंठस्थ करणा में प्रमाद होने के कारण से यहां संक्षेप में वर्णन किया है. इस को कंठस्थ कर विस्तार गुरुगम से धारो. इति ॥

चौवीस दंडकों में प्रथम समय उत्पन्न हुए जीवों के जो जो बोल कह आए है उन बोलों के जीव समुच्चय पापकर्म और ज्ञानावरणीय आदि सात कर्मों (आयुष्य छोड कर) को पूर्वोक्त " बांधा, बांधे, बांधसी " इत्यादिक चार भांगा में से केवल दो भांगो से बांधे (बांधा बांधे बांधसी, बांधा, बांधे न बांधसी.)

आयुष्य कर्मको मनुष्य छोडकर शेष तेवीस दंडकों में पूर्वोक्त कहे हुऐ बोलों में " बांधा न बांधे, बांधसी " । का १ भांगा पावे. क्योंकि प्रथम समय उत्पन्न हुवा जीव आयुष्य कर्म बांधे नहीं, भूत कालमें बांधा था और भविष्यमें बांधेगा.

मनुष्य दंडक में पूर्वोक्त ३७ बोलों में से कृष्ण पक्षी में भांगा १ तीसरा शेष छत्तीस बोलों में भागा २ पावे. तीसरा और चौथा इति द्वितीयोद्‌देशकम्.

शतक २६ उद्‌देशो ३ जो परम्परोववन्नगा.

उत्पत्ति के दूसरे समय से यावत् आयुष्य के शेष काल को "परमूपर उववन्नगा," कहते हैं. इसी शतक के प्रथम उद्देसेमें ४७ बोलों में से जितने २ बोल प्रत्येक दंडक के कह आये हैं. उसी माफक परमपर उववन्नगा जावों के समुच्चय जीवादि दंडको में भी कहना. तथा बांधी का भांगा चारो सर्व अधिकार प्रथम उद्देसे के माफक कहना. बांधी के भांगों के साथ " परमूपर उववन्ना " का सूत्र नरकादि सर्व दडक के साथ जोड लेना. इति तृतीयोद्‌देशकम् श्री भगवती सूत्र श० २५ उ० ४ अणंतर ओगाढा.

जीव जीस गति में उत्पन्न हुवा है उसगति के आकास प्रदेश अवगह्या (आलंवन किये) को एक ही समय हुवा है उसको अणंतर ओगाडा कहते है. इसके बोल और बांधी के भांगों का सर्वाधिकार अणंतर उववन्नगा द्वितीय उद्देसे के माफक कहना. और अणतर उववन्नगा की जगह पर अणंतर ओगाडा का सूत्र

नरकादि सब जगह विशेष कहना. इति चतुर्थोद्देशकम.

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० ५ परम्पर ओगाडा.

जीव जीस गति में उत्पन्न हुवा है उस गति के आकास प्रदेश अवगाह्यां को २ समय से यावत् भवांतर काल हुआ हो उसको परमपर ओगाडा कहते है. इसका सर्वाधिकार इसी शतक के प्रथम उद्देसे वत् कहना परन्तु " परम्पर ओगाडा " का सूत्र सब जगह विशेष कहना. इति पंचमोद्देशकम्.

श्री भगवती सूत्र श० २६० उ० ६ अणंतर आहारगा.

जिस गति में जीव उत्पन्न हुआ है. उस गति में जो प्रथम समय आहार लिया. उसको अणंतर आहारगा कहते हैं. इसका सर्वाधिकार अणंतर उववन्नगा जो दूसरे उद्देसे माफक समझना परन्तु अणंतर उववन्नगा की जगह पर " अणंतर आहारगा का सूत्र कहना. इति षष्टमोद्देशकम्.

श्री भगवती सूत्र श० २० उ० ७ परम्पर आहारगा.

जिस गति में जीव उत्पन्न हुवा है. उस गति का आहार द्वितीय समय से भवांतर तक ग्रहण करे उसको परम्पर आहारगा कहते हैं. इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशा वत् समजना परन्तु " परम्पर आहारगा का सूत्र सब जगह विशेष कहना. इति सप्तमोद्देशकम्.

श्री भगवती सूत्र श० २६० उ० ८ अणंतर पज्जत्तगा.

जिस गति में जीव उत्पन्न हुआ है उस गति की पर्याप्ति बांधने के प्रथम समय को अणंतर पज्जत्तगा कहते हैं. इसका सर्वाधिकार इसी शतक के दूसरे उद्देशा वत्. परन्तु अणंतर उववन्नगा की जगह पर " अणंतर पज्जत्तगा " का सूत्र कहना. इति अष्टमोद्देशकम्.

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० ९ परम्पर पज्जत्तगा.

पर्याप्ति के दूसरे समय से यावत् आयुष्य पर्यंत को परंपर

पन्नत्तगा कहते हैं. इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशे वत् समझना. परन्तु परंपर पन्नत्तगा का सूत्र विशेष कहना इति नवमोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० १० चरमोद्देशो.

जिस जीव का जिस गति में चरम समय शेष रहा हो उसको चरमोद्देशो कहते है इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशावत् परन्तु "चरमोद्देशो" का सूत्र विशेष कहना इति दशमोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० ११ अचरमोद्देशो.

अचरमोद्देशो प्रथम उद्देशे के माफक है. परन्तु ४७ बोलो में अलेशी, केवली, अयोगी ये तीन बोल कम करना. भांगा ४ मे चौथो भांगो और देवता में सर्वार्थसिद्ध को बोल कम करना. शेष प्रथम उद्देशे के माफक कहना. इति श्रीभगवती सूत्र श० २६ समाप्तम्.

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नं. ५७.

॥ श्री भगवती सूत्र श० २७ ॥

शतक २६ उद्देशा १ में जो ४७ बोल कह आये है. उसपर जो " बांधा, बांधे, बांधसी " इत्यादिक ४ भांगों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया हैं उसी माफक यहां भी " कर्म किरिया, करे, करसी " इत्यादिक नीचे लिखे ४ भांगों का अधिकार पूर्ववत् ११ उद्देशों वंधी सादृश ही समज लेना.

(१) कर्म किरिया, करे, करसी, (२) किरिया, करे, न करसी (३) किरिया, न करे, करसी (४) करिया, न करे न करसी.

(प्र) जब अधिकार सादृश है तो अलग २ शतक कहने का
या कारण है ?

(उ) कर्म, करिया, करे, करसी. यह क्रिया काल अपेक्षा
सामान्य व्याख्या है और कर्म बांधा वांधे वांधसी. यह बंध काल
अपेक्षा विशेष व्याख्या है. शेषाधिकार बन्धी शतक माफीक
समजना. इति शतक २७ उद्देशा ११ समाप्त.

थोकडा नं० ५८

श्री भगवती सूत्र श० २८

पूर्वोक्त ४७ बोलों के जीव पापादि कर्म कहां के बांधे हुए
कहां भोगवे १ इसके भांगे ८ है यथा (१) तीर्यचमें बांधा तीर्यच
में ही भोगवे (२) तीर्यचमें बांधा नरकमें भोगवे (३) तीर्यचमें
बांधा मनुष्य में भोगवे (४) तीर्यच में बांधा देवता में भोगवे
(५) तीर्यचमें बांधा नारकी और मनुष्य में भोगवे (६) तीर्यच
मे बांधा नारकी और देवता मे भोगवे (७) तीर्यच में बांधा
मनुष्य और देवता में भोगवे. (८) तीर्यच में बांधा नारकी मनु-
ष्य देवता तीनों में भोगवे एवम् भांगां ८। पहिले जो शतक २६
उद्देशा १ में जो ४७ बोलों का प्रत्येक दंडक पर वर्णन कर आये है.
उन सब बोलों में समुच्चय पाप कर्म और ज्ञानावरणीयादी ८
कर्मों में भांगा आठ आठ पावे. इति प्रथमोद्देशः

पूर्वोक्त बांधी शतक के ११ उद्देशावत् इस शतक के भी ११
उद्देशे है और प्रत्येक उद्देशे के बोलों पर उपर लिखे मुजब अ
२ भांगे लगा लेना. इस शतकसे अव्यवहाररासी मानना
सिद्ध होता है और प्रज्ञापना पद ३ बोल ९८ तथा जुम्माधिका
देखो. इति शतक २८ उद्देशा ११ समाप्त.

थोकडा नं. ५६

(श्री भगवती सूत्र श० २६)

४७ बोल प्रत्येक दंडक पर शतक २६ उद्देशे पहिले में विव. रण करचूके है. उनबोलों के जीव (१) एक साथे कर्म भोगवणा मांडिया (सुरूकिया) और एक साथे पूरण किया (२) एक साथे भोगवणा मांडिया और विषमता से पूराकिया (३) विषम भोगवणा मांडिया और विषम पूराकिया (४) विषम भोगवणा मांडिया और साथे पूरा किया. यह चारो भांगे कहना क्योंकि जीव ४ प्रकार के है यथा—

(१) सम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ. (२) सम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ (३) विषम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ. (४) विषम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ. यह चार प्रकार के जीवोंमें कौन २ सा भांगा पावे सो दिखाते है.

(१) सम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा पहिला स० स० (२) सम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा दूसरा स० वि० (३) विषम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा तीसरा. वि० स० (४) विषम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा चोथा, वि० वि० । यह आयुष्य कर्म की अपेक्षा से चार भांगा होता है. इति प्रथमोद्देसा।

दूसरा उद्देशा अणंतर उववन्नगा का है. जिसमें भांगा २ पहिला और दूसरा यहां प्रथम समय की अपेक्षा है इसी माफक चौथा, छट्ठा, और आठमां उद्देशा भी समझ लेना. शेष १-३-५-७-९-१०-११ यह सात उद्देशों की व्याख्या सदृश है (चारो भांगा पावे) इति श० २९ शतक ११ उद्देसा समाप्तम्.

थोकडा नं. ६०

श्री भगवती सूत्र श० ३०

समौसरण–अधिकार.

समौसरण चार प्रकार के कहा है यथा १ क्रियावादी २ अक्रियावादी ३ अज्ञानवादी और ४ विनयवादी क्रियावादी के सूयडांग सूत्र में जो १८० भेद कहे है वह केवल मिथ्यादृष्टि है और दशाश्रुत स्कंध में जो क्रियावादी कहे है उन्होंने पेस्तर मिथ्यादृष्टि में आयुष्य बांधा था उसके बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया है और यहां जो क्रियावादी कहे है वह सम्यक्दृष्टि है.

समुच्चयजीव में पूर्वे जो ४७ बोल २६ वां शतक में कह आये है उसमें कृष्णपक्षी १ अज्ञानी ४ मिथ्यादृष्टि १ एवम् छै बोल में समौसरण ३ अक्रियावादी, अज्ञानवादी, और विनयवादी, इन तीनों समौसरण के जीव चारों गति का आयुष्य बांधे. और इनमें भव्य, अभव्य, दोनों होवे

ज्ञान ४ और सम्यकदृष्टि १ इन पांचो बोलों में समौसरण १ क्रियावादी आयुष्य जो नारकी, देवता, बांधे तो मनुष्य का और मनुष्य, तीर्यंच बांधे तो वैमानिक का और नियमा भव्य है.

मिश्रदृष्टिमें समौसरण २ अज्ञानवादी और विनयवादी. आयुष्य का अबंधक और नियम भव्य हो.

मनः पर्यव ज्ञान और नोसंज्ञा में समौसरण १ क्रियावादी आयुष्य बांधे तो वैमानिक का और नियमा भव्य होय

कृष्ण, नील, कापोत, लेशीमें समौ० चार पावे. जिसमें क्रिया-

वादी आयुष्य मनुष्य का बांधे और नियमा भव्य होय. शेष तीन समो० आयुष्य चारोंगति का बांधे, और भव्याभव्य दोनों होय।

तेजो, पद्म, शुक्ल लेशी में समो० चार पावे जिसमें क्रियावादी आयुष्य मनुष्य वैमानिकको बांधे और नियमा भव्य होय शेष तीन समो० नारकी वर्ज के तीनगति का आयुष्य बांधे और भव्याभव्य दोनों होय.

अलेशी, केवली, अयोगी, अवेदी, अकषायी, इन पांच बोलों में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य अबंधक और नियमा भव्य होय.

शेष २२ बोलों में समोसरण चारों जिसमे क्रियावादी आयुष्य-मनुष्य और विमानिक का बन्धे और तीन समो० वाले जीव आयुष्य चारों गति का बांधे. क्रियावादी नियमा भव्य होय बाकी तीनो समोसरण में भव्य अभव्य दोनों होय.

नारकी के पूर्वोक्त ३५ बोलों में कृष्णपक्षी १ अज्ञानी ४ और मिथ्यादृष्टि १ मे समोसरण ३ पूर्ववत्. आयुष्य मनुष्य तीर्यंच का बांधे और भव्य अभव्य दोनों होय—ज्ञान ४ और सम्यक्दृष्टि मे समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य मनुष्य का बांधे और निश्चय भव्य होय, मिश्रद्रष्टि समुच्चयवत् शेष तेवीस बोल में समोसरण चार और आयुष्य मनुष्य तीर्यंच दोनोंका बांधे । क्रियावादी नियमा भव्य-बाकी तीनो समोसरण के भव्य अभव्य दोनों होय इसी माफक देवताओं में नवग्रैवेक तक पूर्वोक्त जो जो बोल कह आये है उन सब बोलो में समोसरण नारकीवत् लगा लेना

पांच अनुत्तरविमान के बोल २६ में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य मनुष्य का बांधे और नियमा भव्य होय.

पृथ्वीकाय, अप्पकाय, और वनास्पतिकाय, में पूर्वोक्त २७ बोलों के जीव में दो समोसरण पावे अक्रियावादी, और अज्ञान-

वादी, तेजोलेश्यामें आयुष्य न बांधे. शेष बोलो में आयुष्य मनुष्य और तीर्यंच का बांधे भव्य अभव्य दोनों होय एवम् तेउकाय, वायुकाय के २६ बोलों में समोसरण २ आयुष्य तीर्यंच का बांधे और भव्य अभव्य दोनों होय. तीन विकलेन्द्री के ३१ बोलों में समोसरण २ अक्रियावादी और अज्ञानवादी तीन ज्ञान और सम्यक्दृष्टि आयुष्य न बांधे शेष बोलों में मनुष्य तीर्यंच दोनो का आयुष्य बांधे तीन ज्ञान और सम्यक्दृष्टिमें स० एक क्रियावादी आयुष्यका अबन्ध नियमा भव्य शेष बोलोंमें स० दो आयु० म० तीर्यंचका और भव्य अभव्य दोनों होय। तीर्यंच पंचेन्द्रीके ४० बोलोंमें से कृष्णपक्षी १ अज्ञानी ४ और मिथ्यादृष्टिमें समोसरण ३ अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी, आयुष्य चारों गति का बांधे भव्य अभव्य दोनों होय ज्ञान ४ और सम्यक्दृष्टिमें समोसरण १ क्रियावादी, आयुष्य वैमानिकका बांधे और नियमा भव्य होय. मिश्रदृष्टिमें समोसरण २ विनयवादि और अज्ञानवादि आयुष्यका अबधक और नियमा भव्य होय। कृष्णलेशी, नील लेशी, कापोत लेशीमें समोसरण चारो पावे. जिसमें क्रियावादी आयुष्य का अबंधक और नियमा भव्य होय। शेष तीन समोसरणमें चारोगतिको आयुष्य बांधे और भव्य अभव्य दोनों होय। तेजोलेशी पद्मलेशी शुक्ललेशीमें समोसरण चारो जिसमें क्रियावादी वैमानिक का आयुष्य बांधे और नियमा भव्य होय। शेष तीन समोसरण नारकी छोड कर तीन गतिका आयुष्य बांधे और भव्य अभव्य दोनों होय शेष बाईस बोलोमें समोसरण ४ जिसमें क्रियावादी वैमानिक का आयुष्य बांधे और नियमा भव्य होय बाकी तीन समोसरण चारो गतिका आयुष्य बांधे भव्य अभव्य दोनो होय.

मनुष्य दंडक में पूर्वोक्त जो ४७ बोल कह आये है, जिसमे कृष्ण पक्षी, चार अज्ञानी, और मिथ्यादृष्टि में क्रियावादी

छोडकर शेष तीन समौसरण आयुष्य चारों गति का वांधे और भव्य अभव्य दोनो होय. चार ज्ञान और सम्यक्‌-दृष्टि में समौसरण, क्रियावादी आयुष्य वैमानिक देवता का वांधे और नियमा भव्य होय। मिश्रदृष्टिमें समौसरण दो विनयवादी और अज्ञानवादी. आयुष्यका अबंधक और नियमा भव्य होय.। मनःपर्यव ज्ञान और नो संज्ञा में समौसरण एक क्रियावादी आयुष्य वैमानिक देवता का वांधे और नियमा भव्य होय,। कृष्णादि ३ लेश्या में समोसरण ४ पावै जिसमें क्रियावादी आयुष्य का अबंधक और नियमा भव्य होय। शेष तीनो समौसरण चारो गति का आयुष्य वांधे और भव्याभव्य दोनो होय तेजो आदि ३ लेश्या में समौसरण चारो पावै जिसमें क्रियावादी आयुष्य वैमानिक का वांधे और नियमा भव्य होय। शेष तीनो समौसरण नरक गति छोडकर तीनो गतिका आयुष्य बांधे और भव्याभव्य दोनो होय. अलेशी, केवली, अजोगी, अवेदी, और अकषाई में समौसरण क्रियावादी का आयुष्य अबंधक और नियमा भव्य होय. शेष बाइस बोलो में समौसरण चारों पावै जिसमें क्रिया-वादी आयुष्य वैमानिकका वांधे और नियमा भव्य होय। शेष तीनो समौसरण आयुष्य चारो गति का वांधे और भव्याभव्य दोनों होय.

इति तीसवां शतकका प्रथम उद्देसा समाप्त।

बांधी शतक २६ वा उद्देसा दूसरा अणंतर उववन्नगा का पूर्व कह आये है उसी माफक चौवीस दंडको के ४७ बोल इस उद्देस में भी लगा लेना. और समोसरण का भांगा प्रथम उद्देसावत् कहना परन्तु सब बोलो में आयुष्य का अबंधक है क्योंकि यह उद्देसा उत्पन्न होने के प्रथम समय की अपेक्षा से कहा गया है और प्रथम समय जीव आयुष्य का अबंधक होता है. एवम् चौथा

छठा, आठवा, ये तीन उद्देसे इस दूसरे उद्देसे के सदृश है. शेष ३-५-७-९-१०-११ ये छओ उद्देसा प्रथमोद्देशावत् समझ लेना—

इति श्री भगवती सूत्र शतक ३० उद्देसा ११ समाप्त.

सेवं भंते सेवं भंते समेव सच्चम् ।

थोकडा नं० ६१

श्री उत्तराध्ययन सूत्र अ० ३४

(छ, लेश्या.)

लेश्या उसे कहते है जो जीव के अच्छे या खराब अध्यवसाय से कर्मदलद्वारा जीव लेशावै. यह इस थोकडेद्वारा ११ बोलो सहित विस्तारपूर्वक कहेंगे यथा—

१ नाम २ वर्ण ३ गंध ४ रस ५ स्पर्श ६ परिणाम ७ लक्षण ८ स्थान ९ स्थिति १० गति ११ च्यवन इति ।

(१) नामद्वार-कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या,

(२) वर्णद्वार-कृष्णलेश्याका श्यामवर्ण, जैसे पानी से भरा हुआ बादल, भैंसा का सींग, अरीठा, गाडेका खंजन, काजल आंखों की टीकी, इत्यादि ऐसा वर्ण कृष्णलेश्या का समझना नीललेश्या-नीलावर्ण, जैसे अशोक पत्र, शुक की पांखे, वैडूर्यरत्न इत्यादिवत् समझना कापोतलेश्या-सुर्खी लिये हुए कालारंग जैसे अलसी का पुष्प, कोयल की पांख, पारेवाकी ग्रीवा, इत्या

दिवत् तेजोलेश्या-रक्तवर्ण जैसे हींगलू, उगता सूर्य, तोतेकी चोंच दीपककी शीखा, इत्यादिवत् पद्मलेश्या पीतवर्ण, जैसे हरताल, हलद, हलदका टुकडा सण वनास्पतिकावर्ण इत्यादिवत् पीला शुक्ललेश्या-श्वेत वर्ण जैसे संख, अंकरत्न मचकुंद वनस्पति, मोती का हार, चांदी का हार, इत्यादिवत्.

(३) रसद्वार-कृष्ण लेश्या का कटुक रस, जैसे कडवा तूंबा का रस, नींब का रस, रोहिणी वनास्पति का रस, इनसे अनंतगुण कटु। नीललेश्या का-तीखा रस-जैसे सोंठका रस, पीपर का रस, कालीमिरच, हस्ती पीपर. इन सबके स्वाद से अनंतगुणा तीखा रस। कापोतलेश्या का खट्टा रस-जैसे कच्चा आम्र, तुंबर वनास्पति, कच्चा कवीठ की खटाइ से अनंतगुणा खट्टा। तेजोलेश्या का रस-जैसे पकाहुवा आम्र, पकाहुवा कवीठ के स्वाद से अनंतगुणा। पद्मलेश्या का रस-जैसे उत्तम वारुणी का स्वाद और विविध प्रकार के आसव के अनंतगुणा। शुक्ल लेश्या का रस-जैसे खजूर का स्वाद, द्राखका स्वाद, खीर सक्कर, इन से अनंतगुणा.

(४) गंधद्वार—कृष्ण नील कापोत, इन तीन लेश्याओं की गंध जैसे मृतक गाय, कुत्ता, सर्प से अनंतगुणी दुर्गंध और तेजो, पद्म, शुक्ल, इन तीन लेश्याओं की गंध जैसे केवडा प्रमुख सुगन्धी वस्तु को घिसने से सुगन्ध हो उस से अनंतगुणी।

(५) स्पर्शद्वार—कृष्ण, नील कपोत, इन तीन लेश्याओं का स्पर्श जैसे करोत (आरी) गाय बैल की जिह्वा साक वृक्ष के पत्र से अनंत गुणा और तेजो, पद्म, शुक्ल, इन तीनों लेश्याओं का स्पर्श जैसे बूर नामा वनास्पति, मक्खन सरसों के पुष्प से अनंतगुणा.

(६) परिणामद्वार-छे लेश्या का परिणाम आयुष्य के तीजे

भाग, नवमे भाग, सत्ताईसमेंभाग इक्यासीमें भाग, दोसौतंयालीसमेंभाग में जघन्य उत्कृष्ट समझना.

(७) लक्षणद्वार—कृष्णलेश्या का लक्षण पांच आश्रव का सेवन करनेवाला, तीन गुप्तीसे अगुप्ती, छैकायका आरंभक, आरंभमें तीव्रपरिणामी सर्व जीवोंका अहित अकार्य करनमे साहसिक इसलोक परलोक की संका रहित, निध्वंस परिणामी जीव हणतां सूग रहित, अजितेन्द्रिय, ऐसे पाप व्यापार युक्त हो तो कृष्णलेश्या के परिणाम वाला समझना.

नीललेश्याका लक्षण-इर्षावत् कदाग्रही. तपरहित, भली विधारहित पर जीव को छलने में होसियार, अनाचारी, निर्लज्ज विषयलंपट द्वेषभावसहित, धूर्त, आठों मदसहित, मनोज्ञ स्वादका लंपट, साताग़वेषी आरभ से न निवर्त्तें सर्व जीवों को अहितकारी, विना सोचे कार्य करनेवाला ऐसे पाप व्यापार सहित होय उसको नीललेश्या वाला समझना.

कापोतलेश्या—वांका बोले, बांका कार्य करे, निबुढ माया (कपटाइ) सरलपणारहित अपना दोष ढांके, मिथ्यादृष्टि. अनार्य दूसरे को पीडाकारी बचन बोले, दुष्टवचन बोले, चोरी करे, दूसरे जीवोंकी सुख सम्पत्ति देख सके नहीं, ऐसे पापव्यापार युक्त को कापोत लेश्या के परिणामवाला समझना.

तेजोलेश्या—मान, चपलता, कौतूहल और कपटाईरहित विनयवान, गुरुकी भक्ति करनेवाला, पांचेन्द्री दमनेवाला, श्रद्धावान. सिद्धांत भणे तपस्या (योग वहन) करे, प्रियधर्म्मी, दृढधर्मी, पापसे डरे, मोक्षकी वांछाकरे, धर्मव्यापार युक्त ऐसे परिणाम वाले को तेजोलेश्या समझना.

पद्मलेश्या का लक्षण-क्रोध मान. माया, लोभ पतला (कमती) है आतमा को दमे, राग द्वेष से शांत हो. मन, वचन काया के

योग अपने वसमें हों. सिद्धांत पढता हुआ तप करे. थोडा बोले, जितेन्द्रिय हो ऐसे परिणाम वाले को पद्मलेशी समझना।

शुक्ललेश्या का लक्षण-आर्त, रौद्र, ध्यान न ध्यावे धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्यावे प्रशस्त चित्त रागद्वेष रहित पंच समिति समिता त्रण गुप्तिए गुप्ता. सरागी हो या वीतरागी ऐसे गुणों सहितको शुक्ल लेशी समझना।

(८) स्थान द्वार-छ हों लेश्याकास्थान असंख्यात है वह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी का जितना समय हो अथवा एक लोक जैसा संख्याता लोक का आकाश प्रदेश जितना हो उतने एक २ लेश्या के स्थान समझना।

(९) स्थितिद्वार-१ कृष्णलेश्या जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम, अंतर मुहूर्त अधिक नारकी में जघन्य १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर मुहूर्ताधिक तिर्यच (पृथ्व्यादि ९ दंडक) और मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त देवताओं में जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यात में भाग।

२ नीललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक, नारकी मे जघन्य तीन सागरोपम पल्योपमके असंख्यात में भाग अधिक, उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक तिर्यच-मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त देवताओं मे जघन्य पल्योपमके असंख्यात में भाग याने कृष्णलेश्या का उत्कृष्ट स्थितिसे १ समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यात में भाग.

३ कापोतलेश्याकी समुच्चयस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त. उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असंख्यात मे भाग अधिक, नारकी मे जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के

असंख्यात में भाग अधिक, मनुष्य, तिर्यंच, में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहुर्त, देवतामें जघन्य पल्योपम के असंख्यातमें भाग याने नील लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातमें भाग.

४ तेजोलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतरमुहुर्त, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यातमें भाग अधिक मनुष्य, तिर्यंच में जघन्य उत्कृष्ट अंतरमुहुर्त, देवताओं में जघन्य दश हजार वर्ष उत्कृष्ट दों सागरोपम पल्योपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक वैमानिक की अपेक्षा.

५ पद्मलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त उत्कृष्ट दश सागरोपम अतरमुहुर्त अधिक. मनुष्य, तिर्यंच में जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त. देवतों में जघन्य दो सागरापम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक (तेजोलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक) उत्कृष्ट दश सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक.

६ शुक्ललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तिर्यचमें जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त और मनुष्योंमें केवलीकी जघन्य स्थिति अन्तरमुहुर्त. उत्कृष्ट नव वर्ष ऊणा पूर्व क्रोड वर्ष. देवताओंमें जघन्य दश सागरोपम अंतरमुहुर्त अधिक (पद्मलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति सें १ समय अधिक) उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर मुहूर्त्त अधिक.

(१०) गतिद्वार कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या ये तीनों अधर्म लेश्या है दुर्गतिमें उत्पन्न होय। तेजो पद्म और शुक्ल लेश्या ये तीनों धर्मलेश्या कहलाती है. सुगति में उत्पन्न हों

(११) च्यवनद्वार. सब संसारी जीवों को परभव जिस गति में जाना हो उसे मरते वख्त उस गति की लेश्या अन्तरमु-

हुर्त पहिले आती है. और उसकी स्थिति के पहिले समय और छेल्ले समय में मरण नहीं होता और विचले समयों में मरण होता है जैसे पहिले आयुष्य बंधा हुआ हो तो उसी गति की लेश्या आवे अगर आयुष्य न बांधा हो तो मरण पहिले अंतर-मुहुर्त स्थिति में जो लेश्या वर्तती है. उसी गतिका आयुष्य बांधे जिस गति में जाना हो उसी के अनुसार लेश्या आने के बाद अन्तरमुहुर्त वह लेश्या परिणमे और अन्तरमुहूर्त्त बाकी रहे जब जीव काल करके परभव में जावे इति।

हे भव्य आत्माओ, इन लेश्याओं के स्वरूपको विचार कर अपनी २ लेश्या को हमेशा प्रशस्त रखने का उपाय करो इति.

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर ६२

(श्री भगवतीजी सूत्र श० १ उ० २)

(सचिट्ठण काल)

सचिट्ठण काल कितने प्रकार का है? च्यार प्रकार का यथा-नारकी सचिट्ठणकाल, तीर्यंच स०, मनुष्य स०, देवता स०.

नारकी सचिट्ठणकाल कितने प्रकार का है? तीन प्रकार का. यथा-सून्यकाल, असून्यकाल, मिश्रकाल, सून्यकाल उसे कहते है कि नारकी का नेरिया नारकी से निकल कर अन्य गति में जा कर फिर नारकी में आवे और पहिले जो नारकी में जीव थे उसमें का १ भी जीव न मीले तो. उसे सून्यकाल

और जिन जीवों को छोडकर गया था वे सव जीव वहीं मिले एक भी कम ज्यादा नहीं उसको अशून्यकाल कहते हैं और कई जीव पहिलेके और कई जीव नये उत्पन्न हुवे मिलें तो उसको मिश्रकाल कहते है। तीर्यचमें सचिट्ठनकाल दो प्रकारका है असून्यकाल और मिश्रकाल, मनुष्य और देवताओं में तीनों प्रकारका नारकीवत् समझ लेना।

अल्पाबहुत्व नारकी में सबसे थोडा असून्यकाल. उनसे मिश्रकाल अनंतगुणा और सून्यकाल उनसे अनंतगुण. एवम् मनुष्य देवता, तीर्यंच में सबसे थोडा असून्यकाल उनसे मिश्रकाल अनंतगुणा.

चार प्रकार के सचिट्ठणकाल मे कौनसी गतिका भव ज्यादा कमती किया जिसका अल्पाबहुत्व सबसे थोडा मनुष्य सचिट्ठण-काल उनसे नारकी सचिट्ठणकाल असख्यातगुणा उनसे देवता सचिट्ठणकाल असंख्यातगुण और उनसे तीर्यंच सचिट्ठणकाल अनंतगुणा।

तात्पर्य भूतकाल में जीवो ने चतुर्गति भ्रमण किया उसका हिसाब जीवों के हित के लिये परम दयालु परमात्मा ने कैसा समझाया है कि जो हमेशां ध्यान में रखने लायक है देखो, अनंत भव तीर्यचके असंख्याते भव देवताओं के और असंख्याते भव नारकी के करने पर एक भव मनुष्यका मिला. ऐसे दुर्लभ और कठिनतासे मिले हुए मनुष्य भवकों हे! भव्यात्माओं! प्रमादवश वृथा मत खोओ जहां तक हो सके वहांतक जागृत होकर ऐसे कार्योंमें तत्पर हो कि जिससे चतुर्गति भ्रमण टले. इत्यलम्

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर ६३

(स्थिति बन्धका अल्पाबहुत्व)

१ सबसे स्तोक संयतिका स्थिति बन्ध
२ बादर पर्याप्ता एकेन्द्रिका जघन्य स्थिति बन्ध असं० गु०
३ सुक्ष्म पर्याप्ता एकेन्द्रीका जघन्य स्थिति बन्ध वि०
४ बादर एकेन्द्री अप० का जघ० स्थिति वि०
५ सुक्ष्म एकेन्द्री अप० का जघ० स्थिति० वि०
६ सुक्ष्म एकेन्द्री अप० (७) बादर एकेन्द्री अप० वि०
८ सुक्ष्म एकेन्द्री पर्या० वि०
९ बादर एकेन्द्री पर्याप्ताका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध अनुक्रमे वि०
१० बेरिन्द्री पर्याप्ता० जघन्य स्थिति सं०
११ बेरिन्द्री अप० जघन्य स्थिति० वि०
१२ बेरिन्द्री अप० उ. स्थि० वि०
१३ बेरिन्द्री पर्या० उ० स्थिति० वि०
१४ तेरिन्द्री पर्या० ज० स्थि० सं० गु०
१५ तेरिन्द्री अप० ज० स्थि० वि०
१६ तेरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
१७ तेरिन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
१८ चौरिन्द्री पर्या० ज० स्थि० सं०
१९ चौरिन्द्री अप० ज० स्थि० वि०
२० चौरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
२१ चौरिन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
२२ असंज्ञी पंचेन्द्रि पर्या० ज० स्थि० स० गु०
२३ असंज्ञी पंचेन्द्री अप० ज० स्थि० वि०

२४ असंज्ञी पंचेन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
२५ असंज्ञी पंचेन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
२६ संयती का उत्कृष्ट स्थि० सं० गु०
२७ देशव्रत्तीका ज० स्थि० सं० गु०
२८ देशव्रत्तीकाका उ० स्थि० सं० गु०
२९ सम्यक्त्वी पर्या० का जघन्यस्थि० सं० गु०
३० सम्यक्त्वी अप० जघन्यस्थि० सं० गु०
३१ सम्यक्त्वी अप० का उत्कृष्टस्थि० सं० गु०
३२ सम्यक्त्वी पर्या० का उ० स्थि० सं गु०
३३ संज्ञी पंचेन्द्री पर्या० का ज० स्थि० सं० गु०
३४ संज्ञी पंचेन्द्री अप० का ज० स्थि० सं० गु०
३५ संज्ञी पंचेन्द्री अप० का उ० स्थि० सं० गु०
३६ संज्ञी पंचेन्द्री पर्या० का उ० स्थि० सं० गु०

सेवं भन्ते सेवं भन्ते तमेव सच्चम्.

इति शीघ्रबोध भाग ५ वां समाप्तम्.

卐

श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल.

मुः लोहावट–जाटावास (मारवाड.)

पूज्य मुनि श्री हरिसागरजी तथा मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब के सदुपदेशसें सं. १९७९ का चैत वद ६ शनिश्चरवार को इस मंडलकी शुभ स्थापना हुइ है। मित्र मंडलका खास उद्देश समाजसेवा और ज्ञानप्रचार करनेका है। पेस्तर यह मंडल नवयुवकोंसे ही स्थापित हुवा था। परन्तु मंडलका कार्यक्रम अच्छा होनेसे अधिक उम्मरवाले सज्जन भी मंडलमें सामिल हो मंडलके उत्साहमें अभिवृद्धि करी है।

मुबारीक नामावली.

वार्षीक चन्दा.			पिताका नाम.	निवासग्राम.
११)	(१.)	श्रीमान् प्रेसिडेन्ट छोगमलजी कोचर	चुतर्भुजजी	लोहावट
११)	( )	श्रीमान् वाइस प्रेसिडेन्ट इन्द्रचन्द्रजी पारख	रावलमलजी	,,
५)	(३)	श्रीमान् नायब प्रेसिडेन्ट खेतमलजी कोचर	पीरदानजी	,,
११)	(४)	श्रीमान् चीफ सेक्रेटरी रेखचंदजी पारख	हजारीमलजी	,,
७)	(५)	श्रीमान् जोइन्ट सेक्रेटरी पुनमचंदजी लुणीया	रत्नालालजी	,,
७)	(६)	श्रीमान् जोइन्ट सेक्रेटरी इन्द्रचंदजी पारख	चोनणमलजी	,,
५)	(७)	श्रीमान् सेक्रेटरी माणकलालजी पारख	हीरालालजी	,,
		आसिस्टंट सेक्रेटरी श्रीमान् रीषभमलजी सिंधी		कुचेरावाला

३)	(९)	श्रीयुक्त मेम्बर अगरचंदजी पारख	आइदांमजी	लोहावट
२)	(१०)	श्रीयुक्त मेम्बर पृथ्वीराजजी चोपडा	खुबचंदजी	,,
२)	(११)	श्रीयुक्त मेम्बर जीतमलजी भन्साली	तुलसीदासजी	,,
३)	(१२)	श्रीयुक्त मेम्बर हस्तीमलजी पारख	रावलमलजी	,,
२)	(१३)	श्रीयुक्त मेम्बर मेरूलालजी चोपडा	रेखचंदजी	,,
३)	(१४)	श्रीयुक्त मेम्बर जुगराजजी पारख	रावलमलजी	,,
३)	(१५)	श्रीयुक्त मेम्बर मनसुखदासजी पारख	हजारीमलजी	,,
३)	(१६)	श्रीयुक्त मेम्बर कुंनणमलजी पारख	हीरालालजी	,,
२)	(१७)	श्रीयुक्त मेम्बर कुनणमलजी कोचर	हीरालालजी	,,
३)	(१८)	श्रीयुक्त मेम्बर भमूतमलजी पारख	श्रीचंदजी	,,
२)	(१९)	श्रीयुक्त मेम्बर हीरालालजी चोपडा	मोतीलालजी	,,
३)	(२०)	श्रीयुक्त मेम्बर जमनालालजी पारख	रावलमलजी	,,
२)	(२१)	श्रीयुक्त मेम्बर रेखचंदजी पारख	मोतीलालजी	,,
३)	(२२)	श्रीयुक्त मेम्बर भमूतमलजी पारख	करणीदांनजी	,,
२)	(२३)	श्रीयुक्त मेम्बर सुखलालजी चोपडा	हीरालालजी	,,
३)	(२४)	श्रीयुक्त मेम्बर फूलचंदजी पारख	कैवलचन्दजी	,,
२)	(२५)	श्रीयुक्त मेम्बर घेवरचंदजी गडीया	जुहारमलजी	मथाणीया
२)	(२६)	श्रीयुक्त मेम्बर जेठमलजी डाकलीया	प्रतापचंदजी	लोहावट
२)	(२७)	श्रीयुक्त मेम्बर कुंनणमलजी पारख	सहजरामजी	,,
३)	(२८)	श्रीयुक्त मेम्बर जमनालालजी बोथरा	अलसीदासजी	,,

३)	(२९)	श्रीयुक्त मेम्बर नेमिचन्दजी चोपडा	मालचंदजी	”
२)	(३०)	श्रीयुक्त मेम्बर कुनणमलजी चोपडा	ताराचंदजी	”
२)	(३१)	श्रीयुक्त मेम्बर पुखराजजी चोपडा	सेरचंदजी	”
३)	(३२)	श्रीयुक्त मेम्बर कुंवरलालजी पारख	सीवलालजी	”
२)	(३३)	श्रीयुक्त मेम्बर चुनिलालजी पारख	मोतीलालजी	”
३)	(३४)	श्रीयुक्त मेम्बर सुखलालजी पारख	हीरालालजी	”
१)	(३५)	श्रीयुक्त मेम्बर सीमरथमलजी चोपडा	पुनमचंदजी	आयु
३)	(३६)	श्रीयुक्त मेम्बर अलसीदासजी कोचर	सीवलालजी	लोहावट
३)	(३७)	श्रीयुक्त मेम्बर इन्द्रचंदजी वैद	रेखचंदजी	”
२)	(३८)	श्रीयुक्त मेम्बर ठाकुरलालजी चोपडा	रावलमलजी	”
२)	(३९)	श्रीयुक्त मेम्बर घेवरचंदजी बोथरा	जमनालालजी	”
२)	(४०)	श्रीयुक्त मेम्बर कन्यालालजी पारख	इन्दरचंदजी	”
३)	(४१)	श्रीयुक्त मेम्बर संपतलालजी पारख	हीरालालजी	”
३)	(४२)	श्रीयुक्त मेम्बर नेमिचंदजी पारख	चांनणमलजी	”
२)	(४३)	श्रीयुक्त मेम्बर हेमराजजी पारख	हस्तिमलजी	”
२)	(४४)	श्रीयुक्त मेम्बर भमूतमलजी कोचर	मेवराजजी	”
२)	(४५)	श्रीयुक्त मेम्बर भीखमचंदजी कोचर	छोगमलजी	फलोधी
३)	(४६)	श्रीयुक्त मेम्बर गोदुलालजी सेठीया	वदनमलजी	लोहावट
३)	(४७)	श्रीयुक्त मेम्बर जोरावरमलजी वैद	हजारीमलजी	”
	(४८)	श्रीयुक्त मेम्बर खेतमलजी पारख	मनसुखदासजी	
		श्रीयुक्त मेम्बर गणेशमलजी पारख		

२) (५०) श्रीयुक्त मेम्बर संपतलालजी पारख — हीरालालजी ”
२) (५१) श्रीयुक्त मेम्बर सहसमलजी पारख — छोगमलजी ”
२) (५२) श्रीयुक्त मेम्बर तनसुखदासजी कोचर — जेठमलजी ”
३) (५३) श्रीयुक्त मेम्बर भीखमचंदजी पारख — मुलचंदजी ”
२) (५४) श्रीयुक्त मेम्बर सुगनमलजी पारख — चुनिलालजी ”
२) (५५) श्रीयुक्त मेम्बर जुगराजजी पारख — रतनलालजी ”
३) (५६) श्रीयुक्त मेम्बर जमनालालजी पारख — मुलचंदजी ”
२) (५७) श्रीयुक्त मेम्बर खेतमलजी कोचर — प्रभुदांनजी ”
२) (५८) श्रीयुक्त मेम्बर माणकलालजी कोचर — दलीचंदजी ”
१) (५९) श्रीयुक्त मेम्बर मीसरीलालजी कोचर — खेतमलजी ”
२) (६०) श्रीयुक्त मेम्बर घेवरचंदजी कोचर — ज्ञानमलजी ”
१) (६१) श्रीयुक्त मेम्बर नथमलजी पारख — हंसराजजी ”
२) (६२) श्रीयुक्त मेम्बर नेमिचंदजी पारख — मनसुखदासजी ”
२) (६३) श्रीयुक्त विजयलालजी ” — छगनमलजी ”